।। पूर्ण परमात्मने नमः।।

अंध श्रद्धा भक्ति खतरा-ए-जान

{ शास्त्र विरूद्ध साधना करना आत्महत्या करने के समान है :- रामपाल दास }

लेखक :-(संत) रामपाल दास

जीव हमारी जाति है, मानव (Mankind) धर्म हमारा।
हिन्दू, मुस्लिम, सिक्ख, ईसाई, धर्म नहीं कोई न्यारा।।

अवश्य देखिये

संत रामपाल जी महाराज के मंगल प्रवचन

STV HARYANA NEWS	पर सुबह 06:00 से 07:00
श्रद्धा MH ONE	पर दोपहर 02:00 से 03:00
साधना	पर रात 07:40 से 08:40
ईश्वर	पर रात 08:30 से 09:30
वृंदा	पर रात 09:30 से 10:30

पहला संस्करण :- 10000 (2014)

दूसरा संस्करण :- 12000 (2017)

स्पष्टीकरण :- दूसरे संस्करण में केवल पष्ठ 3 पर रेखा अंकित (Underline) वाला प्रकरण जोड़ा है। शेष प्रकरण वही है।

कुल लागत :- 30 रू.

धर्मार्थ मूल्य :- 10 रू.

प्रकाशक :- प्रचार प्रसार समिति तथा सर्व संगत
सतलोक आश्रम, हिसार-टोहाना रोड़ बरवाला
जिला-हिसार (प्रान्त-हरियाणा) भारत।

मुद्रक :- कबीर प्रिंटर्स
C-117, सैक्टर-3, बवाना इन्डस्ट्रियल ऐरिया, नई दिल्ली।

**सम्पर्क सूत्र :- 08222880541, 08222880542, 08222880543
08222880544, 08222880545**

e-mail :- jagatgururampalji@yahoo.com
visit us at :- www.jagatgururampalji.org

विषय सूची

क्रम सं.	विवरण	पष्ठ सँख्या
1.	भूमिका	I-III
2.	दो शब्द	1
3.	अंध श्रद्धा भक्ति का वर्णन	9
	● मूर्ति पूजा क्या है?	9
	● शास्त्रों की स्थिति	9
	● आन-उपासना करना व्यर्थ है	16
	● शिवलिंग की पूजा कैसे आरंभ हुई?	18
	● शास्त्र विरूद्ध साधना की प्रेरणा भी काल ब्रह्म करता है	21
4.	अन्य अंध श्रद्धा भक्ति पर प्रकाश	23
	● श्राद्ध-पिण्डदान करें या न करें	25
	● श्राद्ध-पिण्डदान के प्रति रूची ऋषि का वेदमत	30
	● मार्कण्डेय पुराण में पितरों की दुर्गति का प्रमाण	32
	● प्रभु कबीर जी द्वारा श्राद्ध भ्रम खण्डन	35
	● श्री नानक जी द्वारा श्राद्ध भ्रम खण्डन	36
	● संत गरीबदास जी द्वारा श्राद्ध भ्रम खण्डन	38
	● लेखक (रामपाल दास) द्वारा श्राद्ध भ्रम खण्डन	39
	● श्राद्ध करने की श्रेष्ठ विधि	42
	● पीपल, जांडी तथा तुलसी की पूजा	45
	● परमात्मा के साथ धोखा	47
	● सोलह शुक्रवार के व्रत करना	48
	● गीता में व्रत के विषय में	49
	● तीर्थ तथा धाम क्या हैं?	50
	● वैष्णव देवी, नैना देवी, ज्वाला देवी तथा अन्नपूर्णा देवी के मंदिरों की स्थापना''	51
	● केदारनाथ मंदिर भारत में तथा पशुपति मंदिर नेपाल में कैसे बना?	53
	● तीर्थ तथा धाम की अन्य जानकारी	53
	● तीर्थ स्थापना के प्रमाण	54
	● सर्वश्रेष्ठ तीर्थ	57
5.	सूक्ष्मवेद का रहस्य	59

6. चारों वेद तथा सूक्ष्मवेद कैसे प्राप्त हुए? 60
7. श्रंगी ऋषि तथा दशरथ पुत्री शांता की प्रेम कथा 65
8. वेदमंत्रों की फोटोकॉपियाँ 74
9. हिन्दू धर्म में प्रचलित शास्त्रविरूद्ध धार्मिक साधना 89
10. हिन्दू धर्म शास्त्र क्या बताते हैं? 90
11. आध्यात्मिक रहस्य 101
12. स्वामी विवेकानंद जी का संक्षिप्त जीवन परिचय 114
13. अंध श्रद्धा भक्ति कैसे प्रारम्भ हुई? 114
14. तत्वज्ञान के अभाव से साधकों की दुर्दशा 116
15. कबीर परमेश्वर जी की काल से वार्ता 120
- काल ब्रह्म द्वारा कबीर जी से तीन युगों में कम जीव ले जाने का वचन लेना 123
- तप्त शिला पर जल रहे प्राणियों से वार्ता 130
- परमेश्वर कबीर जी से काल ब्रह्म का विवाद करना 136

16. संत गरीबदास यानि बारहवें पंथ में भक्ति की झलक 144
17. प्रत्येक देव व परमेश्वर की स्थिति 146
18. ''भक्ति किस प्रभु की करनी चाहिए'' गीतानुसार। 147
19. पूजा तथा साधना में अंतर 160
20. ऋषि दुर्वासा की कारगुजारी 166
21. भक्ति अवश्य करो 173
22. कथा-मार्कण्डेय ऋषि तथा अप्सरा का संवाद 178
23. आज भाई को फुरसत 183
24. भक्ति न करने से हानि का अन्य विवरण 187
25. भक्ति न करने से बहुत दुःख होगा 190
26. भक्ति मार्ग पर यात्रा 191
27. गुरू बिन मोक्ष नहीं 192
28. पूर्ण गुरू के वचन की शक्ति से भक्ति होती है 194
29. वासुदेव की परिभाषा 201
30. संक्षिप्त सष्टि रचना 208
- हम काल के लोक में कैसे आए? 210
- श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी व श्री शिव जी की उत्पत्ति 213

31. सम्पूर्ण सष्टि रचना 218
- आत्माएं काल के जाल में कैसे फँसी? 221
- श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु तथा श्री शंकर जी की उत्पत्ति 225
- तीन गुण क्या हैं? प्रमाण सहित 226

- काल (ब्रह्म) की अव्यक्त रहने की प्रतिज्ञा 227
- ब्रह्मा का अपने पिता की प्राप्ति के लिए प्रयत्न 229
- माता (दुर्गा) द्वारा ब्रह्मा को श्राप देना 230
- विष्णु का अपने पिता की प्राप्ति के लिए प्रस्थान व माता का आशीर्वाद पाना 232
- परब्रह्म के सात शंख ब्रह्माण्डों की स्थापना 238
- पवित्र अथर्ववेद में सृष्टि रचना का प्रमाण 240
- पवित्र ऋग्वेद में सृष्टि रचना का प्रमाण 244
- पवित्र श्रीमद् देवी महापुराण में सृष्टि रचना का प्रमाण 250
- पवित्र शिव महापुराण में सृष्टि रचना का प्रमाण 252
- श्रीमद्भगवत गीता जी में सृष्टि रचना का प्रमाण 252
- पवित्र बाईबल तथा पवित्र कुरान शरीफ में सृष्टि रचना का प्रमाण 255
- पूज्य कबीर परमेश्वर (कविर् देव) जी की अमृतवाणी में सृष्टि रचना का प्रमाण 256
- आदरणीय गरीबदास साहेब जी की अमृतवाणी में सृष्टि रचना का प्रमाण 259
- आदरणीय नानक साहेब जी की अमृतवाणी में सृष्टि रचना का प्रमाण 264
- अन्य संतों द्वारा सृष्टि रचना की दन्त कथा 268

32. भक्ति मर्यादा 270
- दीक्षा लेने वाले व्यक्तियों के लिए आवश्यक जानकारी 270
- कर्मकाण्ड के विषय में सत्य कथा 277

33. जान बची लाखों पाए 282
- शादी के चौदह वर्ष बाद परमात्मा ने दी संतान 282
- परमात्मा ने दिया जीवन दान 284
- उजड़ा परिवार बसा 285
- परमात्मा ने यमदूतों से बचाया 287
- भूतों व रोगों के सताए परिवार को आबाद करना 288
- लुटे-पिटों को सहारा 290
- शास्त्रविरूद्ध साधना से छुटकारा 291
- भगवान हो तो ऐसा 292
- भक्तमति सविता की आत्मकथा 294

❑❑❑

भूमिका

अंध श्रद्धा का अर्थ है बिना विचार-विवेक के किसी भी प्रभु में आस्था करके उसे प्राप्ति की तड़फ में पूजा में लीन हो जाना। फिर अपनी साधना से हटकर शास्त्र प्रमाणित भक्ति को भी स्वीकार न करना। दूसरे शब्दों में प्रभु भक्ति में अंधविश्वास को ही आधार मानना। जो ज्ञान शास्त्रों के अनुसार नहीं होता, उसको सुन-सुनाकर उसी के आधार से साधना करते रहना। वह साधना जो शास्त्रों के विपरीत है, बहुत हानिकारक है। अनमोल मानव जीवन नष्ट हो जाता है। जो साधना शास्त्रों में प्रमाणित नहीं है, उसे करना तो ऐसा है जैसे आत्महत्या कर ली हो। आत्म हत्या करना महापाप है। इसमें अनमोल मानव जीवन नष्ट हो जाता है।

इसी प्रकार शास्त्रविधि को त्यागकर मनमाना आचरण करना यानि अज्ञान अंधकार के कारण अंध श्रद्धा के आधार से भक्ति करने वाले का अनमोल मानव (स्त्री-पुरूष का) जीवन नष्ट हो जाता है क्योंकि पवित्र श्रीमद्भगवत गीता अध्याय 16 श्लोक 23 में बताया है कि :-

जो साधक शास्त्रविधि को त्यागकर अपनी इच्छा से मनमाना आचरण करता है यानि किसी को देखकर या किसी के कहने से भक्ति साधना करता है तो उसको न तो कोई सुख प्राप्त होता है, न कोई सिद्धि यानि भक्ति की शक्ति प्राप्त होती है, न उसकी गति होती है। (गीता अध्याय 16 श्लोक 23)

❖ इन्हीं तीन लाभों के लिए साधक साधना करता है जो मनमानी शास्त्र विरूद्ध साधना से नहीं मिलते। इसलिए अंध श्रद्धा को त्यागकर अपने शास्त्रों में वर्णित भक्ति करो।

गीता अध्याय 16 श्लोक 24 :- इसमें स्पष्ट किया है कि ''इससे तेरे लिए अर्जुन! कर्तव्य यानि जो भक्ति क्रियाऐं करनी चाहिए तथा अकर्तव्य यानि जो भक्ति क्रियाऐं नहीं करनी चाहिए, की व्यवस्था में शास्त्रों में वर्णित भक्ति क्रियाऐं ही प्रमाण है यानि शास्त्रों में बताई साधना कर। जो शास्त्र विपरीत साधना कर रहे हो, उसे तुरंत त्याग दो।''

इस पुस्तक में आप जी को कर्तव्य यानि जो साधना करनी चाहिए और जो अकर्तव्य है यानि त्यागनी चाहिए, सब विस्तार से शास्त्रों से प्रमाणों सहित पढ़ने को मिलेंगी। अपने पवित्र धर्मग्रन्थों के प्रमाणों को इस पुस्तक में पढ़ें और फिर शास्त्रों से मेल करें। आँखों देखकर तुरंत शास्त्र विरूद्ध साधना त्यागकर

शास्त्रविधि अनुसार साधना मेरे (लेखक के) पास आकर प्राप्त करें।

आप जी को स्पष्ट कर दूँ कि वर्तमान में पूरे विश्व में मेरे (रामपाल दास के) अतिरिक्त शास्त्रों के अनुसार सम्पूर्ण अध्यात्म ज्ञान तथा सम्पूर्ण भक्ति विधि किसी के पास नहीं है। यह आप जी को इस पवित्र पुस्तक ''अंध श्रद्धा भक्ति खतरा-ए-जान'' के पढ़ने से स्वतः विश्वास हो जाएगा। यदि कोई आँखों देख-पढ़कर भी शास्त्र विधि विरूद्ध साधना नहीं त्यागेगा और शास्त्रविधि अनुसार प्रारम्भ नहीं करेगा तो वह भक्ति करना नहीं चाहता।

कबीर जी ने ऐसे व्यक्ति के विषय में कहा है कि :-

कबीर, जान बूझ साची तजै, करै झूठ से नेह।
ताकि संगति हे प्रभु, स्वपन में भी ना दे।।

शब्दार्थ :- जो आँखों देखकर भी सत्य को स्वीकार नहीं करता, वह शुभकर्म हीन प्राणी है। ऐसे व्यक्ति से मिलना भी उचित नहीं है। जाग्रत की तो बात छोड़ो, ऐसे कर्महीन व्यक्ति (स्त्री-पुरूष) से तो स्वपन में भी सामना ना हो। फिर कबीर जी ने कहा है कि :-

ऐसा पापी प्रभात ना भैंटो, मुख देखें पाप लगै जाका।
नौ–दश मास गर्भ त्रास दई, धिक्कार जन्म तिस की माँ का।।

शब्दार्थ :- ऐसा निर्भाग व्यक्ति सुबह-सुबह ना मिले। ऐसे का मुख देखने से भी पाप लगता है। उसने तो अपनी माता जी को भी व्यर्थ में नौ-दस महीने गर्भ का कष्ट दिया। उसने अपनी माता का जन्म भी व्यर्थ कर दिया। कबीर जी ने फिर कहा है कि :-

कबीर, या तो माता भक्त जनै, या दाता या शूर।
या फिर रहै बांझड़ी, क्यों व्यर्थ गंवावै नूर।।

शब्दार्थ :- कबीर जी ने कहा है कि या तो जननी भक्त को जन्म दे जो शास्त्र में प्रमाण देखकर सत्य को स्वीकार करके असत्य साधना त्यागकर अपना जीवन धन्य करे। या किसी दानवीर पुत्र को जन्म दे जो दान-धर्म करके अपने शुभ कर्म बनाए। या फिर शूरवीर बालक को जन्म दे जो परमार्थ के लिए कुर्बान होने से कभी न डरता हो। सत्य का साथ देता है, असत्य तथा अत्याचार का डटकर विरोध करता है। उसके चलते या तो स्वयं मर जाता है या अत्याचारी की सेना को मार डालता है। अपने उद्देश्य से डगमग नहीं होता। यदि ऐसी अच्छी संतान उत्पन्न न हो तो निःसंतान रहना ही माता के लिए शुभ है। पशुओं जैसी संतान को गर्भ में पालकर अपनी जवानी को क्यों नष्ट करे यानि निकम्मी संतान गलती करके माता-पिता पर 304-B का मुकदमा बनवाकर जेल में डलवा देती है। इससे तो बांझ रहना ही उत्तम है।

सर्व मानव समाज से करबद्ध नम्र निवेदन है कि आप सब शास्त्रों के विरूद्ध साधना कर रहे हो। इस पवित्र पुस्तक को पढ़कर सत्य से परिचित होकर अपना अनमोल मानव (स्त्री-पुरूष का) जीवन धन्य बनाओ। अपना कल्याण करवाओ।

।। सत साहेब।।

दिनाँक :- **08-09-2014**

सर्व का शुभचिंतक
लेखक

दासन दास रामपाल दास
पुत्र/शिष्य स्वामी रामदेवानंद जी
सतलोक आश्रम बरवाला
जिला-हिसार, हरियाणा (भारत)

❑❑❑

दो शब्द

अपने पूज्य ईष्ट देव के प्रति दढ़ प्रेम श्रद्धा कहलाता है। अपने ईष्ट में श्रद्धा किस कारण से होती है? उत्तर यह है कि मानव (स्त्री-पुरूष) को पता चलता है कि परमात्मा सर्व सुख प्रदान करता है। संकट के समय श्रद्धालु की रक्षा करता है। मनोकामनाऐं पूर्ण करता है। रोगी को स्वस्थ करता है। परमात्मा भक्त/भक्तमति की आयु भी वद्धि कर देता है। दुर्घटना से रक्षा करता है। निर्धन को धन, अंधे को आँखें, बांझ को संतान परमात्मा देता है।

श्रद्धालु का उद्देश्य परमात्मा की भक्ति करके उपरोक्त लाभ प्राप्ति का होता है। श्रद्धालु अपने धर्म के शास्त्रों को सत्य मानता है। यह भी मानता है कि हमारे धर्मगुरू हमें जो साधना जिस भी ईष्ट देव की करने को कह रहे हैं, वे साधना शास्त्रों से ही बता रहे हैं क्योंकि गुरू जी रह-रहकर कभी गीता को आधार बताकर, कभी शिव पुराण, विष्णु पुराण, देवी पुराण, कभी-कभी चारों वेदों (ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद तथा अथर्ववेद) में से किसी एक या दो वेदों का हवाला देकर अपने द्वारा बताई भक्ति विधि को शास्त्रोक्त सिद्ध करते हैं। श्रद्धालुओं को पूर्ण विश्वास होता है कि जो साधना अपने धर्म के व्यक्ति (स्त्री-पुरूष) कर रहे हैं, यह सत्य है। जब बच्चा (लड़का-लड़की) समझ रखने योग्य बड़ा होता है तो वह अपने धर्म के व्यक्तियों को जैसी भी भक्ति-साधना करते देखता है, वह निसंशय होता है कि ये सब वर्षों से करते आ रहे हैं, यह साधना सत्य है। वह भी उसी पूजा-पाठ को करने लग जाता है। आयु बीत जाती है।

अंध श्रद्धा भक्ति :- एक-दूसरे को देखकर की जा रही भक्ति यदि शास्त्रोक्त नहीं है तो वह अंध विश्वास यानि अंध श्रद्धा भक्ति मानी जाती है।

❖ यहाँ पर यह भी बताना अनिवार्य समझता हूँ कि कुछ व्यक्तियों ने मेरे विषय में भ्रम फैला रखा है कि ये देवी-देवताओं की भक्ति छुड़वाता है। यह बिल्कुल गलत है। मैं सर्व देवताओं की शास्त्रोक्त साधना करने की राय देता हूँ जिससे साधक को यथार्थ लाभ मिलता है तथा पूर्ण परमात्मा को ईष्ट रूप में पूजा करने की राय देता हूँ जिससे मोक्ष की प्राप्ति होती है। वर्तमान जीवन में भी अनेकों लाभ होते हैं जो परमात्मा से अपेक्षा की जाती है।

धार्मिक भावनाओं को ठेस :- यदि कोई सज्जन पुरूष (स्त्री-पुरूष) उस अंध श्रद्धालु को कहे कि आप जिस देवी-देवता को ईष्ट मानकर जो साधना कर रहे हो, यह गलत है। इससे आपको कोई लाभ नहीं मिलेगा। आपका मानव जीवन नष्ट हो जाएगा। आप देवी-देवताओं की पूजा ईष्ट मानकर ना करो। आप मूर्ति की पूजा ना करो। आप धामों तथा तीर्थों पर मोक्ष उद्देश्य से ना जाओ। आप श्राद्ध न करो, पिण्डदान ना करो। तेरहवीं, सतरहवीं क्रिया या अस्थियाँ उठाकर गति कराने के लिए मत ले जाओ। आप व्रत न रखो। इसके स्थान पर अन्न-जल करने में संयम करो, न अधिक खाओ, न बिल्कुल भूखे रहो। आप अपने धर्म के शास्त्रों में बताए

भक्ति मार्ग के अनुसार साधना करो।

वह अंध श्रद्धावान यदि उस सज्जन पुरूष से कहे कि आप अच्छे व्यक्ति नहीं हो। आप ने हमारी धार्मिक भावनाऐं आहत की हैं। चला जा यहाँ से, वरना तेरी हड्डी-पसली एक कर दूँगा। जोर-जोर-से शोर मचाने लगता है। उसके शोर को सुनकर उसी क्षेत्र के उसी तरह उन्हीं देवी-देवताओं व तीर्थों-धामों के उपासकों का हुजूम इकठ्ठा हो जाता है। बात धर्मगुरूओं तक पहुँच जाती है। धर्मगुरू भी वही शास्त्रविरूद्ध मनमाना आचरण करने-कराने वाले होते हैं। उन धर्मगुरूओं की पहुँच उच्च पद पर विराजमान राजनेताओं तक होती है। उन धर्मगुरूओं के फोन मंत्रियों-मुख्यमंत्रियों या स्थानीय नेताओं को जाते हैं। उच्च पद पर बैठे राजनेता स्थानीय प्रशासन को फोन करके धार्मिक भावनाऐं भड़काने का मुकदमा दर्ज करने को कहते हैं। उनके दबाव में प्रशासनिक अधिकारी तुरंत उस सज्जन पुरूष को गिरफ्तार करके मुकदमा बनाकर जेल भेज देते हैं।

जीवित उदाहरण :- सन् 2011 में मेरे (रामपाल दास-लेखक के) अनुयाई (जिनमें बेटियाँ भी शामिल थी) मध्यप्रदेश प्रान्त के शहर जबलपुर में पुस्तक ''ज्ञान गंगा'' (जो मेरे सत्संग प्रवचनों का संग्रह करके तैयार कर रखी है) का प्रचार कर रहे थे। लागत 30 रूपये, परंतु 10 रूपये में बेच रहे थे। जिस कारण से हिन्दू श्रद्धालु उत्साह से लेकर जा रहे थे। जब उन्होंने घर जाकर पढ़ा तो लगा कि अनर्थ हो गया। देवी-देवताओं की पूजा गलत लिखी है। धामों-तीर्थों पर जाना व्यर्थ लिखा है। माता दुर्गा का पति बताया है। श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु तथा श्री शिव का जन्म-मरण बताया है। इनके माता-पिता भी बताऐ हैं। हमारे देवताओं का अपमान किया है। मारो-मारो! उन अंध श्रद्धा वालों ने पहले तो प्रचार करने वाले स्त्री-पुरूषों को स्वयं पीटा, फिर थाने ले गए। हजारों अंध श्रद्धावान इकठ्ठे हो गए। जिला प्रशासन में बेचैनी हो गई क्योंकि राजनेताओं के फोन स्थानीय D.C., S.P., I.G. तथा कमिश्नर के पास आने लगे। हमारे एक अनुयाई ने बताया कि उपायुक्त महोदय (Deputy Commissioner) तथा पुलिस अधीक्षक महोदय थाने में आए। पुस्तक ''ज्ञान गंगा'' ली, उसको वहीं बैठकर पढ़ने लगे।

सुशिक्षित तथा दिमागदार अधिकारी होते हैं I.P.S. तथा I.A.S., उनको समझते देर नहीं लगी कि इस पुस्तक में कुछ भी ऐसा नहीं लिखा है जिससे किसी की धार्मिक भावनाऐं आहत होती हों। सब विवरण शास्त्रों से प्रमाणित करके लिखा है। सुबह दस बजे से शाम के पाँच बजे तक अधिकारी-गण मुकदमा दर्ज करने से बचते रहे, परंतु उन अंध श्रद्धावानों ने मध्य प्रदेश के विधान सभा के अध्यक्ष ने पुनः फोन पर कहा तो प्रशासन ने मजबूरन धार्मिक भावनाओं को भड़काने का मुकदमा IPC की धारा 295-A के तहत दर्ज करके लगभग 35 स्त्री-पुरूषों को जेल भेज दिया। मुकदमा नं. 201 दिनाँक-08-05-2011, थाना-मदन महल (जबलपुर)।

विधान सभा अध्यक्ष ने अपने पद का दुरूपयोग करके पाप किया। {उसका

फल भी परमात्मा ने उसे तुरंत दिया। वह विधान सभा अध्यक्ष दो महीने बाद ही मत्यु को प्राप्त हुआ। उसका नाम था ईश्वर दास रोहाणी।} इस मुकदमें को माननीय हाई कोर्ट जबलपुर में समाप्त (Quash) करने की अर्जी (M.Cr.C. No. 13577-2013) लगाई जो माननीय उच्च न्यायालय जबलपुर (मध्य प्रदेश) ने वह मुकदमा दिनाँक 20-07-2017 को खत्म कर दिया क्योंकि पुस्तक में सर्व ज्ञान शास्त्र प्रमाणित मिला। लेकिन सन् 2011 से सन् 2017 तक निचली अदालतों में तारीख पर तारीखें पड़ी। उन पर सर्व 35 अनुयाई अपना कार्य छोड़कर गए। किराया लगा, ध्याड़ी छोडी, वित्तीय नुक्सान तथा परेशानी उन अंध श्रद्धावानों के हित के लिए झेली कि वे इस पुस्तक में लिखे शास्त्रों के प्रमाणों को आँखों देखकर शास्त्रविधि रहित साधना त्यागकर शास्त्रोक्त साधना करके अपने जीवन को धन्य बनाऐं क्योंकि श्रीमद्भगवत गीता अध्याय 16 श्लोक 23-24 में प्रमाण है। इन दोनों श्लोकों का वर्णन भूमिका में कर दिया है, वहाँ पढ़ें।

❖ धार्मिक भावना :-

अपने धर्म की धार्मिक क्रियाओं तथा परमात्मा से संबन्धित पूजा पद्यति के प्रति गहरी आस्था को धार्मिक भावना कहते हैं।

❖ धार्मिक भावनाओं को आहत करना :-

किसी के धर्म में चल रही पूजाओं तथा उनके परमात्मा के ऊपर बिना आधार के कटाक्ष या आलोचना करना धार्मिक भावनाओं को ठेस पहुँचाना है।

❖ तर्क-वितर्क :- किसी विषय पर अपनी-अपनी राय देना, अन्य की राय का खंडन करना व अपनी का मंडन करना, अन्य द्वारा अपने सिद्धांत का समर्थन करना, उसके विचारों को गलत बताना, यह तर्क-वितर्क है। इसमें किसी ग्रन्थ को आधार माना जाए तो समाधान है, अन्यथा झूठा झगड़ा है।

लेखक का उद्देश्य किसी की धार्मिक भावनाओं को ठेस पहुँचाना नहीं है, परंतु शास्त्रों को आधार मानकर तर्क-वितर्क किया है। सर्व शास्त्रों के प्रमाण को आधार रूप में देकर यथार्थ आध्यात्मिक ज्ञान तथा मोक्ष मार्ग को उद्धत (उजागर) किया है। यदि इसे धार्मिक भावनाओं का आहत होना माना तो दुःख होगा। मेरा (लेखक का) उद्देश्य विश्व के मानव को परमात्मा की खोज में इधर-उधर भटकने से बचाकर प्रमाणित तथा लाभदायक शास्त्रोक्त अध्यात्म ज्ञान व साधना बताऊँ। उनके मानव जीवन की रक्षा करूँ। यदि यह धार्मिक भावनाओं को आहत महसूस होगा तो कोई बात नहीं, फिर तो यह करना आवश्यक है।

उदाहरण :- एक समय एक लड़के ने कुछ बच्चों को पार्क में एक लकड़ी के खंभे पर चढ़ते-उतरते खेलते देखा। उसने गली में खड़े बिजली के खंभे पर चढ़ना प्रारम्भ किया। एक सज्जन पुरूष ने उसे देखा और दौड़कर उसे ऐसा करने से रोका। बच्चा रोने लगा। माता-पिता को बताया कि एक व्यक्ति ने मुझे खेलने से रोका। वह व्यक्ति उसी गली में रहता था। माता-पिता उस बच्चे को लेकर उस व्यक्ति के पास गए और कारण जाना तो पता चला कि उस व्यक्ति ने तो बच्चे के

जीवन की रक्षा की है। बच्चे के माता-पिता गए तो थे झगड़ा करने के उद्देश्य से, परंतु उस व्यक्ति के उपकार का धन्यवाद करके आए।

❖ मेरा (लेखक का) यही उद्देश्य है कि हिन्दू धर्म के सब व्यक्ति लकड़ी के खम्बों पर खेलकर (शास्त्रोक्त साधना न करके) बिजली के खंभों पर चढ़कर मर रहे हैं यानि शास्त्रविरूद्ध मनमाना आचरण करके अनमोल मानव जीवन व्यर्थ कर रहे हैं, उनको शास्त्रोक्त साधना करने के लिए बाध्य करूँ क्योंकि वे मेरे बन्धु हैं। मेरे देश के वासी हैं। परमात्मा के अबोध (अध्यात्म ज्ञान में अनजान) बच्चे हैं। मुझे परमात्मा जी ने सर्व शास्त्रों का यथार्थ ज्ञान दिया है। वर्तमान में सब शिक्षित हैं। शास्त्रों के अध्याय, श्लोक व पष्ठ तक पुस्तक में लिखे हैं। जाँच करें, फिर मानें।

❖ इस पुस्तक ''अंध श्रद्धा भक्ति खतरा-ए-जान'' के लिखने का उद्देश्य है कि आप और मैं हिन्दू धर्म में जन्में हैं। पहले यह दास (रामपाल दास) भी आप वाली साधना लोकवेद वाली ही किया करता था। परमात्मा की कपा से एक तत्वदर्शी संत मिल गए। उन्होंने शास्त्रों से प्रमाण बताकर मेरी शास्त्र विरूद्ध साधना (जो वर्तमान में हिन्दू धर्म में प्रचलित है) को छुड़वाकर शास्त्रों में लिखी सत्य साधना का उपदेश देकर मेरे मानव जीवन को नष्ट होने से बचाया। उस महापुरूष यानि मेरे पूज्य गुरूदेव स्वामी रामदेवानंद जी महाराज की मेरी एक सौ एक पीढ़ी अहसानमंद रहेगी। सूक्ष्मवेद में कहा है कि :-

''सत्य भक्ति करे जो हंसा, तारूं तास के इकोतर बंशा।''

शब्दार्थ :- परमात्मा जी ने कहा है कि जो साधक शास्त्रोक्त सत्य साधना भक्ति करता है तो मैं उसकी एक सौ एक (101) पीढ़ी को संसार सागर से पार कर दूँगा यानि पूरे वंश का मोक्ष प्रदान कर दूँगा।

प्रिय पाठको! मेरी तो एकोतर पीढ़ी निःसंदेह पार होंगी। मेरे को दीक्षा देने का अधिकार उस महापुरूष ने दिया है। जो मेरे से दीक्षा लेकर शास्त्र विरूद्ध पुरानी साधना त्यागकर शास्त्रोक्त साधना अपनी आँखों से शास्त्रों में देखकर विश्वास के साथ आजीवन करेगा, वह तथा उसकी इकोतर (101) पीढ़ियाँ भवसागर से पार हो जाऐंगी।

❑ कप्या विश्वास के लिए पढ़ें इसी पुस्तक के पष्ठ 282 पर ''जान बची लाखों पाए'' अध्याय में।

❖ शास्त्रोक्त साधना तथा शास्त्रविधि त्यागकर मनमाना आचरण (साधना) में क्या अंतर है?

उत्तर :- यह ऊपर बता दिया है कि जो शास्त्र विरूद्ध भक्ति साधना करता है, उसको कुछ भी आध्यात्मिक लाभ नहीं होता। शास्त्र अनुकूल साधना करने से सर्व लाभ मिलते हैं।

शंका :- कुछ व्यक्ति कहते हैं कि रामपाल श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु तथा श्री शिव जी की पूजा छुड़वाता है।

समाधान :- यह सरासर गलत है। मैं (लेखक) इन देवताओं को शास्त्रोक्त साधना करने के मूल मंत्र देता हूँ। जैसे श्रीमद्भगवत गीता अध्याय 15 श्लोक 1-4 तथा 16-17 में कहा है कि यह संसार ऐसा जानों जैसे पीपल का वंक्ष उल्टा लटका है। ऊपर को मूल (जड़) तो परम अक्षर पुरूष है। तना अक्षर पुरूष है। उससे मोटी डार निकली है, वह क्षर पुरूष यानि काल ब्रह्म है जिसे ज्योति निरंजन भी कहते हैं। उस डार से तीनों गुण रूपी (रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव रूपी) शाखाऐं निकली हैं तथा उन शाखाओं पर लगे पत्ते संसार का अंश जानो।

विचार करो पाठकजनो! हम आम का पौधा वन विभाग की नर्सरी से लाकर जमीन में गढ्ढ़ा बनाकर रोपेंगे। उसकी जड़ की सिंचाई करेंगे। उद्देश्य रहेगा कि यह पौधा पेड़ बने और शाखाओं को फल लगें और हम खाऐं और अन्य को खिलाऐं या बेचकर अपना निर्वाह चलाऐं। क्या हम पौधे की शाखाओं को तोड़ फैंकेंगे? उत्तर है कभी नहीं। इसी प्रकार तीनों देवता (श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी) प्राणी को कर्मों का फल देते हैं। ये हमारी साधना के अभिन्न अंग हैं। इनको छोड़ नहीं सकते। इन तीनों देवताओं से लाभ लेने के विशेष मंत्र हैं जो सूक्ष्म वेद में बताए हैं जो मेरे पास हैं। विश्व में किसी के पास नहीं हैं।

जैसे भैंसा (झोटा) होता है। उस भैंसे का एक मूल मंत्र है। उससे उसको पुकारने से वह तुरंत सक्रिय हो जाता है। वह उस मंत्र के वश है। उसके बस की बात नहीं रहती। वह मंत्र हुर्र-हुर्र है जिसको सुनते ही भैंसे के कान खड़े हो जाते हैं। इस मंत्र का प्रयोग वह व्यक्ति करता है जिसने अपनी भैंस को भैंसे से गर्भ धारण करवाना होता है। यदि उस पशु को उसके प्रचलित नाम भैंसा-भैंसा करके पुकारें तो वह टस-से-मस नहीं होता।

ठीक इसी प्रकार इन तीनों देवताओं (श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी) के यथार्थ मंत्र साधना करने के हैं जिनके जाप से ये शीघ्र प्रभावित होते हैं तथा तुरंत कर्म फल देते हैं।

हमने पूजा मूल रूप परम अक्षर ब्रह्म यानि परमेश्वर को ईष्ट रूप मानकर करनी है। जैसे आम के पौधे की जड़ की सिंचाई (पूजा) करने से पौधे के सर्व अंग विकसित होते हैं यानि सर्व देवता प्रसन्न होते हैं। शास्त्रविधि विरूद्ध साधना वह है जिसमें संसार रूपी पौधे को शाखाओं की ओर से जमीन में गढ़ा खोदकर मिट्टी में गाड़कर इन शाखाओं की सिंचाई (पूजा) करते हैं, जड़ को ऊपर कर देते हैं जो व्यर्थ है। मूर्ख ही ऐसा कर सकते हैं, बुद्धिमान नहीं।

इस विषय में अधिक जानकारी आप जी ''भक्ति किस प्रभु की करनी चाहिए गीता अनुसार'' में इसी पुस्तक के पंष्ठ 147 पर पढ़ेंगे। कंपा देखें अगले पंष्ठों पर भी दो चित्र आम के पौधे के जिनमें शास्त्रविरूद्ध और शास्त्र अनुकूल साधना चित्रों द्वारा समझाई है।

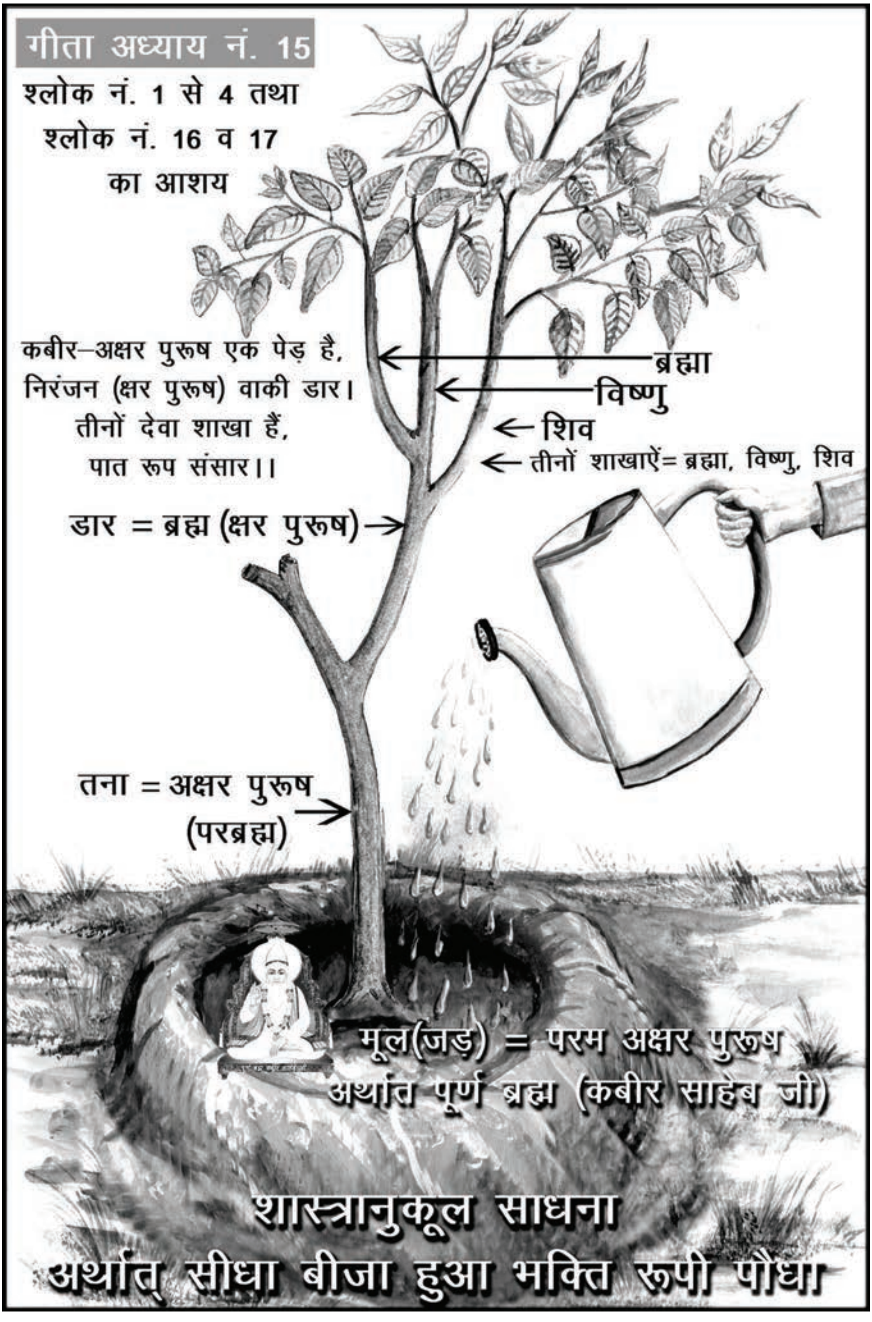

गीता अध्याय नं. 15
श्लोक नं. 1 से 4 तथा
श्लोक नं. 16 व 17
का आशय
कबीर–अक्षर पुरूष एक पेड़ है,
निरंजन (क्षर पुरूष) वाकी डार।
तीनों देवा शाखा हैं,
पात रूप संसार।।
ब्रह्मा
विष्णु
शिव
तीनों शाखाऐं= ब्रह्मा, विष्णु, शिव
डार = ब्रह्म (क्षर पुरूष)
तना = अक्षर पुरूष
(परब्रह्म)
मूल(जड़) = परम अक्षर पुरूष
अर्थात् पूर्ण ब्रह्म (कबीर साहेब जी)
शास्त्रानुकूल साधना
अर्थात् सीधा बीजा हुआ भक्ति रूपी पौधा

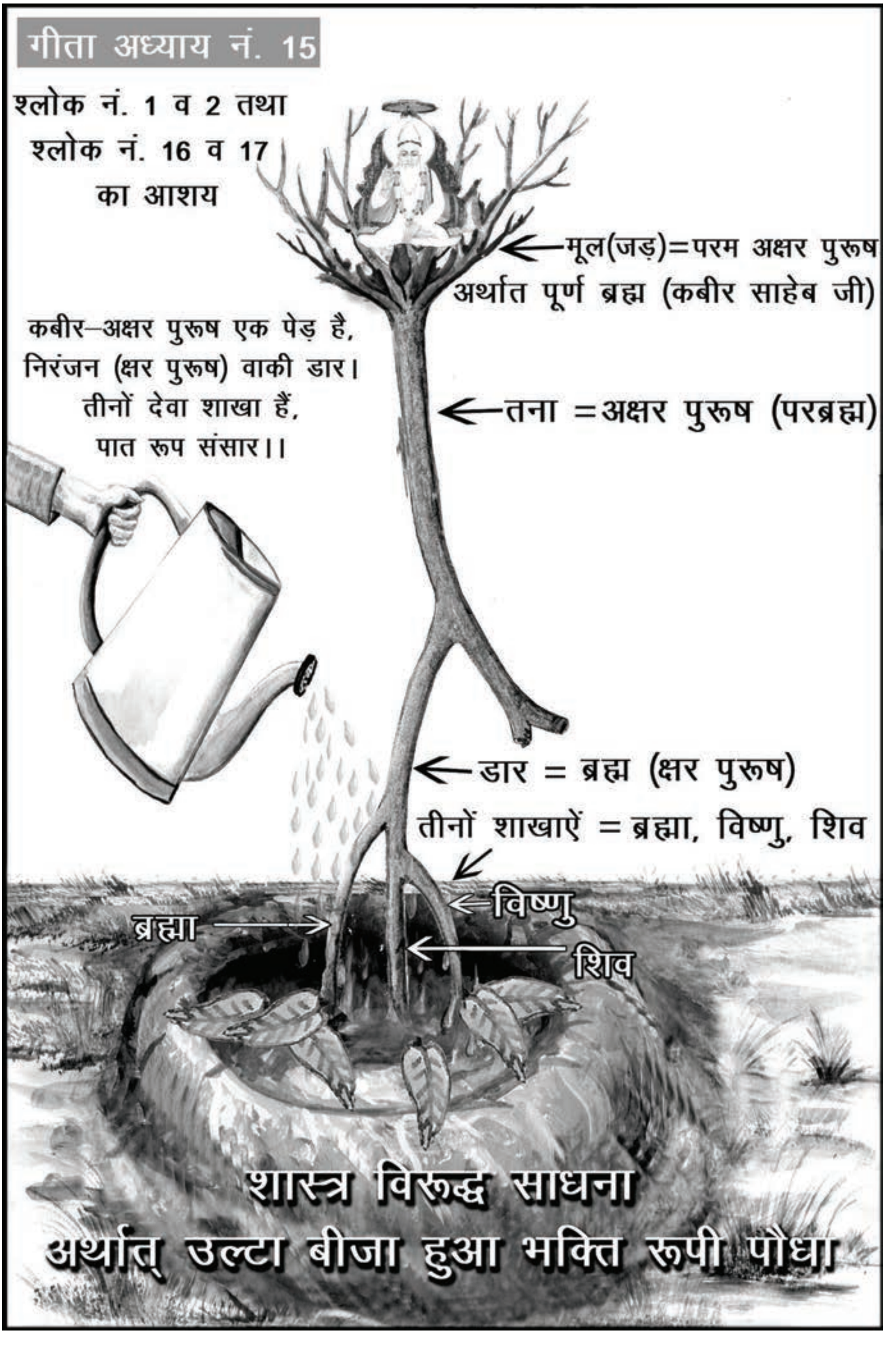
गीता अध्याय नं. 15
श्लोक नं. 1 व 2 तथा
श्लोक नं. 16 व 17
का आशय
मूल(जड़)=परम अक्षर पुरूष
अर्थात पूर्ण ब्रह्म (कबीर साहेब जी)
कबीर–अक्षर पुरूष एक पेड़ है,
निरंजन (क्षर पुरूष) वाकी डार।
तीनों देवा शाखा हैं,
पात रूप संसार।।
तना =अक्षर पुरूष (परब्रह्म)
डार = ब्रह्म (क्षर पुरूष)
तीनों शाखाऐं = ब्रह्मा, विष्णु, शिव
विष्णु
ब्रह्मा
शिव
शास्त्र विरूद्ध साधना
अर्थात् उल्टा बीजा हुआ भक्ति रूपी पौधा

यह तत्वज्ञान परमेश्वर कबीर जी ने बताया है तथा मेरे पूज्य गुरूदेव स्वामी रामदेवानंद जी की कपा व आशीर्वाद से मुझे समझ आया है। यह अटल सत्य ज्ञान है, परंतु जन-साधारण यानि वर्तमान सर्व मानव के लिए इतना जटिल है जितना चार सौ (400) वर्ष पूर्व वैज्ञानिक निकोडीन कोपरनिकस ने कहा था कि सूर्य के पथ्वी के चारों ओर घूमने से दिन-रात नहीं बनते। पथ्वी अपने अक्ष पर घूमती है, जिस कारण से दिन-रात बनते हैं। उस समय सबकी धारणा थी कि सूर्य पथ्वी के चारों ओर घूमता है। इस कारण दिन-रात बनते हैं। उस समय उस सच्चे वैज्ञानिक का धर्मांध व्यक्तियों ने जनता को भड़काकर इतना प्रबल विरोध किया था कि यह झूठ बोलता है। यह धर्म के विरूद्ध है। इसको फाँसी पर लटकाकर मार डालो। उस देश में गवर्नर को दण्ड देने व क्षमा करने का अधिकार था। कहते हैं कि गवर्नर ने वैज्ञानिक से कहा था कि आप एक बार जनता के सामने कह दें कि पथ्वी नहीं घूमती। सूर्य घूमने से दिन-रात बनते हैं। मैं आपको क्षमा कर दूँगा। परंतु सत्य के पुजारी वैज्ञानिक ने कहा कि यह असत्य है, मैं कभी नहीं कहूँगा, जो करना है करो। उस सच्चे व्यक्ति को उस समय फाँसी पर लटका दिया गया था। बाद में चार सौ वर्ष पश्चात् उस दिवांगत वैज्ञानिक की आत्मा से विश्व ने क्षमा याचना की कि आपका बताया विधान सत्य था। हमको क्षमा करना। यही दशा मेरी है। मैं कहता हूँ कि ब्रह्मा-विष्णु-शिव नाशवान हैं। इनकी जन्म-मत्यु होती है। इनके माता-पिता हैं। जिन पुराणों को आप सत्य मानते हो, उन्हीं में प्रमाण दिखा दिए हैं। धर्मांध संत-मण्डलेश्वर, अखाड़ों के महंत-जन मेरे सत्य ज्ञान का घोर विरोध कर तथा करवा रहे हैं। जिस कारण से मेरे ऊपर झूठे मुकदमें बनवाकर जेल में डाला जाता है। प्रचार बंद करवाया जाता है। परंतु वर्तमान में शिक्षित मानव है। सब प्रमाण ग्रन्थों में हैं। इसलिए मैं जीवित हूँ। यदि सौ वर्ष पूर्व यह ज्ञान बताता तो कब का परलोक चला गया होता।

आप जी से पुनः निवेदन है कि इस पुस्तक को दिल थामकर श्रद्धा के साथ पढ़कर समझकर मुझ दास (लेखक) के पास आऐं और शास्त्रोक्त साधना लेकर अपना तथा परिवार का निःशुल्क कल्याण करवाऐं।

।।सत साहेब।।

लेखक
(संत) रामपाल दास

''अंध श्रद्धा भक्ति का वर्णन''

मूर्ति पूजा क्या है?

मूर्ति पूजा के अंतर्गत अंध श्रद्धालुओं को कई प्रावधान बताए गए हैं :-

श्री विष्णु जी, श्री शिव जी, श्री देवी दुर्गा माता जी, श्री गणेश जी, श्री लक्ष्मी जी, श्री पार्वती जी तथा अन्य लोक प्रसिद्ध देवी-देवताओं की मूर्तियों की पूजा यानि उनको प्रतिदिन स्नान करवाना, नए वस्त्र पहनाना, तिलक लगाना, उन पर फूल चढ़ाना, अच्छा भोजन बनाकर उनके मुख को भोजन लगाकर भोजन खाने की प्रार्थना करना। दूध पिलाना, अगरबत्ती व ज्योति जलाकर उनकी आरती उतारना। उनसे अपने परिवार में सुख-शांति, समद्धि के लिए प्रार्थना करना। नौकरी-रोजगार, संतान व धन प्राप्ति के लिए अर्ज करना आदि-आदि तथा शिव जी के लिंग (Private Part) यानि गुप्तांग की पूजा करना। उस लिंग पर दूध डालना, उसके ऊपर ताम्बे या पीतल का स्टैंड रखकर ताम्बे या पीतल का घड़ा (छोटी टोकनी) के नीचे तली में बारीक छेद करके पानी से भरकर रखना जिससे लगातार लिंग के ऊपर शीतल जल की धारा गिरती रहती है। यह मूर्ति पूजा है।

❖ निवेदन :- श्रीमद्भगवत गीता के अध्याय 16 श्लोक 23-24 में स्पष्ट निर्देश है कि जो साधक शास्त्रों में वर्णित भक्ति की क्रियाओं के अतिरिक्त साधना व क्रियाऐं करते हैं, उनको न सुख की प्राप्ति होती है, न सिद्धि यानि आध्यात्मिक शक्ति प्राप्त होती है, न उनको गति यानि मोक्ष की प्राप्ति होती है अर्थात् व्यर्थ पूजा है। वह नहीं करनी चाहिए क्योंकि साधक इन तीन लाभों के लिए ही परमात्मा की भक्ति करता है। इसलिए वे धार्मिक क्रियाऐं त्याग देनी चाहिऐं जो गीता तथा वेदों जैसे प्रभुदत्त शास्त्रों में वर्णित नहीं है। उपरोक्त मूर्ति पूजा का वेदों तथा गीता में उल्लेख न होने से शास्त्रविरूद्ध साधना है।

❖ विशेष :- यहाँ पर कुछ तर्क देना अनिवार्य समझता हूँ :-

''शास्त्रों की स्थिति''

संसार की उत्पत्ति के पश्चात् परम अक्षर ब्रह्म यानि परमेश्वर ने क्षर पुरूष यानि काल ब्रह्म (जिसे ज्योति स्वरूप निरंजन तथा क्षर पुरूष भी कहते हैं) को उसके तप के प्रतिफल में इक्कीश ब्रह्माण्ड का राज्य दिया। काल ब्रह्म ने सनातन परम धाम यानि सतलोक (सच्चखण्ड) में एक भयंकर गलती की। देवी दुर्गा जी ने तथा हम सबने भी वहाँ पर गलती की। जिस कारण से इसको तथा इसकी पत्नी देवी दुर्गा तथा हम सब प्राणियों सहित इसके इक्कीश ब्रह्माण्डों सहित सतलोक से निकाल दिया। इसके इक्कीश ब्रह्माण्ड हम सबको साथ लिए सतलोक से सोलह (16) संख कोस यानि 48 संख किलोमीटर की दूरी पर आ गए। क्षर पुरूष यानि काल ब्रह्म से पहले परमेश्वर (सत पुरूष) ने अक्षर पुरूष यानि परब्रह्म की उत्पत्ति की थी। उसको सात संख ब्रह्माण्ड का क्षेत्र दिया था। सतपुरूष यानि परमेश्वर को

परम अक्षर पुरूष या परम अक्षर ब्रह्म भी कहा जाता है। इन तीनों पुरूषों (क्षर पुरूष, अक्षर पुरूष तथा परम अक्षर पुरूष) का वर्णन गीता अध्याय 15 श्लोक 16-17 में स्पष्ट है। श्लोक 17 में परम अक्षर पुरूष की महिमा बताई है। (अधिक व सम्पूर्ण जानकारी के लिए कपा पढ़ें ''संष्टि रचना'' अध्याय में इसी पुस्तक के पष्ठ 208 पर।)

क्षर पुरूष केवल इक्कीश ब्रह्माण्डों का स्वामी है :- यह क्षर पुरूष यानि काल ब्रह्म है। एक ब्रह्माण्ड में तीन लोक विशेष प्रसिद्ध हैं :- 1. पथ्वी लोक, 2. स्वर्ग लोक, 3. पाताल लोक। इसके अतिरिक्त शिव लोक, विष्णु लोक, ब्रह्मा का लोक, महास्वर्ग लोक यानि ब्रह्म लोक, देवी दुर्गा का लोक, इन्द्र का लोक, धर्मराय का लोक, सप्तपुरी लोक, गोलोक, चाँद, सूर्य, नौ गह, नौ लाख तारे, छयानवें करोड़ मेघ माला, अठासी हजार ऋषि मंडल, तेतीस करोड़ देव स्थान आदि-आदि विद्यमान हैं।

जिसमें हम रह रहे हैं, यह काल ब्रह्म के इक्कीस ब्रह्माण्डों में से एक है। इस एक ब्रह्माण्ड का संचालक भी काल ब्रह्म (क्षर पुरुष) है।

पाँच ब्रह्माण्डों का एक महाब्रह्माण्ड है। एक ब्रह्माण्ड बीच में तथा अन्य चार इस बीच वाले ब्रह्माण्ड की परिक्रमा करते रहते हैं। परिक्रमा करने वाले एक ब्रह्माण्ड में हम रह रहे हैं। जिस ब्रह्माण्ड में हम रह रहे हैं तथा एक जो मध्य वाला ब्रह्माण्ड है, वर्तमान में केवल इन्हीं दो ब्रह्माण्डों में जीव हैं। महाब्रह्माण्ड के बीच वाले ब्रह्माण्ड में जीव हैं। यह ज्ञान केवल क्षर पुरूष और देवी दुर्गा जी को ही है। अन्य मानते हैं कि वर्तमान में केवल इसी में जीव हैं, अन्य ब्रह्माण्डों में जीव नहीं हैं। जब इस ब्रह्माण्ड में प्रलय होगी, तब उन परिक्रमा करने वालों में से एक में संष्टि क्रम शुरू होगा। काल ने प्रतिज्ञा कर रखी है कि मैं कभी किसी को अपने वास्तविक स्वरूप (काल रूप जो इसका असली चेहरा है) में दर्शन नहीं दूँगा। (प्रमाण :- गीता अध्याय 7 श्लोक 24-25) इसलिए यह अपने पुत्रों ब्रह्मा जी, विष्णु जी तथा शिव जी के रूप में अपने साधक को दर्शन देता है। जिस कारण से ऋषियों को साधना समय में जिस रूप में दर्शन हुए, उसी की महिमा कहनी शुरू कर दी। यह शिव पुराण में सदाशिव या महाशिव कहा जाता है। विष्णु पुराण में महाविष्णु तथा ब्रह्मा पुराण में महाब्रह्मा कहा गया है। इसी कारण से वर्तमान तक सब ऋषिजन भ्रम में पड़कर रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु जी तथा तमगुण शिव जी को सर्वेस्वा मानने लगे क्योंकि ऋषिजनों ने वेदों को पढ़ा। (उस समय पुराणों की रचना नहीं हुई थी। पुराण ऋषियों का अनुभव है और वेद ज्ञान यानि चारों वेद परमात्मा द्वारा दिए गए हैं।) वेदों में केवल एक अक्षर ओं (ओम्=ॐ) मंत्र है भक्ति करने का, अन्य कोई मंत्र मोक्ष का नहीं है। (प्रमाण :- यजुर्वेद अध्याय 40 मंत्र 15 में।)

ऋषियों ने ॐ (ओम्) नाम का जाप किया जो ब्रह्म (काल ब्रह्म = क्षर पुरूष) का है। ब्रह्म (क्षर पुरूष) ने अपनी प्रतिज्ञा के अनुसार अपने वास्तविक रूप में दर्शन न देकर अपने पुत्रों (ब्रह्मा, विष्णु, शिव) के रूप में दर्शन देकर उनकी भक्ति के प्रतिफल का आशीर्वाद देकर अंतर्ध्यान हो गए। किसी ऋषि को श्री ब्रह्मा

जी के रूप में दर्शन दिए। उस ऋषि को विश्वास हो गया कि रजगुण ब्रह्मा जी जो सर्गुण देवता हैं, ये ही पूर्ण परमात्मा हैं।

ऋषियों को चारों वेदों का सम्पूर्ण ज्ञान नहीं था। (कारण आगे तुरंत बताऊंगा, उसी के लिए यह भूमिका लिख रहा हूँ कि ऋषियों को वेदों का ज्ञान ठीक से क्यों नहीं था।) उन्होंने वेदों में पढ़ा कि पूर्ण परमात्मा की भक्ति करने से मोक्ष मिलता है। जरा-मरण समाप्त हो जाता है। अन्य देवताओं (रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव जी व अन्य देवी-देवता, ये सब अन्य देवताओं की श्रेणी में आते हैं) की भक्ति से पूर्ण मोक्ष संभव नहीं है। ऋषियों ने अज्ञानता के कारण पूर्ण परमात्मा की भक्ति व साधना का मंत्र ओं (ॐ) मान लिया तथा श्री ब्रह्मा जी से सुनकर हठयोग से तप भी साथ-साथ किया क्योंकि ब्रह्मा जी ने वेदों की प्राप्ति से पहले जब वे श्री विष्णु जी की नाभि से निकले, कमल पर युवावस्था में सचेत हुए तो क्षर पुरूष (काल ब्रह्म) ने आकाशवाणी की कि तप करो - तप करो। श्री ब्रह्मा जी ने एक हजार वर्ष तक तप किया। उसी हठपूर्वक तप को श्री ब्रह्मा जी ने पूर्ण परमात्मा के द्वारा की गई आकाशवाणी मान लिया जबकि यह आकाशवाणी क्षर पुरूष ने की थी जिसे ऋषिजन ब्रह्म कहते हैं। यह पूर्ण परमात्मा नहीं है। पूर्ण परमात्मा तो परम अक्षर ब्रह्म है जिसका वर्णन गीता अध्याय 8 श्लोक 1 में किए अर्जुन के प्रश्न कि ''तत् ब्रह्म क्या है?'' के उत्तर में इसी अध्याय 8 के श्लोक 3 में गीता ज्ञान बोलने वाले ने दिया है कि ''वह परम अक्षर ब्रह्म है।'' इसी का ज्ञान अध्याय 8 के श्लोक 8, 9, 10 तथा 20, 21, 22 में है तथा अध्याय 15 के श्लोक 4 तथा 17 में है। इसी की शरण में जाने के लिए गीता ज्ञान दाता ने गीता अध्याय 18 श्लोक 62 तथा 66 में कहा है। उसकी साधना का मंत्र गीता अध्याय 17 श्लोक 23 में बताया है जिसकी भक्ति का ज्ञान तत्वदर्शी संत से प्राप्त करने को कहा है। (प्रमाण :- गीता अध्याय 4 श्लोक 34 में) वह तत्वज्ञान न चारों वेदों में है, न ही गीता, पुराणों व उपनिषदों में है। वह सूक्ष्मवेद में है। (कारण आगे बताने जा रहा हूँ।)

ऋषियों ने अज्ञान आधार से हठ करके घोर तप तथा ओं (ॐ) मंत्र का जाप किया। उसी कारण से काल ब्रह्म ने किसी को विष्णु जी के रूप में साधक ऋषि को दर्शन दिए। उस ऋषि ने सतगुण विष्णु देवता को पूर्ण परमात्मा मान लिया क्योंकि वे ऋषिजन गलती से ॐ मंत्र का जाप पूर्ण परमात्मा का मान बैठे जो भूल वर्तमान तक लगी है। इसी प्रकार काल ब्रह्म ने अन्य ऋषि को तमगुण शिव देवता के रूप में दर्शन दिए तो उसने श्री शिव जी तमगुण को ही पूर्ण परमात्मा घोषित कर दिया। किसी ऋषि साधक को ब्रह्मा जी के रूप में दर्शन दिए तो उसने श्री ब्रह्मा जी रजगुण देवता को पूर्ण परमात्मा बताया। जिस कारण से इन्हीं तीनों देवताओं (ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव) में से दो देवताओं (श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी) तथा अन्य देवी-देवताओं की पूजा करने लगे। ऋषियों को पुराणों का ज्ञान श्री ब्रह्मा जी ने दिया। यह एक ही बोध था। ऋषियों ने अपने पिता, पितामह श्री ब्रह्मा

जी से सुने पुराण ज्ञान में अपना अनुभव एक-दूसरे से सुनी कथाऐं मिला-मिलाकर अठारह पुराण बना दिए जिनमें वेदों का ज्ञान नाममात्र है। अधिक ज्ञान ऋषियों का अपना अनुभव जो भक्ति मार्ग यानि पूर्ण मोक्ष मार्ग में प्रमाण में नहीं लिया जा सकता यानि जो साधना करने की विधि पुराणों में ऋषियों द्वारा लिखी है और वह वेदों तथा वेदों के सारांश रूप श्रीमद्भगवत गीता से मेल नहीं करती तो वह शास्त्र विरूद्ध है। उस साधना को नहीं करना है। इन्हीं ऋषियों ने शास्त्र विरूद्ध साधना जैसे मूर्ति पूजा, श्राद्ध करना, पिण्ड दान करना, मंदिर बनवाना तथा उनमें मूर्ति स्थापित करना, उनमें प्राण प्रतिष्ठा करना, शिव लिंग की पूजा करना, अन्य देवी-देवताओं की पूजा ईष्ट रूप में करना, का प्रचलन किया जो न पवित्र वेदों में वर्णित है, न चारों वेदों का सारांश पवित्र गीता में वर्णित है। जो साधना वेदों तथा गीता में वर्णित नहीं है, वह नहीं करनी है क्योंकि वह शास्त्रविधि को त्यागकर मनमाना आचरण होने से व्यर्थ है।

आप जी को स्पष्ट हुआ कि पुराण ऋषियों कत ज्ञान है जो वेदों की प्राप्ति के पश्चात् का है जो ऋषियों के अधूरे वेद ज्ञान का परिणाम है और भक्ति के योग्य नहीं है।

उपनिषद :- उपनिषद भी ऋषियों का अपना निजी अनुभव है। पुराणों में जिस ऋषि ने पुराण का ज्ञान किसी जन-समूह को प्रवचन करके बताया। उसमें अपना अनुभव तथा अन्य किसी से सुना ज्ञान भी मिलाया है। परंतु उपनिषद एक ऋषि का अपना अनुभव है। उसी के नाम से उपनिषद प्रसिद्ध है। जैसे कठोपनिषद यानि कठ ऋषि द्वारा लिखा अपना अनुभव, यह उपनिषद है। यदि उपनिषदों का ज्ञान वेद विरूद्ध है तो वह भी अमान्य है। भक्ति व साधना में प्रयोग करने योग्य नहीं है।

❖ शास्त्रों की स्थिति बताई जा रही है :- पुराणों तथा उपनिषदों की स्थिति का वर्णन कर दिया है।

❖ चारों वेदों की स्थिति :- जिस समय क्षर पुरूष (काल ब्रह्म यानि ज्योति स्वरूप निरंजन काल) को हमारे सहित इक्कीश ब्रह्माण्डों को सतलोक से दूर भेज दिया, उसके पश्चात् काल ब्रह्म ने अपनी पत्नी देवी दुर्गा (अष्टंगी) से विलास करके तीन पुत्रों (रजगुण-ब्रह्मा, सतगुण-विष्णु तथा तमगुण शिव) को उत्पन्न किया। श्री दुर्गा देवी जी ने अपने वचन से तीन युवा लड़की उत्पन्न की। उनका नाम सावित्री, लक्ष्मी और पार्वती रखा। इनका विवाह क्रमशः ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव से कर दिया। इसके पश्चात् काल ब्रह्म (क्षर पुरूष) के इक्कीश ब्रह्माण्डों में जीव उत्पन्न होने व मरने का सिलसिला प्रारम्भ हो गया।

पूर्ण परमात्मा को ज्ञान था कि जो आत्मा अपनी गलती से काल ब्रह्म (क्षर पुरूष) के साथ गए हैं, वे वहाँ पर महाकष्ट उठाऐंगे। पुनः सुख स्थान यानि सतलोक (सनातन परम धाम) में आने के लिए यथार्थ साधना की आवश्यकता पड़ेगी तथा उनको ज्ञान होना चाहिए कि तुम किस कारण से इस काल लोक में

जन्म-मर रहे हो? कुत्ते, गधे, पक्षी आदि का जीवन क्यों भोग रहे हो? इस जन्म-मरण के संकट से मुक्ति कैसे मिलेगी? इस विषय का सम्पूर्ण वेद ज्ञान यानि सूक्ष्मवेद पूर्ण परमात्मा (परम अक्षर ब्रह्म) ने अपनी आत्मा से क्षर पुरूष (काल ब्रह्म) की आत्मा में ई-मेल कर दिया। कुछ समय बाद वह सम्पूर्ण वेद ज्ञान (सूक्ष्मवेद) काल ब्रह्म (ज्योति स्वरूप निरंजन यानि क्षर पुरूष) की श्वासों द्वारा बाहर प्रकट हुआ। जैसे कम्प्यूटर द्वारा प्रिंटर को कमांड देते ही मैटर स्वतः बाहर आ जाता है। परम अक्षर पुरूष के कमांड देने से काल ब्रह्म की आत्मा से श्वासों द्वारा पूर्ण वेद बाहर आया। क्षर पुरूष ने उस सूक्ष्म वेद को पढ़ा तो इसने हमारे साथ धोखा किया। इसको लगा कि यदि इस ज्ञान का तथा समाधान का मेरे साथ आए प्राणियों को पता लग गया तो ये सब सत्य साधना करके मेरे लोक से सतलोक (सनातन परम धाम) में चले जाऐंगे। इसने उस सम्पूर्ण वेद को कांट-छांट करके विशेष ज्ञान नष्ट कर दिया। केवल वह प्रकरण व साधना वाला ज्ञान भक्ति का वर्णन रख लिए जिससे जन्म-मरण बना रहे और मानव जीवन प्राप्त प्राणी शेष बचे अधूरे वेद का ज्ञान रखें और भ्रम बना रहे कि हम पूर्ण परमात्मा की भक्ति कर रहे है, परंतु वे मंत्र काल ब्रह्म की साधना के होने के कारण इनका जन्म-मरण, स्वर्ग-नरक सदा बना रहेगा और मेरे लोक में फँसे रहेंगे। ऐसा विचार करके काल ब्रह्म ने अधूरा वेद ज्ञान समुद्र में छुपा दिया। गुप्त रूप से अपनी पत्नी देवी दुर्गा को संदेश दिया कि इन तीनों पुत्रों (ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव) को सागर मंथन के लिए भेज दे। मैंने सब व्यवस्था कर दी है। एक ज्ञान निकलेगा, उसे मेरा बड़ा पुत्र ब्रह्मा प्राप्त करे। उसके पश्चात् अन्य को वह ही बताए। ऐसा ही किया गया। सागर मंथन में वेद ब्रह्मा जी को मिले जिनमें पूर्ण अध्यात्म ज्ञान तथा पूर्ण मोक्ष प्राप्त करने की विधि नहीं है। केवल स्वर्ग-महास्वर्ग (ब्रह्मलोक) तक प्राप्ति की भक्ति विधि वर्णित है। उस कारण से सब प्राणी उस सनातन परम धाम को प्राप्त नहीं कर पा रहे जिसके विषय में गीता ज्ञान दाता ने गीता अध्याय 18 श्लोक 62 में बताया है। उस परमेश्वर का स्पष्ट ज्ञान शेष बचे वेद में नहीं है। इसलिए गीता अध्याय 4 श्लोक 32 में कहा है कि सम्पूर्ण अध्यात्म ज्ञान तथा धार्मिक यज्ञों (अनुष्ठानों) की सम्पूर्ण विधि का ज्ञान स्वयं (ब्रह्मणः मुखे वितताः) सच्चिदानंद घन ब्रह्म (परम अक्षर पुरूष) ने अपने मुख से बोली वाणी में विस्तार से बताया है। वह तत्वज्ञान (सूक्ष्मवेद) है। उसमें वर्णित विधि से सर्व पाप नष्ट हो जाते हैं और वह साधना अपने दैनिक कर्म (कार्य) करते-करते करने का प्रावधान है। (गीता अध्याय 4 श्लोक 32) (अधिक जानकारी के लिए पढ़ें इसी पुस्तक के पृष्ठ 59 पर ''सूक्ष्मवेद का रहस्य'' में।)

❖ गीता अध्याय 4 श्लोक 34 :- इसमें गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि जो तत्वज्ञान परमात्मा स्वयं प्रकट होकर पृथ्वी पर अपने मुख कमल से बोली वाणी में बताता है, उस ज्ञान को तू तत्वदर्शी संतों के पास जाकर समझ। उनको दण्डवत् प्रणाम करने से कपट छोड़कर नम्रतापूर्वक प्रश्न करने से वे परमात्म तत्व को भली-भांति जानने वाले ज्ञानी महात्मा उस तत्वज्ञान का उपदेश करेंगे। (गीता

अध्याय 4 श्लोक 34)

❖ गीता अध्याय 15 श्लोक 4 :- इसमें कहा है कि तत्वज्ञान की प्राप्ति के पश्चात् अज्ञान को इस तत्वज्ञान रूपी शस्त्र से काटकर यानि तत्वज्ञान को भली-भांति समझकर उसके पश्चात् परमेश्वर के उस परमपद की खोज करनी चाहिए जहाँ जाने के पश्चात् साधक लौटकर संसार में कभी नहीं आते। जिस परमेश्वर से संसार रूप वृक्ष की प्रवृति विस्तार को प्राप्त हुई है यानि जिस परमात्मा ने सर्व ब्रह्माण्डों की उत्पत्ति की है, उसी परमेश्वर की भक्ति करो। (गीता अध्याय 15 श्लोक 4)

❖ गीता अध्याय 18 श्लोक 62 :- हे भारत! तू सर्व भाव से उस परमेश्वर की शरण में जा। उस परमेश्वर की कृपा से ही तू परम शांति यानि जन्म-मरण से सदा के लिए छुटकारा तथा (शाश्वतम् स्थानम्) सनातन परम धाम यानि सतलोक को प्राप्त करेगा।

विशेष :- वह तत्वज्ञान गीता बोलने वाले को भी नहीं है। यदि ज्ञान होता तो एक अध्याय और बोल देता। कह देता कि उस अध्याय में पढ़ें। इससे स्वसिद्ध है कि वह तत्वज्ञान गीता-वेद पढ़ने वालों के पास भी नहीं है।

पाठकजनो! गीता अध्याय 4 श्लोक 32 तथा 34 में कहे तत्वज्ञान को एकमात्र जानने वाला तत्वदर्शी संत यह दास (रामपाल दास) है। उस तत्वज्ञान को अपने मुख कमल से बोलने वाले परम अक्षर ब्रह्म कबीर जी हैं।

प्रश्न :- कौन कबीर? उत्तर (संत गरीबदास जी का) :-

गरीब, हम सुलतानी नानक तारे, दादू को उपदेश दिया।
जाति जुलाहा भेद ना पाया, काशी मांहे कबीर हुआ।।
गरीब, अनन्त कोटि ब्रह्मण्ड का, एक रति नहीं भार।
सतगुरू पुरूष कबीर हैं, कुल के सिरजनहार।।

शब्दार्थ :- संत गरीबदास जी गाँव-छुड़ानी जिला-झज्जर (हरियाणा) वाले को दस वर्ष की आयु में खेतों में गाय चराते समय फाल्गुन मास की शुक्ल पक्ष (चांदनी) द्वादशी को सुबह लगभग दस बजे परम अक्षर ब्रह्म सतलोक से नीचे आकर जिंदा बाबा के वेश में मिले थे। उनकी आत्मा को श्री नानक जी (सिक्ख धर्म के प्रवर्तक) की तरह ऊपर सतलोक लेकर गए थे। श्री दादू जी को भी वही परम अक्षर ब्रह्म जिंदा बाबा के रूप में मिले थे। उनकी आत्मा को भी सतलोक लेकर गए थे। फिर सबको पुनः शरीर में प्रवेश किया था। उन महात्माओं ने परमात्मा के सनातन परम धाम तथा परम अक्षर ब्रह्म को आँखों देखा और संसार में उसके साक्षी बने। संत गरीबदास जी को दस वर्ष की आयु में सन् 1727 (विक्रमी संवत् 1784) में मिले थे। श्री नानक जी तथा श्री दादू जी को पहले मिले थे। इसलिए संत गरीबदास जी ने स्पष्ट कहा कि जो पूर्ण परमात्मा मुझे मिला था, उसी ने श्री नानक जी तथा श्री दादू जी को प्रकट दर्शन देकर सत्य भक्ति व ज्ञान बताकर संसार से पार किया था। वह और कोई नहीं है, वह वही है जो काशी में

कबीर जुलाहे के नाम से प्रकट हुआ था। उस परमेश्वर ने समय-समय पर सतलोक से पृथ्वी पर प्रकट होकर तत्वज्ञान अपने मुख कमल से बोल-बोलकर अपनी अमृतवाणी में कहा है जो लिखी जाती है और जो सूक्ष्मवेद (तत्वज्ञान) यानि सम्पूर्ण वेद ज्ञान है।

इस सूक्ष्मवेद में चारों वेदों (ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद तथा अथर्ववेद) वाला ज्ञान यानि सूक्ष्म से लिया अधूरा ज्ञान तथा इन्हीं चारों वेदों का सारांश रूप श्रीमद्भगवत गीता वाला ज्ञान तो है ही तथा जो काल ब्रह्म ने नष्ट कर दिया था, वह ज्ञान भी है। इस दास (रामपाल दास) के पास सूक्ष्म वेद के ज्ञान वाले सम्पूर्ण मोक्ष प्राप्ति की साधना के शास्त्रोक्त मंत्र हैं। इनकी साधना करने से मन बुराईयों से परहेज करने लगता है। चोरी-डाका, हत्या, हिंसा, भ्रष्टाचार, बलात्कार, सर्व प्रकार के नशे से अपने आप ग्लानि होने लगती है। आत्मा निर्मल हो जाती है। हृदय में दया का संचार होने लगता है। आवश्यकता से अधिक धन संग्रह करने या बड़े-बड़े मकान आदि बनाने की रूचि नहीं रहती। उसकी पूर्ण इच्छा परमात्मा के उस सनातन परम धाम (सतलोक) को प्राप्त करने तथा सदा के लिए जन्म-मरण से छुटकारा पाने की हो जाती है। इसलिए मेरे (लेखक) से दीक्षा लेकर मर्यादा में रहकर साधना करने से परमेश्वर का वह परम पद प्राप्त होता है जहाँ जाने के पश्चात् साधक लौटकर संसार में नहीं आते यानि (शाश्वतं स्थानं) सनातन परम धाम (सतलोक) तथा परम शांति प्राप्त हो जाती है जिसके विषय में गीता अध्याय 18 श्लोक 62 तथा गीता अध्याय 15 श्लोक 4 में कहा है।

गीता अध्याय 8 के श्लोक 8, 9, 10 में गीता का ज्ञान बोलने वाले ने स्वयं कहा है कि उस दिव्य परम पुरूष यानि परम अक्षर ब्रह्म की भक्ति करने वाला उस परम पुरूष परमेश्वर को प्राप्त होता है और गीता अध्याय 8 के ही श्लोक 5 तथा 7 में गीता ज्ञान दाता ने अपने विषय में कहा है कि मेरी भक्ति करेगा तो मुझे ही प्राप्त होगा। इसी अध्याय 8 के श्लोक 13 में कहा है कि मेरी भक्ति का केवल एक ओम् (ॐ) अक्षर है। ध्यान रहे गीता ज्ञान दाता ने गीता अध्याय 2 श्लोक 12, अध्याय 4 श्लोक 5, अध्याय 10 श्लोक 2 में स्पष्ट कर रखा है कि हे अर्जुन! तेरे और मेरे अनेकों जन्म हो चुके हैं, आगे भी होते रहेंगे। इससे सिद्ध है कि गीता ज्ञान दाता स्वयं जन्मता-मरता है तो उपासक भी जन्मते-मरते रहेंगे।

ओं (ॐ) नाम के जाप से ब्रह्मलोक प्राप्त होता है यानि ॐ (ओं) मंत्र का जाप करने वाला साधक ब्रह्मलोक में चला जाता है। प्रमाण :- श्री देवी पुराण गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित के सातवें स्कंद में पृष्ठ 562-563 पर देवी दुर्गा जी ने हिमालय राजा को ब्रह्म उपदेश देते समय यह रहस्य बताया है।

गीता अध्याय 8 श्लोक 16 में यह भी स्पष्ट है कि ब्रह्मलोक में गए साधक भी पुनरावर्ती में हैं यानि ब्रह्मलोक गए साधक भी अपना स्वर्ग समय पूरा करके पृथ्वी पर लौटकर आते हैं। यह पूर्ण मोक्ष नहीं है। ॐ (ओम्) नाम के जाप से ब्रह्मलोक प्राप्त होता है। पूर्ण मोक्ष के लिए गीता अध्याय 17 श्लोक 23 में बताए

तीन मंत्र का (ॐ, तत्, सत्) नाम स्मरण करने से (ब्रह्मणः) सच्चिदानंद घन ब्रह्म यानि परम अक्षर ब्रह्म की प्राप्ति होती है। गीता पाठकों ने गीता शास्त्र को पढ़ा है, समझा नहीं क्योंकि गीता अनुवादक गीता के गूढ़ सांकेतिक शब्दों को नहीं समझ सके। जो तीन मंत्र हैं :- ॐ (ओम्), तत्, सत्। ये गीता अध्याय 15 श्लोक 16-17 में वर्णित तीनों पुरूषों (प्रभुओं) के हैं :-

1. क्षर पुरूष (काल ब्रह्म) का ॐ (ओम्) नाम है जो प्रत्यक्ष है। काल ब्रह्म केवल 21 ब्रह्माण्डों का प्रभु है। यह नाशवान है। इसके लोक के सब प्राणी भी नाशवान हैं।

2. अक्षर पुरूष (परब्रह्म) का तत् मंत्र है, यह सांकेतिक है। इसका यथार्थ मंत्र मेरे (लेखक के) पास है। यह प्रभु सात संख ब्रह्माण्डों का स्वामी है। यह भी नाशवान है। इसके लोक के सब प्राणी भी नाशवान हैं।

3. परम अक्षर पुरूष (परम अक्षर ब्रह्म) का सत् मंत्र है। यह भी सांकेतिक है। यथार्थ मंत्र मेरे पास है क्योंकि सूक्ष्म वेद यानि तत्वज्ञान में इन मंत्रों के वास्तविक शब्द का उल्लेख है। सूक्ष्मवेद केवल लेखक (रामपाल दास) के पास है और उसको ठीक से समझा है। परम अक्षर पुरूष वास्तव में अविनाशी तथा पुरूषोत्तम व परमात्मा है। इसके लोक में सर्व जीवात्मा भी अविनाशी हैं। यही सबका पालनकर्ता परमेश्वर है।

मुझ दास को एक वैद्य मानकर अपने जन्म-मरण के दीर्घ रोग का उपचार निःशुल्क करवाऐं। जब तक संसार में रहोगे, आपकी प्रत्येक आवश्यक मनोकामना पूर्ण होंगी। यह बात यह दास (रामपाल दास) दावे व पूर्ण विश्वास के साथ कह रहा है। जो लाभ आप सबको साधकर यानि अनेकों देवी-देवताओं की भक्ति व मूर्ति, तीर्थों, धामों आदि की पूजा करके भी नहीं प्राप्त कर पाते, वे सब लाभ आप जी को ''एकै साधै'' यानि एक मूल रूप परम अक्षर ब्रह्म की साधना से मिल जाएगा। जैसे आम के पौधे की जड़ (मूल) की सिंचाई करने से पौधे के सर्व भाग (तना, डार, शाखाऐं, पत्ते) विकसित होकर पेड़ बनकर शाखाऐं फल देने लगती हैं। देखें सीधा रोपा हुआ पौधा इसी पुस्तक के पष्ठ 151 पर। आप जी सब देवों की साधना कर रहे हैं। आपने भक्ति रूपी आम का पौधा उल्टा रोप रखा है जो नष्ट हो रहा है यानि अध्यात्म लाभ प्राप्त नहीं हो रहा। कपा देखें उल्टे रोपे गए आम के पौधे का चित्र इसी पुस्तक के पष्ठ 152 पर। इस विषय में सम्पूर्ण जानकारी आप जी पढ़ें इसी पुस्तक के पष्ठ 147 पर ''भक्ति किस प्रभु की करनी चाहिए? गीता अनुसार'' में।

आन-उपासना करना व्यर्थ है

सूक्ष्मवेद (तत्वज्ञान) में आन-उपासना निषेध बताया है। उपासना का अर्थ है अपने ईष्ट देव के निकट जाना यानि ईष्ट को प्राप्त करने के लिए की जाने वाली तड़फ, दूसरे शब्दों में पूजा करना।

आन-उपासना वह पूजा है जो शास्त्रों में वर्णित नहीं है।

❖ **मूर्ति-पूजा आन-उपासना है :-**

इस विषय पर सूक्ष्मवेद में कबीर साहेब ने इस प्रकार स्पष्ट किया है :-

कबीर, पत्थर पूजें हरि मिले तो मैं पूजूँ पहार।
तातें तो चक्की भली, पीस खाए संसार।।
बेद पढ़ैं पर भेद ना जानें, बांचें पुराण अठारा।
पत्थर की पूजा करें, भूले सिरजनहारा।।

शब्दार्थ :- किसी देव की पत्थर की मूर्ति बनाकर उसकी पूजा करते हैं जो शास्त्रविरूद्ध है। जिससे कुछ लाभ नहीं होता। कबीर परमेश्वर ने कहा है कि यदि एक छोटे पत्थर (देव की प्रतिमा) के पूजने से परमात्मा प्राप्ति होती हो तो मैं तो पहाड़ की पूजा कर लूँ ताकि शीघ्र मोक्ष मिले। परंतु यह मूर्ति पूजा व्यर्थ है। इस (मूर्ति वाले पत्थर) से तो घर में रखी आटा पीसने वाली पत्थर की चक्की भी लाभदायक है जिससे कणक पीसकर आटा बनाकर सब भोजन बनाकर खा रहे हैं।

वेदों व पुराणों का यथार्थ ज्ञान न होने के कारण हिन्दू धर्म के धर्मगुरू पढ़ते हैं वेद, पुराण व गीता, परंतु पूजा पत्थर की करते तथा अनुयाईयों से करवाते हैं। इनको सृजनहार यानि परम अक्षर ब्रह्म का ज्ञान ही नहीं है। उसको न पूजकर अन्य देवी-देवताओं की पूजा तथा उन्हीं की काल्पनिक मूर्ति पत्थर की बनाकर पूजा का विधान लोकवेद (दंत कथा) के आधार से बनाकर यथार्थ परमात्मा को भूल गए हैं। उस परमेश्वर की भक्ति विधि का भी ज्ञान नहीं है।

❖ विवेक से काम लेते हैं :- परमात्मा कबीर जी ने समझाने की कोशिश की है कि आप जी को आम का फल खाने की इच्छा हुई। किसी ने आपको बताया कि यह पत्थर की मूर्ति आम के फल की है। आम के फल के ढ़ेर सारे गुण बताए। आप जी उस आम के फल के गुण तो उसको खाकर प्राप्त कर सकते हैं। जो आम की मूर्ति पत्थर की बनी है, उससे वे लाभ प्राप्त नहीं कर सकते। आप जी को आम का फल चाहिए। उसकी यथार्थ विधि है कि पहले मजदूरी-नौकरी करके धन प्राप्त करो। फिर बाजार में जाकर आम के फल विक्रेता को खोजो। फिर वह वांछित वस्तु मिलेगी।

इसी प्रकार जिस भी देव के गुणों से प्रभावित होकर उससे लाभ लेने के लिए आप प्रयत्नशील हैं, उससे लाभ की प्राप्ति उसकी मूर्ति से नहीं हो सकती। उसकी विधि शास्त्रों में वर्णित है। वह अपनाऐं तथा मजदूरी यानि साधना करके भक्ति धन संग्रह करें। फिर वृक्ष की शाखा रूपी देव आप जी को मन वांछित फल आपके भक्ति कर्म के आधार से देंगे।

अन्य उदाहरण :- किसी संत (बाबा) से उसके अनुयाईयों को बहुत सारे लाभ हुआ करते थे। श्रद्धालु अपनी समस्या बाबा यानि गुरू जी को बताते थे। गुरू जी उस कष्ट के निवारण की युक्ति बताते थे। अनुयाईयों को लाभ होता था। उस बाबा की मृत्यु के पश्चात् श्रद्धालुओं ने श्रद्धावश उस महात्मा की पत्थर की मूर्ति बनाकर मंदिर बनवाकर उसमें स्थापित कर दी। फिर उसकी पूजा प्रारम्भ कर दी।

उस मूर्ति को भोजन बनाकर भोग लगाने लगे। उसी के सामने अपने संकट निवारण की प्रार्थना करने लगे। उस मूर्ति में प्राण प्रतिष्ठित करने का भी आयोजन करते हैं। यह अंध श्रद्धा भक्ति है जो मानव जीवन की नाशक है।

विचार करें :- एक डॉक्टर (वैद्य) था। जो भी रोगी उससे उपचार करवाता था, वह स्वस्थ हो जाता था। डॉक्टर रोगी को रोग बताता था और उसके उपचार के लिए औषधि देकर औषधि के सेवन की विधि बताता था। साथ में किन वस्तुओं का सेवन करें, किनका न करें, सब हिदायत देता था। इस प्रकार उपचार से रोगी स्वस्थ हो जाते थे। जिस कारण से वह डॉक्टर उस क्षेत्र के व्यक्तियों में आदरणीय बना था। उसकी प्रसिद्धि दूर-दूर तक थी। यदि उस डॉक्टर की मत्यु के पश्चात् उसकी पत्थर की मूर्ति बनवाकर मंदिर बनाकर प्राण प्रतिष्ठित करवाकर स्थापित कर दी जाए। फिर उसके सामने रोगी खड़ा होकर अपने रोग के उपचार के लिए प्रार्थना करे तो क्या वह पत्थर बोलेगा? क्या पहले जीवित रहते की तरह औषधि सेवन, विधि तथा परहेज बताएगा? नहीं, बिल्कुल नहीं। उन रोगियों को उसी जैसा अनुभवी डॉक्टर खोजना होगा जो जीवित हो। पत्थर की मूर्ति से उपचार की इच्छा करने वाले अपने जीवन के साथ धोखा करेंगे। वे बिल्कुल भोले या बालक बुद्धि के हो सकते हैं।

❖ एक बात और विशेष विचारणीय है कि जो व्यक्ति कहते हैं कि मूर्ति में प्राण प्रतिष्ठित कर देने से मूर्ति सजीव मानी जाती है। यदि मूर्ति में प्राण (जीवन-श्वांस) डाल दिए हैं तो उसे आपके साथ बातें भी करनी चाहिए। भ्रमण के लिए भी जाना चाहिए। भोजन भी खाना चाहिए। ऐसा प्राण प्रतिष्ठित कोई भी मूर्ति नहीं करती है। इससे सिद्ध हुआ कि यह अंध श्रद्धा भक्ति के अतिरिक्त कुछ भी नहीं है।

❖ शिव लिंग पूजा :- जो अपने धर्मगुरूओं द्वारा बताई गई धार्मिक साधना कर रहे हैं, वे पूर्ण रूप से संतुष्ट हैं कि यह साधना सही है। इसलिए वे अंधविश्वास (**Blind Faith**) किए हुए हैं।

इस शिव लिंग पर प्रकाश डालते हुए मुझे अत्यंत दुःख व शर्म का एहसास हो रहा है। परंतु अंधविश्वास को समाप्त करने के लिए प्रकाश डालना अनिवार्य तथा मजबूरी है।

शिव लिंग (शिव जी की पेशाब इन्द्री) के चित्र में देखने से स्पष्ट होता है कि शिव का लिंग (**Private Part**) स्त्री की लिंगी (पेशाब इन्द्री यानि योनि) में प्रविष्ट है। इसकी पूजा हिन्दू श्रद्धालु कर रहे हैं।

शिव लिंग की पूजा कैसे प्रारम्भ हुई?

शिव महापुराण {जिसके प्रकाशक हैं ''खेमराज श्री कष्णदास प्रकाशन मुंबई (बम्बई), हिन्दी टीकाकार (अनुवादक) हैं विद्यावारिधि पंडित ज्वाला प्रसाद जी मिश्र} भाग-1 में विद्यवेश्वर संहिता अध्याय 5 पष्ठ 11 पर नंदीकेश्वर यानि शिव के वाहन ने बताया कि शिव लिंग की पूजा कैसे प्रारम्भ हुई?

❖ विद्येश्वर संहिता अध्याय 5 श्लोक 27-30 :- पूर्व काल में जो पहला कल्प जो लोक में विख्यात है। उस समय महात्मा ब्रह्मा और विष्णु का परस्पर युद्ध हुआ।(27) उनके मान को दूर करने को उनके बीच में उन निष्कल परमात्मा ने स्तम्भरूप अपना स्वरूप दिखाया।(28) तब जगत के हित की इच्छा से निर्गुण शिव ने उस तेजोमय स्तंभ से अपने लिंग आकार का स्वरूप दिखाया।(29) उसी दिन से लोक में वह निष्कल शिव जी का लिंग विख्यात हुआ।(30)

❖ विद्येश्वर संहिता पृष्ठ 18 अध्याय 9 श्लोक 40-43 :- इससे मैं अज्ञात स्वरूप हूँ। पीछे तुम्हें दर्शन के निमित साक्षात् ईश्वर तत्क्षणही मैं सगुण रूप हुआ हूँ।(40) मेरे ईश्वर रूप को सकलत्व जानों और यह निष्कल स्तंभ ब्रह्म का बोधक है।(41) लिंग लक्षण होने से यह मेरा लिंग स्वरूप निर्गुण होगा। इस कारण हे पुत्रो! तुम नित्य इसकी अर्चना करना।(42) यह सदा मेरी आत्मा रूप है और मेरी निकटता का कारण है। लिंग और लिंगी के अभेद से यह महत्व नित्य पूजनीय है।(43)

विवेचन :- यह विवरण श्री शिव महापुराण (खेमराज श्री कृष्ण दास प्रकाश मुंबई द्वारा प्रकाशित) से शब्दाशब्द लिखा है। इसमें स्पष्ट है कि काल ब्रह्म ने जान-बूझकर शास्त्र विरूद्ध साधना बताई है क्योंकि यह नहीं चाहता कि कोई शास्त्रों में वर्णित साधना करे। इसलिए अपने लिंग (गुप्तांग) की पूजा करने को कह दिया। पहले तो तेजोमय स्तंभ ब्रह्मा तथा विष्णु के बीच में खड़ा कर दिया। फिर शिव रूप में प्रकट होकर अपनी पत्नी दुर्गा को पार्वती रूप में प्रकट कर दिया और उस तेजोमय स्तंभ को गुप्त कर दिया और अपने लिंग (गुप्तांग) के आकार की पत्थर की मूर्ति प्रकट की तथा स्त्री के गुप्तांग (लिंगी) की पत्थर की मूर्ति प्रकट की। उस पत्थर के लिंग को लिंगी यानि स्त्री की योनि में प्रवेश करके ब्रह्मा तथा विष्णु से कहा कि यह लिंग तथा लिंगी अभेद रूप हैं यानि इन दोनों को ऐसे ही रखकर नित्य पूजा करना।

इसके पश्चात् यह बेशर्म पूजा सब हिन्दुओं में देखा-देखी चल रही है। आप मंदिर में शिवलिंग को देखना। उसके चारों ओर स्त्री इन्द्री का चित्र है जिसमें शिवलिंग प्रविष्ट दिखाई देता है। यह पूजा काल ब्रह्म ने प्रचलित करके मानव समाज को दिशाहीन कर दिया। वेदों तथा गीता के विपरीत साधना बता दी।

आप जी ने ऊपर शिव पुराण भाग-1 में विद्येश्वर संहिता के पृष्ठ 11 पर अध्याय 5 श्लोक 27-30 में पढ़ा कि शिव ने जो तेजोमय स्तंभ खड़ा किया था। फिर उस स्तंभ को गुप्त करके पत्थर को अपने लिंग (गुप्तांग) का आकार दे दिया और बोला कि इसकी पूजा किया करो। इस तरह की बकवाद तो शरारती बच्चा जो पुराने समय में पशु चराता था, वह पाली किया करता जो वाद-विवाद में अन्य बालक से कहता था कि ले मेरे इस (गुप्तांग) की धोक मार ले। यही दशा शिवलिंग की पूजा बताने वाले काल ब्रह्म यानि सदाशिव की है जो ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव जी के पूज्य पिता जी हैं।

❖ चेतावनी :- वक्त है, अब भी संभल जाओ। नहीं तो मानव जीवन का अवसर

हाथ से जाने के पश्चात् रोने के अतिरिक्त कुछ नहीं रहेगा। गीता व वेदों का ज्ञान परम अक्षर ब्रह्म का बताया हुआ है। इसलिए वह प्रमाणित व लाभदायक है।

आप देखें यह शिव लिंग का चित्र :-

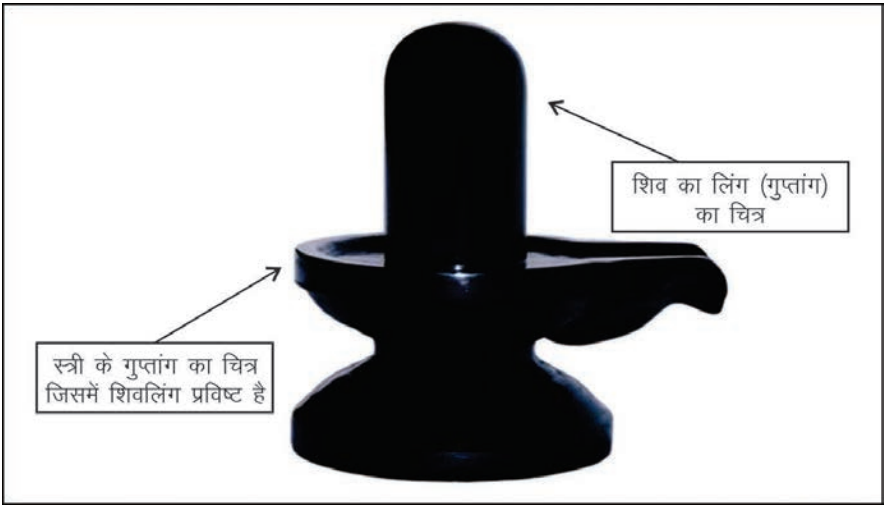

इस शिवलिंग की पूजा अंध श्रद्धावान करते हैं जो शर्म की बात तो है ही, परंतु धर्म के विरूद्ध भी है क्योंकि यह गीता व वेद शास्त्रों में नहीं लिखी है।

इसका खण्डन सूक्ष्मवेद में इस प्रकार किया है कि :-

वाणी :- धरै शिव लिंगा बहु विधि रंगा, गाल बजावैं गहले।
जे लिंग पूजें शिव साहिब मिले, तो पूजो क्यों ना खैले।।

शब्दार्थ :- परमेश्वर कबीर जी ने समझाया है कि तत्वज्ञानहीन मूर्ति पूजक अपनी साधना को श्रेष्ठ बताने के लिए गहले यानि ढ़ीठ व्यक्ति गाल बजाते हैं यानि व्यर्थ की बातें बड़बड़ करते हैं जिनका कोई शास्त्र आधार नहीं होता। वे जनता को भ्रमित करने के लिए विविध प्रकार के रंग-बिरंगे पत्थर के शिवलिंग रखकर अपनी रोजी-रोटी चलाते हैं।

कबीर जी ने कहा है कि मैं उन्हें बताना चाहता हूँ कि यदि शिव जी के लिंग को पूजने से शिव जी भगवान का लाभ लेना चाहते हो तो आप धोखे में हैं। यदि ऐसी बेशर्म साधना करनी है तो खागड़ (Ox=Male Cow) के लिंग की पूजा कर लो जिससे गाय को गर्भ होता है। उससे अमत दूध मिलता है। हल जोतने के लिए बैल व दूध पीने के लिए गाय उत्पन्न होती है जो प्रत्यक्ष लाभ दिखाई देता है। आपको पता है कि खागड़ के लिंग से कितना लाभ मिलता है। फिर भी उसकी पूजा नहीं कर सकते क्योंकि यह बेशर्मी का कार्य है।

इससे स्पष्ट है कि आप अंध श्रद्धावानों को यही नहीं पता है कि यह पत्थर का बना शिवलिंग व जिसमें यह प्रविष्ट दिखाया है, यह क्या है? यदि आपको पता होता तो इसको एक आँख भी नहीं देखते, पूजा तो बहुत दूर की कौड़ी है।

''शास्त्र विरूद्ध साधना की प्रेरणा भी काल ब्रह्म करता है''

जैसे लिंग (शिवलिंग) की पूजा काल ब्रह्म ने प्रारम्भ करवाई। इसी प्रकार शास्त्रविधि से भी भ्रमित यही करता है। प्रमाण :- श्री विष्णु पुराण ततीय अंश अध्याय 17 श्लोक 1-44 तथा अध्याय 18 श्लोक 1-36 में।

काल जाल का अन्य प्रमाण :- श्री विष्णु पुराण के तृतीय अंश के अध्याय 17 श्लोक 1 से 44 तथा अध्याय 18 श्लोक 1 से 36 में पृष्ठ 125 से 221 पर लिखा है कि देवता तथा दैत्य दोनों ही वैदिक धर्म अनुसार साधना करते थे। एक समय दोनों का सौ दिव्य वर्ष तक युद्ध हुआ। देवता पराजित हो गए। देवताओं ने क्षीर समुद्र के उत्तरीय तट पर जाकर तपस्या की और भगवान विष्णु की आराधना के लिए इस स्तव का गान किया। देवगण बोले- हम लोग लोक नाथ भगवान विष्णु की आराधना के लिए जिस वाणी का उच्चारण करते हैं, उससे वे आद्य-पुरूष श्री विष्णु भगवान प्रसन्न हों।(अध्याय 17/मन्त्र 11) उस ब्रह्मस्वरूप को जो निराकार है। उस ब्रह्मस्वरूप को नमस्कार है। हे पुरूषोतम्! आप का जो क्रूरता ओर माया से युक्त घोर तमोमय रूप हैं, उस राक्षस स्वरूप को नमस्कार है।(20) जो कल्पान्त में समस्त भूतों अर्थात प्राणियों का भक्षण कर जाता है, आपके उस काल स्वरूप को नमस्कार है।(25) जो प्रलय काल में देवता आदि समस्त प्राणियों का भक्षण करके नृत्य करता है, आपके उस रूद्रस्वरूप को नमस्कार है।(26) विष्णु पुराण तृतीय अंश अध्याय 17 के श्लोक 11 से 34 तक स्त्रोत के समाप्त हो जाने पर देवताओं ने श्री हरि को हाथ में शंख चक्र, गदा लिए गरूड़ पर आरूढ़ समुख विराजमान देखा।(35) देवताओं की प्रार्थना सुनकर भगवान विष्णु ने अपने शरीर से (वचन शक्ति से) एक मायामोह को उत्पन्न किया तथा कहा कि वह माया मोह दैत्यों को वेद मार्ग की साधना से हटा कर मनमुखी साधना पर आरूढ़ कर देगा। जिस कारण से दैत्य भक्तिहीन हो जाऐंगें तब, तुम देवता उन्हें मार डालना। ऐसा ही हुआ, माया मोह ने सर्व दैत्यों (राक्षसों) को वैदिक मार्ग से विचलित करके मनमुखी साधना पर आरूढ़ कर दिया। कुछ पश्चात् देवता तपस्या करके (बैट्री चार्ज करके) दैत्यों के साथ युद्ध करने के लिए उपस्थित हुए। दैत्यों ने तपस्या करनी त्याग दी थी जिससे उनमें सिद्धि शक्ति नहीं रही। (उनकी बैट्री चार्ज नहीं हुई) इस कारण से देवताओं ने दैत्यों को मार डाला।

उपरोक्त विष्णु पुराण के उल्लेख का निष्कर्ष :-

काल ब्रह्म ने सर्व प्राणियों (देवताओं, ऋषियों, ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव तथा अन्य प्राणियों) को भ्रमित किया हुआ है। यह स्वयं ही अपने तीनों पुत्रों (ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव) का रूप धारण कर लेता है। उपरोक्त स्तोत्र में देवताओं ने श्री विष्णु की स्तुती करनी चाही है, कर रहे हैं काल ब्रह्म की। वह काल ब्रह्म ही विष्णु रूप धारण करके गरूड़ पर बैठ कर आश्वासन दे गया। अपने वचन से एक व्यक्ति उत्पन्न कर के माया मोह नाम रख कर राक्षसों के पास भेज दिया। जो दैत्यगण तपस्या अर्थात् हठयोग करते थे, उससे सिद्धियाँ प्राप्त हो जाती थी। माया मोह ने वह साधना भी छुड़वा दी

जिससे असुर गण सिद्धियों से रहित हो गए। देवता गण भी पहले दैत्यों से युद्ध करने के कारण सिद्धियाँ समाप्त कर चुके थे तथा हारकर जान बचाकर चले गए थे। फिर तपस्या की तथा सिद्धियाँ प्राप्त करके असुरों से युद्ध किया तथा विजय पाई। जब देवतागण राक्षसों से हारे थे, उस समय दैत्य भी वही साधना (तपस्या अर्थात् हठ योग) करते थे जो देवता करते थे। इससे सिद्ध हुआ कि भक्ति करने से भी देवता, दैत्यों से रद्दी (पिछड़े हुए) थे क्योंकि राक्षस वही साधना करके देवताओं पर विजय पाए थे जो देवतागण करते थे।

वास्तव में शास्त्रविधि अनुसार साधना न देवता करते थे न दैत्य। केवल काल द्वारा बताई गई तपस्या (जो ब्रह्मा को जन्म के समय आकाशवाणी द्वारा काल ब्रह्म द्वारा कमल के फूल पर बताई थी, उस तपस्या) अर्थात् हठ योग को दोनों करते थे। दोनों ही सिद्धियाँ प्राप्त करते थे। जैसे शराब को देवता पीऐ चाहे दैत्य, दोनों को ही सरूर होगा। सिद्धियाँ प्राप्त होने पर प्राणी को अभिमान का नशा हो जाता है। फिर आपस में एक-दूसरे पर सिद्धियों का प्रयोग करके स्वयं के जीवन को नष्ट कर जाते हैं। यह सर्व काल ब्रह्म द्वारा फैलाया भयंकर जाल है जिसे तत्वज्ञान से ही समझा जा सकता है तथा इस जाल से निकला जा सकता है।

वर्तमान में कुछ पंथ हैं जो न तो देशी घी की ज्योति लगाने देते हैं, न गीता, वेद या स्वसम वेद वाणी का पाठ करने को बताते हैं, न वास्तविक नाम जाप को देते हैं। कहते हैं सन्त कुछ नाम जाप करने को दे दे, वही मोक्षदायक है। अढ़ाई घण्टे सुबह तथा कम से कम अढ़ाई घण्टे शाम को हठयोग करने को कहते हैं। यह मोक्ष मार्ग नहीं है। ये सन्त काल ब्रह्म द्वारा माया मोह की तरह भेजे गए हैं जिन्होंने वह साधना भी छुड़ा दी जिससे स्वर्ग तक जाने की भक्ति तो बनती थी। जैसे प्रतिदिन गीता, वेद या स्वसम वेद (कबीर वाणी या कबीर जी से परिचित सन्तों की वाणी) वाणी के पाठ से ज्ञान यज्ञ का फल मिलता है तथा देशी घी की ज्योति से हवन यज्ञ का फल मिलता है। दण्डवत् प्रणाम से प्रणाम यज्ञ का फल मिलता है। वे नकली पंथ सुना-सुनाया सतलोक-सतलोक तो कहते हैं परन्तु सतलोक में सतपुरूष निराकार बताते हैं। वहाँ प्रकाश ही प्रकाश है, आनन्द ही आनन्द है। आत्मा भी उस प्रकाश में ऐसे समा जाती है जैसे समुन्द्र में बूंद समा जाती है। ऐसा व्यर्थ ज्ञान अनुयाईयों को बता कर कहते हैं चलो सतलोक में, वहाँ आनन्द ही आनन्द है। विचार करें किसी लड़की को कोई मूर्ख कहे तेरी सगाई अमूक गाँव में कर दी है। वहाँ तेरा पति निराकार है। तेरे पति के घर में प्रकाश ही प्रकाश है, पति साकार नहीं है, वहाँ विवाह करवाकर जा, लड़की वहाँ आनन्द ही आनन्द है। उस मूर्ख से पूछे कि यदि पति ही साकार नहीं है तो उस कन्या का क्या उत्साह होगा विवाह करने व बिना पति वाले घर जाने का? कोई उमंग नहीं हो सकती।

ठीक इसी प्रकार जो गुरू जन सतपुरूष अर्थात् परमात्मा को निराकार कहते हैं तथा कहते हैं कि केवल प्रभु का प्रकाश ही देखा जा सकता है। वे भ्रमित कर रहे हैं। उनको कोई ज्ञान नहीं है। उनको परमात्मा प्राप्ति भी नहीं हुई है। उनसे कोई पूछे कि

तुम कहते हो कि सतपुरूष (अविनाशी परमेश्वर) का केवल प्रकाश देखा जा सकता है क्योंकि सतपुरूष (सच्चा परमेश्वर) तो निराकार है। जैसे कोई अन्धा कहे कि सूर्य तो निराकार है, उसका केवल प्रकाश ही देखा जा सकता है। सूर्य बिना प्रकाश किसका देखा? जब सूर्य निराकार है तो प्रकाश काहे का? इसी प्रकार जो ज्ञान नेत्रहीन सन्त, ऋषि, महर्षि परमात्मा को निराकार कहते हैं तथा परमात्मा को सूर्य तुल्य प्रकाशमान कहते हैं तथा परमात्मा का प्रकाश देखा कहते हैं, वे सनीपात के ज्वर के रोगी की तरह बरड़ा रहे हैं, उन्हें यही नहीं पता कि वे क्या बोल रहे हैं। वे सर्व काल ब्रह्म के द्वारा भेजे गए मोहमाया जैसे भ्रमित करने वाले दूत हैं जिन्होंने भोली आत्माओं को उल्टा पाठ पढ़ाकर दिशाभ्रष्ट कर दिया है।

अन्य अंध श्रद्धा भक्ति पर प्रकाश

परमात्मा कबीर जी का शब्द :-

रै भोली–सी दुनिया, सतगुरू बिन कैसे सरियाँ।(टेक)
अपने लला के बाल उतरवावैं, कह कैंची ना लग जईयाँ।
एक बकरी का बच्चा लेकर, उसका गला कटईयाँ।।1।।
काचा–पाका भोजन बनाकर, माता धोकने गईयाँ।
इस मूर्ति माता पर कुत्ता मूतै, वह क्यों ना मर गईयाँ।।2।।
जीवित बाप से लठ्ठम–लठ्ठा, मूवे गंग पहुँचईयाँ।
जब आवै आसौज का महीना, कऊवा बाप बणईयाँ।।3।।
पीपल पूजै जाँडी पूजे, सिर तुलसाँ के अहोइयाँ।
दूध–पूत में खैर राखियो, न्यूं पूजूं सूं तोहियाँ।।4।।
आपै लीपै आपै पोतै, आपै बनावै होईयाँ।
उससे भौंदू पोते माँगै, अकल मूल से खोईयाँ।।5।।
पति शराबी घर पर नित ही, करत बहुत लड़ईयाँ।
पत्नी षोडष शुक्र व्रत करत है, देहि नित तुड़ईयाँ।।6।।
तज पाखण्ड सत नाम लौ लावै, सोई भवसागर से तरियाँ।
कह कबीर मिले गुरू पूरा, स्यों परिवार उधरियाँ।।7।।

शब्दार्थ :- परमेश्वर कबीर जी ने अंध श्रद्धा भक्ति करने वाले तत्वज्ञानहीन जनताजनों को उनके द्वारा की जा रही शास्त्र विरूद्ध साधना यानि उपासना को तर्क करके लाभ रहित यानि व्यर्थ सिद्ध किया है। कहा है कि :-

हे भोली जनता! गुरू के बिना आपका कोई भी अध्यात्म कार्य नहीं सरेगा यानि सिद्ध नहीं होगा।

वाणी सँख्या 1 :- अपने लला के बाल उतरवावैं, कह कैंची ना लग जईयाँ।
एक बकरी का बच्चा लेकर, उसका गला कटईयाँ।।1।।

भावार्थ :- शास्त्रविधि त्यागकर मनमाना आचरण करने के लिए अज्ञानी गुरूओं द्वारा भ्रमित अंध श्रद्धालु माता अपने नवजात बच्चे को लेकर अपने ईष्ट

देव-देवी के मंदिर में जाती है। आन-उपासकों द्वारा बनाए शास्त्रविरूद्ध विधान अनुसार नवजात शिशु के सिर के प्रथम बार वाले बाल उतरवाती (कटवाती) है। उन बालों को मंदिर में अपने ईष्ट पर चढ़ाती है। यह मान रखा है कि इससे ईष्ट देव या देवी प्रसन्न होते हैं तथा बच्चे की सदा रक्षा करते हैं। बाल काटने के लिए मंदिर में मेले के समय उपस्थित नाई के पास बाल कटवाने वालों की लाईन लगी होती है। नाई शीघ्र-शीघ्र निपटाने के उद्देश्य से तेजी से कैंची चलाता है। किसी-किसी बच्चे को कैंची लग जाती है। बच्चा रोता है। अपने बच्चे के बाल कटवाने की बारी आते ही माता नाई को सतर्क करती है कि हे भाई नाई! ध्यान से कैंची चलाना, मेरे लला (बालक-बेटे) का कच्चा सिर है, कहीं कैंची न लग जाए। बच्चे के कटे हुए बालों को कपड़े में बाँधकर मंदिर में चढ़ा देती है। पुजारी उसको खोलकर एक खाली कट्टे में डालता रहता है। मेला समाप्त होने के पश्चात् उन बालों को दूर कचरे के ढ़ेर में डाल देता है। बाल मंदिर में चढ़ाने के पश्चात् ईष्ट को बकरे की बलि दी जाती है जो पहले से ही अपने होने वाले बच्चे की खैर (रक्षा) के लिए संकल्प की गई होती है।

❖ कबीर परमेश्वर जी ने इस विषय में सटीक तर्क देते हुए कहा है कि हे अंध श्रद्धावान! कुछ तो विवेक कर। अपने बच्चे को तो कैंची लगने से भी बचाती है, उसकी रक्षा (खैर) के लिए बकरी के बच्चे की गर्दन कटवाते समय कुछ भी तरस (दया) नहीं आया। परमात्मा का विधान है कि जो पाप किया (बकरे की बलि दी) वह तो तेरे को भोगना पड़ेगा। वह पत्थर की देवी या देव कुछ भी मदद न तेरी, न तेरे बच्चे की कर सकती है जो आपको भ्रम है।

विचार करें :- यदि वहाँ उस मंदिर में वास्तव में देवी या देव होता और आप उसके घर में बाल डालते तो इसी बात पर आप से नाराज होकर दण्ड देते। देवी-देवता सभ्य और शाकाहारी नेक प्रवति के होते हैं। वे कभी माँस, मदिरा तथा अन्य नशीली वस्तुओं का सेवन नहीं करते। पुजारी उन बालों को फैंक देते हैं। क्या वे बाल बैंक में जमा करवाने के योग्य होते हैं? आप अपने बच्चों के बाल स्वयं ही किसी नाई से कटवा दो। किसी मंदिर में ले जाकर अपने कर्म व धन तथा वक्त नष्ट न करो।

पूर्ण गुरू से शिक्षा लो यानि आध्यात्मिक ज्ञान सुनो तथा दीक्षा लो यानि गुरू बनाकर शास्त्र वर्णित साधना करके पापों से मुक्ति पाओ तथा मोक्ष कराओ।

वाणी सँख्या 2 :- काचा–पाका भोजन बनाकर, माता धोकने गईयाँ।
इस मूर्ति माता पर कुत्ता मूतै, वह क्यों ना मर गईयाँ।।2।।

भावार्थ :- आन-उपासना की अन्य विधि यह भी है कि गाँव या नगर के बाहर किसी वक्ष के नीचे तने से सटाकर या किसी ऊँचे स्थान पर बिना वक्ष के ही दस फुट लम्बा चौड़ा या इससे भी छोटा चबूतरा (चौरा) यानि प्लेटफार्म बनाकर उसके ऊपर दो फुट या तीन-चार फुट ऊँचा तथा एक-डेढ़ फुट चौड़ा एक मंदिरनुमा घर बनाते हैं, उसे मंढ़ी कहते हैं। वर्ष में एक या दो बार, किसी निश्चित दिन उस

देई धाम पर धोक लगाने (पूजा करने) दादी माँ अपने पूरे परिवार को लेकर जाती है। उसे पता होता है कि जो भी भोजन ईष्ट के लिए बनाकर उस मंढ़ी में रखते हैं, उसे कुत्ते खाते हैं। वह वंद्धा अपनी पुत्रवधु से कहती है कि बेटी! आज माता की धोक लगाने मंढ़ी पर चलना है। उसके लिए मीठा दलिया या पूड़े-गुलगुले बना ले। पुत्रवधु माता का भोग तैयार करने लग जाती है। देर तो लगती ही है। उधर से खेत या मजदूरी के लिए जाने का समय भी हो जाता है। बुढ़िया कहती है कि बेटी! काच्चा-पाक्का बना दे, जल्दी कर। कुत्तों ने तो खाना ही है। पूरे परिवार को साथ लेकर वंद्धा उस मंढ़ी पर वह माता का भोग प्रसाद दूर से फैंक देती है तथा पूरे परिवार को कहती है कि हाथ जोड़कर चच-चच कह दो। एक लोटे में जल लेकर जाती है। उसे माता के ऊपर डाल देती है। परिवार माता की धोक लगाकर चबूतरे से नीचे भी नहीं आता, उसी समय कुत्ते जो वहीं पर भोग लगाने के लिए बेताब (उतावले) खड़े होते हैं, माता की मंढ़ी के प्लेटफार्म पर चढ़कर प्रथम तो माता का भोग चट करते हैं, चलते समय उस माता पर पेशाब कर देते हैं। परमेश्वर कबीर जी ने इस विषय पर तर्क दिया है कि हे भोली अंध भक्ति करने वाली जनता! विचार कर, जिस मंढ़ी वाली देवी माता की आप पूजा इसलिए करती हो कि यह मंढ़ी में उपस्थित देवी हमारे परिवार की तथा खेती और पशुधन की रक्षा करती है। यदि उस मंढ़ी में देवी उपस्थित होती तो उसके भोजन को कुत्ता खा गया, उसके ऊपर मूत्र की धार लगा गया। वह कुत्ता तेरी पत्थर की माता ने मारा क्यों नहीं? यदि आप भोजन कर रहे हो और कोई कुत्ता आकर आपके भोजन को खाने लगे तो आप उसको डंडे-लाठी से मारोगे। यदि आपके ऊपर मूत दे तो उसकी हड्डी-पसली एक कर दो। परंतु आपकी पूज्य देवी तो बहुत विवश है या उसे अधरंग लगा है। उससे भक्ति लाभ की झूठी आशा त्यागकर पूर्ण गुरू से शास्त्र विधि अनुसार सत्य भक्ति की दीक्षा व शिक्षा (ज्ञान) लेकर अपना तथा परिवार का कल्याण करवाओ।

''श्राद्ध-पिण्डदान करें या न करें''

वाणी सँख्या 3 :- जीवित बाप से लठ्ठम–लठ्ठा, मूवे गंग पहुँचईयाँ।
जब आवै आसौज का महीना, कऊवा बाप बणईयाँ।।3।।

भावार्थ :- परमेश्वर कबीर जी ने लोकवेद (दंत कथा) के आधार से चल रही पितर तथा भूत पूजा पर शास्त्रोक्त तर्क दिया है। कहा है कि शास्त्रोक्त अध्यात्म ज्ञान के अभाव से बेटे अपने पिता से किसी न किसी बात पर विरोध करते हैं। पिता जी अपने अनुभव के आधार से बेटे से अपने व्यवसाय में टोका-टाकी कर देते हैं। पिता जी को पता होता है कि इस कार्य में पुत्र को हानि होगी। परंतु पुत्र पिता की शिक्षा कम बाहर के व्यक्तियों की शिक्षा को अधिक महत्व देता है। उसे ज्ञान नहीं होता कि पिता जैसा पुत्र का हमदर्द कोई नहीं हो सकता। पुत्र को जवानी और अज्ञानता के नशे के कारण शिष्टाचार का टोटा हो जाता है। पिता को पता

होता है कि बेटा इस कार्य में हानि उठाएगा। परंतु पुत्र पिता की बात नहीं मानता है। उल्टा पिता को भला-बुरा कहता है। पिता अपने पुत्र के नुकसान को नहीं देख सकता। वह फिर उसको आग्रह करता है कि पुत्र! ऐसा ना कर। जिस कारण से जवानी के नशे से हुई सभ्यता की कमी के कारण इतने निर्लज्ज हो जाते हैं, कई पुत्रों को देखा है जो पिता को डण्डों से पीट देते हैं। वही होता है जो पिता को अंदेशा था। पिता फिर समझाता है कि आगे से ऐसा ना करना। यह हानि तो धीरे-धीरे पूरी हो जाएगी। पिता-पिता ही होता है। वह पुत्र-पुत्री को सुखी देखना चाहता है। आगे चलकर जो पिता भक्ति नहीं कर रहा था, उसे कोई न कोई रोग वंद्ध अवस्था में अवश्य घेर लेता है। संतान बहुत कम है जो पिता को वह प्रेम दे जो माता-पिता अपने पुत्र तथा पुत्रवधु से अपेक्षा किया करते हैं। वर्तमान में वंद्धों की बेअदबी किसी से छिपी नहीं है। माता-पिता वंद्धाश्रमों या अनाथालयों में जीवन के शेष दिन पूरे कर रहे हैं या घर पर पुत्र व पुत्रवधु के कटु वचन (कड़वे बोल) पीकर जीवन के दिन गिन रहे हैं। कबीर जी ने कहा है कि :-

वंद्ध हुआ जब पड़ै खाट में, सुनै वचन खारे।
कुत्ते तावन का सुख भी कोन्या, छाती फूकन हारे।।

शब्दार्थ :- वंद्ध अवस्था में शरीर निर्बल हो जाता है। आँखों की रोशनी कम हो जाती है। जिस कारण से वंद्ध पिता-माता अधिक समय चारपाई पर व्यतीत करते हैं। एक स्त्री अपनी सासू माँ से यह कहकर कुऐं या नल से पानी लेने चली गई कि आप ध्यान रखना। कहीं कुत्ता घर में घुसकर नुकसान न कर दे। वंद्धा को दिखाई कम देता था। कुत्ता अंदर घर में घुस गया, एक लोटा दो किलो दूध से भरा रखा था। उसको पी गया और गिरा गया। वंद्धा को दिखाई नहीं दिया। पुत्रवधु आई और कुत्ते द्वारा किए नुकसान से क्रोधित होकर बोली कि तुम्हारा (सास-ससुर का) तो इतना भी सुख नहीं रहा कि कुत्तों से घर की रक्षा कर सको। तुमने मेरी छाती जला दी यानि व्यर्थ का अनाज का खर्च पुत्रवधु को लग रहा था। जिस कारण कटी-जली बातें कही थी। सास-ससुर को अपने ऊपर व्यर्थ का भार मान रही थी। कबीर जी ने बताया है कि यह दशा उन व्यक्तियों की होती है जो परमात्मा को कभी याद नहीं करते जो गुरू धारण करके सत्य भक्ति नहीं करते।

अब वाणी सँख्या 3 का शब्दार्थ पूरा करता हूँ।

अंध श्रद्धा भक्ति वाले जब तक माता-पिता जीवित रहते हैं, तब तक तो उनको प्यार व सम्मान के साथ कपड़ा-रोटी भी नहीं देते। झींकते रहते हैं। (सब नहीं।) मंत्यु के उपरांत श्रद्धा दिखाते हैं। उसके शरीर को चिता पर जला दिया जाता है। कुछ हड्डियाँ बिना जली छोटी-छोटी रह जाती हैं। शास्त्र नेत्रहीन गुरूओं से भ्रमित पुत्र उन अस्थियों को उठाकर हरिद्वार में हर की पौड़ियों पर अपने कुल के पुरोहित के पास ले जाता है। उस पुरोहित द्वारा शास्त्रविरूद्ध साधना के आधार से मनमाना आचरण करके उन अस्थियों को पवित्र गंगा दरिया में प्रवाह किया जाता है। जो धनराशि पुरोहित माँगे, खुशी-खुशी दे देता है। कारण यह होता है

कि कहीं पिता या माता मत्यु के उपरांत प्रेत बनकर घर में न आ जाऐं। इसलिए उनकी गति करवाने के लिए कुलगुरू पंडित जी को मुँह माँगी धनराशि देते हैं कि पक्का काम कर देना। फिर पुरोहित के कहे अनुसार अपने घर की चोखट में लोहे की मेख (मोटी कील) गाड़ दी जाती है कि कहीं पिता जी-माता जी की गति होने में कुछ त्रुटि रह जाए और वे प्रेत बनकर हमारे घर में न घुस जाऐं।

कबीर परमेश्वर जी ने बताया है कि जीवित पिता को तो समय पर टूक (रोटी) भी नहीं दिया जाता। उसका अपमान करता है। (सभी नहीं, अधिकतर) मत्यु के पश्चात् उसको पवित्र दरिया में बहाकर आता है। कितना खर्च करता है। अपने माता-पिता की जीवित रहते प्यार से सेवा करो। उनकी आत्मा को प्रसन्न करो। उनकी वास्तविक श्रद्धा सेवा तो यह है।

कबीर जी जो स्पष्ट करना चाहते हैं कि आध्यात्मिक ज्ञान न होने के कारण अंध श्रद्धा भक्ति के आधार से सर्व हिन्दू समाज अपना अनमोल जीवन नष्ट कर रहा है। जैसे मत्यु के उपरांत अपने पिता जी की अस्थियाँ गंगा दरिया में पुरोहित द्वारा क्रिया कराकर पिता जी की गति करवाई।

❖ फिर तेरहवीं या सतरहवीं यानि मत्यु के 13 दिन पश्चात् की जाने वाली क्रिया को तेरहवीं कहा जाता है। सतरह दिन बाद की जाने वाली लोकवेद धार्मिक क्रिया सतरहवीं कहलाती है। महीने बाद की जाने वाली महीना क्रिया तथा छः महीने बाद की जाने वाली छःमाही तथा वर्ष बाद की जाने वाली बर्षी क्रिया (बरसौदी) कही जाती है। लोकवेद (दंत कथा) बताने वाले गुरूजन उपरोक्त सब क्रियाऐं करने को कहते हैं। ये सभी क्रियाऐं मतक की गति के उद्देश्य से करवाई जाती हैं।

❖ सूक्ष्मवेद में इस शास्त्र विरूद्ध धार्मिक क्रियाओं यानि साधनाओं पर तर्क इस प्रकार किया है कि घर के सदस्य की मत्यु के पश्चात् ज्ञानहीन गुरूजी क्या-क्या करते-कराते हैं :-

कुल परिवार तेरा कुटम्ब–कबीला, मसलित एक ठहराई।
बांध पींजरी (अर्थी) ऊपर धर लिया, मरघट में ले जाई।
अग्नि लगा दिया जब लम्बा, फूंक दिया उस ठांही।
पुराण उठा फिर पंडित आए, पीछे गरूड़ पढ़ाई।
प्रेत शिला पर जा विराजे, पितरों पिण्ड भराई।
बहुर श्राद्ध खाने कूं आए, काग भए कलि माहीं।
जै सतगुरू की संगति करते, सकल कर्म कटि जाई।
अमरपुरी पर आसन होता, जहाँ धूप न छांई।

शब्दार्थ :- कुछ व्यक्ति मत्यु के पश्चात् उपरोक्त क्रियाऐं तो करते ही हैं, साथ में गरूड़ पुराण का पाठ भी करते हैं। परमेश्वर कबीर जी ने सूक्ष्मवेद (तत्वज्ञान) की वाणी में स्पष्ट किया है कि लोकवेद (दंत कथा) के आधार से ज्ञानहीन गुरूजन मतक की आत्मा की शांति के लिए गरूड़ पुराण का पाठ करते

हैं। गरूड़ पुराण में एक विशेष प्रकरण है कि जो व्यक्ति धर्म-कर्म ठीक से नहीं करता तथा पाप करके धन उपार्जन करता है, मृत्यु के उपरांत उसको यम के दूत घसीटकर ले जाते हैं। ताम्बे की धरती गर्म होती है, नंगे पैरों उसे ले जाते हैं। उसे बहुत पीड़ा देते हैं। जो शुभ कर्म करके गए होते हैं, वे स्वर्ग में हलवा-खीर आदि भोजन खाते दिखाई देते हैं। उस धर्म-कर्महीन व्यक्ति को भूख-प्यास सताती है। वह कहता है कि भूख लगी है, भोजन खाऊँगा। यमदूत उसको पीटते हैं। कहते हैं कि यह भोजन खाने के कर्म तो नहीं कर रखे। चल तुझे धर्मराज के पास ले चलते हैं। जैसा तेरे लिए आदेश होगा, वैसा ही करेंगे। धर्मराज उसके कर्मों का लेखा देखकर कहता है कि इसे नरक में डालो या प्रेत व पितर, वृक्ष या पशु-पक्षियों की योनि दी जाती हैं। पितर योनि भूत प्रजाति की श्रेष्ठ योनि है। यमलोक में भूखे-प्यासे रहते हैं। उनकी तृप्ति के लिए श्राद्ध निकालने की प्रथा शास्त्रविरूद्ध मनमाने आचरण के तहत शुरू की गई है। कहा जाता है कि एक वर्ष में जब आसौज (अश्विन) का महीना आता है तो भादवे (भाद्र) महीने की पूर्णमासी से आसौज महीने की अमावस्या तक सोलह श्राद्ध किए जाऐं। जिस तिथि को जिसके परिवार के सदस्य की मृत्यु होती है, उस दिन वर्ष में एक दिन श्राद्ध किया जाए। ब्राह्मणों को भोजन करवाया जाए। जिस कारण से यमलोक में पितरों के पास भोजन पहुँच जाता है। वे एक वर्ष तक तृप्त रहते हैं। कुछ भ्रमित करने वाले गुरूजन यह भी कहते हैं कि श्राद्ध के सोलह दिनों में यमराज उन पितरों को नीचे पृथ्वी पर आने की अनुमति देता है। पितर यमलोक (नरक) से आकर श्राद्ध के दिन भोजन करते हैं। हमें दिखाई नहीं देते या हम पहचान नहीं सकते।

❖ भ्रमित करने वाले गुरूजन अपने द्वारा बताई शास्त्रविरूद्ध साधना की सत्यता के लिए इस प्रकार के उदाहरण देते हैं कि रामायण में एक प्रकरण लिखा है कि वनवास के दिनों में श्राद्ध का समय आया तो सीता जी ने भी श्राद्ध किया। भोजन खाते समय सीता जी को श्री रामचन्द्र जी पिता दशरथ सहित रघुकुल के कई दादा-परदादा दिखाई दिए। उन्हें देखकर सीता जी को शर्म आई। इसलिए मुख पर पर्दा (घूंघट) कर लिया।

❖ विचार करो पाठकजनो :- श्री रामचन्द्र के सर्व वंशज प्रेत-पितर बने हैं तो अन्य सामान्य नागरिक भी वही क्रियाऐं कर रहे हैं। वे भी नरक में पितर बनकर पितरों के पास जाऐंगे। इस कारण यह शास्त्रविधि विरूद्ध साधना है जो पूरा हिन्दू समाज कर रहा है। श्रीमद्भगवत गीता के अध्याय 9 का श्लोक 25 भी यही कहता है कि जो पितर पूजा (श्राद्ध आदि) करते हैं, वे मोक्ष प्राप्त नहीं कर पाते, वे यमलोक में पितरों को प्राप्त होते हैं।

❖ जो भूत पूजा (अस्थियाँ उठाकर पुरोहित द्वारा पूजा कराकर गंगा में बहाना, तेरहवीं, सतरहवीं, महीना, छःमाही, वर्षी आदि-आदि) करते हैं, वे प्रेत बनकर गया स्थान पर प्रेत शिला पर बैठे होते हैं।

❖ कुछ व्यक्तियों को धर्मराज जी कर्मानुसार पशु, पक्षी, वृक्ष आदि-आदि के

शरीरों में भेज देता है।

❖ परमात्मा कबीर जी समझाना चाहते हैं कि हे भोले प्राणी! गरूड़ पुराण का पाठ उसे मत्यु से पहले सुनाना चाहिए था ताकि वह परमात्मा के विधान को समझकर पाप कर्मों से बचता। पूर्ण गुरू से दीक्षा लेकर अपना मोक्ष करता। जिस कारण से वह न प्रेत बनता, न पितर बनता, न पशु-पक्षी आदि-आदि के शरीरों में कष्ट उठाता। मत्यु के पश्चात् गरूड़ पुराण के पाठ का कोई लाभ नहीं मिलता।

सूक्ष्मवेद (तत्वज्ञान) में तथा चारों वेदों (ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद तथा अथर्ववेद) तथा इन चारों वेदों के सारांश गीता में स्पष्ट किया है कि उपरोक्त आन-उपासना नहीं करनी चाहिए क्योंकि ये शास्त्रों में वर्णित न होने से मनमाना आचरण है जो गीता अध्याय 16 श्लोक 23-24 में व्यर्थ बताया है। शास्त्रोक्त साधना करने का आदेश दिया है। सर्व हिन्दू समाज उपरोक्त आन-उपासना करते हैं जिससे भक्ति की सफलता नहीं होती। जिस कारण से नरकगामी होते हैं तथा प्रेत-पितर, पशु-पक्षी आदि के शरीरों में महाकष्ट उठाते हैं।

➢ दास (लेखक) का उद्देश्य किसी की साधना की आलोचना करना नहीं है, अपितु आप जी को सत्य साधना का ज्ञान करवाकर इन कष्टों से बचाना है।

प्रसंग चल रहा है कि जो शास्त्रविरूद्ध साधना करते हैं, उनके साथ महाधोखा हो रहा है। बताया है कि :-

1. मतक की गति (मोक्ष) के लिए पहले तो अस्थियाँ उठाकर गुरूजी के द्वारा पूजा करवाकर गंगा दरिया में प्रवाहित की और बताया गया कि इसकी गति हो गई।

2. उसके पश्चात् तेरहवीं, सतरहवीं, महीना, छःमाही, वर्षी आदि-आदि क्रियाऐं उसकी गति करवाने के लिए कराई।

3. पिण्डदान किया गति करवाने के लिए।

4. श्राद्ध करने लगे, उसे यमलोक में तप्त करवाने के लिए।

❖ श्राद्धों में गुरू जी भोजन बनाकर सर्वप्रथम कुछ भोजन छत पर रखता है। कौआ उस भोजन को खाता है। पुरोहित जी कहता है कि देख! तेरा पिता कौआ बनकर भोजन खा रहा है। कौए के भोग लगाने से श्राद्ध की सफलता बताते हैं।

❖ परमेश्वर कबीर जी ने यही भ्रम तोड़ा है। कहा है कि आपके तत्वज्ञान नेत्रहीन (अंधे) धर्मगुरूओं ने अपने धर्म के शास्त्रों को ठीक से नहीं समझ रखा। आप जी को लोकवेद (दन्तकथा) के आधार से मनमानी साधना कराकर आप जी का जीवन नष्ट कर रहे हैं।

कबीर जी ने कहा है कि विचार करो। उपरोक्त अनेकों पूजाऐं कराई मतक पिता की गति कराने के लिए, अंत में कौआ बनवाकर दम लिया। अब श्राद्धों का आनंद गुरू जी ले रहे हैं। वे गुरू जी भी नरक तथा पशु-पक्षियों की योनियों को प्राप्त होंगे। यह दास (रामपाल दास) परमात्मा कबीर जी द्वारा बताए तत्वज्ञान द्वारा समझाकर सत्य साधना शास्त्रविधि अनुसार बताकर आप तथा आपके अज्ञानी

धर्मगुरूओं का कल्याण करवाने के लिए यह परमार्थ कर रहा है। मेरे अनुयाई इसी दलदल में फँसे थे। इसी तत्वज्ञान को समझकर शास्त्रों में वर्णित सत्य साधना को अपनी आँखों देखकर अकर्तव्य साधना त्यागकर कर्तव्य शास्त्रोक्त साधना करके अपना तथा परिवार के जीवन को धन्य बना रहे हैं। ये दान देते हैं। फिर इन पुस्तकों को छपवाकर आप तक पहुँचाने के लिए पुस्तक बाँटने की सेवा निस्वार्थ निःशुल्क करते हैं। ये आपके हितैषी हैं। परंतु आप पुस्तक को ठीक से न पढ़कर इनका विरोध करते हैं, प्रचार में बाधा डालकर महापाप के भागी बनते हैं। आप पुस्तक को पढ़ें तथा शांत मन से विचार करें तथा पुस्तकों में दिए शास्त्रों के अध्याय तथा श्लोकों का मेल करें। फिर गलत मिले तो हमें सूचित करें, आपकी शंका का समाधान किया जाएगा।

❖ श्राद्ध आदि-आदि शास्त्रविरूद्ध क्रियाऐं झूठे गुरूओं के कहने से करके अपना जीवन नष्ट करते हैं। यदि सतगुरू (तत्वदर्शी संत) का सत्संग सुनते, उसकी संगति करते तो सर्व पापकर्म नष्ट हो जाते। सत्य साधना करके अमर लोक यानि गीता अध्याय 18 श्लोक 62 में कहे (शाश्वतं स्थानं) सनातन परम धाम में आप जी का आसन यानि स्थाई ठिकाना होता जहाँ कोई कष्ट नहीं। वहाँ पर परम शांति है क्योंकि वहाँ पर कभी जन्म-मत्यु नहीं होता। गीता अध्याय 15 श्लोक 4 में भी इस सनातन परम धाम को प्राप्त करने को कहा है। उसके लिए गीता अध्याय 4 श्लोक 34 में तत्वदर्शी संतों से शास्त्रोक्त ज्ञान व साधना प्राप्त करने को कहा है। वह तत्वदर्शी संत वर्तमान (इक्कीशवीं सदी) में यह दास (रामपाल दास) है। आओ और अपना कल्याण करवाओ।

❑ भूत पूजा तथा पितर पूजा क्या है? यह आप जी ने ऊपर (पहले) पढ़ा।

इन पूजाओं के निषेध का प्रमाण पवित्र गीता शास्त्र के अध्याय 9 श्लोक 25 में लिखा है जो आप जी को पहले वर्णन कर दिया है कि भूत पूजा करने वाले भूत बनकर भूतों के समूह में मत्यु उपरांत चले जाऐंगे। पितर पूजा करने वाले पितर लोक में पितर योनि प्राप्त करके पितरों के पास चले जाऐंगे। मोक्ष प्राप्त प्राणी सदा के लिए जन्म-मरण से मुक्त हो जाता है।

➢ प्रेत (भूत) पूजा तथा पितर पूजा उस परमेश्वर की पूजा नहीं है। इसलिए गीता शास्त्र अनुसार व्यर्थ है।

➢ वेदों में भूत-पूजा व पितर पूजा यानि श्राद्ध आदि कर्मकाण्ड को मूर्खों का कार्य बताया है।

❖ पवित्र मार्कण्डेय पुराण में प्रमाण :-

‘‘श्राद्ध-पिण्डदान के प्रति रूची ऋषि का वेदमत‘‘

मार्कण्डेय पुराण में ‘‘रौच्य ऋषि के जन्म’’ की कथा आती है। एक रुची ऋषि था। वह ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए वेदों अनुसार साधना करता था। विवाह नहीं कराया था। रुची ऋषि के पिता, दादा, परदादा तथा तीसरे दादा सब पित्तर (भूत)

योनि में भूखे-प्यासे भटक रहे थे। जिस समय रूची ऋषि की आयु चालीस वर्ष थी, तब उन चारों ने रुची ऋषि को दर्शन दिए तथा कहा कि बेटा! आप ने विवाह क्यों नहीं किया? विवाह करके हमारे श्राद्ध करना। रुची ऋषि ने कहा कि हे पितामहो! वेद में इस श्राद्ध-पिण्डोदक आदि कर्मों को अविद्या कहा है यानि मूर्खों का कार्य कहा है। फिर आप मुझे इस कर्म को करने को क्यों कह रहे हो?

पितरों ने भी माना और कहा कि यह बात सत्य है कि श्राद्ध आदि कर्म को वेदों में अविद्या अर्थात् मूर्खों का कार्य ही कहा है। फिर उन पित्तरों ने वेद विरूद्ध ज्ञान बताकर रूची ऋषि को भ्रमित कर दिया क्योंकि मोह भी अज्ञान की जड़ है। रूची ने विवाह करवाया। फिर श्राद्ध-पिण्डोदक क्रियाऐं करके अपना जन्म भी नष्ट किया।

मार्कण्डेय पुराण के प्रकरण से सिद्ध हुआ कि वेदों में तथा वेदों के ही संक्षिप्त रुप गीता में श्राद्ध-पिण्डोदक आदि भूत पूजा के कर्मकाण्ड को निषेध बताया है, नहीं करना चाहिए। उन मूर्ख ऋषियों ने अपने पुत्र को भी श्राद्ध करने के लिए विवश किया। उसने विवाह कराया, उससे रौच्य ऋषि का जन्म हुआ, बेटा भी पाप का भागी बना लिया।

रूची ऋषि भी ब्राह्मण थे। उन्होंने वेदों को कुछ ठीक से समझा था। अपनी आत्मा के कल्याणार्थ शास्त्र विरूद्ध सर्व मनमाना आचरण त्यागकर शास्त्रोक्त केवल एक ब्रह्म की भक्ति कर रहा था। जो उसके पिता तथा उनके पहले तीन दादा जी शास्त्रविधि त्यागकर यही कर्मकाण्ड करते-कराते थे जिसका परिणाम गीता अध्याय 9 श्लोक 25 वाला होना ही था कि पितर पूजने वाले पितरों को प्राप्त होंगे, वही हुआ। अब वर्तमान की शिक्षित जनता को अंध श्रद्धा भक्ति त्यागकर विवेक से काम लेकर गीता अध्याय 16 श्लोक 24 में कहे आदेश का पालन करना चाहिए। जिसमें कहा है कि इससे तेरे लिए अर्जुन शास्त्र ही प्रमाण हैं यानि जो शास्त्रों में करने को कहा है, वही करें। जो शास्त्रों में प्रमाणित नहीं है, उसे त्याग दें। गीता में परमात्मा का बताया विधान है तथा पुराणों में ऋषियों का अनुभव है। यदि पुराणों में श्राद्ध आदि कर्मकाण्ड करने को लिखा है तो वह गीता विरूद्ध होने से अमान्य है।

उदाहरण :- एक व्यक्ति की दोस्ती थानेदार से थी। एक दिन उस व्यक्ति ने अपने मित्र दरोगा को बताया कि मेरे को मेरे गाँव का एक दबंग व्यक्ति परेशान करता रहता है। दरोगा ने कहा कि उसको लठ मार, मैं आप निपट लूँगा। कोई मुकदमा नहीं बनने दूँगा। उस व्यक्ति ने दरोगा के आदेशानुसार गाँव के उस व्यक्ति को लठ मारा जो सिर में लगा और व्यक्ति की मृत्यु हो गई। हत्या का मुकदमा दरोगा के मित्र पर बना। उस क्षेत्र के थाने का प्रभारी होने के कारण उसी दरोगा मित्र ने मुकदमा बनाया और हत्या के कारण उसको मृत्युदंड मिला।

❖ विचार करें :- राजा का विधान है कि किसी से झगड़ा मत करो। कानूनी कार्यवाही करो। उस व्यक्ति ने अधिकारी दरोगा का आदेश पालन किया जो राजा के संविधान के विपरीत था। जिस कारण से जीवन से हाथ धो बैठा यानि दण्ड

का भागी बना। इसी प्रकार ऋषियों या पितरों का श्राद्ध करने, पिण्डदान आदि करने को कहने का आदेश परमात्मा के शास्त्रोक्त विधान के विरूद्ध है। उसका पालन करने से परमात्मा का विधान भंग होने के कारण मोक्ष के स्थान पर भूत-पितर, पशु-पक्षियों के शरीर धारण करके अनेकों कष्ट उठाते हैं।

''मार्कण्डेय पुराण में पितरों की दुर्गति का प्रमाण''

जिन्दा महात्मा अर्थात् परमेश्वर ने धर्मदास जी से कहा कि ''हे धर्मदास जी! आपने बताया कि आप भूत पूजा (तेरहवीं, सत्तरहवीं आदि भी करते हैं तथा अस्थियाँ उठाकर गति कराते हो) पित्तर पूजा (श्राद्ध आदि करना पिण्ड भराना) तथा देवताओं विष्णु-शिव आदि की पूजा भी करते हो। जबकि गीता अध्याय 9 श्लोक 25 में गीता ज्ञानदाता ने मना किया है। संक्षिप्त मार्कण्डेय पुराण में मदालसा वाले प्रकरण में पृष्ठ 80 पर लिखा है ''जो पितर देवलोक में हैं, जो तिर्यग्योनि में पड़े हैं, जो मनुष्य योनि में एवं भूतवर्ग में अर्थात् प्रेत बने हैं, वे पुण्यात्मा हों या पापात्मा जब भूख–प्यास विकल (तड़फते) होते है तो पिण्डदान तथा जलदान द्वारा तृप्त किया जाता है। **(लेख समाप्त)**

विचार करें :- शास्त्रविधि त्यागकर मनमाना आचरण अर्थात् मनमानी पूजा (देवों की, पितरों की, भूतों की पूजा) करके प्राणी पितर व भूत (प्रेत) बने। वे देवलोक (जो देवताओं की पूजा करके देवलोक में चले गए वे अपने पुण्यों के समाप्त होने पर पितर रूप में रहते हैं।) में हैं चाहे यमलोक में या प्रेत बने हैं, सर्व कष्टमय जीवन व्यतीत कर रहे हैं। अब जो उनकी पूजा करेगा वह भी इसी कष्टमयी योनि को प्राप्त होगा। इसलिए सर्व मानव समाज को शास्त्रविधि अनुसार साधना करनी चाहिए। जिससे उन पितरों की पितर योनि छूट जाएगी तथा साधक भी पूर्ण मोक्ष प्राप्त करेगा।

श्री विष्णु पुराण के तृतीय अंश के अध्याय 14 के श्लोक 10 से 14 में श्राद्ध के विषय में श्री सनत्कुमार ने कहा है कि तृतीया, कार्तिक, शुक्ला नौमी, भाद्रपद कृष्णा त्रयोदशी तथा माघमास की अमावस्या इन चारों तिथीयाँ अनन्त पुण्यदायीनि हैं। चन्द्रमा या सूर्य ग्रहण के समय तीन अष्टकाओं अथवा उत्तरायण या दक्षिणायन के आरम्भ में जो पुरूष एकाग्रह चित से पितर गणों को तिल सहित जल भी दान करता है वह मानो एक हजार वर्ष तक के लिए श्राद्ध कर लेता है। यह परम रहस्य स्वयं पितर गण ही बताते है।'' (लेख समाप्त)

विचार करें उपरोक्त श्राद्ध विधि पितरों के द्वारा बताई गई है न की वेदोक्त या श्री मद्भगवत् गीता के आधार से है।

श्री विष्णु पुराण के तृतीय अंश के अध्याय 16 के श्लोक 11 में पृष्ठ 214 पर लिखा है ''क्षीरमेकशफाना यदौष्ट्रमाविकमेव च। मार्ग च माहिष चैव वर्जयेच्छाकर्माणि''।। **इस श्लोक का हिन्दी अनुवाद=एक खुरवालों का, ऊंटनी का, भेड़ का मृगी का तथा भैंस का दूध श्राद्धकर्म में प्रयोग न करें। (काम में न लाऐं)**

समीक्षा :- वर्तमान (सन् 2006 तक) सर्व व्यक्ति श्राद्धों में भैस के दूध का ही प्रयोग कर रहे हैं जो पुराण में वर्जित है। जिस कारण से उनके द्वारा किया श्राद्ध कर्म

भी व्यर्थ हुआ। श्री विष्णु पुराण के तृतीय अंश के अध्याय 16 के श्लोक 1 से 3 में पृष्ठ 213 पर (मांस द्वारा श्राद्ध करने से पितर गण सदा तृप्त रहते हैं।) लिखा है ''हविष्यमत्स्य मांसैस्तु शशस्य नकुलस्य च। सौकरछाग लैणेयरौरवैर्गवयेन च।। (1) और भ्रगव्यैश्च तथा मासवृद्धया पिता महाः (2) खडगमांसमतीवात्र कालशाकं तथा मधु। शस्तानि कर्मण्यत्यन्ततृप्तिदानि नरेश्वर ।। (3)

हिन्दी अनुवाद :– हवि, मत्सय (मच्छली) शशंक (खरगोश) नकुल, शुकर (सुअर), छाग, कस्तूरिया मृग, काला मृग, गवय (नील गाय/वन गाय) और मेष (भेड़) के मांसों से गव्य (गौ के घी, दूध) से पितरगण एक–एक मास अधिक तृप्त रहते हैं और वार्ध्रीणस पक्षी के मांस से सदा तृप्त रहते हैं।(1-2) श्राद्ध कर्म में गेड़े का मांस काला शाक और मधु अत्यंत प्रशस्त और अत्यंत तृप्ती दायक है।।(3) श्री विष्णु पुराण अध्याय 2 चतुर्थ अंश पृष्ठ 233 पर भी श्राद्ध कर्म में मांस प्रयोग प्रमाण स्पष्ट है।

समीक्षा :- उपरोक्त पुराण के ज्ञान आदेशानुसार श्राद्ध कर्म करने से पुण्य के स्थान पर पाप ही प्राप्त होगा।

क्या यह उपरोक्त मांस द्वारा श्राद्ध करने का आदेश अर्थात् प्रावधान न्याय संगत है अर्थात् नहीं। इसलिए पुराणों में वर्णित भक्तिविधि तथा पुण्य साधना कर्म शास्त्रविरूद्ध है। जो लाभ के स्थान पर हानिकारक है।

विशेष :- उपरोक्त श्लोक 1-2 के अनुवाद कर्ता ने कुछ अनुवाद को घुमा कर लिखा है। मूल संस्कृत भाषा में स्पष्ट गाय का मांस श्राद्ध कर्म में प्रयोग करने को कहा गया है। हिन्दी अनुवाद कर्ता ने गव्य अर्थात् गौ के मांस के स्थान पर कोष्ठ में ''गौ के घी दूध से'' लिखा है। विचार करें क्या हिन्दु धर्म उपरोक्त मांस आहार को श्राद्ध कर्म में प्रयोग कर सकता है। कभी नहीं। इसलिए ऐसे श्राद्ध न करके श्रद्धापूर्वक धार्मिक अनुष्ठान पूर्ण सन्त के बताए मार्ग से करना चाहिए। वह है नाम मंत्र का जाप, पांचों यज्ञ, तीनों समय की उपासना वाणी पाठ से जो यह दास (रामपाल दास) बताता है। जिससे पितरों, प्रेतों आदि का भी कल्याण होकर उपासक पूर्ण मोक्ष प्राप्त करेगा तथा उसके पितर (पूर्वज) जो भूत या पितर योनियों में कष्ट उठा रहे हैं, उनकी वह योनि छूटकर तुरन्त मानव शरीर प्राप्त करके इस भक्ति को प्राप्त करेगें। जिससे उनका भी पूर्ण मोक्ष हो जाएगा।

मार्कण्डेय पुराण (गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित) में अध्याय ''श्राद्धकर्म का वर्णन पृष्ठ 92 पर लिखा है ''जो प्रपितामह के ऊपर के तीन पीढ़ीयाँ जो नरक में निवास करती हैं, जो पशु–पक्षी की योनि में पड़े है, तथा जो भूत प्रेत आदि के रूप में स्थित है उन सब को विधि पूर्वक श्राद्ध करने वाला यजमान तृप्त करता है। पृथ्वी पर जो अन्न बिखेरते हैं (श्राद्ध कर्म करते समय) उससे पिशाच योनि में पड़े पितरों की तृप्ति होती है। स्नान के वस्त्र से जो जल पृथ्वी पर टपकता है, उससे वृक्ष योनि में पड़े हुए पितर तृप्त होते हैं। नहाने पर अपने शरीर से जो जल के कण पृथ्वी पर गिरते हैं उनसे उन पितरो की तृप्ति होती है जो देव भाव को प्राप्त हुए हैं। पिण्डों के उठाने पर जो अन्न के कण पृथ्वी पर गिरते हैं, उनसे पशु–पक्षी की योनि में पड़े हुए पितरों की तृप्ति होती है। अन्यायोपार्जित धन से जो श्राद्ध किया जाता है, उससे चाण्डाल आदि योनियों में पड़े हुए पितरों की तृप्ति होती है।

विचार करें :- उपरोक्त योनियों में जो अपने पूर्वज पड़े हैं। उसका मूल कारण है कि उन्होंने शास्त्रविधि अनुसार भक्ति नहीं की। पवित्र गीता जी व पवित्र वेदों में वर्णित विधि अनुसार साधना करते तो उपरोक्त महाकष्ट दायक योनियों में नहीं पड़ते। मुझ दास (लेखक-रामपाल दास) की सर्व मानव समाज से कर बद्ध प्रार्थना है अब तो जागो, पीछे जो गलती हो चुकी है, उसकी आवृत्ति न हो। जो साधना यह दास (रामपाल दास) बताता है उससे आपके पूर्वज (सात पीढ़ी तक के) किसी भी योनि में (पितर, भूत, पिशाच, पशु-पक्षी, वृक्ष आदि में) पड़े हों उन सर्व की वर्तमान योनि छूटकर तुरन्त मानव जन्म मिलेगा। फिर वे वर्तमान में मुझ दास (रामपाल दास) द्वारा भक्ति साधना प्राप्त करके यदि मर्यादा में रह कर आजीवन यह भक्ति करते रहेगें तो पूर्ण मोक्ष प्राप्त करेगें। यही प्रमाण कबीर परमेश्वर द्वारा दिए तत्वज्ञान को संत गरीबदास जी बता रहे हैं :-

अग्नि लगा दिया जद लम्बा, फूंक दिया उस ठाई। पुराण उठाकर पण्डित आए, पीछे गरूड़ पढ़ाई।।
नर सेती फिर पशुवा किजे गधा बैल बनाई, छप्पन भोग कहा मन बौरे किते कुरड़ी चरने जाई।
प्रेत शिला पर जाय विराजे पितरों पिण्ड भराई, बहुर श्राद्ध खाने को आऐ काग भए कलि माहीं।
जै सतगुरू की संगत करते सकल कर्म कट जाई। अमर पुरी पर आसन होते जहाँ धूप ना छांई।

उपरोक्त वाणी पांचवे वेद (सूक्ष्म अर्थात् स्वसम वेद) की है। जिसमें स्पष्ट किया है कि पितरों आदि के पिण्ड दान करते हुए अर्थात् श्राद्ध कर्म करते-करते भी पशु-पक्षी व भूत प्रेत की योनियों में प्राणी पड़ते हैं तो वह श्राद्ध कर्म किस काम आया? फिर कहा है कि यदि सतगुरू (तत्वज्ञान दाता तत्वदर्शी संत) का संग करते अर्थात् उसके बताए अनुसार भक्ति साधना करते तो सर्व कर्म कट जाते। न पशु बनते, न पक्षी, न पितर बनते, न प्रेत। सीधे सतधाम (शाश्वत स्थान) पर चले जाते जहां जाने के पश्चात् फिर लौट कर इस संसार में किसी भी योनि में नहीं आते (प्रमाण गीता अध्याय 4 श्लोक 34 अध्याय 15 श्लोक 1 से 4 तथा श्लोक 16-17 में तथा अध्याय 18 श्लोक 62 में व अध्याय 9 श्लोक 25 में)

❖ पुराणों में लिखा है (जो ऋषि का अनुभव है) कि पितर धन देते हैं, पुत्र देते हैं। रोग नष्ट कर देते हैं आदि-आदि।

विचार करें :- पितर स्वयं भूखे-प्यासे यमलोक (नरक लोक) में कष्ट उठाते हैं। अपनी भूख-प्यास शांत करने के लिए आप जी से श्राद्ध-कर्म करने को भ्रमित ज्ञान के आधार से कहते हैं तो वे आपको सुखी कर सकें, यह बात न्याय संगत नहीं है। अपने धर्मगुरू यह भी कहा करते हैं कि किस्मत लिखा ही प्राणी प्राप्त करते हैं, उसमें कोई परिवर्तन नहीं हो सकता। परंतु सच्चाई यह है कि यदि साधक पूर्ण परमात्मा की सत्य साधना करता है तो परमात्मा को ही यह अधिकार है कि भाग्य से भिन्न भी दे सकता है। अन्य किसी देवी-देव तथा पितर आदि को यह अधिकार नहीं है। गीता अध्याय 7 श्लोक 12-15 तथा 20-23 में तो तीनों देवताओं (श्री ब्रह्मा रजगुण, श्री विष्णु सतगुण तथा श्री शिव तमगुण) की भक्ति करना भी निषेध बताया है। हिन्दू ब्रह्म की साधना न करके अन्य उपरोक्त देवताओं या अन्य देवताओं की

पूजा करते हैं। इनकी पूजा करने वालों को राक्षस स्वभाव को धारण किए हुए, मनुष्यों में नीच, दूषित कर्म करने वाले मूर्ख कहा है। आप जी विचार करें कि पितर कौन-से खेत की मूली हैं? पितर साधक को धन, पुत्र आदि दे देंगे, यह दूर की कौड़ी है।

''प्रभु कबीर जी द्वारा श्राद्ध भ्रम खण्डन''

एक समय काशी नगर (बनारस) में गंगा दरिया के घाट पर कुछ पंडित जी श्राद्धों के दिनों में अपने पितरों को जल दान करने के उद्देश्य से गंगा के जल का लोटा भरकर पटरी पर खड़े होकर सुबह के समय सूर्य की ओर मुख करके पथ्वी पर लोटे वाला जल गिरा रहे थे। परमात्मा कबीर जी ने यह सब देखा तो जानना चाहा कि आप यह किस उद्देश्य से कर रहे हैं? पंडितों ने बताया कि हम अपने पूर्वजों को जो पितर बनकर स्वर्ग में निवास कर रहे हैं, जल दान कर रहे हैं। यह जल हमारे पितरों को प्राप्त हो जाएगा। यह सुनकर परमेश्वर कबीर जी उन अंध श्रद्धा भक्ति करने वालों का अंधविश्वास समाप्त करने के लिए उसी गंगा दरिया में घुटनों पानी खड़ा होकर दोनों हाथों से गंगा दरिया का जल सूर्य की ओर पटरी पर शीघ्र-शीघ्र फैंकने लगे। उनको ऐसा करते देखकर सैंकड़ों पंडित तथा सैंकड़ों नागरिक इकट्ठे हो गए। पंडितों ने पूछा कि हे कबीर जी! आप यह कौन-सी कर्मकाण्ड की क्रिया कर रहे हो? इससे क्या लाभ होगा? यह तो कर्मकाण्ड में लिखी ही नहीं है।

कबीर जी ने उत्तर दिया कि यहाँ से एक मील (1½ कि.मी.) दूर मेरी कुटी के आगे मैंने एक बगीची लगा रखी है। उसकी सिंचाई के लिए क्रिया कर रहा हूँ। यह जल मेरी बगीची की सिंचाई कर रहा है। यह सुनकर सर्व पंडित हँसने लगे और बोले कि यह कभी संभव नहीं हो सकता। एक मील दूर यह जल कैसे जाएगा? यह तो यहीं रेत में समा गया है। कबीर जी ने कहा कि यदि आपके द्वारा गिराया जल करोड़ों मील दूर स्वर्ग में जा सकता है तो मेरे द्वारा गिराए जल को एक मील जाने पर कौन-सी आश्चर्य की बात है? यह बात सुनकर पंडित जी समझ गए कि हमारी क्रियाऐं व्यर्थ हैं। कबीर जी ने एक घण्टा बाहर पटरी पर खड़े होकर कर्मकाण्ड यानि श्राद्ध व अन्य क्रियाओं पर सटीक तर्क किया। कहा कि आप एक ओर तो कह रहे हो कि आपके पितर स्वर्ग में हैं। दूसरी ओर कह रहे हो, उनको पीने का पानी नहीं मिल रहा। वे वहाँ प्यासे हैं। उनको सूर्य को अर्ध देकर जल पार्सल करते हो। यदि स्वर्ग में पीने के पानी का ही अभाव है तो उसे स्वर्ग नहीं कह सकते। वह तो रेगिस्तान होगा। वास्तव में वे पितरगण यमराज के आधीन यमलोक रूपी कारागार में अपराधी बनाकर डाले जाते हैं। वहाँ पर जो निर्धारित आहार है, वह सबको दिया जाता है। जब पथ्वी पर बनी कारागार में कोई भी कैदी खाने बिना नहीं रहता। सबको खाना-पानी मिलता है तो यमलोक वाली कारागार जो निरंजन काल राजा ने बनाई है, उसमें भी भोजन-पानी का अभाव नहीं है।

कुछ पितरगण पृथ्वी पर विचरण करने के लिए यमराज से आज्ञा लेकर पृथ्वी पर पैरोल पर आते हैं। वे जीभ के चटोरे होते हैं। उनको कारागार वाला सामान्य भोजन अच्छा नहीं लगता। वे भी मानव जीवन में इसी भ्रम में अंध भक्ति करते थे कि श्राद्धों में एक दिन के श्राद्ध कर्म से पितरगण एक वर्ष के लिए तृप्त हो जाते हैं। उसी आधार से रूची ऋषि के चारों पूर्वज पितरों ने पैरोल पर आकर काल प्रेरणा से रूची ऋषि को भ्रमित करके वेद अनुसार शास्त्रोक्त साधना छुड़वाकर विवाह कराकर श्राद्ध आदि शास्त्रविरूद्ध कर्मकाण्ड के लिए प्रेरित किया। उस भले ब्राह्मण को भी पितर बनाकर छोड़ा। पृथ्वी पर आकर पितर रूपी भूत किसी व्यक्ति (स्त्री-पुरूष) में प्रवेश करके भोजन का आनंद लेते हैं। अन्य के शरीर में प्रवेश करके भोजन खाते हैं। भोजन की सूक्ष्म वासना से उनका सूक्ष्म शरीर तृप्त होता है। लेकिन एक वर्ष के लिए नहीं। यदि कोई पिता-दादा, दादी, माता आदि-आदि किसी पशु के शरीर को प्राप्त हैं तो उसको कैसे तृप्ति होगी? उसको दस-पंद्रह किलोग्राम चारा खाने को चाहिए। कोई श्राद्ध करने वाला गुरू-पुरोहित भूसा खाता देखा है। आवश्यक नहीं है कि सबके माता-पिता, दादा-दादी आदि-आदि पितर बने हों। कुछ के पशु-पक्षी आदि अन्य योनियों को भी प्राप्त होते हैं। परंतु श्राद्ध सबके करवाए जाते हैं। इसे कहते हैं अंध श्रद्धा भक्ति।

''श्री नानक जी द्वारा श्राद्ध भ्रम खण्डन''

❖ अन्य उदाहरण :- सिक्ख धर्म के प्रवर्तक श्री नानक देव साहेब जी की जीवनी में एक घटना ऐसी है जिसका वर्णन करता हूँ जो पवित्र पुस्तक ''भाई बाले वाली जन्म साखी श्री नानक देव'' में लिखी है जिसकी हैडिंग है ''आगे साखी दुनिचंद खत्री नाल होई''।

संक्षिप्त प्रकरण इस प्रकार है :-

❖ श्री नानक जी को परमात्मा (परम अक्षर ब्रह्म) बेई नदी पर उस समय मिले थे, जिस समय श्री नानक जी सुलतानपुर शहर से सुबह के समय प्रतिदिन की तरह बेई नदी में स्नान करने के लिए गए थे। अन्य नगरवासी भी स्नान कर रहे थे। उस समय परमेश्वर कबीर जी बाबा जिंदा के वेश में आए और श्री नानक जी के साथ दरिया में स्नान करने के बहाने प्रवेश हुए। अन्य उपस्थित व्यक्ति देख रहे थे। दोनों ने दरिया में डुबकी लगाई, परंतु बाहर नहीं आए। दोनों को दरिया में डूबा मान लिया गया था। परमेश्वर जी श्री नानक जी की आत्मा को लेकर (शरीर को दूर जंगल में छोड़कर) अपने साथ अपने निवास स्थान सतलोक (सच्चखण्ड) में ले गए। तीन दिन तक काल ब्रह्म के इक्कीश ब्रह्माण्डों, अक्षर पुरूष के सात शंख ब्रह्माण्डों तथा अपने सतलोक के असंख्य ब्रह्माण्डों की स्थिति को आँखों दिखाया, यथार्थ आध्यात्मिक ज्ञान बताया तथा यथार्थ मोक्ष मंत्र सतनाम (जो दो अक्षर का है जिसमें एक ॐ मंत्र है तथा दूसरा गुप्त है जो उपदेशी को बताया जाता है।) से मुक्ति होना बताया। फिर एक नाम (सारनाम) का विशेष योगदान मानव के

मोक्ष की साधना में है, उससे परिचित कराया तथा सतनाम और सारनाम को कलयुग के पाँच हजार पाँच सौ पाँच (5505) वर्ष बीत जाने तक गुप्त रखने की आज्ञा दी। श्राद्ध-पिण्डदान आदि कर्मकाण्ड को व्यर्थ बताया और स्वर्ग-नरक को दिखाया। तीसरे दिन श्री नानक जी की आत्मा को शरीर में प्रवेश करके अंतर्ध्यान हो गए। उसके पश्चात् श्री नानक जी ने अपने दो शिष्यों ''भाई बाला तथा मर्दाना'' को साथ लेकर प्रभु से प्राप्त यथार्थ ज्ञान व आँखों देखी ऊपर के लोकों की व्यवस्था का प्रचार करने के उद्देश्य से देश-प्रदेश में बारह वर्ष भ्रमण किया। उसी दौरान लाहौर में एक धनी व्यक्ति दुनिचन्द खत्री की प्रार्थना पर उनके घर गए। उस दिन सेठ दुनिचन्द खत्री ने अपने पिता जी का श्राद्ध किया था। कई ब्राह्मणों को भोजन करवाया तथा वस्त्र व हजारों रूपये दक्षिणा दी थी। श्री नानक जी ने पूछा कि हे दुनिचन्द! आज किस उपलक्ष्य में इतने पकवान बनाऐ हैं। दुनिचन्द ने बताया कि महाराज जी! आज मेरे पिता जी का श्राद्ध किया है। श्री नानक जी ने पूछा कि आपके पिता जी कहाँ है? उत्तर दुनिचन्द का कि वे स्वर्गवासी हो चुके हैं। श्राद्ध करने से उनको एक वर्ष तक स्वर्ग में भूख नहीं लगती। यह बात सुनकर श्री नानक जी ने कहा कि हे दुनिचन्द! आपको आपके अज्ञानी गुरूओं ने भ्रमित कर रखा है। आपका पिता जी तो बाघ के शरीर को प्राप्त होकर उस जंगल में एक वृक्ष के नीचे भूख से व्याकुल बैठा है। यदि मेरी बात पर विश्वास नहीं है तो जाँच कर सकते हैं। तू एक व्यक्ति का भोजन तैयार कर, उस जंगल में जा, तेरी दृष्टि पड़ते ही मेरे आशीर्वाद से उस बाघ (सिंह) को मनुष्य बुद्धि आ जाएगी। उसको अपना पूर्व जन्म भी याद आ जाएगा। दुनिचन्द जी को श्री नानक जी पर पूर्ण विश्वास था कि इन्होंने जो बोल दिया, वह सिद्ध है। इस महात्मा में लोग बड़ी शक्ति बताते हैं।

दुनिचन्द सेठ एक व्यक्ति का भोजन जो श्राद्ध के बाद बचा था, लेकर उस बताए जंगल में उसी झाड़ के पास गया तो एक सिंह दिखाई दिया जो दुनिचन्द की ओर कुत्ते की तरह दुम हिला-हिलाकर भाव प्रकट करने लगा कि मैं कोई हानि नहीं करूंगा, आ जा मेरे पास। दुनिचन्द सेठ ने भोजन बाघ के सामने थाली में रख दिया। सर्व भोजन बाघ खा गया। दुनिचन्द ने पूछा कि हे पिता जी! आप तो बड़े धर्म-कर्म करते थे। आप तो सदा शाकाहारी रहे थे। आपकी यह दशा कैसे हुई? श्री नानक महाराज जी की शक्ति से सिंह ने कहा कि बेटा! जब मेरे प्राण निकल रहे थे, उसी समय साथ वाले मकान में माँस पकाया जा रहा था। उसकी गंध मेरे तक आई, मेरे मन में माँस खाने की इच्छा हुई। उसी समय मेरे प्राण निकल गए। जिस कारण से मुझे शेर का शरीर मिला। बेटा दुनिचन्द! आप किसी पूर्ण संत से दीक्षा लेकर अपने जीव का कल्याण करा लेना। मानव जीवन बड़ी कठिनता से मिलता है। यह कहकर शेर जंगल की ओर गहरा चला गया। दुनिचन्द ने उन अज्ञानी धर्मगुरूओं को धिक्कारा कि सबको भ्रमित कर रहे हैं। अब विश्वास हुआ कि श्राद्ध करने से कोई लाभ मृतक को नहीं मिलता। घर आकर श्री नानक जी

के चरणों में गिरकर अपने कल्याण के लिए यथार्थ भक्ति का ज्ञान तथा मंत्र लेकर आजीवन स्मरण किया तथा सर्व अंधविश्वास वाली साधना त्याग दी जो शास्त्रों के विरूद्ध कर रहा था। मानव जीवन सफल किया।

❖ अन्य उदाहरण :-

''संत गरीबदास जी द्वारा श्राद्ध भ्रम खण्डन''

संत गरीबदास जी महाराज (गाँव-छुड़ानी, जिला-झज्जर, प्रान्त-हरियाणा) को श्री नानक जी की तरह दस वर्ष की आयु में सन् 1727 (विक्रमी संवत् 1784) में नला नाम के खेत (जंगल) में जिंदा बाबा के वेश में परम अक्षर ब्रह्म मिले थे। उस समय छुड़ानी गाँव के दस-बारह व्यक्तियों ने बाबा जिंदा को देखा, बातें की। अन्य व्यक्ति अपने-अपने कार्य में लग गए। बालक गरीबदास जी की आत्मा को निकालकर परमात्मा सतलोक ले गए। ऊपर के सब लोकों का अवलोकन करवाकर सर्व यथार्थ आध्यात्मिक ज्ञान बताकर लगभग 8-9 घण्टे बाद वापिस शरीर में प्रविष्ट कर दिया। बालक गरीबदास जी को मत जानकर चिता पर रख दिया था। अग्नि लगाने वाले थे। उसी समय संत गरीबदास जी उठकर घर की ओर चल पड़े। परमेश्वर कबीर जी ने उनको यथार्थ भक्ति ज्ञान दिया। उनके बहुत सारे शिष्य हुए। गाँव छुड़ानी के एक भक्त को संत गरीबदास जी की बात पर विश्वास नहीं था कि श्राद्ध कराया हुआ मतक को नहीं मिलता। श्राद्धों के दिनों में उस भक्त के दोनों माता-पिता के श्राद्ध लगातार दो दिन किए गए। पहले दिन माता जी का और अगले दिन पिता जी का। संत गरीबदास जी ने कहा कि हे भक्त! आपके माता-पिता तो तुम्हारे खेत की जोहड़ी (जिसे ग्रामीण भाषा में लेट यानि छोटा तालाब = जोहड़ी कहते हैं।) पर भूखे रो रहे हैं। आप दो व्यक्तियों का भोजन लेकर मेरे साथ चलो। वह भक्त अति शीघ्र अपने पिता के श्राद्ध से बची खीर व रोटी दो व्यक्तियों की लेकर संत गरीबदास जी के साथ गया। उनके खेत में बनी जोहड़ी से लगभग दो सौ फुट दूर खड़े होकर संत गरीबदास जी ने आवाज लगाई कि हे फतेह सिंह तथा दया कौर (काल्पनिक नाम)! आओ, आपका पुत्र आपके लिए भोजन लाया है। उसी समय गीदड़ तथा गीदड़ी झाड़ियों से बाहर निकले। पहले तो ऊपर को मुख करके चिल्लाए। फिर दौड़े-दौड़े संत गरीबदास जी के पास आए। दोनों के सामने खीर-रोटी रख दी। शीघ्र-शीघ्र खाकर दौड़ गए। उस दिन उस भ्रमित भक्त का अज्ञान भंग हुआ। वह प्रतिदिन दो व्यक्तियों का भोजन जैसा भी घर पर बनता था, एक समय उस जोहड़ी की झाड़ियों में रख देता। प्रतिदिन वे दोनों जानवर भोजन खा जाते। कुछ वर्ष पश्चात् उनकी मत्यु हो गई। यह देखकर भी अन्य गाँव वाले तो उस भक्त का मजाक करते थे कि तेरे को गरीबु (संत गरीबदास जी को गाँव के लोग गरीबा-गरीबु आदि-आदि अपभ्रंस नामों से पुकारते थे) ने बहका दिया है। श्राद्ध नहीं करता, बड़ी हानि हो जाएगी। परंतु भक्त को अटल विश्वास हो चुका था। आजीवन मर्यादा में रहकर साधना करके जीवन सफल

किया। जीवन में कोई हानि नहीं हुई, अपितु अद्भुत लाभ हुए। धनी हो गया। सैंकड़ों गाय मोल ले ली। बड़ी हवेली (कोठी) बना ली। कुछ वर्ष पश्चात् बच्चों ने भी दीक्षा ले ली। सुखी जीवन जीया।

❖ अन्य उदाहरण :-

''लेखक (रामपाल दास) द्वारा श्राद्ध भ्रम खण्डन''

''सत्य कथा''

मेरे पूज्य गुरुदेव स्वामी रामदेवानन्द जी गाँव-बड़ा पैंतावास, तहसील-चरखी दादरी, जिला-भिवानी (प्रान्त-हरियाणा) के निवासी थे जो लगभग सोलह वर्ष की आयु में पूर्ण परमात्मा की प्राप्ति के लिए अचानक घर त्याग कर निकल गए। प्रतिदिन पहनने वाले वस्त्रों को अपने ही खेतों के निकट घने जंगल में किसी मत पशु की अस्थियों के पास डाल गए। शाम को घर न पहुँचने के कारण घर वालों ने जंगल में तलाश की। रात्रि का समय था। कपड़े पहचान कर दुःखी मन से पशु की अस्थियों को बच्चे की अस्थियाँ जान कर उठा लाए तथा यह सोचा कि बच्चा जंगल में चला गया, किसी हिंसक जानवर ने खा लिया। अन्तिम संस्कार कर दिया। सर्व क्रियाऐं की, तेरहवीं-बरसौदी (वर्षी) आदि की तथा श्राद्ध भी निकालते रहे। लगभग 104 वर्ष की आयु प्राप्त होने के उपरान्त स्वामी जी अचानक अपने गाँव बड़ा पैंतावास जिला भिवानी, तहसील-चरखी दादरी, हरियाणा में पहुँच गए। स्वामी जी का बचपन का नाम श्री हरिद्वारी जी था तथा पवित्र ब्राह्मण कुल में जन्म था। मुझ दास को पता चला तो मैं भी दर्शनार्थ पहुँच गया। स्वामी जी की भाभी जी जो लगभग 92 वर्ष की आयु की थी। मैंने उस वद्धा से पूछा कि हमारे गुरु जी के घर त्याग जाने के उपरान्त क्या महसूस किया? उस वद्धा ने बताया कि मेरा विवाह हुआ तब मुझे बताया गया कि इनका एक भाई हरिद्वारी था जो किसी हिंसक जानवर ने जंगल में खा लिया था। उसके श्राद्ध निकाले जा रहे हैं। मुझे भी इनके श्राद्ध निकालने को कहा गया। वद्धा ने बताया कि 70 श्राद्ध तो मैं अपने हाथों निकाल चुकी हूँ। जब कभी फसल अच्छी नहीं होती या कोई घर का सदस्य बीमार हो जाता तो अपने पुरोहित (गुरु जी) से कारण पूछते तो वह कहा करता कि हरद्वारी पितर बना है, वह तुम्हें दुःखी कर रहा है। श्राद्धों के निकालने में कोई अशुद्धि रही है। अब की बार सर्व क्रिया मैं स्वयं अपने हाथों से करूंगा। पहले मुझे समय नहीं मिला था क्योंकि एक ही दिन में कई जगह श्राद्ध क्रियाऐं करने जाना पड़ा। इसलिए बच्चे को भेजा था। तब तक कुछ भेंट चढ़ाओ ताकि उसे शान्त किया जाए। तब उसे 21 या 51 रूपये जो भी कहता था, डरते भेंट करते थे। फिर श्राद्धों के समय गुरु जी स्वयं श्राद्ध करते थे। तब मैंने कहा माता जी अब तो छोड़ दो इस गीता जी विरुद्ध साधना को, नहीं तो आप भी प्रेत बनोगी। गीता अध्याय 9 श्लोक 25 सुनाया। तब वह वद्धा कहने लगी गीता कि मैं भी पढती हूँ। दास ने कहा आपने पढा है, समझा नहीं। आगे से तो बन्द कर दो इस साधना को। वद्धा

ने उत्तर दिया न भाई, कैसे छोड़ दें श्राद्ध निकालना, यह तो सदियों पुरानी (लाग) परम्परा है। हे पाठको! यह दोष भोली आत्माओं का नहीं है। यह दोष मूर्ख गुरुओं (नीम हकीमों) का है जिन्होंने अपने पवित्र शास्त्रों को समझे बिना मनमाना आचरण (पूजा का मार्ग) बता दिया। जिस कारण न तो कोई कार्य सिद्ध होता है, न परमगति तथा न कोई सुख ही प्राप्त होता है। (प्रमाण :- पवित्र गीता अध्याय 16 श्लोक 23-24)

शंका प्रश्नः- यदि किसी के माता-पिता भूखे हों, वे दिखाई देकर कहें तो वह पुत्र नहीं जो उनकी इच्छा पूरी न करे।

शंका समाधानः- यदि किसी का बच्चा कुएं में गिरा हो वह तो चिल्लाएगा कि मुझे बचा लो। पिता जी आ जाओ। मैं मर रहा हूँ। वह पिता मूर्ख होगा जो भावुक होकर कुएं में छलाँग लगाकर बच्चे को बचाने की कोशिश करके स्वयं भी डूबकर मर जाएगा। बच्चे को भी नही बचा पाएगा। उसको चाहिए कि लम्बी रस्सी का प्रबन्ध करे। फिर उस कुएं में छोड़े। बच्चा उसे पकड़ ले। फिर बाहर खींचकर बच्चे को कुएं से निकाले। इसी प्रकार पूर्वज तो शास्त्रविधि त्यागकर मनमाना आचरण (पूजा) करके पितर बन चुके हैं। संतान को भी पितर बनाने के लिए पुकार रहे हैं। तत्वज्ञान को समझकर अपना कल्याण कराऐं तथा मुझ दास (रामपाल दास) के पास परमेश्वर कबीर बंदी छोड़ जी की प्रदान की हुई वह विधि है जो साधक का तो कल्याण करेगी ही, उसके पित्तरों की भी पितर योनि छूटकर मानव जन्म प्राप्त होगा तथा भक्ति युग में जन्म होकर सत्य भक्ति करके एक या दो जन्म में पूर्ण मोक्ष प्राप्त करेगें।

विचार करें :- जैसा कि उपरोक्त रूची ऋषि की कथा में पित्तर डर रहे हैं कि यदि हमारे श्राद्ध नहीं किए गए तो हम पतन को प्राप्त होगें अर्थात् हमारा पतन (मृत्यु) हो जाएगा। अब उनको पित्तर योनि जो अत्यंत कष्टमय है, अच्छी लग रही है। उसे त्यागना नहीं चाह रहे। यह तो वही कहानी वाली बात है कि ''एक समय एक ऋषि को अपने भविष्य के जन्म का ज्ञान हुआ। उसने अपने पुत्रों को बताया कि मेरा अगला जन्म अमूक व्यक्ति के घर एक सूअरी से होगा। मैं सूअर का जन्म पाऊंगा। उस सूअरी के गले में गांठ है। यह उसकी पहचान है। उसके उदर से मेरा जन्म होगा। मेरी पहचान यह होगी कि मेरे सिर पर गांठ होगी जो दूर से दिखाई देगी। मेरे बच्चो! उस व्यक्ति से मुझे मोल ले लेना तथा मुझे मार देना, मेरी गति कर देना। बच्चों ने कहा बहुत अच्छा पिता जी। ऋषि ने फिर आँखों में पानी भरकर कहा कि बच्चो! कहीं लालचवश मुझे मोल न लो और मुझे तुम मारो नहीं, यह कार्य तुम अवश्य करना, नहीं तो मैं सूअर योनि में महाकष्ट उठाऊंगा। बच्चों ने पूर्ण विश्वास दिलाया। उसके पश्चात् कुछ दिनों में उस ऋषि का देहांत हो गया। उसी व्यक्ति के घर पर उसी गले में गांठ वाली सूअरी के वहीं सिर पर गांठ वाला बच्चा भी अन्य बच्चों के साथ उत्पन्न हुआ। उस ऋषि के बच्चों ने वह सूअरी का बच्चा मोल ले लिया। तब उसे मारने लगे। उसी समय वह बच्चा बोला, बेटा! मुझे मत मारो। मेरा जीवन नष्ट करके तुम्हें क्या मिलेगा? तब उस ऋषि के पूर्व जन्म के बेटों ने कहा, पिता जी! आपने ही तो कहा

था। तब वह सुअर के बच्चे रूप में ऋषि बोला कि मैं आपके सामने हाथ जोड़ता हूँ। मुझे मत मारो, मेरे भाईयों (अन्य सूअर के बच्चों) के साथ मेरा दिल लगा है। मुझे बख्श दो। बच्चों ने वह बच्चा छोड़ दिया, मारा नहीं। इस प्रकार यह जीव जिस भी योनि में उत्पन्न हो जाता है, उसे त्यागना नहीं चाहता। जबकि यह शरीर एक दिन सर्व का जाएगा। इसलिए भावुकता में न बहकर विवेक से कार्य करना चाहिए। यह दास (रामपाल दास) जो साधना बताएगा, उससे आम के आम और गुठलियों के दाम भी मिलेगें। इसी विष्णु पुराण में तृतीय अंश के अध्याय 15 श्लोक 55-56 पृष्ठ 213 पर लिखा है कि ''(और्व ऋषि सगर राजा को बता रहा है)'' हे राजन् श्राद्ध करने वाले पुरूष से पितरगण, विश्वदेव गण आदि सर्व संतुष्ट हो जाते हैं। हे भूपाल! पितरगण का आधार चन्द्रमा है और चन्द्रमा का आधार योग (शास्त्रअनुकूल भक्ति) है। इसलिए श्राद्ध में योगी जन (तत्व ज्ञान अनुसार शास्त्रविधि अनुसार साधक जन) को अवश्य बुलाए यदि श्राद्ध में एक हजार ब्राह्मण भोजन कर रहे हों उनके सामने एक योगी (शास्त्रअनुकूल साधक) भी हो तो वह उन एक हजार ब्राह्मणों का भी उद्धार कर देता है तथा यजमान का भी उद्धार कर देता है। **(पित्तरों का उद्धार का अर्थ है कि पित्तरों की योनि छूटकर मानव शरीर मिलेगा। यजमान तथा ब्राह्मणों के उद्धार से तात्पर्य यह है कि उनको सत्य साधना का उपदेश करके मोक्ष का अधिकारी बनाएगा)**

योगी की परिभाषा :- गीता अध्याय 2 श्लोक 53 में कहा है कि हे अर्जुन! जिस समय आप की बुद्धि भिन्न-2 प्रकार के भ्रमित करने वाले ज्ञान से हटकर एक तत्व ज्ञान पर स्थिर हो जाएगी, तब तू योगी बनेगा अर्थात् भक्त बनेगा। (योग का प्राप्त होगा) भावार्थ है कि तत्व ज्ञान आधार से साधना करने वाला ही मोक्ष का अधिकारी बनता है। उसी में नाम साधना (भक्ति) का धन होता है। वह राम नाम की कमाई का धनी होता है।

इसलिए यह दास (रामपाल दास) आपको वह शास्त्रानुकूल साधना प्रदान करेगा जिससे आप योगी (सत्य साधक) हो जाओगे। आपका कल्याण तथा आपके पित्तरों का भी कल्याण हो जाएगा। जैसा कि विष्णु पुराण तृतीय अंश अध्याय 15 श्लोक 13 से 17 पृष्ठ 210 पर लिखा है कि देवताओं के निमित्त श्राद्ध (पूजा) में अयुग्म संख्या (3,5,7,9 की संख्या) में ब्राह्मणों को एक साथ भोजन कराए तथा उनका मुँह पूर्व की ओर बैठाकर भोजन कराए तथा पित्तरों के लिए श्राद्ध (पूजा) करने के समय युग्म संख्या (दो, चार, छः, आठ की संख्या) में उत्तर की ओर मुख करके बैठाए तथा भोजन कराए। विचार करने की बात यह है कि इसी विष्णु पुराण, इसी तृतीय अंश के अध्याय 15 में श्लोक 55-56 पृष्ठ 213 पर यह भी तो लिखा है कि एक योगी (शास्त्रानुकूल सत्य साधक) अकेला ही पित्तरों तथा एक हजार ब्राह्मणों तथा यजमान सहित सर्व का उद्धार कर देगा। क्यों न हम एक योगी की खोज करें जिससे सर्व लाभ प्राप्त हो जाएगा। कबीर परमेश्वर जी ने कहा है कि :-

एकै साधे सब सधै, सब साधै सब जाय। माली सीचें मूल को, फलै फूलै अघाय।।

यह दास (रामपाल दास) भी धार्मिक अनुष्ठान (श्रद्धा से पूजा) करता और कराता है। जिसके करने से साधक पितर, भूत नहीं बनता अपितु पूर्ण मोक्ष प्राप्त

करता है तथा जो पूर्वज गलत साधना (शास्त्रविधि त्याग कर मनमाना आचरण अर्थात् पूजा) करके पित्तर भूत बने हैं, उनका भी छुटकारा हो जाता है। यही प्रमाण इसी विष्णु पुराण पृष्ठ 209 पर इसी तृतीय अंश के अध्याय 14 श्लोक 20 से 31 में भी लिखा है कि जिसके पास श्राद्ध करने के लिए धन नहीं है तो वह यह कहे '' हे पितर गणों! आप मेरी भक्ति से तृप्ति लाभ प्राप्त करें क्योंकि मेरे पास श्राद्ध करने के लिए वित्त नहीं है।'' कृप्या पाठक जन विचार करें कि जब भक्ति (मन्त्र जाप की कमाई) से पित्तर तृप्त हो जाते हैं तो फिर अन्य कर्मकाण्ड की क्या आवश्यकता है? यह सर्व प्रपंच ज्ञानहीन गुरू लोगों ने अपने उदर पोषण के लिए ही किया है क्योंकि गीता अध्याय 4 श्लोक 33 में भी लिखा है द्रव्य (धन द्वारा किया) यज्ञ (धार्मिक अनुष्ठान) से ज्ञान यज्ञ (तत्वज्ञान आधार पर नाम जाप साधना) श्रेष्ठ है।

एक और विशेष विचारणीय विषय है कि विष्णु पुराण में पित्तर व देव पूजने का आदेश एक ऋषि का है तथा वेदों व गीता जी में पित्तरों वे देवताओं की पूजा का निषेध है जो आदेश ब्रह्म (काल रूपी ब्रह्म) भगवान का है। यदि पुराणों के अनुसार साधना करते हैं तो प्रभु के आदेश की अवहेलना होती है। जिस कारण से साधक दण्ड का भागी होता है।

''श्राद्ध करने की श्रेष्ठ विधि''

श्री विष्णु पुराण के तीसरे अंश में अध्याय 15 श्लोक 55-56 पृष्ठ 153 पर लिखा है कि श्राद्ध के भोज में यदि एक योगी यानि शास्त्रोक्त साधक को भोजन करवाया जाए तो श्राद्ध भोज में आए हजार ब्राह्मणों तथा यजमान के पूरे परिवार सहित तथा सर्व पितरों का उद्धार कर देता है।

विवेचन :- मेरे (लेखक के) तत्वज्ञान को सुन-समझकर भक्त दीक्षा लेकर साधना करते हैं। ये योगी यानि शास्त्रोक्त साधक हैं। हम सत्संग समागम करते हैं। उसमें भोजन-भण्डारा (लंगर) भी चलाते हैं। जो व्यक्ति उस भोजन-भण्डारे में दान करता है। उससे बने भोजन को योगी यानि मेरे शिष्य तथा यह दास (लेखक) सब खाते हैं। यह दास (लेखक) सत्संग सुनाकर नए व्यक्तियों को यथार्थ भक्ति ज्ञान बताता है। शास्त्रों के प्रमाण प्रोजेक्टर पर दिखाता है। जिस कारण से श्रोता शास्त्र विरूद्ध साधना त्यागकर शास्त्रोक्त साधना करते हैं। इस प्रकार उस परिवार का उद्धार हुआ। उनके द्वारा दिए दान से बने भोजन को भक्तों ने खाया। इससे पितरों का उद्धार हुआ। पितर जूनी छूटकर अन्य जन्म मिल जाता है। सत्संग में यदि हजार ब्राह्मण भी उपस्थित हों तो वे भी सत्संग सुनकर शास्त्र विरूद्ध साधना त्यागकर अपना कल्याण करवा लेंगे। जैसे आप जी ने पहले पढ़ा कि कबीर जी ने गंगा के तट पर ब्राह्मणों को ज्ञान देकर उनकी शास्त्र विरूद्ध साधना को गलत सिद्ध करके सत्य साधना के लिए प्रेरित किया। उन ब्राह्मणों ने सतगुरू कबीर जी से दीक्षा लेकर अपना कल्याण करवाया। अन्य साधना जो शास्त्रों के विरूद्ध थी, त्याग दी। सुखी हुए।

दास की प्रार्थना है कि वर्तमान में मानव समाज शिक्षित है, वह अवश्य ध्यान दे तथा शास्त्र विधि अनुसार साधना करके पूर्ण परमात्मा के सनातन परमधाम (शाश्वतम् स्थानम्) अर्थात् सतलोक को प्राप्त करे जिससे पूर्ण मोक्ष तथा परम शान्ति प्राप्त होती है।(गीता अध्याय 15 श्लोक 4 तथा अध्याय 18 श्लोक 62 में जिसको प्राप्त करने के लिए कहा है।) इसके लिए तत्वदर्शी संत की तलाश करो। (गीता अध्याय 4 श्लोक 34)

एक श्रद्धालु ने कहा कि मैं आप से उपदेश लेकर आप द्वारा बताई साधना भी करता रहूँगा तथा श्राद्ध भी निकालता रहूँगा तथा अपने घरेलू देवी-देवताओं को भी उपरले मन से पूजता रहूँगा। इसमें क्या दोष है?

मुझ दास की प्रार्थना :- संविधान की किसी भी धारा का उल्लंघन कर देने पर सजा अवश्य मिलेगी। इसलिए पवित्र गीता जी व पवित्र चारों वेदों में वर्णित व वर्जित विधि के विपरीत साधना करना व्यर्थ है। (प्रमाण पवित्र गीता जी अध्याय 16 श्लोक 23-24 में) यदि कोई कहे कि मैं कार में पैंचर उपरले मन से कर दूंगा। नहीं, राम नाम की गाड़ी में पैंचर करना मना है। ठीक इसी प्रकार शास्त्र विरुद्ध साधना हानिकारक ही है।

एक श्रद्धालु ने कहा कि मैं और कोई विकार (मदिरा-मास आदि सेवन) नहीं करता। केवल तम्बाखू (बीड़ी-सिगरेट-हुक्का) सेवन करता हूँ। आपके द्वारा बताई पूजा व ज्ञान अति उत्तम है। मैंने गुरु जी भी बनाया है, परन्तु यह ज्ञान आज तक किसी संत के पास नहीं है, मैं 25 वर्ष से घूम रहा हूँ तथा तीन गुरुदेव बदल चुका हूँ। कृप्या मुझे तम्बाखू सेवन की छूट दे दो, शेष सर्व शर्ते मंजूर हैं। तम्बाखू से भक्ति में क्या बाधा आती है?

लेखक की प्रार्थना :- दास ने प्रार्थना की कि अपने शरीर को ऑक्सीजन की आवश्यकता है। तम्बाखू का धुआँ कार्बन-डाई-ऑक्साइड है जो फेफड़ों को कमजोर व रक्त दूषित करता है। मानव शरीर प्रभु प्राप्ति व आत्म कल्याण के लिए ही प्राप्त हुआ है। इसमें परमात्मा पाने का रस्ता सुष्मना नाड़ी से प्रारम्भ होता है। जो नाक के दोनों छिद्र हैं उन्हें दायें को ईड़ा तथा बाऐं को पिंगुला कहते हैं। इन दोनों के मध्य में सुष्मणा नाड़ी है जिसमें एक छोटी सूई (needle) में धागा पिरोने वाले छिद्र के समान द्वार होता है जो तम्बाखू के धुऐं से बंद हो जाता है। जिससे प्रभु प्राप्ति के मार्ग में अवरोध हो जाता है। यदि प्रभु पाने का रस्ता ही बन्द हो गया तो मानव शरीर व्यर्थ हुआ। इसलिए प्रभु भक्ति करने वाले साधक के लिए प्रत्येक नशीले व अखाद्य (माँस आदि) पदार्थों का सेवन निषेध है।

एक श्रद्धालु ने कहा कि मैं तम्बाखु प्रयोग नहीं करता। माँस व मदिरा सेवन जरूर करता हूँ। इससे भक्ति में क्या बाधा है? यह तो खाने-पीने के लिए ही बनाई है तथा पेड़-पौधों में भी तो जीव है, वह खाना भी तो मांस भक्षण तुल्य ही है।

दास की प्रार्थना :- यदि कोई हमारे माता-पिता-भाई-बहन व बच्चों आदि को मारकर खाए तो कैसा लगे?

जैसा दर्द आपने होवै, वैसा जान बिराने।
कहै कबीर वे जाऐं नरक में, जो काटें शिश खुरांनें।।

जो व्यक्ति पशुओं को मारते समय खुरों तथा शीश को बेरहमी से काट कर माँस खाते हैं, वे नरक के भागी होंगे। जैसा दुःख अपने बच्चों व सम्बन्धियों की हत्या का होता है, ऐसा ही दूसरे को जानना चाहिए। रही बात पेड़-पौधों को खाने की। इनको खाने का प्रभु का आदेश है तथा ये जड़ जूनी के हैं। अन्य चेतन प्राणियों का वध प्रभु आदेश विरुद्ध है, इसलिए अपराध (पाप) है।

मदिरा सेवन भी प्रभु आदेश नहीं है, परन्तु स्पष्ट मना है तथा मानव जीवन को बर्बाद करने का है। शराब पान किया हुआ व्यक्ति कुछ भी गलती कर सकता है। मदिरा पान धन-तन व पारिवारिक शान्ति तथा समाज सभ्यता की महाशत्रु है। प्यारे बच्चों के भावी चरित्र पर कुप्रभाव पड़ता है। मदिरा पान करने वाला व्यक्ति कितना ही नेक हो परन्तु उसकी न तो इज्जत रहती है तथा न ही विश्वास।

एक समय यह दास एक गाँव में सत्संग करने गया हुआ था। उस दिन नशा निषेध पर सत्संग किया। सत्संग के उपरान्त एक ग्यारह वर्षीय कन्या फूट-फूट कर रोने लगी। पूछने पर उस बेटी ने बताया कि महाराज जी मेरे पिता जी पालम हवाई अड्डे पर बढ़िया नौकरी करते हैं। परन्तु सर्व पैसे की शराब पी जाते हैं। मेरी मम्मी के मना करने पर इतना पीटते हैं कि शरीर पर नीले दाग बन जाते हैं। एक दिन मेरे पापा जी मेरी मम्मी को पीटने लगे। मैं अपनी मम्मी के ऊपर गिर कर बचाव करने लगी तो मुझे भी पीटा। मेरा होंठ सूज गया। दस दिन में ठीक हुआ। मेरी मम्मी जी हमें छोड़ कर मेरे मामा जी के घर चली गई। छः महीने में मेरी दादी जी जाकर लाई। तब तक हम अपनी दादी जी के पास रहे। पापा जी ने दवाई भी नहीं दिलाई। सुबह शीघ्र ही उठकर नौकरी पर चला गया। शाम को शराब पीकर आता। हम तीन बहनें हैं, दो मेरे से छोटी हैं। अब जब पापा जी शाम को आते हैं तो हम तीनों बहनें चारपाई के नीचे छुप जाती हैं।

विचार करो पुण्यात्माओं! जिन बच्चों को पिताजी ने सीने से लगाना चाहिए था तथा बच्चे पिता जी के घर आने की राह देखते हैं कि पापा जी घर आयेंगे, फल लायेंगे। आज इस मानव समाज की दुश्मन शराब ने क्या घर घाल दिए? शराबी व्यक्ति अपनी तो हानि करता है साथ में बहुत व्यक्तियों की आत्मा दुःखाने का भी पाप सिर पर रखता है। जैसे पत्नी के दुःख में उसके माता-पिता, बहन-भाई दुःखी, फिर स्वयं के माता-पिता, भाई-बहन, दादा-दादी आदि परेशान। एक शराबी व्यक्ति आस-पास के भद्र व्यक्तियों की अशान्ति का कारण बनता है क्योंकि घर में झगड़ा करता है। पत्नी व बच्चों की चिल्लाहट सुनकर पड़ौसी बीच-बचाव करें तो शराबी गले पड़ जाऐ, नहीं करें तो नेक व्यक्तियों को नींद नहीं आए। इस दास से उपदेश लेने के उपरान्त प्रतिदिन शराब पीने वाले लगभग एक लाख व्यक्तियों ने सर्व नशीले पदार्थ व मांस भक्षण पूर्ण रूप से त्याग दिया है तथा जिस समय शाम को शराब प्रेतनी का नत्य होता था, अब वे पुण्यात्मायें अपने बच्चों सहित बैठकर

संध्या आरती करते हैं। हरियाणा प्रदेश व निकटवर्ती प्रान्तों में लगभग दस हजार गाँवों व शहरों में आज भी प्रत्येक में चार -पाँच चैम्पियन (एक नम्बर के शराबी) उदाहरण हैं जो सर्व विकारों से रहित होकर अपना मानव जीवन सफल कर रहे हैं। कुछ कहते हैं कि हम इतनी नहीं पीते-खाते, बस कभी ले लेते हैं। जहर तो थोड़ा ही बुरा है, जो भक्ति व मुक्ति में बाधक है।

मान लिजिए दो किलो ग्राम घी का हलवा बनाया (सतभक्ति की)। फिर 250 ग्राम बालु रेत(तम्बाखु-मांस-मदिरा सेवन व आन उपासना कर ली) भी डाल दिया। वह तो किया कराया व्यर्थ हुआ। इसलिए पूर्ण परमात्मा (परम अक्षर ब्रह्म) की पूजा पूर्ण संत से प्राप्त करके आजीवन मर्यादा में रहकर करते रहने से ही पूर्ण मोक्ष लाभ होता है।

❑ उपरोक्त प्रमाणों को पढ़कर बुद्धिजीवी समाज विचार करे और अंध श्रद्धा भक्ति त्यागकर सत्य श्रद्धा करके जीवन धन्य बनाऐं।

दास (लेखक) के परमार्थी प्रयत्न को आलोचना न समझें। मेरा उद्देश्य आप जी को शास्त्रोक्त भक्ति साधना बताकर आपके ऊपर भविष्य में आने वाले पर्वत जैसे कष्ट (चौरासी लाख प्रकार के प्राणियों के शरीरों में कष्ट उठाने तथा नरक जाने से) से बचाना है। मेरे अनुयाई इस तत्वज्ञान से परिचित हैं। वे भी आप तक मेरे द्वारा लिखी पुस्तक पहुँचाकर आपके भविष्य को सुखी बनाने के उद्देश्य से वितरित करते हैं। परंतु कुछ धर्मोन्ध व्यक्ति अपने स्वार्थवश आप और परमेश्वर के बीच में दीवार बनकर खड़े हैं। मेरे को तथा मेरे अनुयाईयों पर झूठे आरोप लगाकर बदनाम करते हैं। आप जी अपनी आँखों प्रमाण देखो और सत्य की राह पकड़ो। हमारा उद्देश्य है कि हम संसार के लोगों को बुराईयों-कुरीतियों से दूर करके सुखी देखना चाहते हैं। हम अपना प्रयत्न जारी रखेंगे। आप कब समझेंगे? इंतजार करेंगे।

‘‘पीपल, जांडी तथा तुलसी की पूजा’’

वाणी सँख्या 4 :- पीपल पूजै जाँडी पूजे, सिर तुलसाँ के होइयाँ।
दूध–पूत में खैर राखियो, न्यूं पूजूं सूं तोहियाँ।।4।।

शब्दार्थ :- परमेश्वर कबीर जी ने अंध श्रद्धा भक्ति करने वालों की अन्य साधनाओं का वर्णन किया है कि भोली जनता को ज्ञानहीन आध्यात्मिक गुरूओं ने कितने निम्न स्तर की साधना पर लगाकर उनके जीवन के साथ कितना बड़ा धोखा किया है। अज्ञानी गुरूओं से भ्रमित होकर पीपल व जांडी के वक्षों तथा तुलसी के पौधे की पूजा करते हैं। प्रार्थना करते हैं कि आप सबकी पूजा इसलिए करते हैं कि मेरे दूध यानि दुधारू पशुओं की तथा पूत यानि मेरे पुत्रों व पोत्रों की खैर रखना (रक्षा करना) यानि पशु पूरा समय दूध दें। मत्यु न हो तथा पुत्रों, पोत्रों व परपात्रों की मत्यु ना हो। उनकी आप (पीपल तथा जांडी के पेड़ तथा तुलसी का पौधा) रक्षा करना।

परमेश्वर कबीर जी ने समझाया है कि हे अंधे पुजारियो! कुछ तो अक्ल से काम

लो। जिन जड़ (जो चल-फिर नहीं सकते। उनको पशु हानि पहुँचाते हैं। वे अपनी रक्षा नहीं कर पाते। तुलसी को बकरा खा जाता है। वह अपनी रक्षा नहीं कर सकती।) वृक्षों और पौधों की पूजा करके घर-परिवार में आप धन वृद्धि तथा जीवन की रक्षा की आशा करते हो। वे स्वयं विवश हैं। आपकी रक्षा कैसे करेंगे? यह आपकी अंध श्रद्धा है जो आपके अनमोल मानव जीवन के लिए खतरा है यानि आपका मानव जीवन शास्त्र वर्णित साधना त्यागकर शास्त्र विरूद्ध साधना रूपी मनमाना आचरण करने से नष्ट हो जाएगा। वाणी सँख्या 4 में एक वाक्य है कि :-
पीपल पूजै, जांडी पूजै, सिर तुलसां के होइयां।

''सिर होना'' का तात्पर्य है कि जो कुछ नहीं कर सकता, अज्ञानता के कारण उसी व्यक्ति से अपने कार्यवश बार-बार निवेदन करना। वह व्यक्ति उस भोले मानव से कहता है कि मेरे सिर क्यों हो रहा है? मैं आपका यह कार्य नहीं कर सकता। परमेश्वर कबीर जी ने समझाया है कि जो आपके कार्य को करने में सक्षम नहीं हैं, जो कार्य परमात्मा के अतिरिक्त कोई नहीं कर सकता और जो स्वयं असहाय हैं, उनसे आप कार्य सिद्धि की आशा करते हैं। यह अज्ञानता है।

वाणी सँख्या 5 :- आपै लीपै आपै पोतै, आपै बनावै अहोइयाँ।
उससे भौंदू पोते माँगै, अकल मूल से खोईयाँ।।5।।

शब्दार्थ :- परमेश्वर कबीर जी ने आन-उपासना की एक और अंधश्रद्धा का स्पष्टीकरण किया है। कहा कि एक भोली वृद्धा लोकवेद के अनुसार आन-उपासना करते हुए स्वयं ही अहोई नामक माता (देवी) का चित्र बनाती है। उसके लिए पहले दीवार को गारा तथा गाय के गोबर को मिलाकर लीपती है (पलस्तर करती है) उस पर अहोई देवी का चित्र अंकित करती है। फिर उसकी पूजा करके पुत्रवधु के लिए बेटा माँगती है। परमात्मा कबीर जी ने कहा कि ऐसे अंधश्रद्धा भक्ति करने वालों की अकल (बुद्धि) मूल से यानि जड़ से समाप्त है, वे निपट मूर्ख हैं। मन्नत मानते समय वृद्धा कहती है कि हे अहोई देवी! आप पुत्रवधु को बेटा देना, गाय को बछड़ा देना, (पुराने समय में गाय को बछड़ा होना लाभदायक था क्योंकि बछड़ा बैल बनता था। बैलों से खेती होती थी।) भैंस को चाहे कटिया (कटड़ी) ही दे देना। वृद्धा कितनी चतुर है। उसके कहने का भाव है कि आप देवी को नर यानि बछड़ा तथा बेटा माँगकर परेशान नहीं करना चाहती। भैंस को तो भले ही मादा (कटिया) दे देना। उसे पता है कि कटड़े की अपेक्षा कटिया कितनी लाभदायक है। कटड़ा तो कसाईयों को काटने के लिए बेचते थे, कोई काम नहीं आता था। बुढ़िया देवी के साथ भी कितनी चतुरता कर रही है। अपने देवताओं के साथ भी हेरा-फेरी की बातें करती है। उपरोक्त पूज्य बनावटी देवी तथा पेड़-पौधों से मन्नत माँगते समय दक्षिणा के रूप में सवा रूपया (एक रूपया और चार आने) अपनी चुनरी के पल्ले से बाँधकर कहती है कि यदि मेरी सब मनोकामना पूरी हो गई तो सवा रूपये का प्रसाद बाँटूगी। यह दक्षिणा भी तब दूँगी, जब सारी मन्नत पूरी हो जाऐंगी। यदि एक भी ना हुई तो कोई दक्षिणा नहीं दी जाएगी।

''परमात्मा के साथ धोखा''

कबीर जी कहते हैं कि :-

अहरण की चोरी करें, करें सूई का दान।
स्वर्ग जान की आस में, कह आया नहीं विमान।।

शब्दार्थ :- परमात्मा कबीर जी ने कंजूस व्यक्ति की नीयत बताई है कि दो नंबर का कार्य करके यानि चोरी-रिश्वत लेकर, हेराफेरी करके मिलावट करके धन तो करोड़ों का प्राप्त करता है और दान सवा रूपया करता है। जैसे चोरी तो अहरण जितने लोहे की करता है (अहरण लुहार कारीगरों के पास होता है जिसका कुल लोहा 30-40 किलोग्राम भार का होता है) और दान करता है केवल सूई जितना लोहे की कीमत का। उसी धर्म-कर्म को मूर्ख इतना अधिक मानता है कि परमात्मा मेरे को स्वर्ग में ले जाने के लिए विमान भेजेगा। जब मनोकामना पूर्ण नहीं होती है तो वह कंजूस विचार करता है कि परमात्मा ने विमान भेजने में देरी क्यों कर रखी है?

परमेश्वर कबीर जी ने ऐसे धर्म के कार्यों पर कहा है कि :-

कबीर, जिन हर जैसा सुमरिया, ताको तैसा लाभ।
ओसां प्यास ना भागही, जब तक धसै नहीं आब।।

शब्दार्थ :- परमेश्वर कबीर जी ने स्पष्ट किया है कि जो साधक जैसी भक्ति तथा दान-धर्म करता है, उसी के अनुसार लाभ देता है। पूर्ण लाभ के लिए धर्म-कर्म भी पूर्ण करने से पर्याप्त लाभ मिलता है। जैसे घास पर गिरी औस के पानी को चाटने से प्यास नहीं बुझती। प्यास बुझाने के लिए गिलास भरकर पानी पीना पड़ता है। इसी प्रकार परमात्मा से पूर्ण लाभ लेने के लिए दान-धर्म भी पर्याप्त मात्रा में करना चाहिए।

उदाहरण :- एक कंजूस व्यक्ति की दूध वाली भैंस गुम हो गई। उसे खोजने के लिए पिता-पुत्र चल पड़े। रास्ते में सर्वप्रथम हनुमान जी का मंदिर आया। पिता जी ने मूर्ति के सामने संकल्प किया कि हे बजरंग बली! आपने तो सात समन्दर के पार सीता माता की खोज कर दी थी। आपके लिए हमारी भैंस की खोज करना कौन-सा कठिन कार्य है? यदि मेरी भैंस मिल गई तो अंजना के लाल! एक थन का दूध जब तक भैंस दूध देती रहेगी, आपको चढ़ाया करूंगा। कपा ध्यान देना, शीघ्र करना। यह संकल्प पुत्र भी सुन रहा था।

❖ आगे गए तो रास्ते में शिव जी का मंदिर था। वहाँ उसने कहा कि भैंस मिल गई तो एक थन का दूध शिव जी को चढ़ाने का वायदा किया।

❖ आगे गए तो रास्ते में श्री कष्ण जी का मंदिर था। एक थन का दूध उसके लिए बोल दिया।

❖ आगे गए तो रास्ते में गणेश जी का मंदिर था। एक थन का दूध उसी तरह चढ़ाने का संकल्प करके पिता-पुत्र आगे चले तो पुत्र ने पिता से कहा कि पिता जी!

जब तक भैंस दूध देवेगी, तब तक चारों थनों (स्तनों) का दूध यानि भैंस का सारा दूध तो देवता पीऐंगे। फिर हम भैंस की खोज किसके लिए करें? चलो वापिस चलते हैं। हेराफेरी मास्टर कंजूस पिता बोला, बेटा! एक बार भैंस मिलने दे। इन देवताओं का जी जानेगा, जैसा इनको दूध पिलाऊँगा। बेटा बोला, पिता जी! मैं समझा नहीं। पिता बोला कि भैंस मिलने के बाद दो गिलास दूध और उसमें दो गिलास पानी मिलाकर एक दिन एक-एक गिलास चारों देवताओं को चढ़ाकर कह दूँगा, देवता जी! आपका धन्यवाद। आपने भैंस मिला दी, परंतु मैं भी बाल-बच्चेदार हूँ। मेरे से आपकी पूजा में इतना ही दूध पुग्या है यानि मेरी वित्तीय स्थिति इतना ही दूध चढ़ाने की है। आगे नहीं चढ़ा पाऊँगा। माफ करना। आप सबको दूध पिलाने वाले हो। आपको दूध की क्या आवश्यकता है? भैंस मिल गई, यही पूजा की गई।

❖ परमेश्वर कबीर जी बताना चाहते हैं कि तत्वज्ञान न होने के कारण भक्त की नीयत साफ नहीं हो सकती। जिस कारण से वह संसारिक क्षेत्र में तो हेराफेरी करता ही है। परमात्मा को भी नहीं छोड़ता। यह अंध भक्ति है जो शास्त्र के विरूद्ध है जिसमें कोई लाभ होने वाला नहीं है। जिससे जीव की मानसिकता का विकास नहीं हो सकता।

''सोलह शुक्रवार के व्रत करना''

वाणी सँख्या 6 :- पति शराबी घर पर नित ही, करत बहुत लड़ईयाँ।
पत्नी षोडष शुक्र व्रत करत है, देहि नित तुड़ईयाँ।।6।।

शब्दार्थ :- परमेश्वर कबीर जी ने तत्वज्ञानहीन उपासकों की अंध श्रद्धा भक्ति पर प्रकाश डाला है। कहा है कि बिना विवेक किए जो साधना करते हैं, वह व्यर्थ है।

उदाहरण :- एक लड़की का पति शराब पीता था। अन्य नशा भी करता था। कोई काम-धंधा नहीं करता था। जमीन को वह लड़की ही संभालती थी। शराब पीने से मना करने पर वह शराबी अपनी पत्नी को मारता-पीटता था। घर नरक बना था। उस लड़की के माता-पिता, भाई-भाभी सबने मुझ दास (लेखक) से दीक्षा ले रखी थी। ज्ञान भी ठीक से समझा था। वे अपनी लड़की की दुर्दशा से चिंतित थे। एक दिन वे अपनी लड़की को समझाकर दीक्षा दिलाने आश्रम में मेरे पास लाए। लड़की को बताया गया कि कोई आन-उपासना मूर्ति पूजा, व्रत रखना आदि-आदि नहीं करनी हैं। लड़की ने कहा कि मैंने सोलह शुक्रवार के व्रत करने की प्रतिज्ञा कर रखी है कि घर में शांति हो जाए। अभी तो मैंने आधे ही किए हैं, ये पूरे करके फिर दीक्षा लूँगी।

उस बेटी को अच्छी तरह समझाया, तब उस शास्त्र विरूद्ध साधना को त्यागने को तैयार हुई और दीक्षा लेकर सुखी हुई। पति ने भी शराब त्याग दी। पूरा परिवार दीक्षा लेकर शास्त्रविधि अनुसार साधना कर रहा है।

विचार :- अंध श्रद्धा भक्ति करने वालों को इतना भी विवेक नहीं कि जो साधना कर रहे हो, इससे लाभ है या हानि।

उस बेटी से पूछा कि ''सोलह शुक्रवार के व्रतों से ज्ञानहीन गुरूओं ने क्या लाभ बताया है?'' उस लड़की ने बताया कि एक स्त्री का पति रोजगार के लिए दूर देश में चला गया। वह वर्षों तक नहीं आया। उस स्त्री को चिंता सताने लगी। एक दिन उसको देवी संतोषी माता दिखाई दी और बोली कि मेरे सोलह शुक्रवार के व्रत लगातार कर दे। तेरा पति घर आ जाएगा। ऐसा ही हुआ।

विचार करो बेटी! आपका पति तो तेरे पास ही रहता है। प्रतिदिन लड़ाई करता है। आपकी देही तोड़ता है यानि मार-पीट करता है। आप भी इस व्रत को किसलिए कर रही हो? आपने तो ऐसा व्रता करना चाहिए था कि वह कई दिन घर ना आए और मार ना पड़े। आप तो अपनी आफत लाने का व्रत कर रही थी।

व्रत रखना गीता अध्याय 6 श्लोक 16 में मना किया है। कहा है कि जो बिल्कुल अन्न नहीं खाते यानि व्रत करते हैं, उनका योग यानि भक्ति कर्म कभी सफल नहीं होता। उसने बताया कि मेरी सहेली एक गुरू के पास जाती है। उसने मुझे बताया था। मैं भी व्रत करने लगी। मुझे तो आज पता चला कि मैं तो व्यर्थ भक्ति कर रही थी।

सूक्ष्मवेद में कबीर परमेश्वर जी ने कहा है कि :-

गुरूवाँ गाम बिगाड़े संतो, गुरूवाँ गाम बिगाड़े।
ऐसे कर्म जीव कै ला दिए, बहुर झड़ैं नहीं झाड़े।।

शब्दार्थ :- परमेश्वर कबीर जी ने समझाया है कि तत्वज्ञानहीन गुरूओं ने गाँव के गाँव को शास्त्रविरूद्ध साधना पर लगाकर उनका जीवन नाश कर रखा है।

भोली जनता को शास्त्र विरूद्ध साधना पर इतना दृढ़ कर दिया है कि वे शास्त्रों में प्रमाण देखकर भी उस व्यर्थ पूजा को त्यागना नहीं चाहते।

वाणी सँख्या 7 :- तज पाखण्ड सत नाम लौ लावै, सोई भव सागर से तरियाँ।
कह कबीर मिले गुरू पूरा, स्यों परिवार उधरियाँ।।7।।

शब्दार्थ :- परमात्मा कबीर जी ने स्पष्ट किया है कि उपरोक्त तथा अन्य शास्त्रविरूद्ध पाखण्ड पूजा को त्यागकर पूर्ण सतगुरु से सच्चे नाम का जाप प्राप्त करके श्रद्धा से भक्ति करके भक्तजन पार हो जाते हैं। उनके परिवार के सर्व सदस्य भी भक्ति करके कल्याण को प्राप्त हो जाते हैं।

''गीता में व्रत के विषय में''

❖ प्रश्न :- क्या एकादशी, कृष्ण अष्टमी या अन्य व्रत भी शास्त्रों में वर्जित हैं?

उत्तर :- गीता अध्याय 6 श्लोक 16 में बताया है कि बिल्कुल न खाने वाले यानि व्रत रखने वाले का योग यानि परमात्मा से मिलने का उद्देश्य पूरा नहीं होता।

➢ गीता अध्याय 6 श्लोक 16 :- हे अर्जुन यह योग (यानि परमात्मा प्राप्ति के लिए की गई साधना) न तो बहुत खाने वाले का और न बिल्कुल न खाने वाले का तथा न बहुत शयन करने वाले का और न सदा जागने वाले का ही सिद्ध होता है।

❖ इसलिए व्रत रखना शास्त्रविरूद्ध होने से व्यर्थ सिद्ध हुआ।

''तीर्थ तथा धाम क्या हैं?''

प्रश्न :- तीर्थों, धामों पर श्रद्धा से दर्शनार्थ तथा पूजा करने से हिन्दू गुरुजन बहुत पुण्य बताते हैं। यह साधना लाभदायक है या नहीं? कृप्या शास्त्रों के अनुसार बताऐं।

उत्तर :- तीर्थ या धाम वे पवित्र स्थान हैं जहाँ पर या तो किसी महापुरूष का जन्म हुआ था या निर्वाण (परलोक वास) हुआ था या किसी साधक ने साधना की थी या कोई अन्य ऋषि या देवी-देव की कथा से जुड़ी यादगारें हैं।

विचार करें :- पवित्र तीर्थ तथा पवित्र धाम तो यादगारें हैं कि यहाँ पर ऐसी घटना घटी थी ताकि उनका प्रमाण बना रहे।

उदाहरण :- जैसे अमरनाथ धाम है। उसकी कथा का सर्व हिन्दुओं को ज्ञान है कि उस एकान्त स्थान पर श्री शिव जी ने अपनी पत्नी पार्वती जी को नाम दीक्षा दी थी जिसका देवी जी जाप कर रही हैं। जिस मन्त्र की साधना के प्रभाव से उनको अमरत्व प्राप्त हुआ है।

वर्तमान में वह एक यादगार के अतिरिक्त कुछ नहीं है। वह प्रमाण है कि यहाँ पर वास्तव में देवी जी को श्री शिव भगवान ने अमर होने का मन्त्र दिया था। यदि किसी को विश्वास नहीं हो रहा हो तो वहाँ जाकर देखकर भ्रम मिटा सकता है। परन्तु कोई यह कहे कि उस स्थान के दर्शन करने तथा वहाँ दान-धर्म करने से मुक्ति मिलेगी या भक्ति लाभ होगा, ऐसा कुछ नहीं है। रही बात दान धर्म करने की, आप कहीं पर भी धर्म का कार्य करो, आपको उसका फल मिलेगा क्योंकि वह आपको शुभ कर्मों में परमात्मा उसी समय लिख देता है। जैसे कोई व्यक्ति एकान्त स्थान पर कोई हत्या या अन्य अपराध करता है तो उसके अशुभ कर्मों में लिखा जाता है, उसका फल अवश्य मिलता है।

इसलिए पुण्य का कार्य कहीं पर करो। उसका फल तो मिलेगा। पुण्य करने के लिए दूर स्थान तीर्थ पर जाना बुद्धिमता नहीं। यही प्रश्न एक समय जिंदा साधु के रूप में मथुरा में प्रकट परमेश्वर कबीर जी से एक तीर्थ यात्री श्री धर्मदास सेठ द्वारा किया गया था जो मथुरा तीर्थ पर स्नानार्थ तथा दान-धर्म करने के लिए अपने गुरू रूपदास वैष्णव के बताए भक्ति कर्म को करने 'बांधवगढ़' नामक नगर (मध्य प्रदेश) से आया था। परमात्मा ने उसे समझाया था कि यहाँ मथुरा-वृन्दावन में वर्तमान में श्री कृष्ण जी नहीं हैं और विचार कर कि जब श्री कृष्ण जी ही इस स्थान को त्यागकर हजारों कि.मी. दूर द्वारिका में सपरिवार तथा सर्व यादवों को लेकर चले गए थे तो इस स्थान का महत्व ही क्या रह गया? यह तो एक यादगार है कि कभी श्री कृष्ण जी ने कुछ समय यहाँ बिताया था। कंस, केशी तथा चाणूर अन्यायियों को मारा था। परमात्मा ने कहा कि हे धर्मदास! आप गीता शास्त्र को साथ लिए हो, इसका नित्य पाठ भी करते हो। इसमें कहीं वर्णन है कि तीर्थ जाया कर अर्जुन, बेड़ा पार हो जाएगा। धर्मदास जी ने कहा, नहीं प्रभु! गीता में कहीं पर

भी प्रभु का आदेश ऐसा नहीं लिखा है। परमेश्वर जी ने कहा कि गीता अध्याय 16 श्लोक 23 को पढ़। उसके अनुसार तो यह तीर्थ यात्रा शास्त्र में वर्णित न होने से व्यर्थ साधना है।

❑ यदि आपके तत्वज्ञानहीन गुरूओं की मानें कि तीर्थ पर जाने से पुण्य लगता है। फिर पुण्य तो एक लगा और पाप लगे करोड़ों-अरबों-खरबों। यह सुनकर सेठ धर्मदास अंध श्रद्धा भक्ति करने वाला काँप गया और उसका गला सूख गया। बोला कि हे जिंदा! इतने पाप कैसे लगे? कृपा समझाईये।

❖ परमेश्वर कबीर जी (जिंदा वेशधारी प्रभु) ने समाधान इस प्रकार किया :-

➢ कहा कि हे धर्मदास! आप बांधवगढ़ से मथुरा नगरी में वृंदावन में आए हो। बांधवगढ़ यहाँ से लगभग दो सौ पचास कोस (लगभग सात सौ पचास कि.मी.) है। वहाँ से यहाँ तक पैरों चलकर आने से आपके द्वारा अनेकों जीव हिंसा हो गई है। आपने इस मथुरा तीर्थ के जल में स्नान किया। करोड़ों सूक्ष्म जीव भी तीर्थ के जल में थे जो आपके स्नान करने से रगड़ लगने से मारे गए तथा आप जी ने भोजन बनाने से पहले जो चौंका गॉरा तथा गाय के गोबर से लीपा, उसमें उसी जल का प्रयोग किया तथा पृथ्वी पर उपस्थित जीव चौंका लीपते समय करोड़ों जीव मारे गए। यह सब पाप आपको लगे। आप बताओ कि आप लाभ का सौदा कर रहे हो या घाटे का? धर्मदास जी के मुख से कोई बात नहीं निकली, उत्तर नहीं आया क्योंकि वह भय के कारण स्तब्ध हो गया था। कुछ क्षण के पश्चात् परमात्मा जिंदा वेशधारी के चरणों में गिर गया तथा यथार्थ शास्त्रोक्त भक्ति बताने की याचना की। परमात्मा कबीर जी ने शास्त्रों में वर्णित साधना करने को बताई तथा अन्य सब आन-उपासना यानि पाखण्ड पूजा त्यागने को कहा। धर्मदास जी विवेकी थे। ढ़ेर सारे प्रश्न-उत्तर करके समझ गए। अपने कल्याण का मार्ग जान लिया ओर अपनी पत्नी को समझाकर सतगुरू कबीर जी से दीक्षा दिलाकर अपना तथा अपने परिवार को शास्त्रोक्त साधना पर लगाया। भक्ति का पूर्ण लाभ प्राप्त किया।

❖ धर्मदास जी ने अनेकों शंकाओं का समाधान जाना। उनमें से एक यह भी थी कि :-

‘‘वैष्णव देवी, नैना देवी, ज्वाला देवी तथा अन्नपूर्णा देवी के मंदिरों की स्थापना’’

प्रश्न :- वैष्णो देवी, नैना देवी, ज्वाला देवी तथा अन्नपूर्णा देवी आदि पवित्र स्थानों पर अनेकों हिन्दू जाते हैं। क्या वहाँ जाने से भी भक्ति लाभ नहीं है?

उत्तर (कबीर जी जिंदा महात्मा का) :- हे धर्मदास! अभी बताया था कि तीर्थों-धामों पर जाने से क्या लाभ-हानि होती है। फिर भी सुन।

पूरा हिन्दू समाज जानता है कि ये पवित्र धर्म स्थान कैसे बने। आप अनजान मत बनो। जिस समय दक्ष पुत्री सती जी अपने पति श्री शिव जी से रूठकर पिता दक्ष जी के पास अपने घर आई। राजा दक्ष ने सती जी का अनादर किया। राजा

दक्ष उस समय यज्ञ कर रहे थे। बहुत बड़े हवन कुण्ड में हवन चल रहा था। सती जी अपने पिता की बातों का दुःख मानकर हवन कुण्ड की अग्नि में गिरकर जल मरी। भगवान शिव को पता चला तो उन्होंने उसके बचे हुए नर कंकाल को उठाया तथा पत्नी के वियोग में उसे उठाए फिरते रहे। पत्नी के मोहवश महादुःखी थे। आपके पुराण में लिखा है कि दस हजार वर्षों तक सती पार्वती जी के कंकाल को लिए घूमते रहे। फिर श्री विष्णु जी ने सुदर्शन चक्र से उस कंकाल (अस्थि पिंजर) के टुकड़े-टुकड़े कर दिए। उस समय श्री शिव जी का मोह भंग हुआ। सती जी के शरीर के भाग कहीं-कहीं गिरे।

➢ वैष्णों देवी मंदिर की स्थापना :-

जहाँ पर देवी जी का धड़ वाला भाग गिरा। वहाँ पर यादगार बनाए रखने के लिए श्रद्धालुओं ने धड़ को श्रद्धा के साथ पथ्वी में दफनाकर उसके ऊपर एक छोटी-सी मंदिरनुमा यादगार बना दी। बाद में समय अनुसार इसका विस्तार होता रहा।

इस यादगार को देखने और वहाँ पर पूजा करने जाने से कोई पुण्य नहीं, अपितु पाप लगता है जो आने-जाने में जीव हिंसा होती है।

➢ नैना देवी के मंदिर की स्थापना :-

जिस स्थान पर सती पार्वती जी की आँखों वाला शरीर का भाग गिरा, वहाँ पर भी उसी प्रकार जमीन मे दफनाकर मंदिर बना दिया ताकि घटना का प्रमाण रहे। कोई पुराण कथा को गलत न बताए।

➢ ज्वाला जी की स्थापना :-

जिस स्थान पर कांगड़ा जिले (हिमाचल प्रदेश) में देवी जी की अधजली जीभ वाला भाग गिरा, उसको श्रद्धा से उस स्थान पर पथ्वी में उस जीभ को श्रद्धा से दबाकर यादगार रूप में छोटा मंदिर बना दिया। बाद में बहुत बड़ा मंदिर बनाया गया। वह ज्वाला देवी जी का मंदिर है।

➢ अन्नपूर्णा देवी मंदिर की स्थापना :-

जिस स्थान पर सती पार्वती जी के शरीर का नाभि वाला भाग गिरा। उसको श्रद्धा से पथ्वी में दबाकर उसके ऊपर यादगार रूप में छोटा-सा मंदिर बना दिया था। बाद में उसका बहुत विस्तार किया गया और शास्त्र विरूद्ध साधना शुरू कर दी गई है।

यह सब प्रमाण रूप हैं।

विचार करो :- ऐसे स्थानों पर भक्ति व पूजा तथा पुण्य प्राप्त करने के लिए जाना शास्त्रविरूद्ध होने से हानिकारक है। इसलिए यह व्यर्थ है।

यदि किसी को पुराणों में लिखी घटना पर विश्वास न हो तो देखने जाओ तो जाओ, लेकिन पुण्य के स्थान पर जीव हिंसा का पाप ही प्राप्त होगा। जो आने-जाने के दौरान पैरों या गाड़ी-घोड़े के नीचे दबकर मरेंगे। इसी प्रकार अन्य दर्शनीय स्थलों (आदि बद्रीनाथ, केदारनाथ, जगन्नाथपुरी, द्वारकापुरी आदि-आदि) पर किसी आध्यात्मिक लाभ के लिए जाना अंध श्रद्धा भक्ति के अतिरिक्त कुछ भी नहीं है।

''केदारनाथ मंदिर भारत में तथा पशुपति मंदिर नेपाल में कैसे बना?''

(केदार का अर्थ दलदल है)

महाभारत में कथा है कि पाँचों पाण्डव (युद्धिष्ठर, अर्जुन, भीम, नकुल व सहदेव) जीवन के अंतिम समय में हिमालय पर्वत पर तप कर रहे थे। एक दिन सदाशिव यानि काल ब्रह्म ने दुधारू भैंस का रूप बनाया और उस क्षेत्र में घूमने लगा। भीम दूध प्राप्ति के उद्देश्य से उसे पकड़ने के लिए दौड़ा तो भैंस पथ्वी में समाने लगी। भीम ने भैंस का पिछला भाग दढ़ता से पकड़ लिया जो पथ्वी से बाहर शेष था। वह पत्थर का हो गया और बाहर ही रह गया, वह केदारनाथ बना। भैंस के शरीर के अन्य भाग जैसे अगले पैर, पिछले पैर आदि-आदि जहाँ-जहाँ निकले, वहाँ-वहाँ पर अन्य केदार बने। ऐसे-ऐसे सात केदार हिमालय में बने हैं। उस भैंस का सिर वाला भाग काठमाण्डू में निकला जिसको पशुपति कहा गया। उसके ऊपर मंदिर बना दिया गया। उस भैंस के पिछले भाग पर तथा अन्य अंग जहाँ-जहाँ निकले, उनको केदार नाम देकर यादगार बनाई गई थी कि यह पौराणिक घटना सत्य है। ये साक्षी हैं। सब मंदिर किसी न किसी कथा के साक्षी हैं। परंतु पूजा करना गलत है, व्यर्थ है। लगभग सौ वर्ष पूर्व केदारनाथ पर अधिक वर्षा के कारण दलदल अधिक हो गई थी। लगभग साठ (60) वर्ष तक वहाँ कोई पूजा-आरती नहीं की गई। न कोई दर्शन करने गया था। बाद में तीस-चालीस वर्ष से पुनः दर्शनार्थी जाने लगे हैं।

❑ सन् 2012 में केदारनाथ धाम के दर्शनार्थ व पूजार्थ गए लाखों व्यक्ति बाढ़ में बह गए। परिवार के परिवार अंध श्रद्धा भक्ति करने वाले मारे गए। यदि यह साधना पवित्र गीता में वर्णित होती तो वहाँ जाने वाले श्रद्धालु मर भी जाते तो भी पुण्यों के साथ परमात्मा के दरबार जाते। परंतु शास्त्रविरूद्ध भक्ति करते हुए ऐसे मरते हैं तो व्यर्थ जीवन गया।

"तीर्थ तथा धाम की अन्य जानकारी"

किसी साधक ऋषि जी ने किसी स्थान या जलाशय पर बैठ कर साधना की या अपनी आध्यात्मिक शक्ति का प्रदर्शन किया। वह अपनी भक्ति कमाई करके साथ ले गया तथा अपने ईष्ट लोक को प्राप्त हुआ। उस साधना स्थल का बाद में तीर्थ या धाम नाम पड़ा। अब कोई उस स्थान को देखने जाए कि यहां कोई साधक रहा करता था। उसने बहुतों का कल्याण किया। अब न तो वहाँ संत जी है, जो उपदेश दे। वह तो अपनी कमाई करके चला गया।

विचार करें :- कृप्या तीर्थ व धाम को हमोमदस्ता (हमामदस्ता) जानें। (एक डेढ़ फुट का लोहे का गोल पात्र लगभग नौ इंच परिधि का उखल जैसा होता है तथा डेढ़ फुट लम्बा तथा दो इन्च परिधि का गोल लोहे का डंडा-सा मूसल जैसा होता है जो सामग्री व दवाईंयाँ आदि कूटने के काम आता है, उसे हमोमदस्ता

(हमामदस्ता) कहते हैं।) एक व्यक्ति अपने पड़ौसी का हमोम दस्ता मांग कर लाया। उसने हवन की सामग्री कूटी तथा मांज-धोयकर लौटा दिया। जिस कमरे में हमोम दस्ता रखा था उस कमरे में सुगंध आने लगी। घर के सदस्यों ने देखा कि यह सुगन्ध कहां से आ रही है तो पता चला कि हमोम दस्ते से आ रही है। वे समझ गए कि पड़ौसी ले गया था, उसने कोई सुगंध युक्त वस्तु कूटी है। कुछ दिन बाद वह सुगंध भी आनी बंद हो गई।

इसी प्रकार तीर्थ व धाम को एक हमोमदस्ता (हमामदस्ता) जानों। जैसे सामग्री कूटने वाले ने अपनी सर्व वस्तु पोंछ कर रख ली। खाली हमोम दस्ता लौटा दिया। अब कोई उस हमोम दस्ते को सूंघकर ही कृत्यार्थ माने तो नादानी है। उसको भी सामग्री लानी पड़ेगी, तब पूर्ण लाभ होगा।

ठीक इसी प्रकार किसी धाम व तीर्थ पर रहने वाला पवित्र आत्मा तो राम नाम की सामग्री कूट कर झाड़-पौंछ कर अपनी सर्व भक्ति साधना की कमाई को साथ ले गया। बाद में अनजान श्रद्धालु, उस स्थान पर जाने मात्र से कल्याण समझें तो उनके मार्ग दर्शकों (गुरुओं) की शास्त्र विधि रहित बताई साधना का ही परिणाम है। उस महान आत्मा सन्त की तरह प्रभु साधना करने से ही कल्याण सम्भव है। उसके लिए तत्वदर्शी संत की खोज करके उससे उपदेश लेकर आजीवन भक्ति करके मोक्ष प्राप्त करना चाहिए। शास्त्र विधि अनुकूल सत साधना मुझ दास (रामपाल दास) के पास उपलब्ध है कृप्या निःशुल्क प्राप्त करें।

''तीर्थ स्थापना के प्रमाण''

1. शुक्र तीर्थ कैसे बना? :- श्री ब्रह्मा पुराण लेखक कृष्णद्वेपायन अर्थात व्यास जी प्रकाशक गीता प्रैस गोरखपुर पृष्ठ 167-168 पर भृगु ऋषि का पुत्र कवि अर्थात शुक्र ने गौतमी नदी के उत्तर तट पर जहाँ भगवान महेश्वर की आराधना करके विद्या पायी थी, वह स्थान शुक्र तीर्थ कहलाता है।

2. ➽ सरस्वती संगम तीर्थ तथा पुरूरव तीर्थ :- श्री ब्रह्मा पुराण पृष्ठ 172-173 पर एक दिन राजा पुरूरवा, ब्रह्मा जी की सभा में गये, वहाँ ब्रह्मा जी की पुत्री सरस्वती को देखकर उससे मिलने की इच्छा प्रकट की। सरस्वती ने हाँ कर दी। सरस्वती नदी के तट पर सरस्वती तथा पुरूरवा ने अनेक वर्षों तक संभोग (सैक्स) किया। एक दिन ब्रह्मा ने उनको विलास करते देख लिया। अपनी बेटी को शाप दे दिया। वह नदी रूप में समा गई। जहाँ पर पुरूरवा तथा सरस्वती ने संभोग किया था। वह पवित्र तीर्थ सरस्वती संगम नाम से विख्यात हुआ। जहाँ पर पुरूरवा ने महादेव की भक्ति की वह स्थान पुरूरवा तीर्थ नाम से विख्यात हुआ।

3. वृद्धा संगम तीर्थ :- श्री ब्रह्मा पुराण पृष्ठ 173 से 175 एक गौतम ऋषि थे। उनका एक हजार वर्ष की आयु तक विवाह नहीं हुआ। वह वेद ज्ञान भी नहीं पढ़ा था केवल गायत्री मंत्र याद था। उसी का जाप करता था। एक दिन वह एक पर्वत पर एक गुफा में गया। वहाँ पर नब्बे हजार वर्ष की आयु की एक वृद्धा स्त्री मिली। दोनों ने विवाह किया। एक दिन वशिष्ठ ऋषि तथा वाम देव ऋषि वहाँ गुफा में अन्य ऋषियों के साथ

आए। उन्होंने गौतम ऋषि का उपहास किया कहा हे गौतम जी! यह वृद्धा आप की माँ है या दादी माँ? उनके जाने के पश्चात् दोनों बहुत दुःखी हुए। अगस्त ऋषि की राय से गोदावरी नदी के गौतमी तट पर गये और कठोर तपस्या करने लगे। उन्होंने भगवान शंकर और विष्णु का स्तवन किया तथा पत्नी के लिए गंगा जी को भी खुश किया। गंगा ने उनके तप से प्रशन्न होकर कहा :– ब्राह्मण आप मन्त्र पढ़ते हुए मेरे जल से अपनी पत्नी का अभिषेक करो। इससे वह रूपवती हो जाएगी। गंगा जी के आदेश से दोनों ने एक दुसरे के लिए ऐसा ही किया। दोनों पति–पत्नी सुन्दर रूप वाले हो गये। वह जल जो मन्त्रों का था। उससे वृद्धा नाम नदी बह चली। उसी स्थान पर गौतम ऋषि ने उस वृद्धा के साथ जो युवती हो गई थी। मन भरकर संभोग किया। तब से उस स्थान का नाम ''वृद्धा संगम'' तीर्थ हो गया। वहीं पर गौतम ऋषि ने साधनार्थ एक शिवलिंग स्थापित किया था। वह भी वृद्धा के नाम पर वृद्धेश्वर कहलाया। इस वृद्धा संगम तीर्थ की कथा सब पापों का नाश करने वाली है। वहाँ किया हुआ स्नान–दान सब मनोरथों को सिद्ध करने वाला है।

4. अश्वतीर्थ अर्थात् भानु तीर्थ तथा पंचवटी आश्रम की स्थापना :- श्री ब्रह्मा पुराण पृष्ठ 162-163 तथा श्री मार्कण्डेय पुराण पृष्ठ 173 से 175 पर लिखा है ''महर्षि कश्यप के ज्येष्ठ पुत्र आदित्य (सूर्य) है, उनकी पत्नी का नाम उषा है (मार्कण्डेय पुराण में सूर्य की पत्नी का नाम संज्ञा लिखा है जो महर्षि विश्वकर्मा की बेटी है) सूर्य पत्नी अपने पति सूर्य के तेज को सहन न कर सकने के कारण दुःखी रहती थी। एक दिन अपनी सिद्धि शक्ति से अन्य स्त्री अपनी ही स्वरूप की उत्पन्न की उसे कहा आप मेरे पति की पत्नी बन कर रहो तेरी तथा मेरी शक्ल समान है। आप यह भेद मेरी सन्तान तथा पति को भी नहीं बताना यह कह कर संज्ञा (उषा) तप करने के उद्देश्य से उत्तर कुरूक्षेत्र में चली गई वहाँ घोड़ी का रूप धारण करके तपस्या करने लगी। भेद खुलने पर सूर्य भी घोड़े का रूप धारण करके वहाँ गया जहाँ संज्ञा (उषा) घोड़ी रूप में तपस्या कर रही थी। घोड़े रूप में सूर्य ने घोड़ी रूप धारी संज्ञा से संभोग करना चाहा। उषा (संज्ञा) घोड़ी रूप में वहाँ से भाग कर गौतमी नदी के तट पर आई घोड़ा रूप धारी सूर्य ने भी पीछा किया। वहाँ आकर घोड़ी रूप में अपने पतिव्रत धर्म की रक्षा के लिए घोड़ा रूप धारी पति को न पहचान कर उस की ओर अपना पृष्ठ भाग न करके मुख की ओर से ही सामना किया। दोनों की नासिका मिली। सूर्य वासना के वेग को रोक नहीं सके तथा घोड़ी रूप धारी उषा (संज्ञा) के मुख ओर ही संभोग करने के उद्देश्य से प्रयत्न किया। नासिका द्वारा वीर्य प्रवेश से घोड़ी रूप धारी उषा के मुख से दो पुत्र अश्वनी कुमार (नासत्य तथा दस्र) उत्पन्न हुए तथा शेष वीर्य जमीन पर गिरने से रेवन्त नामक पुत्र उत्पन्न हुआ। वह स्थान अश्व तीर्थ भानु तीर्थ तथा पंचवटी आश्रम नाम से विख्यात हुआ। उसी स्थान पर सूर्य की बेटियों का अरूणा तथा वरूणा नामक नदियों के रूप में समागम हुआ। उसमें भिन्न–2 देवताओं और तीर्थों का पृथक–पृथक समागम हुआ है। उक्त संगम में सताईस हजार तीर्थों का समुदाय है। वहाँ किया हुआ स्नान व दान अक्षय पुण्य देने वाला है। नारद! उस तीर्थ के स्मरण से कीर्तन और श्रवण से भी मनुष्य सब पापों से मुक्त हो धर्मवान् और सुखी होता है।

5. जन स्थान तीर्थ की स्थापना :- श्री ब्रह्म पुराण (गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित) पृष्ठ 161-162 पर ऋषि याज्ञवल्क्य से राजा जनक ने पूछा कि हे द्विजश्रेष्ठ! बड़े–2 मुनियों ने निर्णय किया है कि भोग और मोक्ष दोनों श्रेष्ठ हैं। आप बताऐं! भोग से भी मुक्ति प्राप्त कैसे होती है? ऋषि याज्ञवल्क्य जी ने कहा इस प्रश्न का उत्तर आप श्वशुर वरूण जी ठीक–2 बता सकते हैं। चलो उनसे पूछते हैं। दोनों भगवान वरूण के पास गए तथा वरूण ने बताया कि ''वेद में यह मार्ग निश्चित किया है कि कर्म न करने की उपेक्षा कर्म करना श्रेष्ठ है। धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्ष ये चारों पुरूषार्थ कर्म से बंधे हुए हैं। नृप श्रेष्ठ! कर्म द्वारा सब प्रकार से साध्यों की सिद्धी होती है, इसलिए मनुष्यों को सब तरह से वैदिक कर्म का अनुष्ठान करना चाहिए। इससे वे इस लोक में भोग तथा मोक्ष दोनों प्राप्त करते हैं। अकर्म से कर्म पवित्र इसके पश्चात् राजा जनक ने ऋषि याज्ञवल्क्य को पुरोहित बनाकर गंगा के तट पर अनेकों यज्ञ किए। इसलिए उस स्थान का नाम ''जन स्थान'' तीर्थ के नाम से विख्यात हुआ। उस तीर्थ का चिन्तन करने, वहाँ जाने और भक्ति पूर्वक उसका सेवन (पूजन) करने से मनुष्य सब अभिलाषित वस्तुओं को पाता है और मोक्ष का भोगी होता है।

उपरोक्त पुराणों के लेखों का निष्कर्ष :- प्रमाण संख्या 1 में कहा है कि भृगु ऋषि के पुत्र शुक्र ने गौतमी नदी के उत्तर तट पर साधना की थी जिस कारण से वह स्थान शुक्र तीर्थ नाम से विख्यात हुआ। यदि कोई उस शुक्र तीर्थ में केवल स्नान व वहाँ पर बैठे कामचोर व्यक्तियों को दान करने से ही मोक्ष मानता है वह ज्ञानहीन व्यक्ति है। परमात्मा की साधना जैसे शुक्राचार्य ने की थी। वैसी ही साधना किसी भी स्थान पर कोई साधक करेगा तो शुक्राचार्य को जो लाभ हुआ था वह प्राप्त होगा। यही स्थिति प्रमाण संख्या 5 की समझें की गंगा के तट पर जिस स्थान पर राजा जनक ने अनेकों अश्वमेघ यज्ञ किए। एक अश्वमेघ यज्ञ में करोंड़ों रूपये (वर्तमान में अरबों रूपये) खर्च हुए थे। तब राजा जनक को स्वर्ग प्राप्ति हुई थी। यदि कोई अज्ञानी कहे कि उस जन स्थान तीर्थ पर जाने व स्नान करने तथा वहाँ उपस्थित ऐबी (शराब,तम्बाकू व मांस सेवन करने वाले) व्यक्तियों कों दान करने से राजा जनक वाला लाभ मिलेगा। क्या यह बात न्याय संगत है? इतना कुछ करने के पश्चात् भी राजा जनक मुक्त नहीं हो सका। वही आत्मा कलयुग में सन्त नानक जी के रूप में श्री कालु राम महता के घर जन्मा। फिर पूर्ण परमात्मा की भक्ति पूर्ण गुरु कबीर परमेश्वर से नाम प्राप्त करके की तब मोक्ष प्राप्त हुआ। प्रमाण संख्या 2 में ब्रह्मा की बेटी सरस्वती ने पूरूरवा नामक राजा के साथ अपने पिता से छुपकर सैक्स (संभोग) किया। जब पिता जी ने उन्हें ऐसा करते देखा तो श्राप दे दिया। वह स्थान जहाँ पर सरस्वती ने तथा राजा पुरूरवा ने दुराचार किया उस स्थान का नाम सरस्वती संगत तीर्थ विख्यात हुआ।

विचार करें :- क्या ऐसे स्थान पर जाने व स्नान करने से कोई लाभ हो सकता है? प्रमाण संख्या 3 में कहा है कि एक गौतम नामक ऋषि ने एक हजार वर्ष की आयु में नब्बे हजार वर्ष की आयु की वृद्धा से विवाह किया। अपने को युवा बनाने के उद्देश्य से दोनों ने गोदावरी नदी के गौतमी तट पर कठोर तप किया। पश्चात्

मन्त्रों से जल मन्त्रित करके एक-दूसरे पर डाला। दोनों युवा हो गये। तत्पश्चात् उस स्थान पर दोनों ने मन भर कर संभोग अर्थात् विलास (सैक्स) किया। वह स्थान वृद्धा संगम तीर्थ कहलाया।

विचार करने योग्य बात है कि ऐसे स्थानों पर जाने से आत्मकल्याण के स्थान पर पतन ही होगा। आत्म उद्धार नहीं। प्रमाण संख्या 4 में कहा है कि सूर्य की पत्नी घोड़ी का रूप धारण करके तपस्या कर रही थी। सूर्य काम वासना (सैक्स प्रैसर) के वश होकर घोड़ा रूप धारण करके घोड़ी रूप धारी अपनी पत्नी के पास गया। घोड़ी ने उसे अपने पृष्ठ भाग (पीछे) की ओर नहीं जाने दिया। सूर्य इतना सैक्स प्रैसर (काम वासना के दबाव) में था कि उसने घोड़ी के मुख की ओर ही संभोग क्रिया प्रारम्भ की जिस कारण से उन्हें तीन पुत्र प्राप्त हुए। वह स्थान अश्व तीर्थ नाम से विख्यात हुआ। वहीं पर सूर्य की दो बेटियाँ जाकर नदी बन कर बहने लगी। जिस कारण से वही स्थान पंचवटी आश्रम नाम से भी प्रसिद्ध हुआ। उसी स्थान को भानू तीर्थ भी कहा जाता है। इस तीर्थ का लाभ लिखा है कि इसके स्मरण से तथा कीर्तन करने से तथा इसकी कथा श्रवण करने से सब पापों से मुक्त होकर धर्मवान और सुखी होता है विचार करो पुण्यात्माओं क्या ऐसी कथाओं को सुनने तथा ऐसे स्थान पर जाने से आत्म कल्याण सम्भव है। इसलिए शास्त्रों (पाचों वेदों, गीता जी) के अनुसार भक्ति करने से सर्व पापों से मुक्त होकर पूर्ण मोक्ष सम्भव है।

‘‘सर्व श्रेष्ठ तीर्थ’’

प्रश्न :- सर्वश्रेष्ठ तीर्थ कौन-सा है जिससे सर्व तीर्थों से अधिक लाभ मिलता है?

उत्तर :- सर्व श्रेष्ठ चित शुद्ध तीर्थ है।

चितशुद्ध तीर्थ अर्थात् तत्वदर्शी सन्त का सत्संग सर्व तीर्थों से श्रेष्ठ :- श्री देवी पुराण छठा स्कन्द अध्याय 10 पृष्ठ 417 पर लिखा है व्यास जी ने राजा जनमेजय से कहा राजन्! यह निश्चय है कि तीर्थ देह सम्बन्धी मैल को साफ कर देते हैं, किन्तु मन के मैल को धोने की शक्ति तीर्थों में नहीं है। चितशुद्ध तीर्थ गंगा आदि तीर्थों से भी अधिक पवित्र माना जाता है। यदि भाग्यवश चितशुद्ध तीर्थ सुलभ हो जाए तो अर्थात् तत्वदर्शी संतों का सत्संग रूपी तीर्थ प्राप्त हो जाए तो मानसिक मैल के धुल जाने में कोई संदेह नहीं। परन्तु राजन्! इस चितशुद्ध तीर्थ को प्राप्त करने के लिए ज्ञानी पुरूषों अर्थात् तत्वदर्शी सन्तों के सत्संग की विशेष आवश्यकता है। वेद, शास्त्र, व्रत, तप, यज्ञ और दान से चितशुद्ध होना बहुत कठिन है। वशिष्ठ जी ब्रह्मा जी के पुत्र थे। उन्होंने वेद और विद्या का सम्यक प्रकार से अध्ययन किया था। गंगा के तट पर निवास करते थे। तथापि द्वेष के कारण उनका विश्वामित्र के साथ वैमनस्य हो गया और दोनों ने परस्पर श्राप दे दिए तथा उनमें भयंकर युद्ध होने लगा। इससे सिद्ध हुआ कि संतों के सत्संग से चितशुद्ध कर लेना अति आवश्यक है अन्यथा वेद ज्ञान, तप, व्रत, तीर्थ, दान तथा धर्म के जितने साधन है वे सबके सब कोई विशेष प्रयोजन सिद्ध नहीं कर सकते (श्री देवी पुराण से लेख समाप्त)

विशेष विचार :- उपरोक्त श्री देवी पुराण के लेख से स्पष्ट है कि तत्वदर्शी

सन्तों के सत्संग से श्रेष्ठ कोई भी तीर्थ नहीं है तथा तत्वदृष्टा सन्त के बताए मार्ग से साधना करने से कल्याण सम्भव है। तीर्थ, व्रत, तप, दान आदि व्यर्थ प्रयत्न है। तत्वदर्शी सन्त के अभाव के कारण केवल चारों वेदों में वर्णित भक्ति विद्यी से पूर्ण मोक्ष लाभ नहीं है। परमेश्वर कबीर जी ने कहा है :-

सतगुरु बिन वेद पढ़ें जो प्राणी, समझे ना सार रहे अज्ञानी।।
सतगुरु बिन काहू न पाया ज्ञाना, ज्यों थोथा भुष छिड़ै मूढ किसाना।।
अड़सठ तीर्थ भ्रम–भ्रम आवै सर्व फल सतगुरू चरणा पावै।।
कबीर तीर्थ करि–करि जग मुआ, उड़ै पानी नहाय। सतनाम जपा नहीं, काल घसीटें जाय।।

सूक्ष्मवेद (तत्वज्ञान) में कहा है कि :-

अड़सठ तीर्थ भ्रम–भ्रम आवै। सो फल सतगुरू चरणों पावै।।
गंगा, यमुना, बद्री समेते। जगन्नाथ धाम है जेते।।
भ्रमें फल प्राप्त होय न जेतो। गुरू सेवा में फल पावै तेतो।।
कोटिक तीर्थ सब कर आवै। गुरू चरणां फल तुरंत ही पावै।।
सतगुरू मिलै तो अगम बतावै। जम की आंच ताहि नहीं आवै।।
भक्ति मुक्ति का पंथ बतावै। बुरा होन को पंथ छुड़ावै।।
सतगुरू भक्ति मुक्ति के दानी। सतगुरू बिना ना छूटै खानी।।
सतगुरू गुरू सुर तरू सुर धेनु समाना। पावै चरणन मुक्ति प्रवाना।।

सरलार्थ :- पूर्ण परमात्मा द्वारा दिए तत्वज्ञान यानि सूक्ष्मवेद में कहा है कि तीर्थों और धामों पर जाने से कोई पुण्य लाभ नहीं। असली तीर्थ सतगुरू (तत्वदर्शी संत) का सत्संग सुनने जाना है। जहाँ तत्वदर्शी संत का सत्संग होता है, वह सर्व श्रेष्ठ तीर्थ तथा धाम है। इसी कथन का साक्षी संक्षिप्त श्रीमद्देवीभागवत महापुराण भी है। उसमें छठे स्कंद के अध्याय 10 में लिखा है कि सर्व श्रेष्ठ तीर्थ तो चित शुद्ध तीर्थ है। जहाँ तत्वदर्शी संत का सत्संग चल रहा है। उसके अध्यात्म ज्ञान से चित की शुद्धि होती है। शास्त्रोक्त अध्यात्म ज्ञान तथा शास्त्रोक्त भक्ति विधि का ज्ञान होता है जिससे जीव का कल्याण होता है। अन्य तीर्थ मात्र भ्रम हैं। इसी पुराण में लिखा है कि सतगुरू रूप तीर्थ मिलना अति दुर्लभ है।

सूक्ष्मवेद में बताया है कि सतगुरू तो कल्पवृक्ष तथा कामधेनू के समान है। जैसे पुराणों में कहा है कि स्वर्ग में कल्पवृक्ष तथा कामधेनू हैं। उनसे जो भी माँगो, सब सुविधाऐं प्रदान कर देते हैं। इसी प्रकार सतगुरू जी सत्य साधना बताकर सर्व लाभ साधक को प्रदान करवा देते हैं तथा अपने आशीर्वाद से भी अनेकों लाभ देते हैं। भक्ति करवाकर मुक्ति की राह आसान कर देते हैं। इसलिए कहा है कि :-

एकै साधै सब सधै, सब साधैं सब जाय। माली सींचै मूल को, फलै फूलै अघाय।।

शब्दार्थ :- एक सतगुरू रूप तीर्थ पर जाने से सब लाभ मिल जाता है। सब तीर्थों-धामों व अन्य अंध श्रद्धा भक्ति से सब लाभ समाप्त हो जाते हैं। जैसे आम के पौधे की एक जड़ की सिंचाई करने से पौधा विकसित होकर पेड़ बनकर बहुत फल देता है। यदि पौधे को उल्टा करके जमीन में गढ्ढ़े में शाखाओं की ओर से रोपकर शाखाओं की सिंचाई करेंगे तो पौधा नष्ट हो जाता है। कोई लाभ नहीं

मिलता। इसलिए एक सतगुरू रूप तीर्थ पर जाने से सर्व लाभ मिल जाता है। जैसा कि संक्षिप्त श्रीमद्देवीभागवत महापुराण में लिखा है कि सतगुरू रूप तीर्थ मिलना अति दुर्लभ है, परंतु आप जी को सतगुरू रूप तीर्थ अति शुलभ है। यह दास (लेखक रामपाल दास) विश्व में एकमात्र सतगुरू तीर्थ यानि तत्वज्ञानी है। आओ और सत्य भक्ति प्राप्त करके जीवन सफल बनाओ।

आप जी को फिर ध्यान दिला दूँ कि गीता शास्त्र का ज्ञान चारों वेदों (ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद तथा अथर्ववेद) का सारांश है। वेदों का ज्ञान पूर्ण परमात्मा यानि परम अक्षर ब्रह्म का दिया हुआ है जो काल ब्रह्म के अन्तःकरण में डाला गया था। काल ब्रह्म के श्वासों द्वारा उसके शरीर से बाहर आया था जिसका कुछ अंश काल ब्रह्म ने जान-बूझकर समाप्त कर दिया था। शेष अपने पुत्र ब्रह्मा जी को दिया। श्री कष्ण द्वैपायन जी ने इसको चार भागों (ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद तथा अथर्ववेद) में बाँटा। जिस कारण से उनको वेद व्यास (वेदों का विस्तारक) कहा जाने लगा। यही ज्ञान श्रीमद्भगवत गीता में काल ब्रह्म ने श्री कष्ण जी के शरीर में प्रवेश करके कहा था। इसलिए गीता का ज्ञान परमात्मा का बताया है। पुराणों का ज्ञान श्री ब्रह्मा जी तथा ऋषियों का अनुभव है। पुराणों में जो ज्ञान गीता-वेदों से नहीं मिलता, वह शास्त्र विरूद्ध है। उसको आधार मानकर साधना करना व्यर्थ है।

❖ चारों वेदों (ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद तथा अथर्ववेद) तथा इन्हीं के सार रूप गीता में केवल ब्रह्म (जिसे काल ब्रह्म भी कहा जाता है) तक की साधना का ज्ञान है। इन शास्त्रों में परम अक्षर ब्रह्म अर्थात् उस परमेश्वर की साधना का ज्ञान नहीं है जिसके विषय में गीता ज्ञान देने वाले ने गीता अध्याय 18 श्लोक 62 में कहा है कि हे भारत! तू सर्व भाव से उस परमेश्वर की शरण में जा। उसकी कपा से ही तू परमशांति को तथा सनातन परम धाम को प्राप्त होगा।

❖ उस परमेश्वर का ज्ञान जानने के लिए गीता अध्याय 4 श्लोक 32, 34 में कहा है कि उस तत्वज्ञान को जो स्वयं परमेश्वर ने अपने मुख कमल से बोलकर वाणी द्वारा बताया है, वह तत्वदर्शी संतों के पास जाकर समझ। इससे सिद्ध है कि गीता में न तो यह ज्ञान है कि वह परमेश्वर कौन है तथा न उसकी प्राप्ति की साधना का वर्णन है, परंतु गीता का ज्ञान अपने स्तर का सत्य ज्ञान है। जैसे दसवीं कक्षा तक सलेबस है, वह उस स्तर का तो सत्य है, परंतु बी.ए. तथा एम.ए. का नहीं है। वह सूक्ष्मवेद यानि तत्वज्ञान में है। सूक्ष्मवेद पाँचवां सम्पूर्ण वेद है जिसमें गीता-वेदों व पुराणों वाला ज्ञान भी है। जो इनमें नहीं है, वह ज्ञान भी है। वर्तमान में सूक्ष्मवेद का सम्पूर्ण ज्ञान विश्व में मेरे (लेखक के) अलावा किसी को नहीं है।

सूक्ष्मवेद का रहस्य

वेद का अर्थ ज्ञान है। चार वेद पहले एक ही वेद (ज्ञान) था। ऋषि कष्ण द्वैपायन पुत्र ऋषि पारासर ने इसको चार भागों में विभाजित करके ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद तथा अथर्ववेद नाम दिए। जिस कारण ऋषि जी को वेद व्यास कहा जाने लगा जिसका अर्थ है ''वेद विभाजक''। चारों वेदों में ऋषि वेदव्यास जी

ने कुछ नहीं मिलाया। केवल चार भाग किए हैं। चारों वेद तथा सूक्ष्मवेद पूर्ण परमात्मा यानि परम अक्षर ब्रह्म (सत पुरूष) जी ने प्रदान किए हैं। आगे विस्तार से वर्णन किया जाता है :-

➢ पहले पुराण भी एक बोध (ज्ञान) था जो श्री ब्रह्मा जी ने अपने कुल के दक्ष तथा मनु आदि ऋषियों को सुनाया था जिसमें अपनी उत्पत्ति के पश्चात् का घटनाक्रम बताया था। पुराणों में श्री ब्रह्मा जी ने कुछ वेद ज्ञान तथा अधिक अपना अनुभव बताया है। पुराणों का जो ज्ञान वेदों से मेल करता है, वह ब्रह्मा जी का बताया है। बाद में ऋषियों ने पुराण बोध के अठारह भाग बना दिए। प्रत्येक ऋषि ने श्री ब्रह्मा जी से सुने ज्ञान में अपना अनुभव जोड़कर विस्तार किया है। पुराणों में श्राद्ध-पिण्डदान, मूर्ति पूजा आदि-आदि तथा कुछ मंत्र जाप ऋषियों ने लिख दिए तथा काल ब्रह्म यानि सदाशिव ने भ्रमित करने के लिए शिव लिंग पूजा आदि बताए हैं जो वेद विरूद्ध होने से मान्य नहीं हैं तथा व्यर्थ साधना है। अध्यात्म को समझने के लिए पुराणों का ज्ञान होना आवश्यक है। वेद तथा उन्हीं का सारांश श्रीमद्भगवत गीता का ज्ञान पूर्ण ब्रह्म ने दिया है, वह सत्य है। मान्य है तथा लाभदायक तथा मोक्षदायक है।

चारों वेद तथा सूक्ष्मवेद कैसे प्राप्त हुए?

❖ सर्वप्रथम सतपुरूष (परम अक्षर ब्रह्म) ने सूक्ष्मवेद को काल ब्रह्म (ज्योति निरंजन जो इन इक्कीश ब्रह्माण्डों का प्रभु है) के अंतःकरण (हृदय) में डाला था। (Email किया था।) सम्पूर्ण अध्यात्म ज्ञान यानि सूक्ष्मवेद काल ब्रह्म के श्वासों द्वारा बाहर निकला। इसने सूक्ष्मवेद को पढ़ा। सूक्ष्मवेद में सतपुरूष तथा सतलोक (सनातन परम धाम) का सम्पूर्ण विवरण था। हम क्यों जन्म-मर रहे हैं? जन्म-मरण से मुक्ति तथा सतपुरूष तथा सतलोक प्राप्ति कैसे होती है? ये विस्तार से बताया था। यह काल ब्रह्म जिसे वेदों के विद्वान ब्रह्म कहते हैं, धोखेबाज है। इसने उस सूक्ष्मवेद से वह प्रकरण निकालकर नष्ट कर दिया जिसमें उपरोक्त वर्णन था। शेष ज्ञान रख लिया जिससे जन्म-मरण तथा अन्य प्राणियों के शरीर प्राप्त करने वाला चक्र सदा बना रहेगा। इसके पीछे काल ब्रह्म का विशेष स्वार्थ है जो आप आगे पढ़ेंगे। शेष बचे वेदज्ञान को श्री वेदव्यास ऋषि जी ने चार भागों (ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद तथा अथर्ववेद) में विभाजित किया जो वर्तमान में प्राप्त है। वेदों का जो महत्वपूर्ण ज्ञान काल ब्रह्म ने नष्ट कर दिया था, उसको बताने के लिए सतपुरूष (परम अक्षर ब्रह्म) स्वयं पृथ्वी पर प्रकट होकर अपने मुख कमल से दोहों, चौपाईयों, कविताओं के रूप में बोलकर बताते हैं। वह वाणी लिखी जाती हैं। वह सतपुरूष की वाणी कही जाती है। उस वाणी में सम्पूर्ण अध्यात्म ज्ञान है। इस उपरोक्त वर्णन की पुष्टि के लिए कृपा पढ़ें विस्तारपूर्वक जो आगे बताया है।

❖ इसी पुस्तक ''अंध श्रद्धा भक्ति खतरा-ए-जान'' में अध्याय ''सृष्टि रचना'' है। उसको पढ़ने से पता चलेगा कि हम सब प्राणी जो काल ब्रह्म के इक्कीश ब्रह्माण्डों में जन्म-मृत्यु व अन्य कष्ट सहते हुए रह रहे हैं, कैसे आए? क्यों जन्म मर रहे हैं?

कुछ संक्षिप्त वर्णन यहाँ किया जाता है।

हम सभी प्राणी, मानव तथा अन्य पशु-पक्षी आदि-आदि के शरीर धारण किए हैं। पहले उस सनातन परम धाम (सत्यलोक) में परम अक्षर ब्रह्म के साथ रहते थे। वहाँ कोई जरा-मरण व जन्म नहीं है। इसीलिए वहाँ परम शांति है। इसीलिए गीता का ज्ञान बोलने वाले ने अध्याय 18 श्लोक 62 में कहा है कि हे भारत! तू सर्व भाव से उस परमेश्वर (तत् ब्रह्म) की शरण में जा। उस परमेश्वर की कृपा से ही तू परम शांति को तथा सनातन परम धाम को प्राप्त होगा।

❖ जब तक जन्म-मरण समाप्त नहीं होगा, तब तक जरा यानि वृद्धावस्था भी आएगी। यदि पूरा समय करके मृत्यु होती है तो भी जीव को परम शांति प्राप्त नहीं हो सकती। इसलिए गीता अध्याय 15 श्लोक 4 में कहा है कि तत्वज्ञान की प्राप्ति के पश्चात् परमेश्वर के उस परम पद की खोज करनी चाहिए जहाँ जाने के पश्चात् साधक लौटकर संसार में कभी नहीं आते। जिस परमेश्वर ने संसार रूप वृक्ष का विस्तार (सृजन) किया है, उसी की भक्ति करो।

गीता ज्ञान देने वाला तो स्वयं जन्म-मरण में है। प्रमाण गीता अध्याय 4 श्लोक 5, अध्याय 2 श्लोक 12, अध्याय 10 श्लोक 2 में। इसने अपनी भक्ति करने के लिए गीता अध्याय 8 श्लोक 5 तथा 7 में कहा है। इसकी भक्ति से जन्म-मरण सदा बना रहेगा। उपरोक्त परम शांति नहीं हो सकती। गीता ज्ञान बताने वाले ने अपनी साधना का ज्ञान गीता अध्याय 8 श्लोक 13 में कहा है कि मुझ ब्रह्म का केवल एक अक्षर 'ओं' (ॐ) है। इसका स्मरण करने वाले को ब्रह्मलोक प्राप्त होता है जहाँ पर अन्य देवताओं की भक्ति से मिलने वाले स्वर्ग सुख से हजार गुणा अधिक सुख है। परंतु ब्रह्मलोक में गए भी पुनरावर्ती (जन्म-मरण) में हैं। (प्रमाण गीता अध्याय 8 श्लोक 16 में) गीता बोलने वाले प्रभु क्षर पुरूष को ईष्ट मानकर भक्ति करने वाले को परम शांति प्राप्त नहीं हो सकती। इसलिए गीता अध्याय 18 श्लोक 62 में अपने से अन्य उस परमेश्वर की शरण में जाने यानि ईष्ट मानकर भक्ति करने के लिए गीता ज्ञान दाता ने कहा है। उसके लिए गीता अध्याय 4 श्लोक 34 में किसी तत्वदर्शी से तत्वज्ञान (सूक्ष्म) वेद जानने के लिए कहा है क्योंकि सूक्ष्मवेद वाला ज्ञान वेदों व गीता में नहीं है।

❖ जैसा कि ऊपर बताया है कि हम सब पहले उस परमेश्वर (सतपुरूष) के पास रहते थे। वहाँ हमने गलती की थी। हमने अपने परम सुखदाई परमात्मा (सतपुरूष) की अपेक्षा काल ब्रह्म में आस्था बना ली थी। यह सतलोक में तप करके घोर तपस्या कर रहा था। हम इसे अच्छा व्यक्ति जानकर दिल से चाहने लगे। यही गलती प्रकृति देवी ने की थी। वह भी इसे अच्छा व्यक्ति मानकर आसक्त हुई थी। जिस कारण से परमात्मा यानि सतपुरूष जी ने हमारे को त्याग दिया। इस काल ब्रह्म ने तपस्या के प्रतिफल में सतपुरूष से इक्कीश ब्रह्माण्ड प्राप्त किए हैं। इसने सतलोक में युवती प्रकृति देवी (दुर्गा) के साथ दुष्कर्म करने के लिए कोशिश की थी। प्रकृति देवी (दुर्गा) अपनी इज्जत की रक्षा के लिए सूक्ष्म रूप बनाकर काल ब्रह्म के खुले मुख के द्वारा उसके पेट में चली गई। परम अक्षर ब्रह्म ने देवी को

काल ब्रह्म के उदर से निकालकर देवी सहित हम सबको काल ब्रह्म के साथ सत्यलोक से सोलह (16) संख कोस (48 शंख कि.मी.) दूर यहाँ भेज दिया।

परम अक्षर ब्रह्म ने प्रकृति देवी के साथ किए दुर्व्यवहार के कारण काल ब्रह्म को इक्कीश ब्रह्माण्डों सहित सतलोक से निकाल दिया।

यहाँ आने के पश्चात् इस काल ने हमारी सब यादाश्त समाप्त कर दी कि हम कहाँ से आए हैं? जन्म-मरण किस कारण से हो रहा है? हमारे ऊपर भक्ति करते हुए भी कष्ट आते रहते हैं? क्या कारण है?

❖ सतपुरूष यानि परम अक्षर ब्रह्म ने देखा कि मेरे अबोध बच्चे धोखेबाज ज्योति निरंजन यानि काल ब्रह्म के साथ अपनी गलती से चले गए हैं। उसने इनको सुखसागर स्थान (सनातन परम धाम) का तथा मेरा ज्ञान ही समाप्त कर दिया है। अपने को परमेश्वर तथा जगत का उत्पन्नकर्ता तथा पालनकर्ता सिद्ध कर रखा है। इसलिए परमेश्वर ने सूक्ष्मवेद (तत्वज्ञान) इस काल ब्रह्म के अंतःकरण में डाल दिया यानि ई-मेल कर दिया। सूक्ष्मवेद में वह सर्व वर्णन था जो इसी पुस्तक के पृष्ठ 208 पर सृष्टि रचना में लिखा है तथा सत्य साधना भी लिखी थी। जिसको पढ़-सुनकर सत्य साधना करके प्रत्येक मानव (स्त्री-पुरूष) सतलोक में चला जाता। परमात्मा की कृपा से वह सम्पूर्ण ज्ञान काल ब्रह्म की नासिका द्वारा श्वासों के साथ बाहर प्रकट हो गया। काल ब्रह्म ने पढ़ा तो घबरा गया कि यदि मेरे साथ आए प्राणियों को इस ज्ञान का पता चल गया तो सब मेरे लोक से निकल जाऐंगे।

इसने विचार किया कि मुझे परमात्मा ने शॉप दे रखा है कि एक लाख मानव शरीरधारी प्राणियों का नित्य आहार करेगा। मेरी क्षुधा कैसे शांत होगी? ऐसा विचार करके इस काल ब्रह्म ने सूक्ष्मवेद से सृष्टि रचना तथा पूर्ण परमात्मा की भक्ति के साधना मंत्र निकाल दिए। केवल अपनी साधना का मंत्र ओं (ॐ) छोड़ दिया तथा अन्य सामान्य ज्ञान भी छोड़ दिया। जो शेष आध्यात्मिक ज्ञान बचा यानि चारों वेदों को काल ब्रह्म ने सागर में छुपा दिया। जो सागर मंथन करने से बाहर आया, काल ब्रह्म ने अपनी पत्नी अष्टंगी देवी (दुर्गा देवी) से कहा कि चारों वेदों वाला ज्ञान जो सागर मंथन में निकले, उसे ब्रह्मा को देना, वही पढ़े। ब्रह्मा जी ने वेद प्राप्त किये और पढ़े। ब्रह्मा जी ने वेदों को जैसा समझा, वैसा ज्ञान अपनी संतान ऋषियों को बताया। जिसमें स्पष्ट लिखा है कि यदि साधक पूर्ण मोक्ष प्राप्त करना चाहता है तो केवल एक पूर्ण ब्रह्म की साधना ईष्ट रूप में करे। अन्य देवी-देवताओं की साधना ना करे। विद्वान ऋषियों ने वेदों को पढ़कर कुछ ब्रह्मा जी से सुनकर स्वयं निष्कर्ष निकाला कि सम्पूर्ण वेद में केवल यजुर्वेद अध्याय 40 मंत्र 15 में एक ही ओं (ॐ) मंत्र जाप करने का लिखा है। उसी मंत्र को पूर्ण ब्रह्म की साधना मानकर इस (''ॐ'' नाम) का जाप किया। साथ में वेदों की प्राप्ति से पूर्व जब ब्रह्मा जी सचेत हुए तो कमल के फूल पर विराजमान थे। विचार कर रहे थे कि मैं कहाँ से उत्पन्न हुआ हूँ? मुझे जन्म देने वाले कौन हैं? इस अगाध जल में मेरा क्या प्रयोजन है? आसपास कोई दिखाई नहीं दे रहा है।

उसी समय काल ब्रह्म ने आकाशवाणी की कि तप करो, तप करो। ब्रह्मा जी

ने उस आकाशवाणी को पूर्ण ब्रह्म की मानकर घोर तप फूल पर बैठे-बैठे किया। एक हजार वर्ष तक तप करते हुए तो फिर आकाशवाणी हुई कि संष्टि करो। उसके बाद ब्रह्मा ने इस घोर तप वाली साधना को भी अपनी संतान ऋषियों को करने का उपदेश दिया। घोर तप करना वेदों व गीता के विरूद्ध साधना होने से मोक्षदायक नहीं है। (गीता अध्याय 17 श्लोक 5-6 में प्रमाण है कि जो शास्त्रविधि से रहित घोर तप को तपते हैं। वे शरीर के कमलों में विराजमान देवी-देवताओं तथा सहित परमेश्वर वे मुझको भी क्रश करने वाले हैं। उन अज्ञानियों को तू असुर स्वभाव वाले जान।)

❖ चारों वेदों में वर्णित साधना से परमात्मा प्राप्ति नहीं होती क्योंकि काल ब्रह्म ने प्रतिज्ञा कर रखी है कि मैं अपने वास्तविक काल रूप में किसी को कभी दर्शन नहीं दूँगा। मैं अपनी योगमाया यानि सिद्धि शक्ति से छिपा रहूँगा। (प्रमाण गीता अध्याय 7 श्लोक 24-25 में) इसलिए मेरे दर्शन यानि मेरी प्राप्ति न तो वेदों में वर्णित विधि से, न काल द्वारा आकाशवाणी द्वारा बताए तप से नहीं हो सकती।

प्रमाण :- गीता अध्याय 11 श्लोक 48 में :- गीता ज्ञान दाता काल ब्रह्म है जो श्री कंष्ण जी के शरीर में प्रवेश करके बोल रहा था। कहा है कि हे अर्जुन! मनुष्य लोक में इस प्रकार रूप में मैं न वेदों और यज्ञों के अध्ययन से यानि वेदों में लिखी धार्मिक क्रियाओं को पढ़कर साधना करने से, न दान करने से, न अन्य क्रियाओं से (श्राद्ध, पिण्डदान आदि-आदि कर्मकाण्ड क्रियाओं से), न उग्र तपों से देखा जा सकता हूँ। गीता अध्याय 11 श्लोक 32 में गीता ज्ञान देने वाले ने स्पष्ट कर ही दिया है कि मैं काल हूँ।

➢ ऋषियों ने ॐ नाम का जाप तथा ब्रह्मा जी द्वारा बताया शास्त्रविधि रहित तप तथा वेदों में वर्णित हवन आदि यज्ञों को किया। उनको परमात्मा के दर्शन नहीं हुए। उन ऋषियों को एक या दो रिद्धि-सिद्धि प्राप्त हो गई। उन्हीं का प्रदर्शन करके लोक प्रसिद्धि प्राप्त करते रहे। मोक्ष से वंचित रह गए। उन ऋषियों को काल ब्रह्म ने छल करके कुछेक को अपने पुत्र ब्रह्मा के रूप में दर्शन दिए तो उन ऋषियों को विश्वास हो गया कि अन्य परमात्मा कोई नहीं है। यह सगुण (साकार) देवता ब्रह्मा ही सब कुछ है।

➢ कुछ ऋषियों को श्री विष्णु जी के रूप में दर्शन दिए तो उन्होंने भी गलती से श्री विष्णु जी को पूर्ण परमात्मा मान लिया जो साकार देवता है।

➢ कुछ ऋषियों को श्री शिव जी के रूप में दर्शन दिए तो उन्होंने भी भ्रमवश श्री शिव जी साकार देवता को पूर्ण ब्रह्म मान लिया।

जिन ऋषियों ने श्री ब्रह्मा जी के रूप में देखा था। उन्होंने हजारों की सँख्या में जाकर श्री ब्रह्मा जी से कहा कि आप अपने को छिपाए हो। हमने साधना काल में समाधि दशा में आपके दर्शन किए हैं। आप पूर्ण परमात्मा हो।

❖ जिन ऋषियों ने श्री विष्णु जी के रूप में दर्शन किए थे, उन्होंने हजारों की सँख्या में श्री विष्णु के पास जाकर उन्हें पूर्ण परमात्मा बताया। कहा कि आप अपने को छिपाए हो।

❑ इसी प्रकार जिन ऋषियों ने श्री शिव रूप में देखा था, हजारों की सँख्या में उन ऋषियों ने श्री शिव जी के पास जाकर बताया कि आप पूर्ण परमात्मा हो, अपने को छिपाए हो।

विशेष :- काल ब्रह्म के द्वारा किए जाने वाले छल का प्रत्यक्ष प्रमाण श्री शिव महापुराण में विद्यवेश्वर संहिता में है। उपरोक्त ऋषियों से अपनी-अपनी महिमा मण्डन सुनकर भ्रमित श्री ब्रह्मा जी तथा श्री विष्णु जी ने एक-दूसरे को अपना पुत्र और स्वयं को सबका मालिक बताया। जिस कारण से दोनों का युद्ध हुआ। उस समय वही काल ब्रह्म यानि सदाशिव अपने पुत्र शिव के रूप में प्रकट हुआ और उनको भ्रमाया कि मैं सर्व का मालिक हूँ। तुम ईश नहीं हो। उन दोनों को अपने लिंग (गुप्तांग) के आकार का पत्थर का लिंग बनाकर उसको पत्थर की स्त्री योनि में प्रविष्ट करके देकर वेद विरूद्ध साधना उस लिंग की पूजा करके कल्याण होना बताया। उस समय श्री शिव जी के रूप में प्रकट हुआ और कहा कि तुम दोनों (ब्रह्मा-विष्णु) को उत्पत्ति तथा स्थिति दो कंत दिए हैं और मेरे जैसे स्वरूप वाले रूद्र तथा शिव को संहार तथा तिरोभाव कंत दिए हैं। इससे सिद्ध हुआ कि काल ब्रह्म प्रतिज्ञावश अपने वास्तविक रूप में किसी को दर्शन नहीं देता। ऐसे छल करके प्रकट होता है।

❖ इस कारण से ऋषियों को परमात्मा प्राप्ति नहीं हुई। परंतु उनकी साधना से सिद्धियाँ प्राप्ति, ब्रह्मलोक प्राप्ति, तप से राज्य प्राप्ति तथा फिर नरक प्राप्ति, जन्म-मरण का चक्र प्राप्ति हुई, क्योंकि ॐ (ओउम्) नाम के जाप के प्रतिफल में ब्रह्मलोक प्राप्त हुआ। वहाँ अपना सुख समय व्यतीत करके, पंथ्वी लोक में तप के प्रतिफल में राजा बना। काल ब्रह्म का अटल विधान है कि जैसे कर्म प्राणी करेगा, उसको वैसा फल अवश्य मिलेगा यानि पुण्य व भक्ति कर्म के कारण स्वर्ग, तप से राज्य तथा पाप कर्मों से नरक तथा अन्य प्राणियों के शरीर में कष्ट अवश्य प्राप्त होगा।

❖ इस कर्म चक्र में महाकष्ट उठा रही अपनी आत्माओं पर दया करके पिता का कर्तव्य निभाते हुए परम अक्षर ब्रह्म सूक्ष्मवेद (तत्वज्ञान) बताने स्वयं पंथ्वी पर प्रकट हुए। जो वेद ज्ञान काल ब्रह्म ने नष्ट किया था, उसकी पूर्ति की।

❖ आप जी को चारों वेदों तथा गीता से सिद्ध करता हूँ कि वास्तव में पूर्ण परमात्मा पंथ्वी पर प्रकट होकर यथार्थ सम्पूर्ण अध्यात्म ज्ञान यानि सूक्ष्मवेद स्वयं अपने मुख से बोलकर बताता है। वह लिखा जाता है। उसे सच्चिदानंद घन ब्रह्म की वाणी कहा जाता है।

❖ चारों वेदों व गीता में जो भक्ति विधि है, वह जन्म-मरण समाप्त करने की नहीं है, परंतु पुराणों वाली भक्ति विधि से हजार गुणा उत्तम है। इनमें वर्णित भक्ति विधि शास्त्रोक्त तो है जो अन्य अंध श्रद्धा भक्ति यानि मनमाने आचरण वाली साधना से तो हजार गुणा लाभ देती है, परंतु जन्म-मरण समाप्त करने व परमेश्वर के उस परमपद को प्राप्त कराने वाली नहीं है। जहाँ जाने के पश्चात् संसार में लौटकर कभी नहीं आते। परंतु सूक्ष्मवेद में सम्पूर्ण अध्यात्म ज्ञान तथा जन्म-मरण सदा के लिए समाप्त करने की भक्ति विधि वर्णित है। वेदों, गीता वाली साधना भी है, इससे

आगे की साधना भी है जो गीता व वेदों में नहीं है जो तत्वदर्शी संत से जानने को कहा है।

प्रमाण :- यजुर्वेद अध्याय 40 मंत्र 10 तथा गीता अध्याय 4 श्लोक 34 में।

यह बताने के लिए कि चारों वेद तथा सूक्ष्मवेद कैसे प्राप्त हुए, यह सब वर्णन करना अनिवार्य है जो किया गया है और आगे किया जाएगा। यदि सीधा लिख दूँ कि तत्वज्ञान परमेश्वर (परम अक्षर ब्रह्म) ने दिया तो संशय बना रहेगा। विस्तार से लिखकर स्पष्ट किया जा रहा है।

❖ पवित्र गीता शास्त्र में सांकेतिक अनमोल ज्ञान है जिसे हमारे हिन्दू धर्मगुरू नहीं समझ पाए। इसको केवल तत्वदर्शी (सूक्ष्मवेद का ज्ञाता) ही समझ तथा समझा सकता है। वह तत्वदर्शी संत यह दास (रामपाल दास) है।

❑ गीता के सांकेतिक ज्ञान से प्रमाणित करता हूँ कि सूक्ष्मवेद (तत्वज्ञान) किसने बताया। इसके पश्चात् वेदों से प्रमाणित किया जाएगा।

➢ गीता अध्याय 4 श्लोक 25 से 30 तक बताया है कि जिसको जितना ज्ञान यज्ञों यानि धार्मिक अनुष्ठानों का है, वह उसी को पापनाशक यानि कल्याणकारक मानकर साधना कर रहा है।

➢ गीता अध्याय 4 श्लोक 25 :- इसमें कहा है कि कुछ अन्य योगीजन (साधक) देवताओं की पूजा भली-भांति यानि तसल्ली से करते हैं। अन्य साधक परमात्मा की तड़फ रूप अग्नि में अपने अनुसार साधना करके जीवन न्यौछावर कर देते हैं।

➢ गीता अध्याय 4 श्लोक 26 में :- अन्य योगीजन (साधकजन) आँख-कान आदि इन्द्रियों को बंद करके संयम करके ही अपनी सफलता मानते हैं यानि इसी अग्नि यानि तड़फ में इसी को मोक्षदायक मानकर अपना जीवन हवन यानि न्यौछावर मानते हैं। अन्य साधक शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध इन विकारों पर अपनी इन्द्रियों को जाने से रोकने यानि संयम करने वाली साधना रूपी अग्नि में लगे रहते हैं यानि इन विषयों को हवन (नष्ट) करने में लगे रहते हैं और कोई साधना नहीं करते। इसी को अपनी भक्ति की सफलता मानकर इसी साधना में अपना जीवन समाप्त कर देते हैं।

''श्रंगी ऋषि तथा दशरथ पुत्री शांता की प्रेम कथा''

{श्री तुलसी कत रामायण में ''बाल काण्ड'' अध्याय में शांता का कुछ वर्णन है। चौपाईयों में श्री रामचन्द्र के विवाह के समय दुल्हन पक्ष की औरतों ने यंग (सीठणें) सुनाते हुए कहा है कि राम जी! तेरी बहन शांता ऋषि श्रंगी के साथ भागकर गई थी या विवाह किया था। विवाह तो अपनी जाति में होता है। श्रंगी ऋषि तो ब्राह्मण हैं।}

उदाहरण :- श्रंगी ऋषि जी ने इन्द्रियों को वश में करके विषयों यानि काम (Sex), क्रोध, मोह, अहंकार तथा लोभ को वश करने के उद्देश्य से कठिन साधना की तथा मान लिया कि मैंने पाँचों विकारों (रूप, रस, गंध, स्पर्श, शब्द) पर नियंत्रण कर लिया। पूरे दिन में एक बार वक्ष की छाल को जीभ लगाता था। उसी

से तप्त हो जाता था। एक समय अपनी भक्ति का प्रदर्शन करने के लिए श्रंगी ऋषि अयोध्या के पास जंगल में एक वक्ष की ओर मुख करके बैठ गया। दस दिन बीत गए। अयोध्या के धार्मिक व्यक्ति खीर-हलवा आदि का स्वादिष्ट भोजन बनाकर ले गए कि ऋषि जी साधना से उठेंगे तो भोजन खिलाऐंगे। परंतु श्रंगी ऋषि दिन में एक बार वक्ष के तने की छाल को चीभ से चाटता था। आँखें भी नहीं खोलता था और ध्यानमग्न हो जाता। ऋषि की चर्चा अयोध्या नगरी में दावानल की तरह फैल गई। राजा दशरथ को पता चला तो अपनी लड़की शांता तथा रानियों को साथ लेकर ऋषि के दर्शन करने गए, परंतु ऋषि ने आँखें नहीं खोली। बस एक बार जीभ से वक्ष को चाटा। कई दिन ऐसे ही बीत गए। राजा दशरथ की लड़की युवा थी। उस समय तक श्री रामचन्द्र आदि पुत्रों का जन्म नहीं हुआ था। कौशल्या रानी से शांता बेटी के जन्म के पश्चात् लगभग 20 वर्ष तक कोई संतान किसी रानी को नहीं हुई थी। उस समय शांता युवा था। वह प्रतिदिन अपनी नौकरानियों के साथ ऋषि के दर्शन के लिए पिता दशरथ जी की आज्ञा लेकर जाने लगी। शांता ने एक वैद्य से पूछा कि ऋषि जी की समाधि कैसे खोलें? वह विधि बताऐं। वैद्य ने बताया कि वक्ष के उस स्थान पर शहद का लेप कर दो जहाँ पर ऋषि जीभ से चाटता है। लड़की शांता ने वैसा ही किया। पहले ऋषि एक बार जीभ से चाटता था, उस दिन दो बार चाटा। अगले दिन फिर शहद लगाया गया। अगले दिन चार बार चाटा। तीसरे दिन फिर शहद लगाया। ऋषि जी ने बहुत देर तक चाटा और आँखें खोली। सामने देखा। शांता ने अपना परिचय दिया तथा भोजन खाने के लिए निवेदन किया। ऋषि ने केवल कुछ खीर खाई। राजा दशरथ ने ऋषि को अपने घर चलने के लिए निवेदन किया। ऋषि जी तुरंत सहमत हो गए। शांता बेटी को ऋषि की सेवा करने को कहा। शांता अपनी नौकरानियों से भोजन बनवाकर स्वयं ऋषि के पास ले जाकर खिलाती। बहुत देर तक परमात्मा की चर्चा करती थी। राजा दशरथ ने श्रंगी ऋषि से संतान के लिए याचना की। ऋषि ने पुत्र प्राप्ति के लिए एक यज्ञ करने की राय दी तथा कहा कि उस यज्ञ को मैं ही करूँगा तो आपको अवश्य पुत्र प्राप्ति होगी। शुभ मुहूर्त देखकर छः महीने आगे का समय यज्ञ का रखा गया।

श्रंगी ऋषि ने राजा दशरथ से कहा कि मैं आपकी पुत्री शांता से विवाह करना चाहता हूँ। ऋषि की आयु चालीस वर्ष थी तथा शांता की आयु बीस वर्ष। राजा दशरथ की जाति क्षत्रीय तथा श्रंगी ब्राह्मण जाति से थे। जिस कारण से राजा दशरथ धर्म संकट में फँसकर चिंतित रहने लगे। यदि मना कर दिया तो श्रंगी ऋषि के श्राप देने का भय। शादी कर दी तो जाति वालों का भय। एक ऋषि ने राजा का संकट देखकर बीच का रास्ता निकाला। उस ऋषि ने शांता को गोद ले लिया तथा ऋषि श्रंगी तथा शांता का विवाह कर दिया। श्रंगी ऋषि शांता को लेकर वन में कुटी बनाकर रहने लगा।

कथा सार :- गीता अध्याय 4 श्लोक 26 का तात्पर्य है कि कुछ साधक कहते हैं कि जिन्होंने अपनी इन्द्रियों का दमन कर लिया, वही मुक्ति पाता है। उसी

उद्देश्य से श्रंगी ऋषि ने जंगल में साधना की और मान लिया था कि मैंने अपनी इन्द्रियों को वश में कर लिया है। इसीलिए अयोध्या शहर के पास बैठकर अपनी सार्थकता का प्रदर्शन करने लगे थे। परंतु मार खा गए।

सूक्ष्मवेद में लिखा है :-

कुरंग मतंग पतंग श्राग भंगा, इन्द्री एक ठग्यो तिन अंगा।

शब्दार्थ :- पाँच विषय विकार हैं। (शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध)

➢ शब्द विषय :- शब्द यानि संगीत का आकर्षण कान के द्वारा शरीर में जाकर जीव को विवश करता है। शब्द विषय (विकार) का प्रभाव हिरण में अधिक होता है। मंग पकड़ने वाला जंगल में वाद्य यन्त्र से संगीत की विशेष धुनि (Tune) निकालता है जिसको सुनकर अपने शब्द विकार के वश हुआ कुरंग (मंग) शिकारी की ओर खींचा चला आता है और शिकारी के सामने बैठकर धुन (Tune) का आनंद लेने लगता है। शिकारी उसे पकड़कर मारकर अपना धंधा चलाता है। हिरण एक विषय के वश होकर मर गया।

➢ स्पर्श विषय :- स्पर्श यानि नर का मादा से मिलन (Sex) का विकार शरीर से छेड़छाड़ करने से अधिक प्रभाव करता है। हाथी इस विषय के अधिक वश है। हाथी पकड़ने वाले जंगल में बीस फुट चौड़ी दस फुट गहरी तथा सौ फुट लम्बी खाई यानि गढ्ढ़ा खोदकर उसके ऊपर पतली-पतली लकड़ियाँ रखकर ताजा घास खोदकर लकड़ियों पर रख देते हैं। वह ऐसा लगता है जैसे पंथ्वी ही है। एक पूरी तरह ट्रेंड की गई हथनी को हाथियों के झुण्ड में भेजते हैं। वह हाथियों के शरीर से अपना शरीर स्पर्श करती है जैसे गर्भ धारण करने के समय हथनी हाथियों के शरीर से छेड़छाड़ करके प्रेरित करती है। वह कई हाथियों के साथ अपना शरीर रगड़कर वापिस चल देती है। जिन-जिन हाथियों से छेड़छाड़ की थी, वे काम-वासना के प्रभाव के कारण हथिनी से मिलन (Sex) करने की इच्छा से पीछे-पीछे दौड़ लगाते हैं। हथिनी तेज दौड़कर उस गढ्ढ़े से बचकर बराबर से निकलकर गढ्ढ़े के मध्य में दूसरी ओर खड़ी हो जाती है। कामांध हाथी गढ्ढ़े को नहीं जाँचता। हवस पूर्ति के लिए सीधा चल पड़ता है और गढढ़े में गिरकर परवश हो जाता है। एक स्पर्श यानि काम-वासना विकार के कारण विवश होकर हाथी सदा के लिए पराधीन हो जाता है यानि शिकारी के जाल में फँस जाता है।

➢ रूप विषय :- रूप विषय नेत्र इन्द्री से प्रभाव करता है जिसका विशेष दबाव पतंग कीट में होता है जो दीपक, मोमबत्ती पर रूप विकार से प्रभावित होकर उसे प्राप्त करने के उद्देश्य से जल मरता है। उसके वश की बात नहीं। वह नेत्र इन्द्री के वश है।

➢ रस विषय :- रस विषय जीभ इन्द्री से प्रभाव करता है। श्रंग (मछली) में रस विषय का प्रभाव अत्यधिक होता है। मछली पकड़ने वाले मच्छिहारे द्वारा लोहे के काँटे में माँस के टुकड़े को तालाब में डाला जाता है। मछली जीभ इन्द्री के वश होकर रस विषय से प्रभावित होकर उसे खाने के लिए अँधी होकर काँटे को नहीं देख पाती और अपने जीवन से हाथ धो बैठती है यानि काँटे में फँसकर मच्छिहारे

के हाथों मर जाती है। वह रस विषय के कारण विवश है। मछली जीभ इन्द्री के वश है।

➢ गंध विषय :- गंध विकार नासिका इन्द्री द्वारा जीव को प्रभावित करता है। भंग (भंवरा) गंध विषय के कारण फुलवाड़ी में जाता है। फूल पर बैठकर सुगंध का आनंद लेने में मस्त हो जाता है। रात्रि के समय फूल बंद होने लगता है, परंतु भंवरा सुगंध लेने की धुन में फूल में बंद होकर मर जाता है। उस गंध से दूर नहीं होता। भंवरा प्राणी नासिका इन्द्री के वश है।

❖ सूक्ष्मवेद में परमेश्वर कबीर जी ने समझाया है कि जो साधक शास्त्रविधि के विपरीत अपनी इच्छा से मनमाना आचरण करके अपनी इन्द्रियों को विषयों (विकारों) से हटाने के लिए दमन करते हैं और इसी को अपनी अध्यात्म उपलब्धि तथा सफलता मानते हैं। यह उनको सम्पूर्ण अध्यात्म ज्ञान का अभाव के कारण भ्रम है क्योंकि :-

कुरंग मतंग पतंग श्रंग अरू भंगा। इन्द्री एक ठगा तिस अंगा।।
तुम्हरे संग पाँचों प्रकाशा। योग युक्त की झूठी आशा।।

शब्दार्थ :- परमेश्वर कबीर जी ने सूक्ष्मवेद में समझाया है कि मग, हस्थी, पतंग, मछली तथा भंवरे में तो एक-एक इन्द्री का प्रभाव है। जिस कारण वे धोखा खाते हैं। मर जाते हैं, बच नहीं पाते।

हे मानव (स्त्री-पुरूष)! आप में तो पाँचों विषयों का प्रबल प्रभाव है। इसलिए पाँचों इन्द्रियों को दमन करने का व्यर्थ प्रयत्न करते हो। समय आने पर आप इन इन्द्रियों के दोष से बच नहीं पाते हो। उस समय आपकी इन्द्रियों को साधने वाली मनमानी साधना व्यर्थ सिद्ध होती है। इसलिए शास्त्रविरूद्ध उपासना से योगयुक्त होने की आपकी झूठी आशा थी। ऊपर प्रमाण बताया है कि श्रंगी ऋषि ने अन्न-जल त्यागकर अपने आपको योगयुक्त मान लिया। गीता अध्याय 6 श्लोक 16 में यही बताया है कि यह योग यानि परमात्मा मिलन की साधना न तो बिल्कुल न खाने वाले की, न अधिक खाने वाले की, न बिल्कुल न सोने वाले की, न अधिक सोने (शयन करने) वाले की सफल होती है। श्रंगी ऋषि ने बिल्कुल न खाने तथा बिल्कुल न सोने वाली क्रिया हठयोग से की। गीता में बताई मर्यादा तोड़ने से असफल हुआ।

1. श्रंगी ऋषि अपनी जीभ इन्द्री यानि रस विकार के कारण शहद चाटने लगा।

2. नेत्र इन्द्री यानि रूप के कारण शांता पर आसक्त (मोहित) हो गया। अपना उद्देश्य ही भूल गया।

3. श्रवण इन्द्री यानि शब्द विषय से प्रभावित हुआ क्योंकि शांता महल के बाहर पार्क में मस्ती से घूमती थी और मधुर आवाज में गाने गाती थी। श्रंगी ऋषि सुन-सुनकर कुर्बान हो गया।

4. शांता सुगंधित तेल का प्रयोग करती थी। उससे भी ऋषि को आकर्षण हुआ।

5. लड़की अपने शरीर के अंगों को ऋषि से जान-बूझकर अनजान बनकर स्पर्श करती थी। जिस कारण से श्रंगी ऋषि लड़की को प्राप्त करने के लिए तड़फ गया।

अपना उद्देश्य भूलकर शांता से विवाह कर लिया।

विचार करने की बात है कि वह वर्षों की साधना जो इन्द्रिय विषयों (विकारों) को समाप्त करने वाली का क्या प्रयोजन था, वह व्यर्थ थी, परंतु उसे मोक्षदायक तथा पापनाशक जानकर कर रहा था जो श्रृंगी ऋषि के आध्यात्मिक ज्ञान के टोटे का परिणाम था।

कबीर परमेश्वर जी ने कहा है कि इन्द्रियाँ मन के आधीन हैं। जब तक मन पर अंकुश नहीं लगेगा, तब तक इन्द्रियाँ वश करना तो दूर की कौड़ी है। कोई भी साधना सफल नहीं हो सकती। मन पर अंकुश तत्वज्ञान (सूक्ष्मवेद) से लगता है। जिस ज्ञान का अभाव है। पूर्ण मोक्ष यानि जन्म-मरण तथा जरा (वृद्धावस्था) से छुटकारे में बाधा है।

❖ वह सूक्ष्मवेद (तत्वज्ञान) स्वयं परमेश्वर (सच्चिदानंद घन ब्रह्म) पृथ्वी पर प्रकट होकर अपने मुख कमल से बोलकर वाणी द्वारा बताता है। जिसका वर्णन गीता के इसी अध्याय 4 श्लोक 32 तथा 34 में है। यह आगे बताया जाएगा। अब गीता अध्याय 4 के अन्य 27 से 30 श्लोकों का वर्णन करता हूँ।

❖ गीता अध्याय 4 श्लोक 27 :- इस श्लोक में कहा है कि अन्य साधक भी दसों इन्द्रियों यानि पाँच कर्म इन्द्रियों (हाथ, मुख, पैर, गुदा, लिंग) तथा पाँच ज्ञान इन्द्रियों (कान, जीभ, आँख, नाक, त्वचा) तथा प्राणों यानि श्वासों को साधने वाली क्रियाऐं करके उसी से संतुष्ट होते हैं तथा श्वासों पर आते-जाते ध्यान करके अपनी साधना सफल मानते हैं।

❖ गीता अध्याय 4 श्लोक 28 :- इस श्लोक में कहा है कि कई साधक द्रव्य यानि धन से होने वाली यज्ञ यानि धार्मिक अनुष्ठान करने मात्र से संतुष्ट है कि हमने पाप नाश कर लिए यानि इसी से मोक्ष हुआ मानते हैं। द्रव्य यज्ञ वह है जिसके तहत धार्मिक भोजन-भण्डारा यानि लंगर करना, गरीबों या संतों-भक्तों को कंबल, कपड़े बाँटना, प्याऊ लगवाना, धर्मशाला, कूऐं आदि बनवाना द्रव्य यज्ञ कही जाती है। (इसी के विषय में गीता अध्याय 4 श्लोक 33 में कहा है कि द्रव्य यज्ञ से ज्ञान यज्ञ श्रेष्ठ है।) गीता अध्याय 4 श्लोक 28 में फिर कहा है कि :-

➢ कुछ साधक घोर तप करके अपनी साधना सफल मानते हैं।

➢ कुछ योग आसन करके उन्हीं से चलती कार रोककर, छाती पर पत्थर रखकर फुड़वाते हैं। वजनदार रेहड़ी को खींचकर दिखाते हैं। हाथों पर चलकर दिखाते हैं। वे इसी को मोक्षदायक यानि पापनाशक जानते (मानते) हैं यानि अपने जीवन का अंतिम उद्देश्य मानते हैं।

➢ बहुत सारे मुख पर कपड़े की पट्टी बाँधकर, नंगे पैरों रहकर हिंसा से व्रत यानि परहेज करते हैं अर्थात् हिंसा से बचते हैं। मनमाने मंत्रों का जाप करते हैं। इसी को पूर्ण साधना मानते हैं।

कुछ इसके साथ-साथ स्वाध्याय करते हैं यानि नित्य किसी ग्रन्थ का पठन-पाठन करते हैं। इस प्रकार की यज्ञों यानि धार्मिक अनुष्ठानों को करके पाप से मुक्ति मानते हैं।

❖ गीता अध्याय 4 श्लोक 29-30 :- इन दोनों श्लोकों में कहा है कि अन्य साधक प्राणायाम क्रियाऐं करते हैं। पान वायु वह है जो श्वांस द्वारा अंदर शरीर में लेते हैं। अपान वायु वह है जो श्वांस द्वारा बाहर छोड़ते हैं तथा जो गुदा द्वार से गैस रूप में निकलती है, उसे भी अपान वायु कहते हैं। कुछ साधक अपान वायु को प्राण वायु में हवन करते हैं यानि रेचक-कुम्भक क्रिया से अभ्यास करते हैं। कुछ नियमित भोजन करते हैं और प्राणायाम का अभ्यास भी करते हैं। प्राणायाम करने वाले श्वांस लेने वाली वायु तथा अपान (अधोगति वाली वायु) को रोककर साधना करते हैं। इसी योगिक क्रिया को मोक्षदायक मानते हैं।

➢ उपरोक्त श्लोक 25 से 30 तक में कहे साधक अपनी-अपनी यज्ञों द्वारा यानि आध्यात्मिक क्रियाओं द्वारा पापनाश होना जानते हैं। पाप रहित साधक ही मोक्ष प्राप्त करता है। भावार्थ है कि उपरोक्त सब साधक अपनी-अपनी धार्मिक क्रियाओं द्वारा मोक्ष मानते हैं।

❖ गीता अध्याय 4 श्लोक 31 में कहा है कि हे कुरूश्रेष्ठ अर्जुन! उपरोक्त श्लोकों के वर्णन में जो यथार्थ ज्ञान नहीं है, उस बचे यज्ञों यानि साधना की क्रियाओं का ज्ञान जो गीता में नहीं है, वह तत्वज्ञान में है जिसका वर्णन शेष है। उस बचे हुए यज्ञों यानि धार्मिक साधनाओं के ज्ञान अर्थात् सूक्ष्मवेद के अनुसार अनुष्ठान करने से बचे प्रसाद को खाने वाले तत्वज्ञान से परिचित होकर सत्य साधना करके सनातन ब्रह्म को प्राप्त होते हैं। जो भक्ति नहीं करते, वे इसी लोक में दुःखी रहते हैं तो वे अन्य ऊपर के लोकों में कैसे सुखी होंगे? उस सनातन परमात्मा को तत्वज्ञान से प्राप्त किया जाता है।

तत्वज्ञान (सूक्ष्मवेद) कैसे प्राप्त हुआ? उसका संकेत गीता अध्याय 4 श्लोक 32 में इस प्रकार है :-

गीता अध्याय 4 श्लोक 32 :- इस श्लोक में सूक्ष्मवेद की उत्पत्ति का संकेत दिया है। कहा है कि सूक्ष्मवेद में इस प्रकार की (उपरोक्त क्रियाऐं) तथा अन्य यज्ञों यानि धार्मिक साधनाओं का वर्णन विस्तार के साथ किया है। उपरोक्त साधनाओं से लाभ क्या है? हानि क्या है? यह भी सूक्ष्मवेद में बताया है तथा यथार्थ भक्ति साधना जो पूर्ण मोक्षदायक है, उनका वर्णन भी (ब्रह्मणः मुखे) सच्चिदानंद घन ब्रह्म ने अपने मुख कमल से बोली वाणी में विस्तार के साथ बताया है। वह तत्वज्ञान (सूक्ष्मवेद) है जिसमें यथार्थ मोक्षदायक साधना है। वह कर्म (कार्य) करते-करते करने की है यानि हठयोग की आवश्यकता नहीं है। इस प्रकार साधक सूक्ष्मवेद को जानकर सत्य साधना करके मोक्ष प्राप्त करता है।

❑ प्रसंग चल रहा है कि सूक्ष्मवेद तथा चारों वेदों का ज्ञान कैसे प्राप्त हुआ?

➢ गीता अध्याय 4 श्लोक 32 में संकेत किया है कि परम अक्षर ब्रह्म अपने मुख से बोली वाणी में समस्त आध्यात्मिक क्रियाओं (यज्ञों) का वर्णन करता है। वह तत्वज्ञान (सूक्ष्मवेद) है। इसको जानने के लिए गीता अध्याय 4 श्लोक 34 में किसी तत्वदर्शी संत से जानने के लिए कहा है। इससे सिद्ध है कि वह ज्ञान गीता में नहीं है।

गीता चारों वेदों का संक्षिप्त रूप है। अठारह हजार वेद मंत्रों को सात सौ मंत्रों में समाने के लिए सांकेतिक शब्दों का प्रयोग किया गया है। गीता अध्याय 4 श्लोक 32 में केवल इतना संकेत किया है कि ''ब्रह्मणः मुखे वितता'' यानि सच्चिदानंद घन ब्रह्म अपने मुख से वाणी बोलकर उस वाणी में (यज्ञों) धार्मिक क्रियाओं का विस्तारपूर्वक वर्णन करता है।

❑ इसी का विस्तृत वर्णन ऋग्वेद के निम्न मंत्रों में किया है :-

(इन ऋग्वेद के मंत्रों में आप जी अपनी आँखों पढ़ेंगे गूढ़ रहस्य)

इन वेदमंत्रों का अनुवाद भी उन व्यक्तियों द्वारा किया गया है जो वर्तमान में अपने से अधिक वेदों का ज्ञाता किसी को नहीं मानते। महर्षि दयानंद जी से बढ़कर अध्यात्म ज्ञान व वेदों के ज्ञान में विद्वान किसी को नहीं मानते। महर्षि दयानंद जी ने अपने द्वारा लिखी पुस्तक ''सत्यार्थ प्रकाश'' में स्पष्ट लिखा है कि जो वेदों में लिखा, वह सब सत्य है। हम वेद के विरूद्ध किसी की बात को नहीं मानेंगे चाहे मेरी (महर्षि दयानंद की) ही भी क्यों न हो यानि वेद के विपरीत यदि मेरे (महर्षि दयानंद के) भी विचार क्यों न हों, उन्हें झूठे मानना। महर्षि दयानंद जी ने सत्यार्थ प्रकाश में लिखा है कि परमात्मा निराकार है। इसलिए किसी लोक में ऊपर-नीचे एक स्थान पर नहीं बैठा है या कहीं आता-जाता भी नहीं है। सर्व व्यापक होने से वह कण-कण में विद्यमान है।

❖ आओ जानते हैं कि वेद क्या बताते हैं? ऋग्वेद के मंत्रों की निम्न फोटोकॉपियों में जिनका अनुवाद भी महर्षि दयानंद के चेलों यानि आर्य समाजी शास्त्रियों ने किया है। आप जी देखेंगे कि वेद में लिखा है :-

➢ परमेश्वर सर्वोपरि यानि सबसे ऊपर के लोक में (तिष्ठति) बैठा है अर्थात् वहाँ विराजमान है।(वहाँ विद्यमान है।)

प्रमाण :- ऋग्वेद मण्डल नं. 9 सूक्त 54 मंत्र 3 में :- (सूर्यः न) सूर्य के समान यानि जैसे सूर्य ऊपर विद्यमान है ऐसे (पुनानः) पवित्र (सोम देवः) शीतल अमर परमेश्वर (विश्वानि) विश्व के सर्व (भूवनोपर तिष्ठति) लोकों के ऊपर के लोक में बैठा है।

➢ ऋग्वेद मण्डल नं. 9 सूक्त 96 मंत्र 18 में कहा है कि जो पूर्ण परमात्मा है, वह ऊपर तीसरे मुक्ति धाम में विराजमान है। (सोमः तृतीयम् धामं विराजम्)

➢ ऋग्वेद मण्डल नं. 9 सूक्त 96 मंत्र 19 :- इस मंत्र में कहा है कि वह परमात्मा उस (तुरीयम् धाम) चौथे धाम का भी (विवक्ति) विस्तार से भिन्न वर्णन करता है जिसमें बैठे परमात्मा ने नीचे के सर्व लोकों की रचना की थी। वह लोक समुद्र के समान है जैसे समुद्र सर्व जल स्रोतों का मूल स्रोत है।

➢ ऋग्वेद मण्डल नं. 9 सूक्त 96 मंत्र 20 :- इस मंत्र में स्पष्ट किया है कि वह परमात्मा इस तरह पृथ्वी पर प्रकट होता है जैसे मनुष्य (शुभ्रः तन्वम् मृजानः) शुभ्र यानि सर्वश्रेष्ठ शरीर को धारण करता है और नीचे ऐसे रहता है जैसे किसी संघ का मुखिया यानि सेना का सेनापति रहता है अर्थात् परमात्मा सतगुरू रूप में प्रकट होता है। उसके अनुयाईयों का मुखिया रूप में रहता है। ऊपर के लोक से तीव्र

गति से चलकर पथ्वी पर आता है।

➢ ऋग्वेद मण्डल नं. 9 सूक्त 20 मंत्र 1 :- इसमें कहा है कि वह परमात्मा कविर्देव है जो सबका रक्षक है। जिज्ञासुओं को यथार्थ ज्ञान देता है। उनकी ज्ञान से तप्ति करता है।

➢ ऋग्वेद मण्डल नं. 9 सूक्त 94 मंत्र 1 :- इस मंत्र में कहा है कि वह परमात्मा (कवियन् न व्रजम्) कवियों की तरह आचरण करता हुआ इधर-उधर जाता है यानि घूम-फिरकर कविताओं, लोकोक्तियों द्वारा तत्वज्ञान बताता फिरता है।

➢ ऋग्वेद मण्डल नं. 9 सूक्त 95 मंत्र 2 :- इस मंत्र में कहा है कि (हरि) पूर्वोक्त परमात्मा (सजानः) साक्षात पथ्वी पर प्रकट होकर वाक् यानि वाणी द्वारा बोलकर (ऋतस्य) सत्य (पथ्याम्) भक्ति मार्ग की प्रेरणा करता है अर्थात् झूठी शास्त्र विरूद्ध साधना से हटने तथा शास्त्रोक्त साधना करने की प्रेरणा करता है यानि सत्य भक्ति मार्ग बताता है। (देवानाम् देवः) सर्व देव का प्रभु यानि परमेश्वर स्वयं ही (गुह्यानि) गुप्त (नाम अविष्कणोति) भक्ति नाम मंत्रों की खोज करता है। (प्रवाचे) उसे प्रवचन करके यानि बोल-बोलकर बताता है।

➢ गीता अध्याय 8 श्लोक 13 में गीता ज्ञान दाता ने अपनी भक्ति करने का मंत्र तो स्पष्ट बता दिया कि ओं (ॐ) नाम है। लेकिन गीता अध्याय 17 श्लोक 23 में (ब्रह्मणः) सच्चिदानंद घन ब्रह्म यानि परम अक्षर ब्रह्म की प्राप्ति की साधना का सम्पूर्ण मंत्र सांकेतिक ॐ तत् सत् यह तीन मंत्र का लिखा है। ओं (ॐ) मंत्र तो वेदों (यजुर्वेद अध्याय 40 मंत्र 15) में तथा गीता में ब्रह्म यानि क्षर पुरूष की साधना का प्रत्यक्ष है। इन शास्त्रों में पूर्ण ब्रह्म (परम अक्षर ब्रह्म) की प्राप्ति का मंत्र नहीं है। केवल तत्, सत् सांकेतिक मंत्र लिखे हैं। इन मंत्रों का आविष्कार परम अक्षर ब्रह्म स्वयं करता है। उसी की जानकारी ऋग्वेद मण्डल नं. 9 सूक्त 95 मंत्र 2 में बताई है कि जैसे गीता अध्याय 15 श्लोक 16-17 में तीन पुरूष कहे हैं :-

1. क्षर पुरूष (काल ब्रह्म) :- यह गीता ज्ञान देने वाला है। इसकी साधना का (मंत्र) नाम ॐ (ओं) है।

2. अक्षर पुरूष :- इसकी साधना का नाम गीता में ''तत्'' बताया है जो सांकेतिक है। वास्तविक नाम सूक्ष्मवेद में लिखा है जो यह दास दीक्षा के समय नाम दीक्षा लेने वाले को बताता है। यह सार्वजनिक नहीं किया जाता। परंतु सूक्ष्मवेद में सार्वजनिक है।

3. परम अक्षर पुरूष (परम अक्षर ब्रह्म) :- इसकी साधना का नाम (मंत्र) सत् सांकेतिक है। इसका असली नाम (मंत्र) सूक्ष्मवेद में है। इसी परमेश्वर की अपने मुख कमल से उच्चारित वाणी कविर्वाणी (कबीर बाणी) में लिखा है जिसका वर्णन गीता अध्याय 4 श्लोक 32 में किया है।

❖ प्रसंग वेदों का चल रहा है। ऋग्वेद मण्डल नं. 9 सूक्त 95 मंत्र 2 का वर्णन चल रहा है। उसमें कहा है कि परमेश्वर ऐसा गुप्त नाम बताता है, उसकी साधना करने से साधक भवसागर से ऐसे तिर जाता है (अरितेव नावम्) जैसे नाव में बैठा व्यक्ति दरिया से सकुशल तिर जाता है।

❖ ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 86 मंत्र 26-27 :- इन मंत्रों में स्पष्ट किया है कि परमेश्वर अमर लोक में तीसरे पृष्ठ (स्थान) पर विराजमान है यानि वहाँ मौजूद है।(मंत्र 27)

यज्ञ यानि धार्मिक क्रिया करने वाले यजमान यानि पूजा करने वाले के लिए आकाशीय विद्युत जैसी गति करके उस स्थान से चलकर आता है। सतलोक में परमेश्वर (सतपुरूष) के एक रोम (शरीर) के बाल का प्रकाश करोड़ सूर्यों तथा करोड़ चाँदों के प्रकाश से भी अधिक है। यदि परमेश्वर उसी प्रकाशयुक्त पृथ्वी पर प्रकट हो जाए तो हमारी चर्मदृष्टि उस प्रकाश को सहन नहीं कर सकती। हम देख नहीं सकते। इसलिए परमेश्वर अपने शरीर का प्रकाश सरल करके पृथ्वी पर आता है। वरणीय पुरूषों यानि श्रेष्ठ भक्तों को मिलता है। उनके संकटों का निवारण करता है। वह परमात्मा कविर्देव है।(मंत्र 26)

❖ ऋग्वेद मण्डल नं. 9 सूक्त 82 मंत्र 1-2 :- इन वेद मंत्रों में वर्णन है कि जो सर्व उत्पादक यानि जिस परमेश्वर ने सर्व ब्रह्माण्डों व प्राणियों की रचना की है, वह पापों को हरण करता है यानि पापनाशक है। वह ऊपर अपने लोक में राजा के समान सिंहासन पर विराजमान है। सिर पर मुकुट धारण किए ऊपर छत्र लगा है, देखने में राजा के समान दिखाई देता है। वह वहाँ से चलकर पृथ्वी पर आता है। वरणीय पुरूष यानि श्रेष्ठ व्यक्ति, जो दृढ़ भक्त है, उसको प्राप्त होता है। उनको साक्षात मिलता है। उसको यथार्थ भक्ति के ज्ञान वाला सूक्ष्मवेद (तत्वज्ञान) बताता है।

वह परमात्मा अपनी अच्छी आत्माओं को ऐसे मिलता है जैसे आकाशीय बिजली उन्हीं पदार्थों पर गिरती है जिसमें उसका आकर्षण होता है। जैसे कांसी धातु के बर्तनों पर अमूमन बिजली गिरती है तथा अन्य ऐसे ही स्थानों पर गिरती है जो उसको आकर्षित करते हैं। इसी प्रकार परमात्मा अच्छी आत्माओं को मिलते हैं। जैसे :- 1. श्री धर्मदास जी सेठ बांधवगढ़, मध्यप्रदेश वाले को मिले। 2. श्री नानक देव जी, सिक्ख धर्म के प्रवर्तक को मिले। 3. संत गरीबदास जी (गाँव-छुड़ानी जिला-झज्जर, हरियाणा वाले) को मिले। 4. श्री दादू दास (अजमेर वाले) को मिले। 5. श्री घीसा दास (गाँव-खेखड़ा, जिला-बाघपुर, उत्तरप्रदेश वाले) को मिले। 6. श्री मलूक दास अरोड़ा को मिले।

इन सर्व संतों ने वही ज्ञान तथा भक्ति की विधि बताई जो सूक्ष्मवेद में परमात्मा ने स्वयं आकर बताई है। इससे यह भी सिद्ध होता है कि चारों वेदों व गीता जी का ज्ञान तथा इन संतों का ज्ञान सूक्ष्मवेद से मिलता है। परंतु पुराणों तथा उपनिषदों का ज्ञान कुछ वेदों से मिलता है। अधिक काल ब्रह्म की प्रेरणा से मिथ्या ज्ञान लिखा है। जैसे काल ब्रह्म ने शिव पुराण (खेमचन्द श्री कृष्ण दास प्रकाशन-मुंबई से प्रकाशित) भाग-1 के विद्यवेश्वर संहिता अध्याय 5 तथा 9 में अपने पुत्रों ब्रह्मा तथा विष्णु को अपने लिंग (गुप्तांग) के आकार का पत्थर का लिंग प्रकट करके उसको स्त्री की लिंगी (गुप्तांग) के आकार की पत्थर की योनि प्रकट करके उसमें प्रवेश करके छोड़ दिया और कहा कि इन दोनों को अभेद रखकर यानि इसी

स्थिति में रखकर पूजा करना, तुम्हारा कल्याण हो जाएगा। इस तरह की साधना शास्त्रविरूद्ध होने से हानिकारक है। बेशर्मी भी है। यदि यह पूजा शास्त्र सम्मत होती तो भी कर लेते, परंतु यह पूर्ण रूप से व्यर्थ है। (ऋग्वेद मण्डल नं. 9 सूक्त 82 मंत्र 1)

➢ ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 82 मंत्र 2 :- इस मंत्र में भी यही प्रमाण है कि परमात्मा यथार्थ ज्ञान का उपदेश करने के लिए महापुरूषों को मिलते हैं और अत्यंत गतिशील पदार्थ के समान यानि जैसे आकाशीय बिजली पूरी गति (Full Speed) से पृथ्वी पर आती है, परमात्मा इसी तरह पृथ्वी पर आते हैं। वह परमात्मा कविर्देव हैं।

➢ ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मंत्र 16-20 :- इन मंत्रों में बताया है कि :-

मंत्र 16 में प्रश्न किया है कि परमात्मा का गुप्त नाम क्या है? मंत्र 17 में कहा कि परमात्मा प्रत्येक युग में एक बार शिशु यानि बच्चे के रूप में प्रकट होता है। उस समय लीला करते हुए बड़े होते हैं। तब (काव्येना) काव्यों द्वारा यानि दोहों, चौपाईयों, शब्दों, कविताओं, लोकोक्तियों के रूप में (कविर्गिर्भि) कविर्वाणी (हम इसे अपनी भाषा में कबीर बाणी कहते हैं) में यथार्थ आध्यात्मिक ज्ञान यानि सूक्ष्मवेद (तत्वज्ञान) ऊँचे स्वर में बोलता है। उसे लिखा जाता है। वह सम्पूर्ण अध्यात्म ज्ञान है। उस परमात्मा का नाम कविर्देव यानि कबीर परमेश्वर है। मंत्र नं. 18, 19, 20 का सरलार्थ पूर्व में कर दिया है।

➢ ऋग्वेद मण्डल नं. 9 सूक्त 1 मंत्र 9 :- इस मंत्र में कहा कि परमेश्वर जब शिशु रूप में पृथ्वी पर प्रकट होता है, उस समय उनकी परवरिश यानि बालक रूप में पोषण कंवारी गायों द्वारा होता है। बच्छिया (1½ वर्ष की आयु की गाय की बच्ची) परमेश्वर जी के आशीर्वाद से बैल से गर्भ धारण किए बिना ही दूध देती है। उस दूध को बालक रूप लीलाधारी परमेश्वर पीता है।

❖ आप जी को विस्तार से बताया है कि सूक्ष्मवेद कैसे प्राप्त हुआ। आप जी देखें अपनी आँखों से वेद के उपरोक्त मंत्रों को फोटोकापियाँ :-

(देखें फोटोकापी वेदमन्त्रों की)

(प्रमाण ऋग्वेद मण्डल नं. 9 सुक्त 86 मन्त्र 26-27)

इन्दुः पुनानो अति गाहते मृधो विश्वानि कृण्वन्त्सुपथानि यज्यवे ।
गाः कृण्वानो निर्णिजं हर्यतः कविरत्यो न क्रीळन्परि वारमर्षति ॥२६॥

पदार्थः—(**यज्यवे**) यज्ञ करने वाले यजमानों के लिये परमात्मा (**विश्वानि सुपथानि**) सब रास्तों को (**कृण्वन्**) सुगम करता हुआ (**मृधः**) उनके विघ्नों को (**अतिगाहते**) मर्द्दन करता है। और (**पुनानः**) उनको पवित्र करता हुआ और (**निर्निजं**) अपने रूप को (**गाः कृण्वानः**) सरल करता हुआ (**हर्य्यतः**) वह कान्तिमय परमात्मा (**कविः**) सर्वज्ञ (**अत्यो न**) विद्युत् के समान (**क्रीळन्**) क्रीड़ा करता हुआ (**वारं**)वरणीय पुरुष को (**पर्य्यर्षति**) प्राप्त होता है ॥२६॥

विवेचन :- यह फोटोकापी ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 86 मन्त्र 26 की है जो आर्यसमाज के आचार्यों व महर्षि दयानन्द के चेलों द्वारा अनुवादित है जिसमें स्पष्ट है कि यज्ञ करने वाले अर्थात् धार्मिक अनुष्ठान करने वाले यजमानों अर्थात् भक्तों के लिए परमात्मा, सब रास्तों को सुगम करता हुआ अर्थात् जीवन रूपी सफर के मार्ग को दुःखों रहित करके सुगम बनाता हुआ। उनके विघ्नों अर्थात् संकटों का मर्दन करता है अर्थात् समाप्त करता है। भक्तों को पवित्र अर्थात् पाप रहित, विकार रहित करता है। जैसा की अगले मन्त्र 27 में कहा है कि ''जो परमात्मा द्यूलोक अर्थात् सत्यलोक के तीसरे पष्ठ पर विराजमान है, वहाँ पर परमात्मा के शरीर का प्रकाश बहुत अधिक है।'' उदाहरण के लिए परमात्मा के एक रोम (शरीर के बाल) का प्रकाश करोड़ सूर्य तथा इतने ही चन्द्रमाओं के मिले-जुले प्रकाश से भी अधिक है। यदि वह परमात्मा उसी प्रकाश युक्त शरीर से पथ्वी पर प्रकट हो जाए तो हमारी चर्म दष्टि उन्हें देख नहीं सकती। जैसे उल्लु पक्षी दिन में सूर्य के प्रकाश के कारण कुछ भी नहीं देख पाता है। यही दशा मनुष्यों की हो जाए। इसलिए वह परमात्मा अपने रूप अर्थात् शरीर के प्रकाश को सरल करता हुआ उस स्थान से जहाँ परमात्मा ऊपर रहता है, वहाँ से गति करके बिजली के समान क्रीड़ा अर्थात् लीला करता हुआ चलकर आता है, श्रेष्ठ पुरूषों को मिलता है। यह भी स्पष्ट है कि आप कविः अर्थात् कविर्देव हैं। हम उन्हें कबीर साहेब कहते हैं।

असश्चतः शतधारा अभिश्रियो हरिं नवन्तेऽव ता उदन्युवः।
क्षिपो मृजन्ति परि गोभिरावृतं तृतीये पृष्ठे अधि रोचने दिवः ॥२७॥

पदार्थः—(उदन्युवः) प्रेम की (ताः) वे (शतधाराः) सैंकड़ों धाराए (असश्चतः) जो नानारूपों में (अभिश्रियः) स्थिति को लाभ कर रही हैं। वे (हरिं) परमात्मा को (अवनवन्ते) प्राप्त होती हैं। (गोभिरावृतं) प्रकाशपुञ्ज परमात्मा को (क्षिपः) बुद्धिवृत्तियां (मृजन्ति) विषय करती हैं। जो परमात्मा (दिवस्तृतीये पृष्ठे) द्युलोक के तीसरे पृष्ठ पर विराजमान है और (रोचने) प्रकाशस्वरूप है उसको बुद्धिवृत्तियाँ प्रकाशित करती हैं ॥२७॥

विवेचन :- यह फोटोकापी ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 86 के मन्त्र 27 की है। इसमें स्पष्ट है कि ''परमात्मा द्यूलोक अर्थात् अमर लोक के तीसरे पष्ठ अर्थात् भाग पर विराजमान है। सत्यलोक अर्थात् शाश्वत् स्थान के तीन भाग हैं। एक भाग में वन-पहाड़-झरने, बाग-बगीचे आदि हैं। यह बाह्य भाग है अर्थात् बाहरी भाग है। (जैसे भारत की राजधानी दिल्ली भी तीन भागों में बँटी है। बाहरी दिल्ली जिसमें गाँव खेत-खलिहान और नहरें हैं, दूसरा बाजार बना है। तीसरा संसद भवन तथा कार्यालय हैं।)

इसके पश्चात् द्यूलोक में बस्तियाँ हैं। सपरिवार मोक्ष प्राप्त हंसात्माऐं रहती हैं। (पथ्वी पर जैसे भक्त को भक्तात्मा कहते हैं, इसी प्रकार सत्यलोक में हंसात्मा कहलाते हैं।) (3) तीसरे भाग में सर्वोपरि परमात्मा का सिंहासन है। उसके आस-पास केवल नर आत्माऐं रहती हैं, वहाँ स्त्री-पुरुष का जोड़ा नहीं है। वे यदि

अपना परिवार चाहते हैं तो शब्द (वचन) से केवल पुत्र उत्पन्न कर लेते हैं। इस प्रकार शाश्वत् स्थान अर्थात् सत्यलोक तीन भागों में परमात्मा ने बाँट रखा है। वहाँ यानि सत्यलोक में प्रत्येक स्थान पर रहने वालों में वृद्धावस्था नहीं है, वहाँ मृत्यु नहीं है। इसीलिए गीता अध्याय 7 श्लोक 29 में कहा है कि जो जरा अर्थात् वृद्ध अवस्था तथा मरण अर्थात् मृत्यु से छूटने का प्रयत्न करते हैं, वे तत् ब्रह्म अर्थात् परम अक्षर ब्रह्म को जानते हैं। सत्यलोक में सत्यपुरूष रहता है, वहाँ पर जरा-मरण नहीं है, बच्चे युवा होकर सदा युवा रहते हैं।

(प्रमाण ऋग्वेद मण्डल नं. 9 सुक्त 82 मन्त्र 1-2)

असावि सोमो अरुषो वृषा हरी राजेव दस्मो अभि गा अचिक्रदत् ।
पुनानो वारं पर्येत्यव्ययं श्येनो न योनिं घृतवन्तमासदम् ॥१॥

पदार्थः—(**सोमः**) जो सर्वोत्पादक प्रभु (**अरुषः**) प्रकाशस्वरूप (**वृषा**) सद्गुणों की वृष्टि करने वाला (**हरिः**) पापों के हरण करने वाला है, वह (**राजेव**) राजा के समान (**दस्मः**) दर्शनीय है। और वह (**गाः**) पृथिव्यादि लोक-लोकान्तरों के चारों ओर (**अभि अचिक्रदत्**) शब्दायमान हो रहा है। वह (**वारं**) वरणीय पुरुष को जो (**अव्ययं**) दृढ़भक्त है उसको (**पुनानः**) पवित्र करता हुआ (**पर्येति**) प्राप्त होता है। (**न**) जिस प्रकार (**श्येनः**) विद्युत् (**घृतवन्तं**) स्नेहवाले (**आसदं**) स्थानों को (**योनिं**) आधार बनाकर प्राप्त होता है। इसी प्रकार उक्त गुण वाले परमात्मा ने (**असावि**) इस ब्रह्माण्ड को उत्पन्न किया ॥१॥

कविर्वेधस्या पर्येषि माहिनमत्यो न मृष्टो अभि वाजमर्षसि ।
अपसेधन्दुरिता सोम मृळय घृतं वसानः परि यासि निर्णिजम् ॥२॥

पदार्थः—हे परमात्मन्! (**वेधस्या**) उपदेश करने की इच्छा से आप (**माहिनं**) महापुरुषों को (**पर्येषि**) प्राप्त होते हो। और आप (**अत्यः**) अत्यन्त गतिशील पदार्थ के (**न**) समान (**अभिवाजं**) हमारे आध्यात्मिक यज्ञ को (**अभ्यर्षसि**) प्राप्त होते हैं। आप (**कविः**) सर्वज्ञ हैं (**मृष्टः**) शुद्ध स्वरूप हैं (**दुरिता**) हमारे पापों को (**अपसेधन्**) दूर करके (**सोम**) हे सोम! (**मृळय**) आप हमको सुख दें। और (**घृतं वसानः**) प्रेम-भाव को उत्पन्न करते हुए (**निर्निजं**) पवित्रता को (**परियासि**) उत्पन्न करें ॥२॥

विवेचन :- ऊपर ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 82 मन्त्र 1-2 की फोटोकापी हैं, यह अनुवाद महर्षि दयानन्द जी के दिशा-निर्देश से उन्हीं के चेलों ने किया है और सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा दिल्ली से प्रकाशित है।

इनमें स्पष्ट है कि :- मन्त्र 1 में कहा है ''सर्व की उत्पत्ति करने वाला परमात्मा तेजोमय शरीर युक्त है, पापों को नाश करने वाला और सुखों की वर्षा करने वाला अर्थात् सुखों की झड़ी लगाने वाला है, वह ऊपर सत्यलोक में सिंहासन पर बैठा

है जो देखने में राजा के समान है। यही प्रमाण सूक्ष्मवेद में है कि :-

अर्श कुर्श पर सफेद गुमट है, जहाँ परमेश्वर का डेरा।
श्वेत छत्र सिर मुकुट विराजे, देखत न उस चेहरे नूं।।

यही प्रमाण बाईबल ग्रन्थ तथा कुर्आन् शरीफ में है कि परमात्मा ने छः दिन में सष्टि रची और सातवें दिन ऊपर आकाश में तख्त अर्थात् सिंहासन पर जा विराजा। (बाईबल के उत्पत्ति ग्रन्थ 2/26-30 तथा कुर्आन् शरीफ की सुर्त ''फुर्कानि 25 आयत 52 से 59 में है।)

वह परमात्मा अपने अमर धाम से चलकर पथ्वी पर शब्द वाणी से ज्ञान सुनाता है। वह वर्णीय अर्थात् आदरणीय श्रेष्ठ व्यक्तियों को प्राप्त होता है, उनको मिलता है। {जैसे 1. सन्त धर्मदास जी बांधवगढ(मध्य प्रदेश वाले को मिले) 2. सन्त मलूक दास जी को मिले, 3. सन्त दादू दास जी को आमेर (राजस्थान) में मिले 4. सन्त नानक देव जी को मिले 5. सन्त गरीब दास जी गाँव छुड़ानी जिला झज्जर हरियाणा वाले को मिले 6. सन्त घीसा दास जी गाँव खेखड़ा जिला बागपत (उत्तर प्रदेश) वाले को मिले।}

वह परमात्मा अच्छी आत्माओं को मिलते हैं। जो परमात्मा के दढ़ भक्त होते हैं, उन पर परमात्मा का विशेष आकर्षण होता है। उदाहरण भी बताया है कि जैसे विद्युत अर्थात् आकाशीय बिजली स्नेह वाले स्थानों को आधार बनाकर गिरती है। जैसे कांसी धातु पर बिजली गिरती है, पहले कांसी धातु के कटोरे, गिलास-थाली, बेले आदि-आदि होते थे। वर्षा के समय तुरन्त उठाकर घर के अन्दर रखा करते थे। वद्ध कहते थे कि कांसी के बर्तन पर बिजली अमूमन गिरती है, इसी प्रकार परमात्मा अपने प्रिय भक्तों पर आकर्षित होकर मिलते हैं।

मन्त्र नं. 2 में तो यह भी स्पष्ट किया है कि परमात्मा उन अच्छी आत्माओं को उपदेश करने की इच्छा से स्वयं महापुरूषों को मिलते हैं। उपदेश का भावार्थ है कि परमात्मा तत्वज्ञान बताकर उनको दीक्षा भी देते हैं। उनके सतगुरू भी स्वयं परमात्मा होते हैं। यह भी स्पष्ट किया है कि परमात्मा अत्यन्त गतिशील पदार्थ अर्थात् बिजली के समान तीव्रगामी होकर हमारे धार्मिक अनुष्ठानों में आप पहुँचते हैं। आप जी ने पीछे पढ़ा कि सन्त धर्मदास को परमात्मा ने यही कहा था कि मैं वहाँ पर अवश्य जाता हूँ जहाँ धार्मिक अनुष्ठान होते हैं क्योंकि मेरी अनुपस्थिति में काल कुछ भी उपद्रव कर देता है। जिससे साधकों की आस्था परमात्मा से छूट जाती है। मेरे रहते वह ऐसी गड़बड़ नहीं कर सकता। इसीलिए गीता अध्याय 3 श्लोक 15 में कहा है कि वह अविनाशी परमात्मा जिसने ब्रह्म को भी उत्पन्न किया, सदा ही यज्ञों में प्रतिष्ठित है अर्थात् धार्मिक अनुष्ठानों में उसी को इष्ट रूप में मानकर आरती स्तुति करनी चाहिए।

इस ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 82 मन्त्र 2 में यह भी स्पष्ट किया है कि आप (कविर्वेधस्य) कविर्देव है जो सर्व को उपदेश देने की इच्छा से आते हो, आप पवित्र परमात्मा हैं। हमारे पापों को छुड़वाकर अर्थात् नाश करके हे अमर परमात्मा! आप

हम को सुःख दें और (द्युतम् वसानः निर्निजम् परियसि) हम आप की सन्तान हैं। हमारे प्रति वह वात्सल्य वाला प्रेम भाव उत्पन्न करते हुए उसी (निर्निजम्) सुन्दर रूप को (परियासि) उत्पन्न करें अर्थात् हमारे को अपने बच्चे जानकर जैसे पहले और जब चाहें तब आप अपनी प्यारी आत्माओं को प्रकट होकर मिलते हैं, उसी तरह हमें भी दर्शन दें।

(प्रमाण ऋग्वेद मण्डल नं. 9 सुक्त 96 मन्त्र 16 से 20)

स्वायुधः सोतृभिः पूयमानोऽभ्यर्ष गुह्यं चारु नाम ।
अभि वाजं सप्तिरिव श्रवस्याभि वायुमभि गा देव सोम ॥१६॥

पदार्थः—हे परमात्मन् ! (**गुह्यम्**) सर्वोपरि रहस्य (**चारु**) श्रेष्ठ (**नाम**) जो तुम्हारी संज्ञा है । (**अभ्यर्ष**) उसका ज्ञान करायें । आप (**सोतृभिः, पूयमानः**) उपासक लोगों से स्तूयमान हैं । (**स्वायुधः**) स्वाभाविक शक्ति से युक्त हैं और (**सप्तिरिव**) विद्युत् के समान (**श्रवस्याभि**) ऐश्वर्य के सम्मुख प्राप्त कराइये और (**वायुमभि**) हमको प्राणों की विद्या का वेत्ता बनाइये । (**देव**) हे सर्वशक्ति-सम्पन्न परमेश्वर ! हमको (**गाः**) इन्द्रियों के (**अभिगमय**) नियमन का ज्ञाता बनाइये ॥१६॥

शिशुं जज्ञानं हर्यतं मृजन्ति शुम्भन्ति वह्निं मरुतो गणेन ।
कविर्गीर्भिः काव्येना कविः सन्त्सोमः पवित्रमत्येति रेभन् ।१७॥

पदार्थः—(**शिशुम्**) "श्यति सूक्ष्मं करोति प्रलयकाले जगदिति शिशुः परमात्मा" उस परमात्मा को (**जज्ञानम्**) जो सदा प्रकट है, (**हर्यतः**) जो अत्यन्त कमनीय है, उसको उपासक लोग (**मृजन्ति**) बुद्धिविषय करते हैं और (**शुंभन्ति**) उसकी स्तुति द्वारा उसके गुणों का वर्णन करते हैं और (**मरुतः**) विद्वान् लोग (**वह्निम्**) उस गतिशील परमात्मा का (**गणेन**) गुणों के गणों द्वारा वर्णन करते हैं और (**कविः**) कवि लोग (**गीर्भिः**) वाणो द्वारा और (**काव्येन**) कवित्व से उसकी स्तुति करते हैं । (**सोमः**) सोमस्वरूप (**पवित्रम्**) पवित्र वह परमात्मा कारणावस्था में अतिसूक्ष्म प्रकृति को (**रेभन्, सन्**) गर्जता हुआ (**अत्येति**) अति-क्रमण करता है ॥१७॥

ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 के मंत्र 16 में कहा है कि हे परमात्मन्! आप अपने श्रेष्ठ गुप्त नाम का ज्ञान कराऐं। उस नाम को मंत्र 17 में बताया है कि वह कविः यानि कविर्देव है।

मंत्र 17 की केवल हिन्दी :- (शिशुम् जज्ञानम् हर्यन्तम्) परमेश्वर जान-बूझकर तत्वज्ञान बताने के उद्देश्य से शिशु रूप में प्रकट होता है, उनके ज्ञान को सुनकर (मरूतो गणेन) भक्तों का बहुत बड़ा समूह उस परमात्मा का अनुयाई बन जाता है। (मंजन्ति शुम्यन्ति वहिन्)

वह ज्ञान बुद्धिजीवी लोगों को समझ आता है, वे उस परमेश्वर की स्तुति भक्ति

तत्वज्ञान के आधार से करते हैं, वह भक्ति (वहिन्) शीघ्र लाभ देने वाली होती है। वह परमात्मा अपने तत्वज्ञान को (काव्येना) कवित्व से अर्थात् कवियों की तरह दोहों, शब्दों, लोकोक्तियों, चौपाईयों द्वारा (कविर् गीर्भिः) कविर् वाणी द्वारा अर्थात् कबीर वाणी द्वारा (पवित्रम् अतिरेभन्) शुद्ध ज्ञान को उच्चे स्वर में गर्ज-गर्जकर बोलते हैं। वह (कविः) कवि की तरह आचरण करने वाला कविर्देव (सन्त्) सन्त रूप में प्रकट (सोम) अमर परमात्मा होता है। (ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मन्त्र 17)

विशेष :- इस मन्त्र के मूल पाठ में दो बार ''कविः'' शब्द है, आर्य समाज के अनुवादकर्ताओं ने एक (कविः) का अर्थ ही नहीं किया है।

ऋषिमना य ऋषिकृत्स्वर्षाः सहस्रणीथः पदवीः कवीनाम् ।
तृतीयं धाम महिषः सिषासन्त्सोमो विराजमनु राजति ष्टुप् ।।१८।।

पदार्थः—(सोमः) सोमस्वरूप परमात्मा (सिसासन्) पालन की इच्छा करता हुआ (महिषः) जो महान् है वह परमात्मा (तृतीयं, धाम) देवयान और पितृयान इन दोनों से पृथक तीसरा जो मुक्तिधाम है । उसमें (विराजम्) विराजमान जो ज्ञानयोगी है उसको (अनुराजति) प्रकाश करने वाला है और (स्तुप) स्तूयमान है । (कवीनाम्, पदवीः) जो क्रान्तदर्शियों की पदवी अर्थात् मुख्य स्थान है और (सहस्रनीथः) अनन्त प्रकार से स्तवनीय है, (ऋषिमनाः) सर्वज्ञान के साधनरूप मनवाला वह परमात्मा (यः) जो (ऋषिकृत्) सब ज्ञानों का प्रदाता (स्वर्षाः) सूर्यादिकों को प्रकाशक है । वह जिज्ञासु के लिए उपासनीय है ।।१८।।

विवेचन :- यह ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मन्त्र 18 की फोटोकापी है जिसका अनुवाद महर्षि दयानन्द जी के अनुयाईयों ने किया है। सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा दिल्ली द्वारा अनुवादित है। इस पर विवेचन करते हैं। इसके अनुवाद में भी बहुत-सी गलतियाँ हैं जो आर्यसमाज के आचार्यों ने की है। हम संस्कत भी समझ सकते हैं, विवेचन करता हूँ तथा यथार्थ अनुवाद व भावार्थ स्पष्ट करता हूँ। मन्त्र 17 में कहा है कि ऋषि या सन्त रूप में प्रकट होकर परमात्मा अमतवाणी अपने मुख कमल से बोलता है और उस ज्ञान को समझकर अनेकों अनुयाईयों का समूह बन जाता है। (य) जो वाणी परमात्मा तत्वज्ञान की सुनाता है, वे (ऋषिकत्) ऋषि रूप में प्रकट परमात्मा कत (सहंस्रणीयः) हजारों वाणियाँ अर्थात् कबीर वाणियाँ (ऋषिमना) ऋषि स्वभाव वाले भक्तों के लिए (स्वर्षाः) आनन्ददायक होती हैं। (कविनाम पदवीः) कवित्व से दोहों, चौपाईयों में वाणी बोलने के कारण वह परमात्मा प्रसिद्ध कवियों में से एक कवि की भी पदवी प्राप्त करता है। वह (सोम) अमर परमात्मा (सिषासन्) सर्व की पालन की इच्छा करता हुआ प्रथम स्थिति में (महिषः) बड़ी पथ्वी अर्थात् ऊपर के लोकों में (ततीयम् धाम) तीसरे धाम अर्थात् सत्यलोक के तीसरे पष्ठ पर (अनुराजति) तेजोमय शरीर युक्त (स्तुप) गुम्बज में (विराजम्) विराजमान है, वहाँ बैठा है। यही प्रमाण ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 54 मन्त्र 3 में है कि परमात्मा सर्व लोकों के ऊपर के लोक में विराजमान है, (तिष्ठन्ति) बैठा है।

चमूषच्छ्येनः शकुनो विभृत्वा गोविन्दुर्द्रप्स आयुधानि बिभ्रत्।
अपामूर्मिं सचमानः समुद्रं तुरीयं धाम महिषो विवक्ति ॥१९॥

पदार्थः—(अपामूर्मिम्) प्रकृति की सूक्ष्म से सूक्ष्म शक्तियों के साथ (सचमानः) जो संगत है और (समुद्रम्) "सम्यक् द्रवन्ति भूतानि यस्मात् स समुद्रः" जिससे सब भूतों की उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय होता है। वह (तुरीयम्) चौथा (धाम) परमपद परमात्मा है। उसको (महिषः) मह्यते इति महिषः महिष इति महन्नामसु पठितम् नि० ३—१३। महापुरुष उक्त तुरीय परमात्मा का (विवक्ति) वर्णन करता है। वह परमात्मा (चमूसत्) जो प्रत्येक बल में स्थित है (श्येनः) सर्वोपरि प्रशंसनीय है और (शकुनः) सर्वशक्तिमान् है। (गोविन्दुः) यजमानों को तृप्त करके जो (द्रप्सः) शीघ्रगति वाला है (आयुधानि, बिभ्रत्) अनन्त शक्तियों को धारण करता हुआ इस सम्पूर्ण संसार का उत्पादक है ॥१९॥

विवेचन :- ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मन्त्र 19 का भी आर्य समाज के विद्वानों ने अनुवाद किया है। इसमें भी बहुत सारी गलतियाँ है। पुस्तक विस्तार के कारण केवल अपने मतलब की जानकारी प्राप्त करते हैं।

इस मन्त्र में चौथे धाम का वर्णन है जो आप जी सृष्टि रचना में पढ़ेंगे, उससे पूर्ण जानकारी होगी पढ़ें इसी पुस्तक के पृष्ठ 208 पर।

परमात्मा ने ऊपर के चार लोक अजर-अमर रचे हैं। 1. अनामी लोक जो सबसे ऊपर है। 2. अगम लोक 3. अलख लोक 4. सत्यलोक।

हम पृथ्वी लोक पर हैं, यहाँ से ऊपर के लोकों की गिनती करेंगे तो 1. सत्यलोक 2. अलख लोक 3. अगम लोक तथा 4. अनामी लोक गिना जाता है। उस चौथे धाम में बैठकर परमात्मा ने सर्व ब्रह्माण्डों व लोकों की रचना की। शेष रचना सत्यलोक में बैठकर की थी। आर्य समाज के अनुवादकों ने तुरिया परमात्मा अर्थात् चौथे परमात्मा का वर्णन किया है। यह चौथा धाम है। उसमें मूल पाठ मन्त्र 19 का भावार्थ है कि तत्वदर्शी सन्त चौथे धाम तथा चौथे परमात्मा का (विवक्ति) भिन्न-भिन्न वर्णन करता है। पाठक जन कृपया पढ़ें सृष्टि रचना इसी पुस्तक के पृष्ठ 208 पर जिससे आप जी को ज्ञान होगा कि लेखक (संत रामपाल दास) ही वह तत्वदर्शी संत है जो तत्वज्ञान से परिचित है।

मर्यो न शुभ्रस्तन्वं मृजानोऽत्यो न सृत्वा सनये धनानाम्।
वृषेव यूथा परि कोशमर्षन्कनिक्रदच्चम्वोरा विवेश ॥२०॥

पदार्थः—वह परमात्मा (यूथा, वृषेव) जिस प्रकार एक संघ को उसका सेनापति प्राप्त होता है, इसी प्रकार (कोशम्) इस ब्रह्माण्डरूपी कोश को (अर्षन्) प्राप्त होकर (कनिक्रदत्) उच्च स्वर से गर्जता हुआ (चम्वोः) इस ब्रह्माण्ड रूपी विस्तृत प्रकृति-खण्ड में (पर्याविवेश) भली-भांति प्रविष्ट होता है और (न) जैसे कि (मर्यः) मनुष्य (शुभ्रस्तन्वं, मृजानः) शुभ्र शरीर को धारण करता हुआ (अत्योन) अत्यन्त गतिशील पदार्थों के समान (सनये) प्राप्ति के लिए (सृत्वा) गतिशील होता हुआ (धनानाम्) धनों के लिए कटिबद्ध होता है; इसी प्रकार प्रकृति-रूपी ऐश्वर्य को धारण करने के लिए परमात्मा सदैव उद्यत है ॥२०॥

विवेचन :- ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मन्त्र 20 का यथार्थ ज्ञान जानते हैं:-

इस मन्त्र का अनुवाद महर्षि दयानन्द के चेलों द्वारा किया गया है, इनका दृष्टिकोण यह रहा है कि परमात्मा निराकार है क्योंकि महर्षि दयानन्द जी ने यह बात दृढ़ की है कि परमात्मा निराकार है। इसलिए अनुवादक ने सीधे मन्त्र का अनुवाद घुमा-फिराकर किया है। जैसे मूल पाठ में लिखा है:-

मर्य न शुभ्रः तन्वा मृजानः अत्यः न सृत्वा सनये धनानाम्।
वृषेव यूथा परि कोशम अर्षन् कनिक्रदत् चम्वोः आविवेश।।

अनुवाद :- जैसे (मर्यः न) मनुष्य सुन्दर वस्त्र धारण करता है, ऐसे परमात्मा मनुष्य के समान (शुभ्रः तन्व) सुन्दर शरीर (मृजानः) धारण करके (अत्यः) अत्यन्त गति से चलता हुआ (सनये धनानाम्) भक्ति धन के धनियों अर्थात् पुण्यात्माओं को (सनये) प्राप्ति के लिए आता है। (यूथा वृषेव) जैसे एक समुदाय को उसका सेनापति प्राप्त होता है, ऐसे वह परमात्मा संत व ऋषि रूप में प्रकट होता है तो उसके बहुत सँख्या में अनुयाई बन जाते हैं और परमात्मा उनका गुरू रूप में मुखिया होता है। वह परमात्मा (परि कोशम्) प्रथम ब्रह्माण्ड में (अर्षन्) प्राप्त होकर अर्थात् आकर (कनिक्रदत्) ऊँचे स्वर में सत्यज्ञान उच्चारण करता हुआ (चम्वोः) पृथ्वी खण्ड में (अविवेश) प्रविष्ट होता है।

भावार्थ :- जैसे पूर्व में वेद मन्त्रों में कहा है कि परमात्मा ऊपर के लोक में रहता है, वहाँ से गति करके अपने रूप को अर्थात् शरीर के तेज को सरल करके पृथ्वी पर आता है। इस ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मन्त्र 20 में उसी की पुष्टि की है। कहा है कि जैसे मनुष्य वस्त्र धारण करता है, ऐसे अन्य शरीर धारण करके परमात्मा मानव रूप में पृथ्वी पर आता है और (धनानाम्) दृढ़ भक्तों (अच्छी पुण्यात्माओं) को प्राप्त होता है, उनको वाणी उच्चारण करके तत्वज्ञान सुनाता है।

विवेचन :- ये ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मन्त्र 16 से 20 की फोटोकापियाँ हैं, जिनका हिन्दी अनुवाद महर्षि दयानन्द सरस्वती आर्यसमाज प्रवर्तक के दिशा-निर्देश से उनके आर्यसमाजी चेलों ने किया है। यह अनुवाद कुछ-कुछ ठीक है, अधिक गलत है। पहले अधिक ठीक या कुछ-कुछ गलत था जो मेरे द्वारा शुद्ध करके विवेचन में लिख दिया है। अब अधिक गलत को शुद्ध करके लिखता हूँ।

ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मन्त्र 16 में कहा है कि :-

हे परमात्मा! आपका जो गुप्त वास्तविक (चारू) श्रेष्ठ (नाम) नाम है, उसका ज्ञान कराऐं। प्रिय पाठको! जैसे भारत के राजा को प्रधानमन्त्री कहते हैं, यह उनकी पदवी का प्रतीक है। उनका वास्तविक नाम कोई अन्य ही होता है। जैसे पहले प्रधानमन्त्री जी पंडित जवाहर लाल नेहरू जी थे। ''जवाहरलाल'' उनका वास्तविक नाम है। इस मंत्र 16 में कहा है कि हे परमात्मा! आपका जो वास्तविक नाम है वह (सोतृमिः) उपासना करने का (स्व आयुधः) स्वचालित शस्त्र के समान (पूयमानः) अज्ञान रूपी गन्द को नाश करके पापनाशक है। आप अपने उस सत्य मन्त्र का हमें ज्ञान कराऐं। (देव सोम) हे अमर परमेश्वर! आपका वह मन्त्र श्वांसों द्वारा नाक

आदि (गाः) इन्द्रियों से (वासुम् अभि) श्वांस-उश्वांस से जपने से (सप्तिरिव = सप्तिः इव) विद्युत् जैसी गति से अर्थात् शीघ्रता से (अभिवाजं) भक्ति धन से परिपूर्ण करके (श्रवस्यामी) ऐश्वर्य को तथा मोक्ष को प्राप्त कराईये।

प्रिय पाठकों से निवेदन है कि इस ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मन्त्र 16 के अनुवाद में बहुत-सी गलतियाँ थी जो शुद्ध कर दी हैं। प्रमाण के लिए मूल पाठ मे ''अभिवाजं'' शब्द है इसका अनुवाद नहीं किया गया है। इसके स्थान पर ''अभिगमय'' शब्द का अर्थ जोड़ा है जो मूल पाठ में नहीं है।

विवेचन :- ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मन्त्र 17 के अनुवाद में भी बहुत गलतियाँ हैं जो आर्यसमाजियों द्वारा अनुवादित है। अब शुद्ध करके लिखता हूँ:-

जैसा कि पूर्वोक्त ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 86 तथा 82 के मन्त्रों में प्रमाण है कि परमात्मा अपने शाश्वत् स्थान से जो द्यूलोक के तीसरे स्थान पर विराजमान है, वहाँ से चलकर पथ्वी पर जान-बूझकर किसी खास उद्देश्य से प्रकट होता है। परमात्मा सर्व ब्रह्माण्डों में बसे प्राणियों की परवरिश तीन स्थिति में करते हैं। 1. परमात्मा ऊपर सत्यलोक अर्थात् अविनाशी धाम में सिंहासन (तख्त) पर बैठकर सर्व ब्रह्माण्डों का संचालन करते हैं। 2. जब चाहें साधु सन्त के रूप में अपने शरीर का तेज सरल करके अच्छी आत्माओं को मिलते हैं। 3. प्रत्येक युग में किसी जलाशय में खिले कमल के फूल पर नवजात शिशु का रूप बनाकर प्रकट होते हैं, वहाँ से निःसन्तान दम्पति अपने घर ले जाते हैं। बचपन से ही वह परमात्मा अपना वास्तविक भक्ति ज्ञान जिसे तत्वज्ञान भी कहते हैं, चौपाइयों, दोहों, साखियों व कविताओं के रूप में सुनाते हैं। जैसे सन् 1398 वि.सं. 1455 में परमात्मा अपने निज स्थान से चलकर भारत वर्ष के काशी शहर के बाहर लहरतारा नामक जलाशय में कमल के फूल पर शिशु रूप धारकर प्रकट हुए थे। वहाँ से नीरू-नीमा जुलाहा दम्पति अपने घर ले गए थे। धीरे-धीरे परमात्मा बड़े हुए। कबीर वाणी बोलकर ज्ञान सुनाया था। प्रमाण ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 1 मन्त्र 9 में है जो आर्य समाज के आचार्यों द्वारा अनुवादित है। उसमें भी कुछ गलती है, अधिक नहीं। कप्या पढ़ें यह ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 1 मन्त्र 9 की फोटोकापी:-

अभीईममघ्न्या उत श्रीणन्ति धेनवः शिशुम् ।
सोममिन्द्राय पातवे ॥९॥

पदार्थः—(इमं) उस (सोमं) सौम्यस्वभाव वाले श्रद्धालु पुरुष को (शिशुं) कुमारावस्था में ही (अभि) सब प्रकार से (अघ्न्याः) अहिंसनीय (धेनवः) गौवें (श्रीणन्ति) तृप्त करती हैं (इन्द्राय) ऐश्वर्य्यं की (पातवे) वृद्धि के लिये। (उत) अथवा उक्त श्रद्धालु पुरुष को अहिंसनीय वाणियें ऐश्वर्य्यं की प्राप्ति के लिये संस्कृत करती हैं॥९॥

विवेचन :- यह फोटोकॉपी ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 1 मन्त्र 9 की है इसमें स्पष्ट

है कि (सोम) अमर परमात्मा जब शिशु रूप में प्रकट होता है तो उसकी परवरिश की लीला कुंवारी गायों (अभि अध्न्या धेनुवः) द्वारा होती है। यही प्रमाण कबीर सागर के अध्याय ''ज्ञान प्रकाश'' में है कि जिस परमेश्वर कबीर जी को नीरू-नीमा अपने घर ले गए। तब शिशु रूपधारी परमात्मा ने न अन्न खाया, न दूध पीया। फिर स्वामी रामानन्द जी के बताने पर एक कुंवारी गाय अर्थात् एक बछिया नीरू लाया, उसने तत्काल दूध दिया। उस कुंवारी गाय के दूध से परमेश्वर की परवरिश की लीला हुई थी। कबीर सागर लगभग 600 (छः सौ) वर्ष पहले का लिखा हुआ है।

ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 1 मन्त्र 9 के अनुवाद में कुछ गलती की है। जैसे (अभिअध्न्या) का अर्थ अहिंसनीय कर दिया जो गलत है। हरियाणा प्रान्त के जिला रोहतक में गाँव धनाना में लेखक का जन्म हुआ जो वर्तमान में जिला सोनीपत में है। इस क्षेत्र में जिस गाय ने गर्भ धारण न किया हो तो कहते हैं कि यह धनाई नहीं है, यह बिना धनाई है। यह अपभ्रंस शब्द है। एक गाय के लिए ''अध्नि'' शब्द है। बहुवचन के लिए ''अध्न्या'' शब्द है। ''अध्न्या'' का अर्थ है बिना धनाई गौवें तथा अभिध्न्या का अर्थ है पूर्ण रूप से बिना धनायी अर्थात् कुंवारी गायें अर्थात् बछियाँ।

अब ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मन्त्र 17 का शुद्ध अनुवाद करता हूँ:-

केवल हिन्दी :- (शिशुम् जज्ञानम् हर्यन्तम्) परमेश्वर जान-बूझकर तत्वज्ञान बताने के उद्देश्य से शिशु रूप में प्रकट होता है, उनके ज्ञान को सुनकर (मरूतो गणेन) भक्तों का बहुत बड़ा समूह उस परमात्मा का अनुयाई बन जाता है। (मंजन्ति शुम्यन्ति वहिन्)

वह ज्ञान बुद्धिजीवी लोगों को समझ आता है। वे उस परमेश्वर की स्तुति-भक्ति तत्वज्ञान के आधार से करते हैं, वह भक्ति (वहिन्) शीघ्र लाभ देने वाली होती है। वे परमात्मा अपने तत्वज्ञान को (काव्येना) कवित्व से अर्थात् कवियों की तरह दोहों, शब्दों, लोकोक्तियों, चौपाईयों द्वारा (कविर् गीर्भिः) कविर् वाणी द्वारा अर्थात् कबीर वाणी द्वारा (पवित्रम् अतिरेभन्) शुद्ध ज्ञान को ऊँचे स्वर में गर्ज-गर्जकर बोलते हैं। वह (कविः) कवि की तरह आचरण करने वाला कविर्देव (सन्त्) सन्त रूप में प्रकट (सोम) अमर परमात्मा होता है। (ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मन्त्र 17)

विशेष :- इस मन्त्र के मूल पाठ में दो बार ''कविः'' शब्द है, आर्य समाज के अनुवादकर्ताओं ने एक (कविः) का अर्थ ही नहीं किया है।

विवेचन :- ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मन्त्र 18 पर विवेचन करते हैं। इसके अनुवाद में भी बहुत-सी गलतियाँ है। हम संस्कंत भी समझ सकते हैं। विवेचन करता हूँ तथा यथार्थ अनुवाद व भावार्थ स्पष्ट करता हूँ। मन्त्र 17 में कहा कि ऋषि या सन्त रूप में प्रकट होकर परमात्मा अमंतवाणी अपने मुख कमल से बोलता है और उस ज्ञान को समझकर अनेकों अनुयाईयों का समूह बन जाता है। (य) जो वाणी परमात्मा तत्वज्ञान की सुनाता है। वे (ऋषिकंत्) ऋषि रूप में प्रकट परमात्मा कंत (सहंस्रणीथः) हजारों वाणियाँ अर्थात् कबीर वाणियाँ (ऋषिमना) ऋषि स्वभाव वाले भक्तों के लिए (स्वर्षाः) आनन्ददायक होती हैं। (कविनाम पदवीः) कवित्व से

दोहों, चौपाईयों में वाणी बोलने के कारण वह परमात्मा कवियों में से एक प्रसिद्ध कवि की पदवी भी प्राप्त करता है। वह (सोम) अमर परमात्मा (सिषासन्) सर्व की पालन की इच्छा करता हुआ प्रथम स्थिति में (महिषः) बड़ी पथ्वी अर्थात् ऊपर के लोकों में (ततीयम् धाम) तीसरे धाम अर्थात् सत्यलोक के तीसरे पष्ठ पर (अनुराजति) तेजोमय शरीर युक्त (स्तुप) गुम्बज में (विराजम्) विराजमान है, वहाँ बैठा है। यही प्रमाण ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 54 मन्त्र 3 में है कि परमात्मा सर्व लोकों के ऊपर के लोक में विराजमान है, (तिष्ठन्ति) बैठा है।

विवेचन :- ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मन्त्र 19 का भी आर्यसमाज के विद्वानों ने अनुवाद किया है। इसमें भी बहुत सारी गलतियाँ हैं। पुस्तक विस्तार के कारण केवल अपने मतलब की जानकारी प्राप्त करते हैं।

इस मन्त्र में चौथे धाम का वर्णन है। आप जी सष्टि रचना में पढ़ेंगे, उससे पूर्ण जानकारी होगी। पढ़ें इसी पुस्तक के पष्ठ 208 पर।

परमात्मा ने ऊपर के चार लोक अजर-अमर रचे हैं। 1. अनामी लोक जो सबसे ऊपर है 2. अगम लोक 3. अलख लोक 4. सत्य लोक।

हम पथ्वी लोक पर हैं, यहाँ से ऊपर के लोकों की गिनती करेंगे तो 1. सत्यलोक 2. अलख लोक 3. अगम लोक तथा चौथा अनामी लोक उस चौथे धाम में बैठकर परमात्मा ने सर्व ब्रह्माण्डों व लोकों की रचना की। शेष रचना सत्यलोक में बैठकर की थी। आर्यसमाज के अनुवादकों ने तुरिया परमात्मा अर्थात् चौथे परमात्मा का वर्णन किया है। यह चौथा धाम है। उसमें मूल पाठ मन्त्र 19 का भावार्थ है कि तत्वदर्शी सन्त चौथे धाम तथा चौथे परमात्मा का (विवक्ति) भिन्न-भिन्न वर्णन करता है। पाठकजन कपया पढ़ें सष्टि रचना इसी पुस्तक के पष्ठ 208 पर जिससे आप जी को ज्ञान होगा कि लेखक (संत रामपाल दास) ही वह तत्वदर्शी संत है जो तत्वज्ञान से परिचित है।

विवेचन :- ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मन्त्र 20 का यथार्थ जानते हैं:-

इस मन्त्र का अनुवाद महर्षि दयानन्द के चेलों द्वारा किया गया है। इनका दष्टिकोण यह रहा है कि परमात्मा निराकार है क्योंकि महर्षि दयानन्द जी ने यह बात दढ़ की है कि परमात्मा निराकार है। इसलिए अनुवादक ने सीधे मन्त्र का अनुवाद घुमा-फिराकर किया है। जैसे मंत्र 20 के मूल पाठ में लिखा है:-

मर्य न शभ्रः तन्वा मजानः अत्यः न सत्वा सनये धनानाम्।
वर्षेव यूथा परि कोशम अर्षन् कनिक्रदत् चम्वोः आविवेश।।

अनुवाद :- (मर्यः) मनुष्य (न) जैसे सुन्दर वस्त्र धारण करता है, ऐसे परमात्मा (शुभ्रः तन्व) सुन्दर शरीर (मजानः) धारण करके (अत्यः) अत्यन्त गति से (सत्वा) चलता हुआ (धनानाम्) भक्ति धन के धनियों अर्थात् पुण्यात्माओं को (सनये) प्राप्ति के लिए आता है (यूथा वषेव) जैसे एक समुदाय को उसका सनापति प्राप्त होता है। ऐसे वह परमात्मा संत व ऋषि रूप में प्रकट होता है तो उसके बहुत सँख्या में अनुयाई बन जाते हैं और परमात्मा उनका गुरू रूप में मुखिया होता है। वह

परमात्मा (परि कोशम्) प्रथम ब्रह्माण्ड में (अर्षन्) प्राप्त होकर अर्थात् आकर (कनिक्रदत्) ऊँचे स्वर में सत्यज्ञान उच्चारण करता हुआ (चम्वौ) पृथ्वी खण्ड में (अविवेश) प्रविष्ट होता है।

भावार्थ :- जैसे पूर्व में वेद मन्त्रों में कहा है कि परमात्मा ऊपर के लोक में रहता है, वहाँ से गति करके पृथ्वी पर आता है, अपने रूप को अर्थात् शरीर के तेज को सरल करके आता है। इस ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मन्त्र 20 में उसी की पुष्टि की है। कहा है कि परमात्मा ऐसे अन्य शरीर धारण करके पृथ्वी पर आता है। जैसे मनुष्य वस्त्र धारण करता है और (धनानाम्) दृढ़ भक्तों (अच्छी पुण्यात्माओं) को प्राप्त होता है, उनको वाणी उच्चारण करके तत्वज्ञान सुनाता है।

(प्रमाण ऋग्वेद मण्डल नं. 9 सुक्त 95 मन्त्र 2)

हरिः सृजानः पथ्यांमृतस्येयर्ति वाचमरितेव नावम् ।
देवो देवानां गुह्यानि नामाविष्कृणोति बर्हिषि प्रवाचे ॥२॥

पदार्थः—(हरिः) वह पूर्वोक्त परमात्मा (सृजानः) साक्षात्कार को प्राप्त हुआ (ऋतस्य पथ्यां) वाक् द्वारा मुक्ति मार्ग की (इयर्ति) प्रेरणा करता है। (अरितेव नावम्) जैसा कि नौका के पार लगाने के समय में नाविक प्रेरणा करता है और (देवानां देवः) सब देवों का देव (गुह्यानि) गुप्त (नामाविष्कृणोति) संज्ञाओं को प्रकट करता है (बर्हिषि प्रवाचे) वाणीरूप यज्ञ के लिए ॥२॥

ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 95 मन्त्र 2 का अनुवाद महर्षि दयानन्द के चेलों ने किया है जो बहुत ठीक किया है।

इसका भावार्थ है कि पूर्वोक्त परमात्मा अर्थात् जिस परमात्मा के विषय में पहले वाले मन्त्रों में ऊपर कहा गया है, वह (सृजानः) अपना शरीर धारण करके (ऋतस्य पथ्यां) सत्यभक्ति का मार्ग अर्थात् यथार्थ आध्यात्मिक ज्ञान अपनी अमृतमयी वाक् अर्थात् वाणी द्वारा मुक्ति मार्ग की प्रेरणा करता है।

वह मन्त्र ऐसा है जैसे (अरितेव नावम्) नाविक नौका में बैठाकर पार कर देता है, ऐसे ही परमात्मा सत्यभक्ति मार्ग रूपी नौका के द्वारा साधक को संसार रूपी दरिया के पार करता है। वह (देवानाम् देवः) सब देवों का देव अर्थात् सब प्रभुओं का प्रभु परमेश्वर (बर्हिषि प्रवाचे) वाणी रूपी ज्ञान यज्ञ के लिए (गुह्यानि) गुप्त (नामा आविष्कृणोति) नामों का अविष्कार करता है अर्थात् जैसे गीता अध्याय 17 श्लोक 23 में ''ऊँ तत् सत्'' में तत् तथा सत् ये गुप्त मन्त्र हैं जो उसी परमेश्वर ने मुझे (संत रामपाल दास) को बताऐ हैं। उनसे ही पूर्ण मोक्ष सम्भव है।

सूक्ष्म वेद में परमेश्वर ने कहा है कि :-

''सोहं'' शब्द हम जग में लाए, सारशब्द हम गुप्त छिपाए।

भावार्थ :- परमेश्वर ने स्वयं ''सोहं'' शब्द भक्ति के लिए बताया है। यह सोहं मन्त्र किसी भी प्राचीन ग्रन्थ (वेद, गीता, कुर्आन, पुराण तथा बाईबल) में नहीं है। फिर सूक्ष्म वेद में कहा है कि :-

सोहं ऊपर और है, सत्य सुकृत एक नाम। सब हंसो का जहाँ बास है, बस्ती है बिन ठाम।।

भावार्थ :- ''सोहं'' नाम तो परमात्मा ने प्रकट कर दिया, आविष्कार कर दिया परन्तु सार शब्द को गुप्त रखा था। अब मुझे (लेखक संत रामपाल को) बताया है जो साधकों को दीक्षा के समय बताया जाता है। इसका गीता अध्याय 17 श्लोक 23 में कहे ''ऊँ तत् सत्'' से सम्बन्ध है।

(प्रमाण ऋग्वेद मण्डल नं. 9 सुक्त 94 मन्त्र 1)

अधि यदस्मिन्वाजिनीव शुभः स्पर्धन्ते धियः सूर्ये न विशः ।
अपो वृणानः पवते कवीयन्व्रजं न पशुवर्धनाय मन्म ।।१।।

पदार्थः—(**सूर्ये**) सूर्य के विषय में (**न**) जैसे (**विशः**) रश्मियां प्रकाशित करती हैं। उसी प्रकार (**धियः**) मनुष्यों की बुद्धियां (**स्पर्धन्ते**) अपनी-अपनी उत्कट शक्ति से विषय करती हैं। (**अस्मिन् अधि**) जिस परमात्मा में (**वाजिनीव**) सर्वोपरि बलों के समान (**शुभः**) शुभ बल है वह परमात्मा (**अपोवृणानः**) कर्मों का अध्यक्ष होता हुआ (**पवते**) सबको पवित्र करता हैं। (**कवीयन्**) कवियों की तरह आचरण करता हुआ (**पशुवर्धनाय**) सर्वद्रष्टृत्व पद के लिए (**व्रजं, न**) इन्द्रियों के अधिकरण मन के समान 'व्रजन्ति इन्द्रियाणि यस्मिन् तद्व्रजम्' (**मन्म**) जो अधिकरणरूप है वही श्रेय का धाम है ।।१।।

विवेचन :- ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 94 मन्त्र 1 का अनुवाद भी आर्यसमाज के विद्वानों द्वारा किया गया है।

विवेचन :- पुस्तक विस्तार को ध्यान में रखते हुए उन्हीं के अनुवाद से अपना मत सिद्ध करते हैं। जैसे पूर्व में लिखे वेदमन्त्रों में बताया गया है कि परमात्मा अपने मुख कमल से वाणी उच्चारण करके तत्वज्ञान बोलता है, लोकोक्तियों के माध्यम से, कवित्व से दोहों, शब्दों, साखियों, चौपाईयों के द्वारा वाणी बोलने से प्रसिद्ध कवियों में से भी एक कवि की उपाधि प्राप्त करता है। उसका नाम कविर्देव अर्थात् कबीर साहेब है।

इस ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 94 मन्त्र 1 में भी यही स्पष्ट है कि जो सर्वशक्तिमान परमेश्वर है, वह (कवियन् व्रजम् न) कवियों की तरह आचरण करता हुआ पृथ्वी पर विचरण करता है।

(प्रमाण ऋग्वेद मण्डल नं. 9 सुक्त 20 मन्त्र 1)

प्र कविर्देववीतयेऽव्यो वारेभिरर्षति ।
साह्वान्विश्वा अभि स्पृधः ।।१।।

पदार्थः—वह परमात्मा (**कविः**) मेधावी है और (**अव्यः**) सबका रक्षक है (**देववीतये**) विद्वानों की तृप्ति के लिये (**अर्षति**) ज्ञान देता है (**साह्वान्**) सहनशील है (**विश्वाः, स्पृधः**) सम्पूर्ण दुष्टों को संग्रामों में (**अभि**) तिरस्कृत करता है ।।१।।

विवेचन :- ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 20 मन्त्र 1 का अनुवाद भी आर्यसमाज के

विद्वानों ने किया है। इसका अनुवाद ठीक कम गलत अधिक है। इसमें मूल पाठ में लिखा है:-

'प्र कविर्देव वीतये अव्यः वारेभिः अर्षति साह्वान् बिश्वाः अभि स्पंधः

सरलार्थ :- (प्र) वेद ज्ञान दाता से जो दूसरा (कविर्देव) कविर्देव कबीर परमेश्वर है, वह विद्वानों अर्थात् जिज्ञासुओं को, (वीतये) ज्ञान धन की तंप्ति के लिए (वारेभिः) श्रेष्ठ आत्माओं को (अर्षति) ज्ञान देता है। वह (अव्यः) अविनाशी है, रक्षक है, (साह्वान्) सहनशील (विश्वाः) तत्वज्ञान हीन सर्व दुष्टों को (स्पंधः) अध्यात्म ज्ञान की कंपा स्पर्धा अर्थात् ज्ञान गोष्ठी रूपी वाक् युद्ध में (अभि) पूर्ण रूप से तिरस्कंत करता है, उनको फिट्टे मुँह कर देता है।

विशेष :- (क) इस मन्त्र के अनुवाद में आप फोटोकापी में देखेंगे तो पता चलेगा कि कई शब्दों के अर्थ आर्य विद्वानों ने छोड़ रखे हैं जैसे = ''प्र'' ''वारेभिः'' जिस कारण से वेदों का यथार्थ भाव सामने नहीं आ सका।

(ख) मेरे अनुवाद से स्पष्ट है कि वह परमात्मा अच्छी आत्माओं (दंढ़ भक्तों) को ज्ञान देता है, उसका नाम भी लिखा है :- ''कविर्देव''। हम कबीर परमेश्वर कहते हैं।

(प्रमाण ऋग्वेद मण्डल नं. 9 सुक्त 54 मन्त्र 3)

अयं विश्वानि तिष्ठति पुनानो भुवनोपरि ।
सोमो देवो न सूर्यः ॥३॥

पदार्थः—(सूर्यः, न) सूर्य के समान जगत्प्रेरक (अयम्) यह परमात्मा (सोमः, देवः) सौम्य स्वभाव वाला और जगत्प्रकाशक है और (विश्वानि, पुनानः) सब लोकों को पवित्र करता हुआ (भुवनोपरि, तिष्ठति) सम्पूर्ण ब्रह्माण्डों के ऊर्ध्व भाग में भी वर्तमान है ॥३॥

विवेचनः- ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 54 मन्त्र 3 की फोटोकापी में आप देखें, इसका अनुवाद आर्यसमाज के विद्वानों ने किया है। उनके अनुवाद में भी स्पष्ट है कि वह परमात्मा (भूवनोपरि) सम्पूर्ण ब्रह्माण्डों के ऊर्ध्व अर्थात् ऊपर (तिष्ठति) विराजमान है, ऊपर बैठा है:-

इसका यथार्थ अनुवाद इस प्रकार है :-

(अयं) यह (सोमः देव) अमर परमेश्वर (सूर्यः) सूर्य के (न) समान (विश्वानि) सर्व को (पुनानः) पवित्र करता हुआ (भूवनोपरि) सर्व ब्रह्माण्डों के ऊर्ध्व अर्थात् ऊपर (तिष्ठति) बैठा है।

भावार्थ :- जैसे सूर्य ऊपर है और अपना प्रकाश तथा उष्णता से सर्व को लाभ चारों ओर दे रहा है। इसी प्रकार यह अमर परमेश्वर जिसका ऊपर के मन्त्रों में वर्णन किया है। सर्व ब्रह्माण्डों के ऊपर बैठकर अपनी निराकार शक्ति से सर्व प्राणियों को लाभ दे रहा है तथा सर्व ब्रह्माण्डों का संचालन कर रहा है।

तर्क :- महर्षि दयानन्द का अर्थात् आर्यसमाजियों का मत है कि परमात्मा किसी

एक स्थान पर किसी लोक विशेष में नहीं रहता।

प्रमाण :- सत्यार्थ प्रकाश समुल्लास (Chapter) नं. 7 पृष्ठ 148 पर (आर्य साहित्य प्रचार ट्रस्ट 427 गली मन्दिर वाली नया बांस दिल्ली-78वां संस्करण)

किसी ने प्रश्न किया:- ईश्वर व्यापक है वा किसी देश विशेष में रहता है?

उत्तर (महर्षि दयानन्द जी का) :- व्यापक है क्योंकि जो एक देश में रहता तो सर्व अन्तर्यामी, सर्वज्ञ, सर्वनियन्ता, सब का सृष्टा, सब का धर्ता और प्रलयकर्ता नहीं हो सकता। अप्राप्त देश में कर्ता की क्रिया का होना असम्भव है। (सत्यार्थ प्रकाश से लेख समाप्त)

महर्षि दयानन्द जी नहीं मानते थे कि परमात्मा किसी देश अर्थात् स्थान विशेष पर रहता है। महर्षि दयानन्द जी वेद ज्ञान को सत्य ज्ञान मानते थे।

आप जी ने अनेकों वेदमन्त्रों में अपनी आँखों पढ़ा कि परमेश्वर ऊपर एक स्थान पर रहता है। वहाँ से गति करके यहाँ भी प्रकट होता है। महर्षि दयानन्द तथा आर्यसमाजी परमात्मा को निराकार मानते हैं।

प्रमाण :- सत्यार्थ प्रकाश के समुल्लास नं. 9 पृष्ठ 176, समुल्लास 7 पृष्ठ 149 समुल्लास 11 पृष्ठ 251 पर कहा है कि परमात्मा निराकार है।

प्रिय पाठकों ने अनेकों वेदमंत्रों में पढ़ा कि परमात्मा साकार है, वह मनुष्य जैसा है। ऊपर के लोक में रहता है, वहाँ से गति करके चलकर आता है, पृथ्वी पर प्रकट होता है। अच्छी आत्माओं को जो दृढ़ भक्त होते हैं, उनको मिलता है। उनको तत्वज्ञान अपने मुख कमल से बोलकर सुनाता है, कवियों की तरह आचरण करता है। पृथ्वी पर विचरण करके परमात्मा अपना अध्यात्म ज्ञान ऊँचे स्वर में उच्चारण करके सुनाता है।

गीता अध्याय 4 श्लोक 32 में भी यही प्रमाण है।

प्रिय पाठको! आप स्वंय निर्णय करें किसको कितना अध्यात्म ज्ञान था। विशेष आश्चर्य यह है कि वेद मन्त्रों का अनुवाद भी महर्षि दयानन्द जी तथा उनके चेलों आर्यसमाजियों ने किया हुआ है। जिसमें उनके मत का विरोध है।

निवेदन :- वेदमन्त्रों की फोटोकापियाँ लगाने का उद्देश्य यह है कि यदि मैं (लेखक) अनुवाद करके पुस्तक में लगाता तो अन्य व्यक्ति यह कह देते कि संत रामपाल दास को संस्कृत भाषा का ज्ञान नहीं है। इसलिए इनके अनुवाद पर विश्वास नहीं किया जा सकता। अब यह शंका उत्पन्न नहीं हो सकती। अब तो यह दृढ़ता आएगी कि संत रामपाल दास ने जो वेद मन्त्रों का अनुवाद किया है, वह यथार्थ है।

''हिन्दू धर्म में प्रचलित शास्त्र विरूद्ध धार्मिक साधना''

विश्व में धार्मिक व्यक्तियों की भरमार है। प्रत्येक धर्म के अनुयाई अपनी साधना को सत्य मानकर पूर्ण श्रद्धा तथा लगन के साथ समर्पित भाव से कर रहे हैं। एक-दूसरे को देखकर या सुनकर धार्मिक क्रियाऐं करने लग जाते हैं। विशेष जाँच नहीं करते। यही कारण है कि आध्यात्मिक लाभ से वंचित रहते हैं। एक पूजा से लाभ नहीं होता तो किसी के कहने से अन्य शुरू कर देते हैं। यदि हम कोई व्यापार या धंधा करने का विचार करते हैं तो पहले उसकी सम्पूर्ण जानकारी प्राप्त करते हैं।

उदाहरण के लिए हम कोई कोर्स करते हैं जैसे डॉक्टरी, इन्जीनियरिंग, बैंक में नौकरी पाने के लिए कोई पढ़ाई करते हैं, कोई व्यापार या अन्य रोजगार के लिए धंधा करते हैं तो उससे होने वाले लाभ से परिचित होते हैं। पूर्ण विश्वास होने पर तन-मन-धन से सफलता के लिए प्रयत्न करते हैं। परंतु धार्मिक लाभ लेने के लिए हम विवेक के स्थान पर एक-दूसरे से सुनी धार्मिक क्रिया करते हैं या किसी को देखकर उसका अनुसरण करने लगते हैं। उन धार्मिक क्रियाओं की सत्यता के लिए किसी प्रमाण की आवश्यकता नहीं समझते। सर्वप्रथम विश्व के पुराने धर्म यानि सनातन पंथ (जिसे वर्तमान में हिन्दू धर्म कहते हैं) के विषय में चर्चा करते हैं।

पवित्र हिन्दू धर्म को मानने वाले श्रद्धालु धार्मिकता से ओत-प्रोत हैं। जो मानव (स्त्री-पुरूष) परमात्मा के प्रति तड़फ रखता है, यह उसके पूर्व जन्म के भक्ति कर्मों की शक्ति के कारण है। वह भक्ति किए बिना रह नहीं सकता। बचपन में जो घर-परिवार व क्षेत्र में किसी देवी-देवता या बाबा, सिद्ध, नाथ व सती जी की साधना-पूजा की परंपरा चल रही होती है, उसे पूरी लगन से करता है। बड़ा होने पर किसी से सुन लेता है कि देवी की पूजा के लिए वैष्णों देवी मन्दिर मे दर्शनार्थ जाना बहुत लाभदायक है तो वह साधक अविलम्ब वहाँ जाने लगता है। उसके पश्चात् कभी किसी सन्त का शिष्य मिल जाता है तो उस साधक को गुरु धारण करने की प्रेरणा करता है। बताता है कि गुरु बिन मोक्ष नहीं होता। परमात्मा के लिए तड़फ रहा श्रद्धालु बिना विवेक किए उस गुरु के शिष्य के साथ जाकर उसी के गुरु से दीक्षा लेकर अपने को धन्य मान लेता है। विचार करता है कि मेरा जीवन धन्य हो गया। उस संत ने भी उन्हीं देवी-देवताओं को ईष्ट रूप में मानकर उनकी पूजा करने की दीक्षा दे दी। एक-दो मन्त्र (हरे-राम, हरे-कष्ण या ओम् भगवते वासुदेवाय् नमः, ओम् नमः शिवाय या गायत्री मन्त्र) का जाप करने को कह दिया। श्राद्ध करना, पिण्डदान करना, आदि भी आवश्यक बताया। श्री विष्णु जी और उसी के अन्य स्वरूप व अवतार-गण श्री राम, श्री कष्ण को ईष्ट रूप में मानना, वैष्णव देवी तथा ज्वाला जी व अन्य नैना देवी, बाला जी की पूजा व श्री शंकर जी भगवान की पूजा करने की राय दे दी। साधक (शिष्य) गुरु जी के आदेश से सब धार्मिक क्रियाऐं करने लग जाता है। उसने मान रखा होता है कि जो धार्मिक साधना पूज्य

गुरु जी ने मुझे बताई है, ये हिन्दू धर्म के शास्त्रों से ही बताई हैं क्योंकि गुरु जी संस्कृत भाषा को अच्छी तरह पढ़ते हैं और गीता, वेदों, पुराणों के पूर्ण ज्ञाता हैं। इन्हीं शास्त्रों का हवाला देकर कई बार अपनी धार्मिक साधना की सत्यता प्रमाणित करते हैं। इसीलिए पूरे हिन्दू धर्म को मानने वाले उपरोक्त तथा पूर्वोक्त साधना करते हैं जो मोक्षदायक नहीं है। गीता अध्याय 16 श्लोक 23 के अनुसार उनको न तो सुख की प्राप्ति होती है, न सिद्धि प्राप्त होती है, न उनकी गति यानि मुक्ति होती है यानि व्यर्थ है। जिससे उनका अनमोल जीवन नष्ट हो रहा है।

हिन्दू धर्म शास्त्र क्या बताते हैं?

हिन्दू धर्म यानि सनातन पंथ (धर्म) के व्यक्ति (स्त्री-पुरूष) पवित्र चारों वेदों, पवित्र 18 पुराणों, पवित्र श्रीमद्भगवत् गीता (गीता को चारों वेदों का साररूप मानते हैं तथा सर्व शास्त्रों का निष्कर्ष मानते हैं) तथा सुधा सागर व उपनिषदों को सत्य शास्त्र मानते हैं। इनका यह भी मानना है कि हमारे गुरुजनों ने इन सर्व शास्त्रों को ठीक से जाना है और हमारे को इन शास्त्रों में वर्णित भक्ति-साधना ही बताई है। सामान्य हिन्दू भक्त व भक्तमति श्रीमद्भगवत गीता को अधिक महत्व देते हैं क्योंकि गीता का हिन्दी अनुवाद वर्षों से पढ़ने को मिल रहा है जो अधिक विस्तार वाला भी नहीं है क्योंकि चारों वेदों में 18 हजार (अठारह हजार) श्लोक (मन्त्र) हैं। गीता शास्त्र में केवल सात सौ (700) श्लोक हैं। इसलिए गीता को सर्वोत्तम मानते हैं। उसको हिन्दू धर्म के धर्मगुरु भी अपना पाठ्यक्रम मानते हैं। इसी के साथ-साथ सुधा सागर (श्रीमद् भागवत) को भी विशेष महत्व देते हैं जिसमें श्री कृष्ण जी की जीवन लीलाऐं अधिक हैं। कुछ पुराणों को सामान्य भक्त पढ़ते हैं जैसे श्री देवी पुराण, श्री विष्णु पुराण, श्री शिव पुराण, श्री ब्रह्मा पुराण, श्री गरूड़ पुराण, श्री मारकण्डेय पुराण आदि-आदि।

❖ मैंने (लेखक ने) इन सर्व शास्त्रों का अध्ययन गहनता से किया है। इनके साथ-साथ पाँचवें वेद यानि सूक्ष्म वेद को भी ठीक से समझा है।(पाँचवां वेद क्या है? यह भी आप जी ने इसी पुस्तक में पढ़ा है, पहले उपरोक्त शास्त्रों से साधना की सत्यता प्रमाणित करता हूँ।)

❖ श्रीमद्भगवत गीता अध्याय 16 श्लोक 23-24 में कहा है कि जो साधक शास्त्रविधि को त्यागकर मनमाना आचरण करता है यानि जो साधना शास्त्रों में वर्णित है, उसी के विपरित साधना करना मनमाना आचरण कहा जाता है। उस मनमाने आचरण करने वाले को न तो सुख की प्राप्ति होती है, न सिद्धि यानि अध्यात्म शक्ति प्राप्त होती है, न उसकी गति होती है। (इन तीन चीजों के लिए ही साधक साधना करता है। यदि जिस साधना के करने से ये तीनों लाभ नहीं मिलते तो वह साधना व्यर्थ है।)

❖ श्री गीता अध्याय 16 श्लोक 24 :- इससे तेरे लिए अर्जुन! कर्त्तव्य यानि जो साधना करनी चाहिए तथा अकर्त्तव्य यानि जो नहीं करनी चाहिए, की व्यवस्था में

शास्त्र ही प्रमाण हैं। भावार्थ है कि जो धार्मिक क्रियाऐं करने का निर्देश धर्म के पवित्र शास्त्रों में वर्णित है। वे ही धाार्मिक क्रियाऐं करनी चाहिए, अन्य को अकर्त्तव्य जानकर त्याग देना चाहिए।

कबीर परमेश्वर (कविर्देव) जी ने कहा है कि :-

कबीर, पीछे लागा जाऊं था, लोकवेद के साथ।
रास्ते में सतगुरु मिल गये, दीपक दीन्हा हाथ।।

शब्दार्थ :- परमात्मा कबीर जी ने सूक्ष्म वेद का ज्ञान अपने मुख कमल से बोली वाणी में बताया है। अपने को पात्र बनाकर भक्त समाज को समझाया है कि जब तक सतगुरु (वेद-शास्त्रों का यथार्थ ज्ञाता गुरु) नहीं मिलता, तब तक पूर्व जन्मों के शुभ संस्कारों से प्रेरित साधक लोकवेद (सुना-सुनाया ज्ञान जो शास्त्र प्रमाणित ना हो यानि क्षेत्रीय ज्ञान (दंतकथाओं) के आधार से साधना करता रहता है। उस शास्त्रविधि विरूद्ध साधना के सफर में जिस समय सतगुरु मिल जाता है तो सतगुरू शास्त्रोक्त ज्ञान यानि तत्वज्ञान रूपी दीपक दे देता है। जिसके प्रकाश में साधक अंध श्रद्धा भक्ति जो अज्ञान अंधेरे में कर रहा था, दिशाहीन भटक रहा था, को त्यागकर सीधे भक्ति मार्ग पर चल पड़ता है जो लाभदायक है। जिसके करने से गीता अध्याय 23 में कहे तीनों लाभ (सुख, सिद्धि तथा मोक्ष) प्राप्त होते हैं जिसके करने से भक्ति का यथार्थ लाभ मिलने से मानव जीवन सफल हो जाता है। इसके विपरित मनमाना आचरण जो शास्त्र विरूद्ध के आधार से साधना करने से अनमोल मानव जीवन नष्ट हो जाता है।

कबीर जी ने सूक्ष्म वेद के ज्ञान को इस प्रकार बताया है :-

कबीर, मानव जन्म दुर्लभ है, मिले ना बारम्बार।
जैसे तरवर से पत्ता टूट गिरे, बहुर ना लगता डार।।
कबीर, कहता हूँ कहि जात हूँ, कहूं बजा कर ढ़ोल।
स्वांस जो खाली (नाम बिना) जात है, तीन लोक का मोल।।

शब्दार्थ :- परमात्मा कबीर जी ने बताया है कि मानव शरीर (स्त्री-पुरूष) का बहुत युगों के पश्चात् प्राप्त होने से दुर्लभ है। परमात्मा शुभ संस्कारी प्राणी को मानव शरीर संस्कारी कार्यों के साथ शास्त्रोक्त भक्ति करके अपने जीवन का मोक्ष कराने के लिए देता है। यदि मानव शरीर प्राप्त प्राणी भक्ति नहीं करता या शास्त्रविरूद्ध भक्ति करता है तो उसके प्रत्येक स्वांस व्यर्थ नष्ट हो रहे हैं। प्रत्येक प्राणी को स्वासों के आधार से जीवन प्राप्त होता है। प्रत्येक स्वांस (लेने-छोड़ने) से मानव का जीवन कम होता है। सूक्ष्मवेद में कहा है कि मानव के इस एक स्वांस का मूल्य तीनों लोकों (पथ्वी, स्वर्ग, पाताल) के समान है यानि अनमोल (बेशकीमती) है जो सत्य साधना बिना नष्ट हो रहा है। इसलिए सत्य साधना शास्त्र के अनुसार करके अपने अनमोल मानव जीवन को सफल बना। संसारिक भूल-भूलैया में उलझे मानव अध्यात्म ज्ञान से अपरिचित होने के कारण बिना भक्ति या शास्त्र के विरूद्ध साधना करके मत्यु को प्राप्त हो जाते हैं। वे संसार तथा

परिवार से सदा के लिए ऐसे दूर हो जाते हैं जैसे वृक्ष की टहनी का पता टूटकर गिर जाता है जो उस स्थान पर स्थापित कभी नहीं हो सकता यानि मानव शरीर शीघ्र प्राप्त नहीं होता। वह जीव परमात्मा के दरबार (कार्यालय) में अपने शुभ-अशुभ कर्मों को देखकर अपनी गलतियों को समझकर बहुत रोता है। परमात्मा से विनय करता है कि भूल हुई क्षमा करो। मैंने शास्त्रविरूद्ध भक्ति की या बिल्कुल ही नहीं की। मुझे एक मानव जीवन और दे दो, अबकी बार कोई गलती नहीं करूंगा। पूर्ण गुरु की खोज करके संसारिक कार्यों के साथ-साथ भक्ति अवश्य करूंगा। क्षमा करो-क्षमा करो। परमात्मा कहते हैं कि देख तेरे पूर्व के मानव जन्मों की DVD, तू हर बार यही गलती करता रहा है। अब तो अपने पाप कर्मों का फल नरक में, फिर पशु-पक्षियों के शरीर में भोग। फिर कभी मानव जीवन का दॉव लगे तो सतभक्ति अवश्य करना। वहाँ जाकर वह ज्ञान सत्य लगता है जो पृथ्वी पर अपने शास्त्र बताते हैं या तत्वदर्शी संत (पूर्ण गुरु=सतगुरु) बताते हैं कि जीव को मानव शरीर मिलना बड़ा दुर्लभ है। यह अवसर बार-बार नहीं मिलता। यदि मानव जीवन में सतभक्ति (शास्त्रोक्त साधना) नहीं की तो पशु तुल्य जीवन जीकर प्राणी संसार से चला जाता। आगे परमात्मा का न्यायधीश यानि संत भाषा में धर्मराय पूरे मानव जीवन में किये कर्मों का हिसाब लेता है। वहाँ पर जो सतभक्ति करते हुए आजीवन मर्यादा में रहकर शरीर त्याग कर जाते हैं। उनका हिसाब देखकर धर्मराय प्रसन्न होता है। उनको सम्मान के साथ ऊँचे सिंहासन पर बिठाता है। जो मानव शरीरधारी प्राणी या तो भक्ति बिल्कुल नहीं करता या शास्त्रविरूद्ध मनमाना आचरण यानि व्यर्थ भक्ति करके शरीर त्याग करके धर्मराज के समक्ष उपस्थित किया जाता है। उसके शुभ-अशुभ कर्मों को देखता है तो दुःखी होता है कि हे भोले प्राणी! ऐसा सुनहरा अवसर (Golden Chance) गंवाकर आ खड़ा हुआ। देख तेरे पाप कर्म! कोई भी भक्ति या शुभ कर्म नहीं है। वह प्राणी जो शास्त्रविरूद्ध साधना करता था और झूठा गुरु भी बनाया था, वह कहता है कि प्रभु! मैंने तो गुरु जी बताए अनुसार तन-मन-धन से आपकी भक्ति की थी। मेरा कोई भी भक्ति कर्म मेरे खाते में किस कारण से जमा नहीं है। धर्मराज जी उसे बताता है कि आपके धर्मगुरु शास्त्रों से परिचित नहीं हैं। उन्होंने अपना भी मानव जीवन नष्ट किया तथा हजारों-लाखों भोले अनुयाईयों को भी शास्त्रविरूद्ध साधना बताकर उनका पाप भी अपने सिर पर धर लिया। वे अनुयाई भी अपना मानव जीवन नष्ट कर गये।

जो साधक जो फर्जी गुरु से दीक्षा लेकर साधना करके धर्मराय दरबार में जाता है, वह निवेदन करता है कि भगवन! इसमें मेरा क्या दोष है? मुझे सजा क्यों मिली। मैंने तो उसे पूर्ण गुरु मानकर साधना की है। धर्मराज जी बोले कि देख! तेरे जीवन के चलचित्र (DVD), इसमें यह कबीर दास नामक पूर्ण गुरु तेरे से कह रहा है कि आपकी भक्ति शास्त्र के विपरित है। आपके गुरु जी तत्वज्ञान नेत्रहीन अंधे हैं। इनके पास मोक्ष मार्ग नहीं है। मेरे पास शास्त्रोक्त सत्य साधना है। इस फर्जी गुरु को त्यागकर मेरी शरण में आ जा। तेरा कल्याण हो जाएगा। आपने क्या

कहा, सुन ले। चलचित्र में कह रहा है कि हे महात्मा! आप स्वार्थी लगते हो। आप चाहते हो कि मैं अपने गुरु को त्यागकर तेरा शिष्य बन जाऊँ। दक्षिणा के लोभी! मेरे गुरु के विषय में कुछ मत कहना नहीं तो मैं झगड़ा कर दूँगा। उसने फिर भी नम्रता से कहा कि आपके साथ आपका फर्जी बहुत बड़ा धोखा कर रहा है। आपको धर्मराज के दरबार में पश्चाताप् करना पड़ेगा। धर्मराज जी ने कहा कि हे मूर्ख जीव! आपने उस पूर्ण गुरु से विनयपूर्वक जानना चाहिए था कि हे महात्मा जी! हमारी साधना शास्त्रविरूद्ध है। इसका आपके पास क्या प्रमाण है? फिर वह आपको शास्त्रों से प्रमाणित करता। आप अपनी आँखों देखते और झूठे गुरु को त्यागकर शास्त्रोक्त सत्य साधना करते तो आज ये दिन नहीं देखने पड़ते। आपने तो अंध श्रद्धा भक्ति के आधार से जीवन नष्ट किया है। आपका यह दोष है। यदि आप कुमार्ग पर जा रहे हो और रास्ते में आपसे कोई सज्जन पुरूष कहे कि आप गलत मार्ग पर जा रहे हो। आपके घर जाने का यह मार्ग नहीं है। आपको किसी ने गलत राय दी है तो आपको चाहिए कि उस सज्जन पुरूष से जानें कि मुझे सच्चा रास्ता बताओ जिस पर मैं विश्वास कर सकूँ, ऐसा प्रमाण बताऐं। वह सज्जन पुरूष आपको आपकी डायरी में लगा मानचित्र (Map) दिखाकर कहे कि आप दिल्ली से चलें है और मथुरा जाना है। यह देखो आप तो हिसार के बस स्टैण्ड के पास खड़े हो ''तब आप क्या करोगे''? उस प्रमाण को देखकर आप उस गलत मार्ग बताने वाले को कोसोगे तथा कहोगे कि ''उस जालिम को क्या मिला, मेरा इतना समय नष्ट कर दिया?'' क्या आप उसे अच्छा व्यक्ति कहोगे? जीव बोला ''कभी नहीं''। धर्मराज बोला, हे बेटा/बेटी! यही दशा उन फर्जी गुरुओं की जानों जो आपके अनमोल जीवन को नष्ट कर रहे हैं। कबीर जी ने सूक्ष्म वेद का ज्ञान बताया है :-

मोती मुक्ता दर्शत नाहीं, यह जग है सब अंध रे।
दीखत के तो नयन चिशम हैं, फिरा मोतिया बिंद रे।।

शब्दार्थ :- कबीर परमेश्वर जी ने कहा है कि जो फर्जी गुरु हैं, वे ऐसे हैं जैसे किसी व्यक्ति की आँखों में मोतिया बिंद का रोग लगा होता है तो उसकी आँखें स्वस्थ दिखाई देती हैं। लगता है कि इसे सब कुछ साफ दिखाई दे रहा है। परन्तु वह निपट अंधा होता है। यही दशा फर्जी धर्मगुरुओं की है। वे धारावाहिक संस्कृत बोलते हैं। शास्त्रों के प्रमाण बताकर अपनी भक्ति को सत्य बताते हैं, परंतु इनको शास्त्रों का कुछ भी ज्ञान नहीं है। संस्कृत के विद्वान बनकर आपजी को धोखा देते हैं। आप (भक्त समाज) इनको महाविद्वान, महामण्डलेश्वर, गीता मनीषि, पूर्ण गुरु माने बैठे हो, परंतु इनको अपने हिन्दू धर्म के शास्त्रों का ही ज्ञान नहीं है। हिन्दू धर्म के वर्तमान के सब गुरुजन, आचार्य, शंकराचार्य, सर्व अखाड़ों के महंत, महामण्डलेश्वर तथा जो गीता मनीषि की उपाधि प्राप्त हैं, आदि-आदि सभी शास्त्रज्ञान नेत्रहीन हैं यानि इनको आध्यात्मिक मोतियाबिंद हुआ है। वर्तमान में मेरे (लेखक यानि रामपाल दास परमेश्वर पंथी के) अतिरिक्त सबको आध्यात्मिक मोतियाबिंद का रोग है। इनको अपने हिन्दू धर्म के शास्त्रों का ही ज्ञान नहीं है।

करोड़ों अनुयाईयों को दिग् भ्रष्ट किए हुए हैं। स्वयं भी यथार्थ भक्ति दिशा से भटके हैं। वे अपना भी जीवन नष्ट कर रहे हैं तथा जो अनुयाई इनको पूर्ण गुरु मानकर धोखे में पड़े हैं। उनको भी अपने पीछे लगाकर नरक में गिराने चले हैं। कबीर जी ने फिर सूक्ष्मवेद का ज्ञान बताया है कि :-

सच्चा सतगुरु कोए ना करही, झूठो जग पतियावै।
अंधे की बांह गही अंधे ने, सत मार्ग कौन बतावै।।

शब्दार्थ :- कबीर परमात्मा जी ने बताया है कि सच्चे मार्गदर्शक गुरु से कोई दीक्षा नहीं लेता। इसके विपरित झूठे गुरुओं पर यह भक्त समाज विश्वास कर रहा है। इनकी तो यह दशा है जैसा एक अंधे (मोतिया बिंद वाले) ने अपने को आँखों वाला घोषित कर रखा है और उसको स्वस्थ आँखों वाला मानकर अनेकों नेत्रहीन उसका हाथ पकड़कर एक-दूसरे को अपना हाथ पकड़ाकर निश्चित होकर बाग में जाने के उद्देश्य से चल रहे हैं। उनको कोई आँखों वाला रास्तें में रोककर पूछे कि हे सूरदासो! कहाँ को चले? उत्तर मिले कि हम बाग में जा रहे हैं। आँखों वाला बताऐ कि यह रास्ता तो घोर जंगल में जाता है जिसमें अनेकों घातक सिंह, चीते व भालू जैसे पशु तथा सर्प, बिच्छू जैसे भयंकर जीव हैं। आप सबकी जीवन लीला समाप्त कर देंगे। आपको मैं बाग का मार्ग बता सकता हूँ। वे सब अंधे उस सज्जन पुरूष से कहते हैं कि हमारे गुरु जी आँखों वाले हैं। वे सही दिशा में हमें ले जा रहे हैं। हम तेरी बातों में आने वाले नहीं हैं। देखते-देखते वे सबके सब जंगल में गहरे चले गये। रात्रि के समय जंगली जानवरों ने सबको नोंच-नोंचकर खा लिया, उनकी जीवन लीला का अंत कर दिया।

इसी प्रकार उन अंध श्रद्धावानों व उनके झूठे गुरुओं का अनमोल मानव (स्त्री-पुरूष) का जीवन नष्ट हो जाता है। आप सब धर्मगुरुओं तथा आपके अनुयाइयों को मोतियाबिंद का रोग लगा है। आप अपने धर्म शास्त्रों के ज्ञान से अपरिचित हैं यानि अध्यात्म ज्ञान नेत्रहीन है। आप सब (गुरुओं तथा अनुयाईयों) का मोतियाबिंद का उपचार विश्व में केवल मेरे (लेखक रामपाल दास सतलोक आश्रम बरवाला, जिला हिसार, हरियाणा) पास है। अविलंब आकर समय रहते अपने आध्यात्मिक ज्ञान रूपी मोतिया बिंद का उपचार निशुल्क करवाऐं, बंदा हाजिर है। आपका शुभचिंतक आपका दास, आपका मित्र खास हूँ। इन बातों को पढ़कर चिंगरना मत (क्रोध ना करना) मस्तिष्क पर जोर देना। मेरे साथ झगड़ा ना करना। यदि आपको कुछ गलत लगे तो कोर्ट की शरण लेना। ध्यान रखना कि विवाद निपटाने के लिए आपजी को हिसार कोर्ट में अर्जी लगानी पड़ेगी। यदि सर्वोच्च न्यायालय में लगानी है तो आप दिल्ली के लिए स्वतंत्र हैं। यदि हाई कोर्ट में लगानी है तो आप पंजाब व हरियाणा हाई कोर्ट चण्डीगढ़ में ही शरण ले सकते हैं। कोर्ट में आपको सब प्रमाण दिखाकर आपको साधना शास्त्रों से गलत प्रमाणित करके आपजी को सत्य स्वीकार करने के लिए निवेदन कोर्ट में भी करूँगा। दावे के साथ कहता हूँ कि दूसरा विकल्प यह है कि आप हमारे आश्रम की वेब साईट

www.jagatgururampalji.org पर जाऐं। उससे निशुल्क मेरे प्रवचनों की डी.वी.डी. प्राप्त करें। मेरे द्वारा लिखी पुस्तक ''गीता तेरा ज्ञान अमृत'', ''जीने की राह'', ''भक्ति से भगवान तक'' तथा अन्य पुस्तक मेरे प्रवचनों से लिखी ''ज्ञान गंगा'' आदि निःशुल्क इसी वेबसाईट से डाउनलोड करके पढ़ें, सत्संग देखें-सुनें। आपके आध्यात्मिक अज्ञान रूपी मोतियाबिंद का उपचार निःशुल्क हो जाएगा। फिर मेरे पास आश्रम में आकर शास्त्रोक्त सत्य साधना प्राप्त करके अपना मानव जीवन धन्य बनाऐं। अपने झूठे गुरुओं को समझाकर उनको भी मेरे (रामपाल दास) से दीक्षा दिलाकर उन दिग् भ्रष्ट गुरुओं का भी कल्याण कराऐं।

प्रिय पाठको! आपजी को बता दूँ कि पूरे हिन्दू धर्म (सनातन पंथ) के वर्तमान के धर्मगुरु तथा अनुयाई देवी-देवताओं की पूजा करते और करवाते हैं। कुल तेतीस करोड़ देवता माने गये हैं तथा इतनी ही इनकी धर्म पत्नियाँ (देवियाँ) हैं। देवताओं का राजा इन्द्र को कहते हैं (देवराज इन्द्र कहते हैं) जो केवल स्वर्ग का राजा है जिसकी आयु बहत्तर (72) चौकड़ी युग यानि 72 चतुर्युग की है।

इनके अतिरिक्त तीन प्रधान देवता हैं जिनके शुभ नाम इस प्रकार हैं :- 1. श्री ब्रह्मा जी (रजगुण) 2. श्री विष्णु जी (सतगुण) 3. श्री शिव शंकर जी (तमगुण)

मारकण्डेय पुराण में पृष्ठ 123 पर लिखा है कि श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु तथा श्री शिव जी ब्रह्म के प्रधान देवता हैं। यही तीन देवता हैं, यही तीन गुण हैं यानि तीन गुण (रजगुण, सतगुण, तमगुण) प्रकरण वश तीन देवताओं श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु तथा श्री शिव शंकर का बोध करवाते हैं। उदाहरण के लिए गीता अध्याय 7 श्लोक 12-15 में गीता ज्ञान दाता ब्रह्म ने कहा है कि तीनों गुणों द्वारा जो हो रहा है (रजगुण ब्रह्मा से उत्पति, सतगुण विष्णु से स्थिति तथा तमगुण शिव जी से संहार) उसका निमित्त मैं ही हूँ क्योंकि काल ब्रह्म को श्रापवश एक लाख मानव शरीरधारी प्राणियों को खाना पड़ रहा है। (इसलिए काल ब्रह्म ने अपने तीनों पुत्रों (रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु, तमगुण शिव जी) को अपने खाने की व्यवस्था करने के लिए ये तीन कार्य दिये हैं। वह स्वयं इन तीनों से भिन्न-भिन्न गुप्त स्थानों पर रहता है। इस विषय में आप जी सम्पूर्ण ज्ञान इसी पुस्तक के पृष्ठ 208 पर सृष्टि रचना में पढ़ेंगे।) इसलिए कहा है कि परंतु ये मुझमें तथा मैं इनमें नहीं हूँ।(गीता अध्याय 7 श्लोक 12)

❖ गीता अध्याय 7 श्लोक 13 :- इन तीनों गुणों यानि रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु जी तथा तमगुण शिव जी के कार्य रूप के कारण इन तीनों प्रकार के भावों से यह सारा संसार इन्हीं पर मोहित हो रहा है यानि तीनों देवताओं के कार्यों उत्पत्ति, स्थिति तथा संहार से प्रभावित होकर इन्हीं तीनों को ईष्ट रूप में मानकर इन्हीं पर आसक्त हो रहे हैं। इन तीनों देवताओं से परे मुझे नहीं जानते।(गीता अध्याय 7 श्लोक 13)

❖ गीता अध्याय 7 श्लोक 14 :- क्योंकि यह आलौकिक अर्थात् अति अदभुत त्रिगुणमयी मेरी माया बड़ी दुस्तर है यानि श्री ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव द्वारा फैलाया

मोह-ममता का जाल बड़ा भयंकर है। जो केवल मुझ काल ब्रह्म को भजते हैं, वे इस माया को उल्लंघन कर जाते हैं यानि इस संसार से तर जाते हैं। भावार्थ है कि जो इन तीनों देवताओं की भक्ति त्यागकर काल भगवान की ईष्ट रूप में भक्ति करते हैं, वे ब्रह्म लोक में चले जाते हैं। उनका स्वर्ग समय तीनों देवताओं की भक्ति से प्राप्त स्वर्ग सुख (जो देवताओं के पास जाकर इनके पुजारी स्वर्ग सुख भोगते हैं) से बहुत अधिक है। परंतु ब्रह्मलोक गये साधक भी पुनरावर्त्ति यानि जन्म-मरण में हैं। प्रमाण के लिए देखें गीता अध्याय 8 श्लोक 16 में। (गीता अध्याय 7 श्लोक 14)

❖ गीता अध्याय 7 श्लोक 15 :- माया (रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु, तमगुण शिव की भक्ति से मिलने वाले क्षणिक स्वर्ग समय को ही पूर्ण लाभ मानकर इसी) लाभ से जिनका ज्ञान हरा जा चुका है यानि इनके पुजारी उनसे अन्य किसी अन्य प्रभु को महत्व नहीं देते। इस कारण से इनका यथार्थ आध्यात्मिक ज्ञान हरा जा चुका है। ऐसे असुर स्वभाव को धारण किये हुए मनुष्यों में नीच, दूषित कर्म (दुष्कर्म) करने वाले, मूढ़ (मूर्ख) लोग मुझको (काल ब्रह्म को यानि ब्रह्मा, विष्णु, शिव के पिता को) नहीं भजते। (वे तीनों गुणों यानि ब्रह्मा, विष्णु, शिव की भक्ति करते हैं।) (गीता अध्याय 7 श्लोक 15)

❖ गीता अध्याय 7 के ही श्लोक 20-23 में भी स्पष्ट किया है कि :-

उन-उन भोगों की कामना द्वारा जिनका ज्ञान हरा जा चुका है। (वे लोग) अपने स्वभाववश प्रेरित होकर उस-उस नियम को धारण करके यानि जिस देवता की पूजा के लिए नियम क्षेत्र में लोक वेद के आधार से प्रसिद्ध है, उस विधि के अनुसार अन्य देवताओं को भजते हैं अर्थात् पूजा करते हैं।(गीता अध्याय 7 श्लोक 20)

❖ गीता अध्याय 7 श्लोक 21 :- काल ब्रह्म स्पष्ट कर रहा है कि जो भक्त जिस-जिस देवता के स्वरूप को श्रद्धा से पूजना चाहता है। उस-उस भक्त की श्रद्धा को मैं उसी देवता के प्रति स्थिर करता हूँ। (गीता अध्याय 7 श्लोक 21)

भावार्थ :- काल ब्रह्म ने ऊपर के श्लोकों गीता अध्याय 7 श्लोक 12-15 तथा 20 में स्पष्ट कर दिया है कि तीनों देवताओं के पुजारियों का ज्ञान हरा जा चुका है। वे इन्हीं से प्राप्त होने वाले अस्थाई लाभ पर मोहित (आसक्त) हैं। ये राक्षस स्वभाव को धारण किये हुए मनुष्यों में नीच, दूषित कर्म करने वाले (दुष्कर्मी) मूर्ख मेरी भक्ति नहीं करते। जब देख लिया कि ये मूर्ख इन देवताओं के जाल से नहीं निकलना चाहते तो जो जिस देवता को ईष्ट रूप में भजना चाहता है उसकी आस्था उसी में मैं दृढ़ करता हूँ कि नहीं मानते तो पड़ो कुऐं में।

❖ गीता अध्याय 7 श्लोक 22 :- काल ब्रह्म ने स्पष्ट किया है कि इन देवताओं को मैंने कुछ शक्ति दे रखी है। उसी से ये देवता अपने पुजारियों की कुछ मनोकामना सिद्ध कर देते हैं यानि उन देवताओं की पूजा से कुछ अस्थाई लाभ प्राप्त करते हैं। श्लोक 23 में स्पष्ट कर दिया है कि :-

❖ गीता अध्याय 7 श्लोक 23 :- परन्तु उन अल्प बुद्धि वालों का यानि अज्ञानियों का वह फल नाश्वान है। देवताओं को पूजने वाले देवताओं को प्राप्त होते

हैं। मेरा भक्त मुझे ही प्राप्त होता है।

❖ गीता अध्याय 9 श्लोक 23 :- हे अर्जुन! यद्यपि श्रद्धा से युक्त जो भक्त दूसरे देवतों को पूजते हैं। वे भी मुझको ही पूजते हैं। (क्योंकि इसी के द्वारा दी कुछ शक्ति से देवता अपने पुजारी को अस्थाई यानि छोटा-मोटा लाभ देते हैं। इसलिए काल ब्रह्म ने कहा है कि वह भी मेरी ही पूजा है।) परन्तु वह अविधिपूर्वक यानि शास्त्रविधि के विपरीत हैं। (जिसे गीता अध्याय 16 श्लोक 23 में व्यर्थ बताया है।)

❖ गीता अध्याय 9 श्लोक 25 :- इस श्लोक में काल ब्रह्म ने कई शंकाओं का समाधान कर दिया है। कहा है कि जो देवताओं की पूजा करते हैं, वे देवताओं को प्राप्त होते हैं। (यही प्रमाण गीता अध्याय 7 श्लोक 23 में भी है)

पितरों को पूजने वाले पितरों को प्राप्त होंगे। (यानि जो श्राद्ध कर्म करते हैं, वे पितर योनि को प्राप्त करके पितर लोक में यमराज के अधीन यम लोक में कष्ट उठाऐंगे।) भूतों यानि प्रेतों को पूजने वाले जो (तेरहवीं, सत्तरहवीं, महीना, वर्षी करते हैं। पिण्ड दान करते हैं, अस्थियाँ चुनकर गति कराने किसी पुरोहित के पास जाते हैं। यह सब भूतों की पूजा है जो गीता शास्त्र में स्पष्ट कर दिया है कि इन पूजाओं का यह फल मोक्ष दायक नहीं होता। जब तक पूर्ण मोक्ष नहीं होगा तो जीव का जन्म-मरण बना रहेगा। पाप-पुण्य के कारण दुःख अस्थाई सुख भोगता रहेगा। मानव जीवन का यथार्थ लाभ प्राप्त नहीं होगा।)

काल ब्रह्म ने कहा है कि मेरी पूजा करने वाला मुझे प्राप्त होता है। इससे भी जन्म-मरण समाप्त नहीं होता क्योंकि गीता अध्याय 2 लोक 12, गीता अध्याय 4 श्लोक 5 तथा गीता अध्याय 10 श्लोक 2 में गीता ज्ञान दाता काल ब्रह्म ने स्वयं कहा है कि हे अर्जुन! तेरे और मेरे अनेकों जन्म हो चुके हैं, तू नहीं जानता मैं जानता हूँ। तू-मैं और ये सब राजा लोग पहले भी जन्में थे, आगे भी जन्मेंगे। मेरी उत्पति को ये देवता व ऋषिजन नहीं जानते क्योंकि इनकी उत्पति मेरे से हुई है।

इसलिए गीता ज्ञान दाता ने गीता अध्याय 18 श्लोक 62 में पूर्ण मोक्ष के लिए अपने से अन्य परमेश्वर की शरण में जाने को कहा है। जिसकी कंपा से ही परम शांति तथा सनातन परमधाम प्राप्त होगा। गीता अध्याय 15 श्लोक 4 में वर्णित पूर्ण मोक्ष यानि परमेश्वर का परम पद प्राप्त होगा। जहाँ जाने के पश्चात् साधक लौटकर कभी संसार में नहीं आता।

❖ हिन्दू धर्म के गुरुजन तथा अनुयाई गीता शास्त्र में वर्जित साधना कर रहे हैं जो शास्त्र विधि को त्यागकर मनमाना आचरण होने से परमात्मा की भक्ति से मिलने वाले लाभ से वंचित रहते हैं। अनमोल मानव (स्त्री-पुरूष) का जीवन नष्ट कर रहे हैं। उनसे निवेदन है कि वर्तमान में विश्व में अरबों मनुष्यों में केवल यह दास (रामपाल दास यानि लेखक) शास्त्रविधि अनुसार साधना जानता है जो सर्व सद्ग्रन्थों में वर्णित है। मेरे ज्ञान का आधार सूक्ष्म वेद है जो परमेश्वर द्वारा पंथ्वी पर प्रकट होकर अपने मुख से वाणी बोलकर बताया है, जिसे सच्चिदानन्द घन ब्रह्म की वाणी कहा जाता है जिसे तत्वज्ञान कहते हैं। जिसका प्रमाण गीता अध्याय 4

श्लोक 32 में है। गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि यथार्थ भक्ति की क्रियाओं यानि यज्ञों का ज्ञान सच्चिदानन्द घन ब्रह्म अपने मुख कमल से उच्चारित वाणी में बताता है। वह तत्वज्ञान है जो कार्य करते-करते साधना करने का है जिससे पूर्ण मोक्ष प्राप्त होता है।

❖ गीता अध्याय 4 श्लोक 34 :- इस श्लोक में गीता ज्ञान देने वाले ने कहा कि उस तत्वज्ञान को मैं नहीं जानता। इसलिए तो कहा है कि उस ज्ञान को जिसे परमात्मा स्वयं बोलकर अपनी वाणी में सुनाता है, किसी तत्वदर्शी संत के पास जाकर समझ। उनको दण्डवत प्रणाम करने से, नम्रतापूर्वक प्रश्न करने से वे तत्वज्ञान को भली-भांति जानने वाले ज्ञानी महात्मा तुझे तत्वज्ञान का उपदेश करेंगे।

❖ गीता अध्याय 7 श्लोक 29 में गीता ज्ञान दाता ने इसी प्रकरण के आधार से कहा है कि :- जो मेरे द्वारा बताये ज्ञान के आधार से यानि मेरे इस ज्ञान का आश्रय लेकर तत्वदर्शी संतों को खोज लेते हैं, वे केवल (जरा) वद्धावस्था तथा (मरण) मत्यु से छुटकारा पाने के लिए प्रयत्न करते हैं। वे संसार की किसी वस्तु की इच्छा नहीं करते। वे (तत ब्रह्म) उस परमेश्वर को जानते हैं तथा सम्पूर्ण कर्मों तथा सम्पूर्ण अध्यात्म को जानते हैं। अर्जुन ने गीता अध्याय 8 श्लोक 1 में प्रश्न किया कि तत् ब्रह्म क्या है? गीता ज्ञान दाता ने गीता अध्याय 8 श्लोक 3 में बताया कि परम अक्षर ब्रह्म है।

गीता अध्याय 8 के ही श्लोक नं. 5 व 7 में अपनी साधना करने को गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि मेरी भक्ति करेगा तो मुझे प्राप्त होगा, युद्ध भी करना होगा। (जहाँ युद्ध हो, वहाँ परम शांति नहीं हो सकती।)

गीता ज्ञान दाता काल ब्रह्म ने गीता अध्याय 8 श्लोक 13 में अपनी भक्ति का केवल एक अक्षर ''ओम्'' (ॐ) मंत्र का जाप बताया है।

❖ गीता अध्याय 8 श्लोक 16 में स्पष्ट किया है कि ओम् नाम जो ब्रह्म का है, की भक्ति करने से ब्रह्म लोक प्राप्त होता है। (यही प्रमाण श्री देवी पुराण के सातवें स्कंद में पष्ठ 562-563 पर श्री देवी जी ने हिमालय राजा को ज्ञान देते समय कहा है कि हे राजन! आप मेरी पूजा सहित सब पूजाओं को त्यागकर केवल एक ॐ नाम का जाप कर। यह मंत्र ब्रह्म की प्राप्ति का है। इसके जाप से ब्रह्म को प्राप्त हो जाओगे जो ब्रह्म लोक रूपी दिव्य आकाश में रहता है। तुम्हारा कल्याण हो। इससे सिद्ध हुआ कि ॐ (ओम्) मन्त्र जाप ब्रह्म का है। इसकी साधना जाप करने से ब्रह्म लोक प्राप्त होता है (गीता अध्याय 8 श्लोक 16 में स्पष्ट किया है कि ब्रह्म लोक गए साधकों का भी जन्म-मरण रहता है।) इससे सिद्ध हुआ कि ब्रह्म की साधना से परम शांति तथा सनातन परम धाम प्राप्त नहीं होता। इसलिए गीता ज्ञान दाता ने गीता अध्याय 8 श्लोक 8-9-10 में अपने से अन्य सच्चिदानन्द घन ब्रह्म यानि परम अक्षर ब्रह्म बताया है। कहा है कि उसकी भक्ति करने से उसको ही प्राप्त होता है। उसकी भक्ति का मंत्र गीता अध्याय 17 श्लोक 23 में बताया है कि ''सच्चिदानन्द घन ब्रह्म यानि परम अक्षर ब्रह्म का स्मरण करने का तीन मंत्र का ओम्-तत्-सत् का जाप है। उसकी भक्ति करने से उसी को प्राप्त होता है। गीता अध्याय 18 श्लोक 62 में गीता

ज्ञान बताने वाला उसी परमेश्वर की शरण में जाने को कह रहा है जिसकी कृपा से परम शांति यानि जन्म-मरण सदा के लिए समाप्त हो जाता है तथा (शाश्वत् स्थान) सनातन परम धाम प्राप्त होता है। उसी परमेश्वर के परम पद की प्राप्ति करने के लिए गीता अध्याय 15 श्लोक 4 में कहा है कि तत्वज्ञान रूपी शास्त्र के द्वारा अज्ञान को काटकर यानि तत्वज्ञान समझने के पश्चात् परमेश्वर के उस परमपद की खोज करनी चाहिए जहाँ जाने के पश्चात् कभी लौटकर संसार में नहीं आता जिस परमेश्वर ने संसार रूपी वृक्ष का विस्तार किया है यानि जिसने सर्व ब्रह्मण्डों की रचना की, उसी की भक्ति करो।)

❖ गीता अध्याय 15 श्लोक 16-17 में तीन पुरूष कहे हैं। क्षर पुरूष और अक्षर पुरूष तथा इन दोनों तथा इनके अन्तर्गत जितने प्राणी हैं, वे सब नाश्वान हैं। क्षर पुरूष के 21 ब्रह्माण्ड तथा अक्षर पुरूष के सात संख ब्रह्मण्ड हैं।

❖ गीता अध्याय 15 श्लोक 17 में स्पष्ट किया है कि पुरूषोतम तो उपरोक्त दोनों से अन्य ही है जिसको परमात्मा कहा जाता है जो तीनों लोकों में प्रवेश करके सबका धारण-पोषण करता है। वह वास्तव में अविनाशी परमेश्वर है। (गीता अध्याय 15 श्लोक 16-17)

❖ शंका समाधान :- कुछ भ्रमित श्रद्धालु कहते हैं कि गीता अध्याय 15 श्लोक 18 में गीता ज्ञान कहने वाला अपने को पुरूषोतम कह रहा है।

❖ समाधान :- इस श्लोक में गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि जितने प्राणी मेरे अंतर्गत हैं, उनसे मैं उत्तम यानि श्रेष्ट हूँ। जिस कारण से लोक वेद यानि कहे-सुने ज्ञान यानि दंत कथा के आधार से मैं पुरूषोतम प्रसिद्ध हूँ। (वास्तविक पुरूषोतम तो गीता अध्याय 15 श्लोक 17 में बता दिया है।)

❖ हिन्दू धर्म के सर्व धर्म गुरु (शंकराचार्य, आचार्य, श्री ज्ञानानंद जी, वृंदावन वाले, आसाराम, सुधांशु व अन्य हिन्दू धर्म के महंत-अखाड़ा परिषद् वाले) तीनों देवताओं श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी या तेतीस करोड़ देवताओं व देवियों में से किसी ना किसी की भक्ति करते-करवाते हैं। श्राद्ध कर्म, भूत पूजा भी करते-करवाते हैं जो शास्त्रविधि को त्यागकर मनमाना आचरण कर तथा करवा रहे हैं। ये भक्त समाज के साथ सबसे बड़ा धोखा कर रहे हैं क्योंकि इन सबको गीता शास्त्र का बिल्कुल ज्ञान नहीं है। इनको मान-बड़ाई तथा अहंकार त्यागकर पुनर् विचार करना चाहिए। अन्यथा परमात्मा के दरबार में छुपने का स्थान नहीं मिलेगा। उस समय बहुत देर हो चुकी होगी।

❖ पूर्व में बताया है कि इन्द्र का जीवन 72 चतुर्युग का होता है यानि देवताओं का राजा भी नाशवान है। सर्व देवता भी नाश्वान हैं।

❖ श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी, श्री शिव जी भी नाशवान हैं :-

प्रमाण :- श्री देवी महापुराण के तीसरे स्कंद में स्वयं श्री विष्णु जी ने कहा है कि हे माता! तुम शुद्ध स्वरूपा हो। सारा संसार तुम से ही उद्भाषित हो रहा है। मैं (विष्णु), ब्रह्मा तथा शंकर अविनाशी नहीं हैं। हमारा तो आविर्भाव (जन्म)

तथा तिरोभाव (मत्यु) हुआ करता है। माता मैंने आपको उस समय देखा था जब मैं छोटा बालक था। आप मुझे पालने में झुला रही थी। मैं अपने पैरों के अंगूठों को मुख में चूस रहा था।

शंकर जी ने कहा कि आपके पेट से विष्णु तथा ब्रह्मा का जन्म हुआ। इनके पश्चात् मुझे जन्म देने वाली भी माता आप हैं। क्या मैं तमोगुणी लीला करने वाला तुम्हारा पुत्र नहीं हुआ? आप मेरी व ब्रह्मा, विष्णु की जननी हैं।

❖ उपरोक्त प्रमाणों से स्पष्ट हुआ कि तीनों (श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु तथा श्री शंकर जी) नाशवान हैं। जन्मते-मरते हैं। इनकी माता श्री देवी दुर्गा है।

❖ इन तीनों का पिता काल ब्रह्म है :-

प्रमाण :- श्री शिव पुराण में रूद्र संहिता तथा विद्यवेश्वर संहिता में है। (गीता प्रेस गोरखपुर से प्रकाशित में)

रूद्र संहिता में कहा है कि सदाशिव यानि काल ब्रह्म ने अपने अंदर से एक स्त्री उत्पन्न की। उसको प्रकति देवी, त्रिदेवजननी कहा गया है। जिसकी आठ भुजाऐं हैं। इन दोनों ने पति-पत्नी रूप में विलास करके एक पुत्र को जन्म दिया। उसका नाम विष्णु रखा।

❖ उसके पश्चात् ब्रह्मा को उसी प्रकार उत्पन्न किया।

❖ विद्यवेश्वर संहिता में स्पष्ट किया है कि काल ब्रह्म के ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव पुत्र हैं। प्रकरण इस प्रकार है :-

एक समय श्री ब्रह्मा जी तथा श्री शिव जी का युद्ध होने लगा। कारण यह था कि श्री ब्रह्मा जी एक बार श्री विष्णु जी के निवास स्थान पर गए तो उस समय श्री विष्णु जी शेष सैय्या पर लेटे थे। उनके पास लक्ष्मी जी बैठी थी तथा आसपास पारखद (नौकर) बैठे थे। उन्होंने ब्रह्मा जी का स्वागत नहीं किया। जिस बात से क्षुब्ध होकर श्री ब्रह्मा जी बोले कि हे विष्णु! देख तेरा बाप आया है। तुम उठकर सम्मान नहीं कर रहे। तुझे इतना अभिमान हो गया। मैं सबकी उत्पत्तिकर्ता हूँ। इसलिए मैं तेरा भी जनक हूँ। श्री विष्णु जी अंदर से तो जल-भुन गए, परंतु ऊपर से शांत रहकर बोले कि हे ब्रह्मा! तेरा जन्म मेरी नाभि से निकले कमल पर हुआ है। इसलिए मैं तेरा पिता हुआ। अपने पिता के चरण नहीं छू रहा। तेरे को अभिमान हो गया है। तेरा अभिमान ठीक करना पड़ेगा। ऐसा कहकर दोनों ने अपने-अपने शस्त्र उठा लिए। लड़ने-मरने को उद्धत हो गए। उसी समय इनके पिता सदाशिव जिसे काल ब्रह्म तथा ज्योति स्वरूप निरंजन भी कहते हैं, ने उन दोनों के मध्य में तेजोमय स्तम्भ खड़ा कर दिया। दोनों शांत हो गए। (एक लंबी कथा है, परंतु पुस्तक विस्तार को देखते हुए संक्षिप्त में वर्णन करता हूँ।) उसी समय काल ब्रह्म प्रकट हो गए जिसने अपने पुत्र शिव का रूप धारण किया था। उनके साथ उसकी पत्नी दुर्गा भी पार्वती रूप में थी। सदाशिव ने ब्रह्मा तथा विष्णु से कहा कि पुत्रो! तुम दोनों ही ईश (भगवान) नहीं हो। तुम दोनों को तुम्हारे तप के प्रतिफल में दो कत मैंने उत्पत्ति तथा स्थिति के दे रखे हैं। इसी प्रकार रूद्र तथा शंकर को संहार

व तिरोभाव यानि देव स्तर के जीवों को मारना तिरोभाव कहा जाता है, परंतु संहार करना ही अर्थ है।

इस प्रकरण से सिद्ध हुआ कि श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु तथा श्री शिव का पिता काल ब्रह्म है तथा माता प्रकृति देवी यानि दुर्गा (अष्टांगी) है। यह प्रकरण श्री शिव पुराण में है जिसके प्रकाशक हैं खेमचंद-कृष्ण दास। मुद्रक :- वैंकटेश्वर प्रेस मुंबई जिसमें संस्कृत तथा हिन्दी अनुवाद है।)

❖ हिन्दू धर्म के गुरूजन आज तक इस सत्य से अपरिचित हैं और दंत कथा सुनाते रहे हैं कि श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी के कोई माता-पिता नहीं हैं। ये स्वयंभू हैं। अविनाशी हैं। इनका जन्म-मरण कभी नहीं होता।

ये यह भी कहते रहे हैं कि श्री ब्रह्मा जी की आयु सौ वर्ष है। इनका इकावनवां (51वां) वर्ष चल रहा है।

विचार करने की बात है कि यह ऊवा-बाई नहीं तो क्या है? इससे सिद्ध है कि हिन्दू धर्म के सर्व धर्मगुरू शास्त्रों का पूर्ण ज्ञान नहीं रखते। ये नीम-हकीम खतरा-ए-जान हैं। इनसे बचो और दास (रामपाल दास) के पास बरवाला आश्रम में (जिला हिसार, हरियाणा) आओ। शास्त्रोक्त ज्ञान तथा साधना प्राप्त करके फिर शास्त्र अनुकूल साधना करके जीव का कल्याण कराओ।

''आध्यात्मिक रहस्य''

प्रश्न :- जादू क्या है? जादूगर आकाश में स्वयं उड़ जाता है। अन्य को भी हवा में पृथ्वी से कुछ ऊपर स्थिर कर देता है। खाली टोकरे (पिटारे) से कबूतर निकाल देता है। कार को हवा में चला देता है। दरिया के जल पर पृथ्वी की तरह चलकर पार कर देता है आदि-आदि।

जैसे जादूगर पी.सी. सरकार :- यह भारत का जादूगर है जो महिला को हवा में उड़ा देता है। हवा में रोक देता है। एक डायनोमो जादूगर दूसरे देश का है :- इसके विषय में लिखा है कि यह इंग्लैंड देश का निवासी है। यह चलते-चलते गायब हो जाता है। कभी उड़ने लगता है। लंदन की थेम्स नदी को पैदल चलकर पार कर देता है। उड़कर डबल डैकर यानि दो मंजिली बस के ऊपर चढ़ जाता है। चुटकियों में बर्फ को पानी और पानी को बर्फ बना देता है।

सुहानी शाह :- यह जादूगरनी अनेकों आश्चर्यजनक करतब दिखाती है। यह गाड़ियों को हवा में उड़ा देती है। स्टेज पर खड़ी-खड़ी गाड़ी को चला देती है यानि स्टार्ट कर देती है। गाड़ी को भगा देती है। अन्य बहुत से जादूगर देखे हैं जो गाँव में अपनी कला का प्रदर्शन करते रहे हैं। जैसे मुख में बेर फल के समान कंचे (अन्टे) की गोलियाँ डालते हैं। कुछ ही क्षण में आकाश की ओर मुख करके कुछ मंत्र बुदबुदाते हैं और बड़े-बड़े चिकने पत्थर के पुराने समय के बाट (पत्थर के गोल डले) निकालते हैं जो वजन में लगभग 300-400 ग्राम के होते हैं और बहुत कठोर होते हैं। इस प्रकार की अनहोनी जो एक व्यक्ति करता है। यह कोई

आध्यात्मिक शक्ति है या हाथ की सफाई या नजरबंद करने की कला का भ्रम है?

उत्तर :- जादू - जादू अध्यात्म का विकृत (बिगड़ा) रूप है। जादू में सफलता उन्हीं को मिलती है जो पूर्व जन्म में परमात्मा की उपासना करते थे। सत्य साधना न मिलने के कारण उनमें सिद्धियाँ आ जाती हैं। उन सिद्धियों से वे भ्रमित साधक उस पूर्व जीवन में भी सिद्धियों के बल से विख्यात हो जाते हैं। जिस कारण उनकी कुछ सिद्धियाँ उस पूर्व जन्म में प्रदर्शन करने से नष्ट हो जाती है। शेष अगले जन्म में जादूगर बनकर नष्ट कर देते हैं। पुनः पशु-पक्षियों के जीवन प्राप्त करते हैं।

उदाहरण के लिए सत्य कथा :- एक सिद्ध महात्मा के आश्रम में उसके कुछ शिष्य रहते थे। सबको सिद्ध जी ने तप साधना तथा कुछ शास्त्रविरूद्ध मंत्र जाप करने को बताया था जिनसे सिद्धियाँ प्राप्त करना उद्देश्य बताया था। यही जीवन की उपलब्धि बताई थी। उस सिद्ध के देहांत के पश्चात् उनका एक शिष्य उस डेरे का महंत बना दिया गया। जो बड़े सिद्ध के शिष्य थे, वे आश्रम त्यागकर भिन्न-भिन्न दिशाओं में अपनी साधना करने व उद्देश्य पूर्ति के लिए चले गए। उनमें दो घनिष्ठ मित्र थे। वे भी साधना करने के लिए एकांत में तथा अकेला रहने के उद्देश्य से अलग-अलग हो गए। एक का नाम गुलाब नाथ तथा दूसरे का नाम भानी नाथ था। गुलाब नाथ को कबीर परमेश्वर जी के अनुयाई संत का सत्संग सुनने को मिल गया। जिससे उसको अपनी साधना तथा उद्देश्य व्यर्थ लगा तथा परमेश्वर कबीर जी के ज्ञान को समझकर गुलाब नाथ जी ने कबीर पंथ में उस कबीर पंथी संत से दीक्षा ले ली तथा पूर्व के गुरू जी को तथा उनके बताए उद्देश्य तथा साधना को त्याग दिया। सत्य साधना करके सत्यलोक जाने तथा पुनः जन्म न प्राप्त करने के उद्देश्य से समर्पित होकर साधना करने लगा। उसकी निष्ठा देखकर कबीर पंथ संत उदय दास ने गुलाब नाथ का नाम गुलाब दास रख दिया तथा अपना उतराधिकारी बना दिया। कुछ समय के पश्चात् संत उदय दास जी का देहांत हो गया। गुलाब दास दीक्षा देने लगा। लगभग 12 वर्ष के पश्चात् एक दरिया के किनारे किसी धार्मिक धनी व्यक्ति ने धर्म यज्ञ का आयोजन किया। उसमें आसपास के सर्व संत-महात्माओं को आमंत्रित किया। संत गुलाब दास जी भी अपने कुछ शिष्यों के साथ उस संत समागम में गए। दैवयोग से उनका मित्र तथा पूर्व सिद्ध का शिष्य गुरूभाई भी आया हुआ था। दोनों का अचानक आमना-सामना हो गया। आपस में बाहें भरकर मिले। कुशलमंगल पूछा। फिर अपनी-अपनी आध्यात्मिक उपलब्धि बताने लगे। भानी नाथ जी ने अपने मित्र गुलाब दास जी से प्रश्न किया कि आपको क्या उपलब्धि हुई?

गुलाब दास ने उत्तर दिया कि मुझको सब कुछ मिल गया। परमेश्वर को प्राप्त करने तथा जन्म-मरण से छुटकारा प्राप्त करने का मार्ग मिल गया। भानी नाथ ने पूछा कि कोई सिद्धि दिखाओ जो आपको प्राप्त हुई हो। गुलाब दास ने कहा कि मुझे सिद्धि की आवश्यकता ही नहीं रही। भानी नाथ ने कहा कि मैं दिखाऊँ मुझे कितनी बड़ी सिद्धि प्राप्त हुई है। यह कहकर भानी नाथ उठा और दरिया के जल

पर ऐसे चल पड़ा जैसे पृथ्वी पर चलते हैं। दरिया के दूसरे किनारे पर जाकर वापिस आया और अपनी उपलब्धि को दिखाकर गर्व प्रदर्शित करते हुए बोला कि देखा 12 वर्ष की तपस्या का कमाल। गुलाब दास ने कहा कि हे मित्र! इस दरिया को पार करने का किराया नाविक एक आन्ना (पहले सोलह आन्नों का एक रूपया होता था) लेता है और वापिस आने का भी एक आन्ना किराया लेता है यानि दो आन्नों का खर्च होता है। आप जी ने बारह वर्षों में दो आन्नों की आध्यात्मिक कमाई की है। इससे जनता तो प्रशंसक हो सकती है, परंतु न जन्म-मरण छूटै, न ही मुक्ति हो सकती है। फिर इस व्यर्थ साधना रूपी डले ढ़ोने की क्या आवश्यकता है? जन्म नष्ट हो जाएगा। यह बात सुनकर भानी नाथ बहुत प्रभावित हुआ तथा गुलाब दास से सत्य ज्ञान समझा तथा उसका शिष्य बनकर भानी नाथ फिर भानी दास होकर सत्य साधना करने लगा। मानव जीवन सफल किया। यदि भानी नाथ जी को सत्य साधना नहीं मिलती तो जन्म-मरण चक्र बना रहता। अगले जन्म में जब भी मानव जीवन मिलता तो जादूगर बनकर शेष सिद्धियाँ समाप्त कर देता और पशु-पक्षियों आदि-आदि के शरीरों में कष्ट उठाता रहता। यह है जादूगर की कहानी। एक सिद्ध महात्मा ने गेहूँ की 80 बोरी आकाश मार्ग से उड़ाकर अपने मित्र सिद्ध के डेरे में भेज दी थी। वहाँ पर भोजन-भण्डारे का आयोजन था।

एक सिद्ध महात्मा अपनी सिद्धि का प्रभाव जमाने के लिए अन्य प्रसिद्ध सिद्ध के डेरे में गाँव-रामथली (जिला-अम्बाला, हरियाणा प्रान्त) गया। उस सिद्ध ने कई गायें रखी थी। जिस समय वह सिद्ध अपनी सिद्धि का प्रभाव दिखाने उस दूसरे सिद्ध के डेरे के निकट पहुँचा तो डेरे वाले सिद्ध ने देखा कि एक सिद्ध अपनी सिद्धि से एक सिंह (शेर) के ऊपर बैठकर डेरे की ओर चला आ रहा है। उस समय डेरे वाला सिद्ध डेरे की 3 फुट ऊँची चार दीवारी (Boundary Wall) पर बैठा दाँतुन कर रहा था। उसने अपने डेरे की ओर सिंह (Lion) पर बैठे सिद्ध को आते देखकर समझते देर न लगी कि उसका उद्देश्य क्या है? आने वाले सिद्ध बाबा को सिंह पर बैठा देखकर गाँव-रामथली (जिला-अम्बाला) के व्यक्ति भी उसके पीछे-पीछे चल लिए। जिस समय वह सिंह वाला सिद्ध डेरे से लगभग 60 फुट दूर रह गया तो डेरे वाले सिद्ध ने कहा कि हे चार दीवारी! चल सिद्ध का स्वागत करते हैं। ये दूर से चलकर आए हैं। उसी समय जिस दीवार पर डेरे वाला सिद्ध बैठा था, वह साठ (60) फुट आने वाले सिद्ध की ओर चलकर रूक गई। डेरे वाले सिद्ध ने नीचे उतरकर स्वागत किया। सिंह वाले सिद्ध ने कहा कि मेरे सिंह को कहाँ रखोगे? डेरे वाले ने कहा कि मेरी गायों वाले बाड़े (कांटेदार सूखी झाड़ियों से बने घेरे को बाड़ा कहते हैं) में छोड़ दो। सिंह को गायों के बीच छोड़ दिया। वह शेर चुपचाप गऊओं के बीच खड़ा हो गया। सिंह वाले सिद्ध की हार हुई और डेरे वाले सिद्ध की और महिमा हो गई। मोक्ष दोनों का नहीं। अगले मनुष्य जन्म में शेष सिद्धियाँ जादूगर बनकर प्रसिद्धि प्राप्त करते हैं। फिर 84 लाख जीवों के जन्म-मरण के चक्र में फँस जाते हैं। ऐसे सिद्ध पुरूष जब कभी मानव शरीर प्राप्त करते हैं तो बची हुई

सिद्धि-शक्ति से जादूगर प्रसिद्ध हो जाते हैं। जादूगर ऐसे प्राणी होते हैं।

प्रश्नः- मैं तो योगी उसी को मानता हूँ जो आसन करता है तथा कराता (सिखाता) है तथा किसी आसन विशेष पर आरूढ़ होकर तपस्या भक्ति करता है ?

उत्तरः- योगी वह भी कहलाता है परन्तु वह योगी तो एक मात्र प्राकृतिक चिकित्सक (वैद्य) है। यह अष्टांग योग प्रभु साधना में इसलिए सहयोगी माना गया है कि इससे शरीर स्वस्थ रहता है। स्वस्थ शरीर से भक्ति अच्छी होती है। परन्तु आध्यात्मिक मार्ग में उस योगी की भूमिका नहीं मानी जाती क्योंकि परमात्मा की सत्य साधना (योग) से साधक का असाध्य रोग भी ठीक हो जाता है। जिससे साधक की श्रद्धा अधिक बढ़ जाती है वह अधिक श्रद्धा से साधना (योग) करके परमात्मा प्राप्ति कर जाता है। एक अष्टांग योगी (आसन व क्रिया करने वाला) दुर्घटना की चपेट में आ गया दोनों टाँगें टूट गई। उनमें स्टील (इस्पात) की राड़ें (छड़ियाँ) डाली गई। वह आजीवन अष्टांग योग नहीं कर सका। किसी एक स्थान पर आसन पर बैठकर भी वह दुर्घनाग्रस्त व्यक्ति भक्ति भी नहीं कर सकता। आपके अनुसार तो वह भक्ति से वंचित रह जाएगा। शास्त्रानुकूल साधक का ऐसी घटनाओं से परमात्मा बचाव करता है।

श्री मद्भगवत् गीता अध्याय 3 श्लोक 4 से 8 में कहा है कि जो मूर्ख व्यक्ति हठ योग कर (एक स्थान पर किसी आसन पर आरूढ़ होकर) भक्ति करता है। वह पाखण्ड करता है क्योंकि वह केवल कर्म इन्द्रियों को हठ पूर्वक रोक कर स्थित है परन्तु ज्ञान इन्द्रियों द्वारा बाह्यय वस्तुओं के चिन्तन में लगा है। यदि अर्जुन तू एक स्थान पर किसी आसन पर आरूढ़ होकर बैठा रहेगा तो तेरा निर्वाह कैसे होगा? इसलिए संसारिक कर्म करता हुआ, परमात्मा को भी याद कर। गीता अध्याय 8 श्लोक 7 तथा 13 में तो यहाँ तक कहा है कि मेरा एक ॐ (ओं) अक्षर है समरण करने का उसका अन्तिम स्वांस तक समरण करने से मेरे वाली गति प्राप्त होती हैं इसलिए अर्जुन तू युद्ध भी कर तथा मेरा स्मरण भी कर।

विचार करें :- युद्ध से कठिन कार्य कुछ नहीं होता उसमें भी प्रभु का समरण करने को कहा है। इससे सिद्ध हुआ कि परमात्मा की भक्ति कार्य करते-करते करनी है। जो सर्व सद्ग्रन्थों में प्रमाण है। यजुर्वेद अध्याय 40 मन्त्र 15 में कहा है ! ओम् (ॐ) मन्त्र का समरण काम करते-करते कर, विशेष कसक के साथ समरण कर मानव जीवन का मूल कर्तव्य समझ कर समरण कर जिससे मृत्यु के पश्चात् तेरा लिंग शरीर अमर हो जाएगा। जब तक स्थूल शरीर है अर्थात् जीवित है तब तक समरण करने से लाभ प्राप्त होता है। इससे सिद्ध हुआ कि एक स्थान पर आसन लगाकर साधना करना शास्त्रविरूद्ध है। पाठकों के मन में यह भी प्रश्न उठेगा कि गीता ज्ञान दाता ने, गीता अध्याय 6 श्लोक 10 से 15 में यह भी कहा है कि एकांत स्थान में एक आसन पर बैठकर नाक के अगले भाग को देखें ऐसे साधना करें। इस प्रश्न का उत्तर पवित्र गीता जी से मिलता है। गीता ज्ञान दाता (काल रूपी ब्रह्म) ने गीता अध्याय 4 श्लोक 34 में कहा है कि तत्वज्ञान (पूर्ण मोक्ष मार्ग की भक्तिविधि के ज्ञान) को समझने के लिए तत्वदर्शी संतों से विनम्र भाव से पूछो फिर जैसा मार्गदर्शन वे करें। उस प्रकार साधना

कर। तत्वदर्शी संत की पहचान गीता अध्याय 15 श्लोक 1 व 4 में बताई है।

इस प्रकार गीता ज्ञान दाता प्रभु ने अपने आप को दोष मुक्त कर रखा है तथा अपने गीता ज्ञान में स्थान-2 पर कहा है कि यह मेरा मत (विचार) है। वास्तविक भक्ति विधि तो तत्वदर्शी सन्त ही बताएगा। इस (गीता अध्याय 6 श्लोक 10 से 15 वाले) ज्ञान का गीता अध्याय 3 श्लोक 4 से 8 में तथा अध्याय 6 के 16 में ही खण्डन किया है। पूर्ण परमात्मा द्वारा मिलने वाला पूर्ण मोक्ष (न एकांतम्) न तो एक स्थान पर विशेष आसन पर बैठने से सिद्ध होता है। न अधिक खाने वाले का न बिल्कुल न खाने वाले का (व्रत/उपवास रखने वाले का) न अधिक जागने वाले (हठयोग करने वाले) का न अधिक सोने वाले का सिद्ध होता है अर्थात् उपरोक्त क्रिया करने वाले की भक्ति व्यर्थ है। क्योंकि गीता अध्याय 6 श्लोक 10 से 15 में तो गीता ज्ञान दाता ने अपनी भक्ति साधना विधि बताई है। जिससे होने वाली मुक्ति (गति) को गीता अध्याय 7 श्लोक 18 में अश्रेष्ठ बताया है। जिस कारण से गीता अध्याय 4 श्लोक 5 में कहा है कि अर्जुन तेरे तथा मेरे बहुत जन्म हो चुके हैं। अर्थात् हम (मैं तथा मेरे साधक तथा तू) पूर्ण मोक्ष प्राप्त नहीं कर सकते। इसलिए गीता ज्ञान दाता ने गीता अध्याय 18 श्लोक 62, अध्याय 15 श्लोक 4 में किसी अन्य परमात्मा की साधना करने को कहा है तथा उस परमात्मा की भक्तिविधि कोई तत्वदर्शी (पूर्ण) सन्त बताएगा। (इसलिए पाठक जन भ्रमित न होकर तत्वज्ञान को समझें।)

श्री विष्णु पुराण के जिस विवरण के विषय में आपने कहा है उसका निष्कर्ष यह है कि ''श्री पराशर जी ने अपने शिष्य श्री मैत्रेय जी को बताया है कि जो श्राद्ध कर्म (पितर पूजा) आदि के विषय में आपने मुझ से पूछा है यही प्रश्न राजा सगर ने भृगु वंशी ऋषि और्व जी से पूछा था। जो और्व ऋषि ने राजा सगर से श्राद्ध कर्म (पितर पूजा) के विषय में बताया था वह मैं आप को सुनाता हूँ ध्यान पूर्वक सुन! पाठक जन कृपया पूर्ण वार्ता श्री विष्णु पुराण तृतीय अंश के अध्याय 13 से 16 पृष्ठ 203 से 215 तक पढ़ें। यहां पर पुस्तक विस्तार को ध्यान रखते हुए, संक्षिप्त व सांकेतिक विवरण विवेचन के साथ लिखा जाता है। सर्वप्रथम तो श्री विष्णु पुराण के वक्ता महर्षि पाराशर जी को तत्वज्ञान रूपी तुला में तोलते हैं। निर्णय करते हैं कि पाराशर जी कितने विद्वान थे।

श्री पराशर महर्षि जी ने श्री विष्णु पुराण द्वितीय अंश के अध्याय 7 श्लोक 5 में पृष्ठ संख्या 126-127 पर ग्रहों की जानकारी दी है। जिसमें पृथ्वी के निकटतम् सूर्य को बताया जिसकी पृथ्वी से दूरी एक लाख योजन अर्थात् तेरह लाख किलो मीटर बताई इसके पश्चात् बताया है कि चन्द्रमा सूर्य ये भी एक लाख योजन दूर है। जिसकी पृथ्वी से दूरी 2 लाख योजन (26 लाख किलो मीटर) बताई है।

विचार करें वर्तमान में (सन् 2006 तक की खोज से) स्पष्ट हो चुका है कि चन्द्रमा पृथ्वी के निकटतम् है जिसकी पृथ्वी से दूरी सूर्य की तुलना में कई गुणा कम है।

दूसरा प्रमाण :- श्री विष्णु पुराण प्रथम अंश अध्याय 5 पृष्ठ 17 पर दिन-रात कैसे बने हैं। इसकी जानकारी ये है। श्री पारासर जी ने कहा कि प्रजापति ब्रह्मा जी

सृष्टि-रचना की इच्छा से युक्तचित हुए तो तमोगुण की वृद्धि हुई। सब से पहले असुर उत्पन्न हुए। ब्रह्मा ने उस शरीर को त्याग दिया वह छोड़ा हुआ शरीर रात्रि हुआ। दूसरा शरीर धारण किया उस शरीर से देव उत्पन्न हुए। प्रजापति ब्रह्मा ने वह शरीर भी त्याग दिया। वह त्यागा हुआ शरीर दिन हुआ। पाठक जन कृप्या विचार करें क्या ये विचार एक विद्वान के हैं।

श्री विष्णु पुराण के वक्ता का सामान्य ज्ञान भी ठीक नहीं है तो उसके द्वारा बताया गया अध्यात्मिक ज्ञान कैसे ठीक हो सकता है। श्री पराशर जी ने फिर ग्रहों की अन्य व्याख्या की है :- श्री विष्णु पुराण के वक्ता श्री पराशर जी ने श्री विष्णु पुराण (गीता प्रैस गोरखपुर से ही प्रकाशित) के द्वितीय अंश के अध्याय 8 के श्लोक 1 से 7 में पृष्ठ 129 पर सुर्य (जो अग्नि पिण्ड आकाश में तप रहा है) के रथ के विषय में कहा है ''सूर्य के रथ का विस्तार नो हजार योजन है। इसके जूआ और रथ के बीच की दूरी 18 हजार योजन है। इसका धुरा डेढ़ करोड़ सात लाख योजन है। अर्थात् एक करोड़ 57 लाख योजन लम्बा है। जिसमें उसका पहिया लगा है आदि–2 बहुत कुछ लिखा है। **कृपया पाठक जन विचार करें क्या यह ज्ञान किसी विद्वान पुरूष का हो सकता है। श्री विष्णु पुराण में इसी अग्नि पिण्ड सूर्य के विषय में पृष्ठ 166 से 167 पर तृतीय अंश के अध्याय 2 के श्लोक 1 से 13 में श्री पाराशर ऋषि ने कहा है कि** ''सूर्य का विवाह विश्वकर्मा की बेटी संज्ञा से हुआ उससे दो पुत्र मनु व यम तथा एक कन्या यमी उत्पन्न हुई। सूर्य की पत्नी संज्ञा अपने पति के तेज से दुःखी होकर तपस्या करने के लिए वन में चली गई। वहां घोड़ी का रूप बना कर तपस्या करने लगी अपने स्थान पर अपनी हमशक्ल अन्य स्त्री प्रकट की उसका नाम छाया रखा तथा उससे संज्ञा ने कहा तू मेरे पति की पत्नी बनकर रह। यह भेद किसी को मत बताना। मेरा पति तुझे संज्ञा ही समझेगा। छाया ने कहा जो आपकी आज्ञा। सूर्य ने छाया को संज्ञा जानकर दो संतान उत्पन्न की, एक लड़का तथा एक लड़की।

एक दिन भेद खुलने पर सूर्य अपने श्वशुर विश्वकर्मा के पास गए तथा विश्वकर्मा से कहा आप मेरा तेज छांट दो इस तेज के डर से आपकी बेटी संज्ञा वन में चली गई है। श्री विश्वकर्मा जी ने सूर्य को भ्रमीयन्त्र (सान) पर चढ़ा कर उसका तेज छांटा (काट दिया) वह कचरा (खराद से छटा हुआ कट पीस) धरती पर गिरा जिससे श्री विश्वकर्मा ने भगवान विष्णु का ''चक्र'' भगवान शिव का त्रिशुल तथा कुबेर का विमान आदि–2 बनाए। तत् पश्चात सूर्य घोड़ा बन कर संज्ञा के पास वन में गया। संज्ञा से घोड़ी रूप में ही संभोग करके तीन पुत्र उत्पन्न किए। दो घोड़ी के मुख से उत्पन्न हुए उनको अश्वनी कुमार कहा जाता है। जिनके नाम है (1) नासत्य (2) दस्र ये दोनों अश्वनी कुमार देवताओं के वैद्य बने तथा तीसरा पुत्र रेतःस्राव उत्पन्न हुआ जहां पर सूर्य का वीर्य उस समय गिरा था। जब वह घोड़ी रूप धारी संज्ञा के मुख की ओर ही घोड़ा रूप में संभोग करने की कोशिश कर रहा था। वहां गिरे वीर्य से रेतःस्राव पुत्र जमीन पर ही उत्पन्न हो गया। वह घोड़ा पर बैठा हुआ हाथ में धनुष आदि लिए हुए उत्पन्न हुआ था जिस स्थान पर इस आग के गोले (अग्नि पिण्ड) सूर्य ने घोड़े का रूप धारण करके घोड़ी रूप नारी संज्ञा से संभोग किया था। जहां दो पुत्र अश्विनी कुमार (नासत्य तथा दस्र) उत्पन्न किए थे। उस तीर्थ का नाम अश्व तीर्थ, भानु तीर्थ और पंचवटी आश्रम के नाम से विख्यात हुआ सूर्य की दोनों कन्याएं दो नदीयों अरूणा, वरूणा नाम से अपने पिता से मिलने आई थी

उन दोनों का जहां गंगा नदी में संगम हुआ है वह बहुत उत्तम तीर्थ उन तीर्थों में स्नान करने से व दान करने से अक्षय धन देने वाला है। उस तीर्थ का समरण, कीर्तन, श्रवण (सुनने) करने से सर्व पापों का नाश होकर मनुष्य सुखी हो जाता है। **(उपरोक्त विवरण मार्कण्डेय पुराण गीता प्रेस गोरखपुर से प्रकाशित पृष्ठ 172 से 175 अध्याय वैवस्वत मन्वन्तर की कथा तथा सावर्णिक मन्वन्तर का संक्षिप्त परिचय से तथा ब्रह्म पुराण अध्याय ''जन स्थान, अश्व तीर्थ, भानु तीर्थ और अरूणा वरूणा संगम की महिमा से तथा विष्णु पुराण के तृतीय अंश के अध्याय 2 श्लोक 1 से 13 पृष्ठ 166-167 से लिया गया है)** इसी विष्णु पुराण द्वितीय अंश के अध्याय 8 श्लोक 41 से 52 तक तथा पृष्ठ 132 पर कहा है कि सूर्य कभी दिन में तेज गति से चलता है कभी रात्री में मंद गति से चलता है इस प्रकार अपना एक दिन रात का चक्र मण्डलाकार में घूम कर पूरा करता है। **{पुराण वक्ता का भाव है कि सूर्य के पृथ्वी के चारों ओर चक्र लगाने से दिन रात बनते हैं जब कि वर्तमान में (सन् 2006 तक की खोज में)स्पष्ट हो चुका है कि पृथ्वी स्वयं घूमती है जिस कारण से दिन-रात बनते हैं तथा पृथ्वी एक वर्ष में (364 (दिन में) सूर्य के चारों ओर भी घूमती है जिस कारण से दिन-रात छोटे बड़े बनते हैं।}**

पुराण के वक्ता ने यह भी लिखा है कि शाम के समय (संध्या समय) मन्देहा नामक भयंकर राक्षक गण सूर्य को खाना चाहते है। संध्या काल में उनका सूर्य से भयंकर युद्ध होता है।

निष्कर्ष :- उपरोक्त पुराण के लेख से पुराण के वक्ता श्री पाराशर ऋषि के आध्यात्मिक व सामान्य ज्ञान का पता चलता है कि वह विद्वान नहीं था। फिर उस महापुरूष द्वारा बताया श्राद्ध कर्म जिसे आप करते हैं। वह कैसे श्रेष्ठ माना जाए। जबकि पवित्र वेदों व पवित्र गीता जी आदि प्रभुदत्त सद्ग्रन्थों में श्राद्ध कर्म व देवताओं की पूजा को मूर्खों की साधना लिखा है। पूर्वोक्त लेख में रूची ऋषि के प्रकरण में आपने पढ़ा जिसमें वेदों के ज्ञाता रूची ऋषि जी अपने पितरो को वेदों के प्रमाण दे कर कह रहा है कि श्राद्ध कर्म, देवताओं की पूजा, भूत (प्रेत) पूजा को वेदों में मूर्खों की साधना कहा है। फिर आप मुझे किसलिए शास्त्रविरूद्ध साधना करने की प्रेरणा दे रहे हो। श्री रूची ऋषि जी व चारों पितर भी, इसी बात का समर्थन कर रहे हैं कि यह तो सत्य है कि वेदों में श्राद्ध कर्म, देवताओं की पूजा, प्रेत (भूत) पूजा का निषेध है। मूर्खों की पूजा कहा है। इसमें तनिक भी संदेह नहीं है। इसके पश्चात् पितरों ने अपने भोले-भाले वंशज रूची ऋषि को शास्त्रविधि अनुसार साधना त्यागने तथा शास्त्रविधि विरूद्ध मनमाना आचरण (पूजा) करने के लिए विवश कर दिया जिस कारण से श्री रूचि ऋषि भी शास्त्रविधि त्यागकर मनमाना आचरण (पूजा) करके मानव जीवन को व्यर्थ करके पितर जूनी (योनि) को प्राप्त हुआ। श्री मद्भगवत् गीता जी (जो चारों वेदों का सारांश है।) के अध्याय 16 श्लोक 23-24 में कहा है कि जो साधक शास्त्र विधि त्याग कर मनमाना आचरण (पूजा) करता है। उस को न तो सिद्धि प्राप्त होती है, न उसकी परमगति (मोक्ष) होती है न कोई सुख ही प्राप्त होता है अर्थात् उस शास्त्रविरूद्ध साधना करने वाले योगी (भक्त) का जीवन नष्ट हो जाता है। यह प्रमाण गीता अध्याय 16 श्लोक 23 में है। श्लोक 24 में लिखा है कि जो साधना ग्रहण करनी चाहिए तथा जो त्यागनी चाहिए उसके लिए तुझे शास्त्र (चारों वेद) ही प्रमाण है। अन्य

किसी के लोक वेद (दन्त कथा) का अवलम्बन नहीं करना चाहिए।

प्रश्न :- पुराणों की रचना किस कारण हुई? वेदों को छोड़ कर श्रद्धालु पुराणों पर ही किस कारण से आसक्त हो गए?

उत्तर :- पवित्र श्री मद्भगवत् गीता जी चारों वेदों का सारांश है। गीता के अध्याय 4 श्लोक 34 में तथा यजुर्वेद अध्याय 40 मन्त्र 10 व 13 में लिखा है कि गीता व वेद ज्ञान दाता प्रभु कह रहा है कि पूर्ण परमात्मा को कोई उत्पन्न होने वाला अर्थात् जन्म लेने वाला कहता है, तो कोई उत्पन्न न होने वाला कहता है परन्तु उस परमात्मा के तत्वज्ञान को तत्वदर्शी (धीराणाम्) सन्तजन ही बताऐंगे। उनसे विनम्रता से पूछो। ऋषियों ने वेदों को पढ़ा उनके अनुसार तथा काल प्रेरणा से हठयोग से तप आदि साधनाऐं की। जिससे परमात्मा प्राप्ति नहीं हुई। उस साधना से सिद्धीयाँ प्राप्त करके चमत्कार करने लगे, आशीर्वाद देने लगे। साधारण व्यक्तियों को अत्यंत लाभ होने लगे जिस कारण से साधारण जनता उन ऋषियों की प्रत्येक बात पर अटूट विश्वास करने लगी। ऋषियों के शरणागत व्यक्ति ऋषियों के प्रवचन सुनते ऋषि जी कहते कि परमात्मा की भक्ति करनी चाहिए नहीं तो मानव जन्म व्यर्थ है। अनुयाई कहते थे कि हे गुरुवर! आप जैसी कठिन साधना हम नहीं कर सकते। वे ऋषि जन अपने अनुयाईयों को कोई भी साधना करने को कह देते थे। अनुयाई अपने गुरूदेव ऋषि द्वारा बताई शास्त्रविरूद्ध साधना करने लगे। जिस उद्देश्य से साधना करते जैसे पुत्र प्राप्ति, पुत्र विवाह, धन वृद्धि, कष्ट निवारण आदि। उनमें से कुछेक को यह लाभ उन ऋषियों के आशीर्वाद से तथा अपने पूर्व जन्म के पुण्यों से प्राप्त हो जाता। परन्तु अनुयाईयों की शास्त्रविरूद्ध साधना जो उनके गुरू ऋषि ने बताई थी उस से कोई लाभ नहीं होता था। श्रद्धालु मानते थे कि हम जो भक्ति कर रहे हैं इसी से हमें लाभ हो रहा है। जिस कारण से उन ऋषियों के अनुयाई शास्त्रविरूद्ध साधना पर आरूढ़ होते चले गये। इसके पीछे काल भगवान (काल रूपी ब्रह्म, जो ब्रह्मा, विष्णु, शिव का पिता है) की चाल है। वह चाहता है कि सर्व प्राणी शास्त्रविरूद्ध साधना करके मेरे (काल के) जाल में फंसे रहें। यदि कोई ज्ञानी व्यक्ति परमात्मा को वेदों के अपने आधार से समझ कर कि केवल एक पूर्ण परमात्मा की भक्ति करने से मोक्ष होता है। वह वेदों के अनुसार साधना करके भी काल जाल से नहीं निकल सकता। क्योंकि वेदों में भक्ति विधि केवल ब्रह्म तक की है। पूर्ण मोक्ष तो परम अक्षर ब्रह्म की उपासना से ही सम्भव है। उसको तत्वदर्शी सन्त बताता है। वह तत्व दृष्टा सन्त उन ऋषियों को नहीं मिला। उन ऋषियों के अनुयाई अपने गुरूदेव जी के बताए अनुसार किसी भी मन्त्र का जाप करते, या किसी दरिया (नदी) में स्नान करने या कोई पत्थर का या मिट्टी का लींग बनाकर उसकी पूजा करते उनको उस ऋषि की भक्ति कमाई से आशीर्वाद द्वारा तथा अपनी पूर्व जन्म की भक्ति से वांच्छित लाभ मिल जाता। क्योंकि सत्ययुग में बहुत ही पुण्यकर्मी मानव जन्म लेते हैं। उनके पूर्व जन्म के शुभकर्म अत्यधिक होते हैं। अधिकतर उनकी मनोकामना पूर्ती पूर्व जन्म के पुण्यों से ही होती है। वे श्रद्धालु उस शास्त्र विरूद्ध साधना को सत्य जानकर करते थे तो वे समझते थे कि जो साधना

(नाम जाप, मूर्ति पूजा या नदी स्नान) की है उसी से मेरी मनोकामना पूर्ण हुई है। वास्तव में वह लाभ उन साधकों को पूर्व जन्म के शुभ कर्मों से प्राप्त होता था। कुछ उस ऋषि गुरु के आशीर्वाद से प्राप्त होता था। उस ऋषि गुरु की भक्ति कम हो जाती थी। जैसे कोई धनी व्यक्ति अपने प्रशंसकों को अपने पास से धन दे देता है तो उसका धन क्षय हो जाता है। उसी से उसके साथियों को आर्थिक लाभ हो जाता है यदि वह धनी व्यक्ति अपना कारोबार न करके केवल धन बांटता रहता है तो वह निर्धन हो जाता है। इसी प्रकार ऋषिजन कुछ दिन जंगल में जाकर सिद्धियाँ प्राप्ति की साधना करके आते। पश्चात् उसी को अपने अनुयाईयों में बांट देते। अन्त में भक्तिहीन होकर पितर योनि को प्राप्त हो जाते थे। ऋषियों के ऋषि शिष्य अपने गुरू जी ऋषि से कहते हैं हे गुरूवर ! आपने जो मन्त्र जाप (ओम् गुरू, ओम् नमोः भगवत् वासुदेवायः, ओम् ऐ नमः आदि) अमूक व्यक्ति को जाप करने को दिया तथा नदी में स्नान करने की विधि बताई थी तथा मूर्ति पूजन, लींग पूजना का विधान बताया था जिससे उस व्यक्ति को मन वांछित फल प्राप्त हुआ। यह सर्व मन्त्र व विधि वेदों में कहीं नहीं लिखी है। इनको करना तो शास्त्रविरूद्ध साधना है। जो हानीकारक बताई है। आप यह शास्त्रविरूद्ध साधना किस लिए बताते हो? इस शास्त्रविधि विरूद्ध साधना से लाभ भी उनको हो रहा है। जबकि वेदों व गीता में लिखा है कि शास्त्रविधि को त्याग कर जो साधक मनमाना आचरण (पूजा) करता है उसको कोई लाभ नहीं होता। न तो उससे सिद्धी की प्राप्ति होती है। न कोई सुख होता है, न उसकी परम गति होती है (गीता अध्याय 16 श्लोक 23 में भी प्रमाण है)। आपके द्वारा बताई विधि से लाभ मिलता है तो क्या वेदों व गीता में लिखा विवरण ठीक नहीं है। ऋषि जी उत्तर देते थे :- यजुर्वेद अध्याय 40 मन्त्र 10 व 13 में (तथा गीता अध्याय 4 श्लोक 34 में) लिखा है कि जिस तत्वज्ञान को वेद भी नहीं जानते उसको तत्वदर्शी सन्त जन (ऋषिजन) जानते हैं। वह तत्वज्ञान हमारे पास है। उसी के आधार से हम यह साधना बताते हैं। इस कारण वे ऋषियों के शिष्य ऋषिजन भी अपने गुरूदेव के अज्ञान को तत्वज्ञान जानकर शास्त्रविधि त्यागकर मनमुखी जाप करने लगे। जब किसी को लाभ नहीं होता तो वे अज्ञानी ऋषि गुरूजन अपने ऋषि शिष्यों को कठिन हठ योग करने को कहने लगे। किसी को जल में खड़ा होकर, किसी को शिर्षासन पर (ऊपर पैर करके सिर जमीन पर रख कर), किसी को पदमासन पर बैठकर साधना करने को कहने लगे। जिस कारण से उन शिष्य ऋषियों में कुछ अपने पूर्व जन्म के शुभ कर्मों से तथा सिद्धियाँ वर्तमान के हठयोग तप से तथा कुछ गुरूजी की कमाई से आर्शीवाद द्वारा(यदि उस ऋषि की शेष हो तो) सिद्धियाँ प्राप्त हो जाती। उसके पश्चात् वो शिष्य स्वयं गुरू बनकर अपने अनुयाईयों को अन्य मनमुखी साधना बताने लगे। जिसकारण से सर्व भक्त समाज शास्त्रविधि त्याग कर मनमाना आचरण (पूजा) करने लगा है।

प्रमाण :- (1) श्री देवी पुराण छठा स्कन्ध अध्याय 10 पृष्ठ 414 पर महर्षि व्यास जी राजा जनमेजय को ज्ञान सुना रहे हैं :- कहा हे राजन् ! यह निश्चय है कि सतयुग में ब्राह्मण

वेद के पूर्ण विद्वान थे।। वे भगवती जगदम्बा की निरन्तर आराधना करते थे। भगवती के दर्शन करने के लिए वे सदा ललायित रहते थे। गायत्री के ध्यान, प्राणायाम् और जप में वे अपना सारा समय व्यतीत करते थे। माया बीज का जाप करना उनका प्रधान कार्य था। प्रत्येक गाँव में शक्ति (दुर्गा) का मन्दिर स्थापित हो यह उन सतयुग के ब्राह्मणों की हार्दिक इच्छा रहती थी। तत्वज्ञान के पारगामी उन ब्राह्मणों द्वारा जो भी कर्म होता था। उस में सत्य, दया और शौच ये तीन गुण निहित रहते थे।(लेख समाप्त)

सार विचार :- उपरोक्त उल्लेख श्री देवी पुराण से है। इसमें कहा है कि सतयुग के ब्राह्मण वेद के पूर्ण विद्वान होते थे अर्थात् तत्वदर्शी होते थे। पूजा देवी की करते थे। गाँव-गाँव दुर्गा के मन्दिर बनवाना चाहते थे।

अन्य प्रमाण :– (2) श्री देवी पुराण प्रथम स्कन्ध अध्याय 4 पृष्ठ 28-29 पर श्री ब्रह्मा जी के पूछने पर श्री श्री विष्णु जी ने कहा मैं श्री भगवती शक्ति के सदा आधीन रहता हूँ उसी के आधीन होकर मैं शेष शय्या पर सोता हूँ उत्पत्ति समय जागता हूँ। मैं निरन्तर उसी भगवती शक्ति (दुर्गा) का ध्यान करता हूँ मेरे विचार में इस शक्ति से बढकर कोई देवता नहीं है। मैं अधिकतर समय तप करने तथा राक्षसों का संहार करने में ही व्यतीत करता हूँ।

विशेष विचार :- विचार करने योग्य बात है कि वेदों में कहीं पर भी दुर्गा (प्रकृति) की पूजा करने का प्रावधान नहीं है। केवल ब्रह्म अर्थात् क्षर पुरूष की साधना ॐ नाम के जाप द्वारा करने का उल्लेख है। पूर्ण ब्रह्म अर्थात् परम अक्षर पुरूष की पूजा से पूर्ण मोक्ष होता है। उसका ओम्-तत्-सत् मन्त्र जाप हैं जिस में तत् तथा सत् मन्त्र सांकेतिक हैं। जिनके विषय में तत्वदर्शी सन्त बताएगा। यह उल्लेख वेदों तथा श्री मद्भगवत् गीता में है। ब्रह्म साधना का ॐ (ओं) मन्त्र है। परन्तु यह भी पूर्ण मोक्ष दायक नहीं है। इस प्रकार वेद ज्ञान हीनों को तत्वदर्शी कहा जाता था। तथा उनके द्वारा बताया भक्ति मार्ग सर्व श्रद्धालुओं ने ग्रहण कर लिया। जो व्यर्थ है। जबकि श्री देवी जी (दुर्गा जी) ने (श्री देवी पुराण के सातवें स्कन्ध के अध्याय 36 पृष्ठ 562 से 563 तक में) कहा है कि ''उस ब्रह्म का क्या स्वरूप है ?– यह बतलाया जाता है। जो प्रकाश स्वरूप, सबके अत्यन्त समीप में स्थित महान् पद अर्थात् परम प्राप्य है। वह समस्त पूजा के ज्ञान से परे है– अर्थात् किसी कि बुद्धि में आने वाला नहीं है। यह तुम जानो। जो प्रकाश स्वरूप है, जो सुक्ष्म से भी अत्यन्त सुक्ष्म है। जिसमें सम्पूर्ण लोक और उन लोकों में निवास करने वाले प्राणी स्थित हैं। यह वह ''अक्षर ब्रह्म'' है। वह परम सत्य और अमृत–अविनाशी तत्व है। तुम उस वेधने योग्य लक्ष्य का तुम वेधन करो–मन लगाकर उसमें तन्मय हो जाओ। उस एक परमात्मा को ही जानों दूसरी बातें छोड़ दो। वह परमात्मा सर्व प्राणियों के हृदय में अन्तर्यामी रूप से वर्तमान रहता है। इस विश्वात्मा अर्थात् ब्रह्म का ॐ नाम के जाप के साथ ध्यान करो। इस से अज्ञानमय अन्धकार से सर्वथा परे और संसार समुन्द्र से उस पार जो ब्रह्म है। उसको पा जाओगे। वह सबका आत्मा ब्रह्म–ब्रह्मलोक रूप दिव्य आकाश में स्थित है। उसे धीर पुरूष अर्थात् तत्वदर्शी सन्त (धीर–बुद्धिमान पुरूष) अपने विज्ञान (तत्वज्ञान) के द्वारा उस अविनाशी ब्रह्म को देख लेते हैं। उस पुरूषोतम् को देख लेने पर इस जीव की अविद्या नष्ट हो जाती है। वह निर्मल और निष्कलंक ब्रह्म

प्रकाशमय पर दिव्य परम धाम में विराजित है। यह सम्पूर्ण विश्व सर्व श्रेष्ठ ब्रह्म ही है। जो श्रेष्ठ पुरूष इस प्रकार अनुभव करते हैं वे ही कृतार्थ हैं। वे ब्रह्म को प्राप्त पुरूष नित्य प्रसन्नचित रहते हैं। (लेख समाप्त)

सार विचार :- पूर्वोक्त उल्लेख में श्री देवी पुराण के छठे स्कन्ध के अध्याय 10 पृष्ठ 414 पर व्यास जी ने बताया है कि सतयुग के ब्राह्मण वेद के महाविद्वान अर्थात् तत्वदर्शी थे। वे देवी की अराधना करते थे। उपरोक्त उल्लेख में इसी श्री देवी पुराण में श्री देवी जी कह रहीं हैं कि उस ब्रह्म की उपासना करो उसका ॐ मन्त्र जाप करने का है। अन्य सर्व बातें त्याग दो। वह ब्रह्म, ब्रह्मलोक में है। उसी की पूजा से संसार समुद्र से उस पार जो ब्रह्म है उसको पा जाओगे। वह निर्मल और निष्कलंक ब्रह्म दिव्य धाम में विराजित है। श्री विष्णु भगवान तो (श्री देवी पुराण प्रथम स्कन्ध अ. 4 पृष्ठ 28-29) कह रहे हैं कि देवी दुर्गा से बढ़कर कोई भगवान नहीं है। मैं इसी की पूजा करता हूँ अन्य ऋषि जन भी देवी दुर्गा को ही प्रभु मानकर पूजा करते थे। उसके मन्दिर भी बनाए जाते थे। जबकि देवी दुर्गा (प्रकृति) कह रही है कि कोई अन्य पूर्ण परमात्मा है उसकी पूजा करनी चाहिए। इससे सिद्ध हुआ कि न तो श्री विष्णु जी को वेदों का ज्ञान है न अन्य ऋषियों को वेदों का ज्ञान था। केवल लोक वेद (सुना सुनाया क्षेत्रीय ज्ञान) ही सुनते सुनाते थे। श्री देवी यह भी कह रही है कि सर्व संसार ही ब्रह्म है। यह ज्ञान विचलित करने वाला है। इस से ऊपर का वेद ज्ञान है जो श्री देवी (दुर्गा) ने बताया है। ब्रह्म काल तथा दुर्गा (प्रकृति देवी) जी दोनों यथार्थ ज्ञान के साथ-2 भ्रमित ज्ञान भी प्रदान करते हैं। कारण यह है कि ये नहीं चाहते की काल ब्रह्म के अन्तर्गत प्राणियों को तत्वज्ञान हो जाए। इसलिए भ्रमित ज्ञान देकर ऋषि, महर्षि तथा देव व ब्राह्मण व श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु तथा श्री शिव जी भी तत्वज्ञान से परिचित नहीं है। इसी कारण से सर्व का जन्म-मरण का चक्र चलता रहता है। पूर्ण परमात्मा स्वयं इस ब्रह्म काल के लोक में प्रकट होकर तत्वदर्शी सन्त की भूमिका करके तत्वज्ञान प्रदान करते हैं।

उदाहरण :- संक्षिप्त ब्रह्म पुराण (गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित) के अध्याय ''अहिल्या संगम तीर्थ का महात्यम्'' पृष्ठ 158-159 श्री ब्रह्मा जी ने कहा :– मैंने एक सुन्दर कन्या की उत्पत्ति की युवा होने पर उसकी शादी करने का विचार आया। उस लड़की को पत्नी रूप में प्राप्त करने के लिए इन्द्र, वरूण, आदि कई देवता आए। मेरे से उस कन्या को पत्नी रूप में देने की प्रार्थना करने लगे। मैं उस कन्या का विवाह गौतम ऋषि से करना चाहता था। अधिक देवगण होने के कारण मैंने एक शर्त रखी की जो पृथ्वी की प्रदीक्षणा देकर (पृथ्वी का चक्कर लगाकर) सर्वप्रथम आएगा उसी के साथ अहिल्या नामक कन्या का विवाह किया जाएगा। सर्व देव चले गए। गौतम ऋषि ने एक गाय देखी जो बच्चे को जन्म दे रही थी। आधा बच्चा बाहर था आधा अन्दर। गौतम ऋषि ने उस सुरभी की पृथ्वी भाव से परीकृमा की। इसके साथ ही गौतम ऋषि ने शिव लींग की भी प्रदक्षिणा की और सर्वप्रथम लौट कर मेरे पास (ब्रह्मा के पास) आ गया। मैं (ब्रह्मा) भी उस कन्या अहिल्या का विवाह गौतम से करना चाहता था। गौतम ने मुझसे कहा '' कमलासन ! विश्वात्मन् आप को बारम्बार नमस्कार है। ब्रह्मन् ! मैने सारी वसुधा की प्रदक्षिणा कर ली !

(ब्रह्मा जी ने कहा है) मैंने ध्यान द्वारा देखा सब बातें जान कर गौतम से कहा ब्रह्मर्षे ! तुम्हीं को यह सुन्दर कन्या दी जाती है। वास्तव में तुमने पृथ्वी की प्रदक्षिणा कर ली है। जो वेदों के लिए भी दुर्बोध है (अर्थात् जिस बात का ज्ञान वेदों में भी नहीं है) उस धर्म का स्वरूप तुम जानते हो। जो गाय आधा प्रसव कर चुकी हो वह सात द्वीपों वाली पृथ्वी के तुल्य है। उसकी प्रदक्षिणा की जाए तो समूची पृथ्वी की परिक्रमा हो जाती है। शिव लिंग की प्रदक्षिणा का भी यही फल है''

विचार करें :- श्री ब्रह्मा जी को काल सृष्टि में वेदों का उत्कृष्ट विद्वान माना जाता हैं उसके द्वारा कहे वचन वेद वचन माने जाते हैं। ब्रह्मा जी को वेदों का बिल्कुल ज्ञान नहीं है। इसी का प्रमाण उनके द्वारा बताए उपरोक्त ज्ञान से मिलता है। गौतम के मन में प्रेरणा काल ब्रह्म ने की तथा फिर ब्रह्म ने अपनी मनोकामना पूर्ति के लिए उस शास्त्रविरूद्ध साधना की पुष्टि अपने पुत्र रजगुण ब्रह्मा में प्रेतवत् प्रवेश होकर कर दी की गाय की प्रदक्षिणा और शिव लींग की प्रदक्षिणा का फल पूरी पृथ्वी की परिक्रमा का ही फल होता है। श्री ब्रह्मा जी के मुख से निकले वचनों को सर्व देवताओं तथा ऋषियों को स्वीकार करना पड़ता है। इस प्रकार इन पुराणों की रचना हुई। जो बाद में महर्षि वेद व्यास (कृष्ण द्वैपायान) ने लीपी बद्ध किया। विष्णु पुराण के प्रथम अंश के अध्याय 15 श्लोक 11 से 51 पृष्ठ 63 से 66 पर लिखा है ''पूर्व समय में वेद वेताओं (तत्वदर्शी सन्तों में) श्रेष्ठ एक कण्डु नामक मुनिश्वर थे। उसने गोमती नदी पर घोर तप किया। फिर एक प्रम्लोचा अप्सरा ने उनका तप खण्ड किया उसके साथ नौ सौ वर्ष विलास किया फिर वह चली गई। **विचार करे :- पवित्र गीता जी जो वेदों का सारांश है, उसके अध्याय 16 व 17 तथा अध्याय 3 में प्रमाण है। हठ योग द्वारा घोर तप करना व्यर्थ है जैसे गीता अध्याय 3 श्लोक 4 से 8 में कहा है कि जो व्यक्ति एक स्थान पर बैठकर तप को तपता है वह शास्त्रविरूद्ध साधक है। गीता अध्याय 17 श्लोक 5 तथा 6 में घोर तप करना मना है। श्री गौतम ऋषि, कण्डू आदि ऋषियों ने जो वेद विरूद्ध वचन कहे उनके कारण अन्य अनुयाईयों को उन ऋषियों की भक्ति कमाई से लाभ हुआ। जिस कारण से उन तत्वज्ञान हीन ऋषियों को तत्वेता(तत्वज्ञान को जानने वाला) कहा जाने लगा। जबकि पवित्र श्रीमदभगवत् गीता अध्याय 4 श्लोक 34 में वर्णित तत्वदर्शी सन्त की पहचान गीता अध्याय 15 में 1 से 4, 16 से 17 श्लोकों में बताई है कि जो सन्त या ऋषि उल्टे लटके संसार रूपी वृक्ष का विस्तृत विवरण बताए वह (वेदवित्) वेद के तात्पर्य को जानने वाला अर्थात् तत्वदर्शी सन्त है। जैसे ऊपर को जड़ (मूल) तो परम अक्षर ब्रह्म अर्थात् पूर्ण ब्रह्म जानों। जमीन से बाहर जो वृक्ष का हिस्सा तुरन्त दिखाई देता है। वह तना अक्षर पुरूष अर्थात् परब्रह्म जानों। उस तने की एक मोटी डार को क्षर पुरूष अर्थात् ब्रह्म जानों तथा उस मोटी डार की तीन शाखाओं को रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु, तथा तमगुण शिव जी जानों, उन शाखाओं पर लगे पतों को अन्य संसारी प्राणी जानो। यह उपरोक्त ज्ञान स्वयं पूर्ण परमात्मा ही बताता है। वह स्वयं कुछ दिन इस काल के लोक में अतिथी की तरह रहता है। अपने तत्वज्ञान को लोकोक्तियों, दोहों व साखीयों तथा कविताओं (शब्दों-भजनों) के द्वारा उच्चारण**

करता है। उसी पूर्ण परमात्मा ने कलयुग में अवतरित हो कर सन् 1398 से सन् 1518 तक 120 वर्ष काशी में जुलाहे की भूमिका करके अपने तत्वज्ञान को बताया।

कबीर, अक्षर पुरूष एक पेड़ है निरंजन वाकी डार।
तीनों देवा शाखा है ये पात रूप संसार।।

यही तत्वदर्शी संत का प्रमाण ऋग्वेद मण्डल 9 सुक्त 96 मन्त्र 16 से 20 में है। (कृप्या पढें इसी पुस्तक में पृष्ठ 78 से 82 तक) जिस तत्वज्ञान का (संसार रूपी वृक्ष का प्रत्येक अंग का) ज्ञान किसी ऋषि व संत को नहीं था। वह स्वयं परमात्मा कबीर बन्दी छोड़ ने जी ने बताया था। जो वर्तमान में मुझ दास (रामपाल दास) द्वारा उजागर किया गया है। वह तत्वज्ञान वर्तमान में मुझ दास के अतिरिक्त किसी के पास नहीं है।

दूसरा कारण पुराण रचना का :- श्री ब्रह्मा जी सर्वप्रथम उत्पन्न हुए थे। जिस कारण से उनके वंशजों ने श्री ब्रह्मा जी को सर्वज्ञ मानकर संसार रचना का कारण व सर्व की रचना करने वाले परमेश्वर के विषय में जानना चाहा। देवी पुराण तीसरे स्कंद अध्याय 3 से 6 में श्री ब्रह्मा जी स्वयं कह रहे हैं कि जब मैं सचेत हुआ तो अपने आप को कमल के फूल पर बैठा पाया। मुझे नहीं पता इस अगाध जल में कहां से उत्पन्न हो गया। मुझे उत्पन्न करने वाला कौन प्रभु है?''। इससे सिद्ध हुआ कि श्री ब्रह्मा जी सर्वज्ञ नहीं हैं। उनके द्वारा बताया सृष्टि रचना का ज्ञान भी सत्य नहीं हो सकता। हाँ अपने जन्म के पश्चात् का वर्णन पुराणों में घटनाक्रम का ज्ञान ठीक है परन्तु जो भक्तिसाधना की विधि व परमेश्वर परिचय यदि वेदों से नहीं मिलता है वह असत्य है।

श्री शिव पुराण, श्री विष्णु पुराण, श्री ब्रह्म पुराण तथा श्री देवी पुराण आदि इन पुराणों का ज्ञान दाता श्री ब्रह्मा जी भगवान हैं। श्री देवी पुराण के तीसरे स्कन्ध (गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित है जिसके अनुवादकर्ता श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार तथा चिमन लाल गोस्वामी) में ब्रह्माण्ड की रचना का ज्ञान देते समय श्री ब्रह्मा जी ने अपने पुत्र नारद से कहा बेटा नारद जब मेरी उत्पति हुई तो मैं कमल के फूल पर बैठा हुआ था। मुझे नहीं पता कि मेरा उत्पति कर्ता कौन है? इस अगाध जल में मैं कैसे उत्पन्न हो गया - - - - - - - - - - - - -''

श्री ब्रह्मा जी द्वारा दिया गया पुराणों का ज्ञान अधूरा है। सम्पूर्ण ज्ञान नहीं है क्योंकि श्री ब्रह्मा जी ने ब्रह्माण्ड की रचना का ज्ञान भी देने का प्रयत्न किया है। जो संस्य युक्त तथा सुना सुनाया है जो तोड़-मरोड़ कर बताया है क्योंकि श्री ब्रह्माजी को पूर्ण परमात्मा अग्नि ऋषि के नाम से प्रकट होकर मिले थे तथा पांचवें शवरम्म (सुक्ष्म) वेद से सृष्टि रचना का ज्ञान व काल का जाल समझाया था। श्री ब्रह्मा जी ने उस ऋषि से उपदेश ग्रहण किया। परन्तु बाद में काल रूपी ब्रह्म ने श्री ब्रह्मा जी की बुद्धि बदल दी, अन्दर से प्रेरणा की कोई पांचवां वेद नहीं है केवल चार ही वेद हैं। इन्हीं का ज्ञान श्रेष्ठ है अन्य किसी की बात पर विश्वास नहीं करना चाहिए। तू जगत का ज्ञान दाता है तुझे किसी से ज्ञान ग्रहण करने की आवश्यकता नहीं है।

इस कारण से श्री ब्रह्मा जी ने परमेश्वर से सुने ज्ञान को सत्य न मानकर अपनी

बुद्धि द्वारा काल रूपी ब्रह्म की गुप्त प्रेरणा से उसे तोड़-मरोड़ कर अपने वंशजों को बताया जो पुराणों में लिपीबद्ध है। श्री ब्रह्म जी ने अपने जन्म के पश्चात् ही सत्य घटनाओं का सत्य विवरण बताया है। जो पूर्वोक्त पुराणों में लिखा है।

जिन्दा वेशधारी परमेश्वर ने कहा हे धर्मदास! आप जो यह तीर्थ यात्रा करते हो इसका गीता जी में कोई विवरण नहीं हैं।

''स्वामी विवेकानंद जी का संक्षिप्त जीवन परिचय''

स्वामी विवेकानंद जी का जन्म 12 जनवरी 1863 को एक कायस्थ परिवार में हुआ। वे अपने माता-पिता की छठी संतान थे। स्वामी विवेकानंद जी का बचपन का नाम नरेन्द्र दत्त था। सन् 1882 में दक्षिणेश्वर काली मंदिर में श्री राम कष्ण परमहंस को अपना आध्यात्मिक गुरू माना। 1 मई 1893 में उन्होंने रामकष्ण मिशन की स्थापना की।

तीव्र बुद्धि के धनी स्वामी विवेकानंद को सिर्फ एक बार पढ़ने के पश्चात् ही सैंकड़ों पन्नों की पुस्तक कंठस्थ याद हो जाती थी। इन्होंने L.L.B. यानि कानून की पढ़ाई कर रखी थी। फिर भी पूर्ण सतगुरू के बिना अध्यात्म ज्ञान अधूरा ही रहा। काली माता की पूजा तथा श्री कष्ण जी की पूजा शास्त्रविरूद्ध विधि से करके मानव जीवन के मूल उद्देश्य पूर्ण मोक्ष प्राप्ति से वंचित रहे।

असाध्य रोग के कारण सन् 1902 में मात्र 39 वर्ष की अल्प आयु में परलोक सिधार गए। इनके गुरू जी श्री राम कष्ण परमहंस जी भी गले की कैंसर के कारण मत्यु को प्राप्त हुए थे। श्री राम कष्ण परमहंस जी काली देवी के परम भक्त थे। इसके साथ राम तथा कष्ण अवतारों की भी भक्ति करते-कराते थे। स्वामी विवेकानंद जी भी अपने गुरू जी द्वारा बताई वही भक्ति किया करते थे। दोनों ही रोग के कारण मत्यु को प्राप्त हुए। यथार्थ भक्ति से वंचित रहकर दोनों का मानव जीवन व्यर्थ गया।

''अंध श्रद्धा भक्ति कैसे प्रारम्भ हुई?''

काल ब्रह्म यानि ज्योति निरंजन को चिंता रहती है कि यदि मानव समाज को इस रहस्य का ज्ञान हो गया तो विश्व का मानव समाज परम शांति तथा सनातन परम धाम को प्राप्त हो जाएगा जिसका वर्णन गीता अध्याय 18 श्लोक 62 में किया गया है। काल के इक्कीश ब्रह्माण्ड खाली हो जाऐंगे। इस कारण से अंध श्रद्धा भक्ति यानि शास्त्र विधि को त्यागकर मनमाने आचरण की शुरूवात सत्ययुग से ही काल ब्रह्म ने करवा दी थी। ऋषियों ने पहले तो वेदों में वर्णित विधि से साधना की। {ॐ (ओं) नाम का स्मरण तथा पाँचों यज्ञ की।} इस साधना से परमात्मा प्राप्ति नहीं होती। यह गीता अध्याय 11 श्लोक 48 में स्पष्ट है कि चारों वेदों में वर्णित नाम जप, यज्ञ, दान, उग्र तपों से काल ब्रह्म की प्राप्ति नहीं होती। जिस कारण से ऋषियों ने परमेश्वर को निराकार कहकर संतोष कर लिया। इस कारण से ऋषिजन कुछ सिद्धियाँ व कुछ रिद्धियाँ प्राप्त करते थे। जिस कारण से

लोक में प्रसिद्धि बन जाती थी। फिर अपनी जीवन की गाड़ी को चलाने के लिए अन्य नागरिक सेवकों का कष्ट निवारण तथा धन लाभ के लिए वेदों के मंत्रों (श्लोकों) को नित्य पाठ करने के लिए देते थे। कुछ जिज्ञासुओं को भी वेद ज्ञान के साथ-साथ अपना अनुभव बताने लगे कि परमात्मा निराकार है। हमने वेदों में लिखे ॐ (ओउम्) का जाप तथा पाँचों यज्ञ करके समाधि लगाकर कोशिश कर ली, परमात्मा नहीं मिलता। वह तो निराकार है।

श्री ब्रह्मा रजगुण, श्री विष्णु सतगुण तथा श्री शिव तमगुण जो साकार देवता हैं, ये ही परमेश्वर का साकार रूप हैं। जो जिज्ञासु ऋषि थे, उन्होंने अपने वरिष्ठ ऋषियों से सुने अधूरे आध्यात्मिक ज्ञान का प्रचार करना शुरू कर दिया। उनको संस्कृत भाषा का ज्ञान होता था। वेद मंत्र संस्कृत में बोलते थे। प्रवचन वेदों के विपरित करते थे कि परमात्मा निराकार है। उसे देखा नहीं जा सकता। श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु तथा श्री शिव ही परमात्मा का साकार स्वरूप हैं। ये अविनाशी हैं। इनके कोई माता-पिता नहीं हैं। श्री ब्रह्मा की भक्ति निषेध बताई तथा श्री विष्णु तथा शिव जी की भक्ति करने का विधान बताया जो वेद तथा गीता शास्त्रों के विरूद्ध है। इनके साथ-साथ इन्हीं ऋषियों ने देवी दुर्गा (अष्टंगी माया), देवी काली आदि देवियों की साधना की तथा करने की राय दी। ऋषियों ने परमात्मा प्राप्ति का उद्देश्य त्याग दिया। लोक में प्रसिद्धि तथा निर्वाह के लिए धन प्राप्ति के उद्देश्य के लिए साधनाऐं करनी प्रारम्भ कर दी। इसी कारण श्राद्ध-पिण्डदान, मूर्ति पूजा को बढ़ावा मिला। यह सब काल का जाल है।

उदाहरण :- जिस समय राजा परीक्षित को सर्प ने डसना था और राजा की मृत्यु निश्चित थी। यह बात ऋषियों को पता थी। ऋषि कश्यप ने साधना करके तनकष्ट निवारण की सिद्धि प्राप्त कर रखी थी। ऋषि कश्यप अपने निवास स्थान से राजा परीक्षित को मिलने हस्थिनापुर (वर्तमान में दिल्ली) की ओर चले। उद्देश्य यह था कि तक्षक सर्प राजा को डसेगा। मैं अपनी सिद्धि वाले मंत्र से जीवित कर दूँगा। जिसके बदले मुझे राजा बहुत धन देगा। इस बात का ज्ञान तक्षक सर्प को हुआ तो वह उसी मार्ग में मानव रूप धारण करके खड़ा हो गया जिस मार्ग से ऋषि कश्यप जी हस्थिनापुर जा रहे थे। तक्षक ने ऋषि से पूछा कि ऋषि जी! कहाँ जा रहे हो? ऋषि जी ने उत्तर दिया कि मैं हस्थिनापुर जा रहा हूँ। राजा परीक्षित को तक्षक सर्प डसेगा। राजा की मृत्यु होगी, मैं उसे जीवित कर दूँगा। तक्षक सर्प ने कहा कि मैं ही तक्षक सर्प हूँ। मैं अपने विष से इस विशालकाय पीपल के वृक्ष को जलाकर राख कर सकता हूँ। ऋषि ने कहा कि मेरे पास ऐसा मंत्र है कि मैं इस वृक्ष को पुनः वैसा ही हरा कर दूँगा। तक्षक ने मानव रूप से सर्प रूप धारण कर पीपल के वृक्ष को डंक मारा। देखते-देखते वृक्ष जलने लगा और कोयला बन गया। ऋषि कश्यप जी ने अपने करमण्डल से जल लेकर मंत्र पढ़कर वृक्ष की राख व कोयलों पर छींटा कर दिया। उसी समय पीपल का वृक्ष वैसा ही हरा-भरा हो गया।

तक्षक ने कहा कि ऋषि जी आप किस उद्देश्य से राजा को जीवित करना

चाहते हैं? ऋषि ने धन प्राप्ति का उद्देश्य बताया। तक्षक ने कहा कि ऋषि जी! यदि राजा परीक्षित मेरे डसने से नहीं मरा तो भिण्डी ऋषि का शॉप मुझे लगेगा कि तूने जान-बूझकर उसे नहीं डसा। हे कश्यप ऋषि जी! आपको मैं राजा परीक्षित से भी अधिक धन दे दूँगा। यह कहकर तक्षक ने अनेकों हीरे, सोने की मोहरें ऋषि के आगे रख दी। कहा कि आप इसे लेकर लौट जाइये। ऋषि ने विचार किया कि देख तो लूँ कि राजा परीक्षित की आयु भी शेष है कि नहीं। यदि राजा की आयु शेष नहीं होगी तो मैं उसे अपने मंत्र से जीवित नहीं कर सकूँगा। कश्यप ऋषि ने देखा कि राजा परीक्षित की आयु शेष नहीं है। उसी दिन तक जीवन शेष है। कश्यप ऋषि तक्षक की बात मानकर बहुत सारा धन लेकर लौट आया। यदि राजा परीक्षित की आयु शेष होती तो कश्यप ऋषि तक्षक की बात नहीं मानता क्योंकि जो धन राजा देता, उतना तक्षक वाला नहीं था। दूसरा लाभ यह भी था कि राजा को जीवन दान देने से लोक (देश) में अत्यधिक महिमा होती। राजा की आयु शेष न होने से ऋषि ने तक्षक के धन से संतोष करना उचित समझा।

‘‘तत्वज्ञान के अभाव से साधकों की दुर्दशा’’

➢ श्री विष्णु पुराण प्रथम अंश के अध्याय 1 श्लोक 12 से 21 तक पृष्ठ 2 पर लिखा है :- श्री पराशर जी के पिता श्री शक्ति ऋषि को ऋषि विश्वामित्र की प्रेरणा से राक्षसों ने खा लिया था। श्री पराशर ने राक्षसों को नष्ट करने के लिए एक यज्ञ प्रारम्भ किया। जिसमें सैकड़ों राक्षस जल कर नष्ट हो गए। तब श्री पराशर जी के दादा श्री वशिष्ठ जी ने पाराशर को समझाया बेटा तुम्हारे पिता जी के लिए तो ऐसा ही होना था। क्रोध तो मूर्खों को ही हुआ करता है, विचारवानों को भला कैसे हो सकता है? हे प्रियवर! क्रोध तो मनुष्य के अत्यन्त कष्ट से संचित यश और तप का भी प्रबल नाशक है। हे तात! इस लोक और परलोक दोनों को बिगाड़ने वाले क्रोध का महर्षिगण सर्वदा त्याग करते हैं। इसलिए तू इसके वशिभूत मत हो। अपने इस यज्ञ को समाप्त करो। साधुओं का धन जो सदा क्षमा ही है। महात्मा दादा जी के इस प्रकार समझाने पर श्री पराशर जी ने वह राक्षसों को नष्ट करने वाला यज्ञ समाप्त कर दिया।

फिर श्लोक 22 से 31 तक में पृष्ठ 2-3 पर लिखा है कि ऋषि पुलस्त्य व महर्षि वशिष्ठ जी का कहा हुआ ज्ञान उन्हीं के आशीर्वाद से मुझे (पाराशर को) याद आ गया। ऋषि पाराशर जी ने अपने शिष्य मैत्रेय ऋषि जी को यह विष्णु पुराण सुनाया। हे मैत्रेय! यह जगत् विष्णु से उत्पन्न हुआ है। उन्हीं में स्थित है वे ही इसकी स्थिति और लय के कर्ता है। यह जगत् भी वे ही हैं।

➢ विष्णु पुराण के चतुर्थ अंश के अध्याय 5 के श्लोक 1 से 10 तक में पृष्ठ 252 पर लिखा है कि :- इक्ष्वाकु का जो निमि नामक पुत्र था। उसने एक सहस्त्र (एक हजार) वर्ष तक लगातार यज्ञ करने का निर्णय लिया। इसके लिए श्री वशिष्ठ ऋषि को होता होने की प्रार्थना की। वशिष्ठ जी ने कहा मैंने इन्द्र को यज्ञ करने

की स्वीकृति दे रखी है। वह यज्ञ पांच सौ वर्षों तक चलेगा। उसके पश्चात् मैं तेरा ऋत्विक् (होता) हो जाऊँगा। उनके ऐसा कहने पर राजा निमि ने कोई उत्तर नहीं दिया। वशिष्ठ जी ने यह समझ कि राजा ने उनका कथन स्वीकार कर लिया है। इन्द्र का पाँच सौं वर्षों में समाप्त होने वाला यज्ञ प्रारम्भ कर दिया। किन्तु राजा निमि ने भी ऋषि गौतम आदि अन्य होताओं से अपना यज्ञ प्रारम्भ करा दिया।

इन्द्र का यज्ञ समाप्त करके वशिष्ठ मुनि राजा निमि के घर आए तो वहाँ पर गौतम ऋषि को होता का कर्म करते देख कर वशिष्ठ ऋषि ने राजा निमि को शाप दे दिया कि तेरी मृत्यु होगी। उस समय राजा निमि सो रहा था। जागने पर पता चला कि वशिष्ठ ने मेरी मृत्यु का शाप दिया है। राजा ने वशिष्ठ ऋषि को शाप दे दिया कि तेरी भी मृत्यु होगी। दोनों की मृत्यु हो गई। वशिष्ठ मुनि का लिंग शरीर मित्रावरूण के वीर्य में प्रविष्ट हुआ। एक उर्वशी को देखने से मित्रवरूण का वीर्य स्खलित हुआ। जो पास एक घड़ें में गिरा उस घड़े से वशिष्ठ वाली आत्मा को पुनः शरीर प्राप्त हुआ।

इस प्रकार वशिष्ठ ने पुनर् शरीर धारण किया। विष्णु पुराण के चतुर्थ अंश के अध्याय 4 श्लोक 38 से 72 तक में पृष्ठ 247 से 249 पर उपरोक्त विवरण लिखा हैं। एक इक्ष्वाकु वंश में मित्रसह नामक राजा था। उसने वशिष्ठ जी जो कि उसका कुल गुरु था, से यज्ञ कराया। एक मृग रूपधारी राक्षस को राजा ने जंगल में मारा था। वह राक्षस रूप धारकर मृत्यु को प्राप्त हुआ था। उस राक्षस का साथी भी वहीं मृग रूप धारण किए था। उसने अपने साथी का बदला लेने की कसम खाई तथा अर्न्तध्यान हो गया। यज्ञ के सम्पूर्ण होने पर वशिष्ठ जी घुमने के लिए बाहर गए। पीछे से वह मृग राक्षस वशिष्ठ का रूप धारण करके आया तथा राजा मीत्रसह (सौ दास) से बोला मेरे खाने के लिए नर मांस तैयार कराओ में अभी आता हूँ। राजा ने आज्ञा का पालन किया। वशिष्ठ जी के आने पर राजा ने उन्हें नर मांस सोने के पात्र में रख कर दिया। ऋषि वशिष्ठ ने सोचा इस राजा को मान हो गया है इसलिए इसने मेरे को जानबूझ कर नर मांस खाने को दिया है। तब वशिष्ठ जी ने क्रोध के कारण क्षुब्धचित होकर राजा को शाप दे दिया कि तू राक्षस हो जाएगा तथा नर मांस खाया करेगा। राजा ने कहा गुरु जी आपने ही तो कहा था नर मांस तैयार करने को। तब वशिष्ठ जी ने ध्यान द्वारा सर्व कारण जानकर राजा को निर्दोष जानकर कहा तूने केवल बारह वर्ष नर मांस खाना होगा अर्थात् 12 वर्ष राक्षस रहेगा। फिर ठीक हो जाएगा। तब तक राजा शिष्य ने अपने गुरु को शाप देना चाहा तब उसकी पत्नी के कहने पर शाप नहीं दिया। एक दिन एक ब्राह्मण ऋषि अपनी पत्नी से विलास कर रहा था। उस राजा से राक्षस बने मित्रसह राक्षस ने उसको खा लिया। ब्राह्मणी के कहने से भी नहीं छोड़ा तो ब्राह्मणी ने राजा को शाप दे दिया कि तू जब भी अपनी पत्नी का संग करेगा। उसी दिन तेरी मृत्यु हो जाएगी। बारह वर्ष पश्चात् जब राजा शाप मुक्त हुआ। अपनी पत्नी का संग करना चाहा तो रानी ने उसे ब्राह्मणी का शाप याद दिलाया राजा ने उसी दिन से

स्त्री-सम्भोग त्याग दिया। राजा पुत्रहीन था। कुल गुरु वशिष्ठ ऋषि ने उसकी पत्नी के गर्भाधान किया। जिससे उसकी पत्नी ने अश्मक नामक पुत्र को जन्म दिया। उसी वशिष्ठ जी के वीर्य से उत्पन्न अश्मक से ही आगे उसी कुल में राजा दशरथ तथा श्री रामचन्द्र, लक्ष्मण, भरत आदि उत्पन्न हुए। श्री विष्णु पुराण श्लोक 73 से 94 तक पृष्ठ 249-250 पर।

समीक्षा :- परमेश्वर कबीर बन्दी छोड़ जी ने कहा है -

पंडित और मसालची, दोनों सूझें नाय। औरन को करें चानना, रहें आप अंधेरे माय।।

अनुवाद :- स्वसम वेद की वाणी का :- परमेश्वर कबीर जी कह रहे हैं मसालची (पुराने समय में नाटक मण्डली को रात्री में रोशनी के लिए एक तीन फुट लम्बे दण्ड/डण्डे के एक सिरे पर कपड़ा लपेट कर उसके ऊपर मिट्टी का तेल डालकर प्रज्वलित करते थे। उसे एक व्यक्ति हाथ से पकड़ कर अपने हाथ को ऊपर उठाए रखता था। ताकि दूर तक रोशनी हो जाए। उस कारण से उस मसाल पकड़े हुए व्यक्ति अर्थात् मसालची के ऊपर अन्धेरा रहता था। अन्य के ऊपर प्रकाश रहता है। इसी की तुलना पंडित अर्थात् विद्वान से की है कहा है कि पंडित अन्य को सद्उपदेश देता है परन्तु स्वयं उस का अनुशरण नहीं करता)

उपरोक्त विष्णु पुराण के लेख में श्री वशिष्ठ जी पंडित अपने पौत्र पाराशर को कह रहे हैं कि पंडित को क्रोध नहीं करना चाहिए। क्रोध तो मुर्खों को ही हुआ करता है। विचारवानों (पंडितों) को भला कैसे हो सकता है। क्रोध तो मनुष्य के तप और यश को नष्ट कर देता है। स्वयं वशिष्ठ जी ने अपने उपदेश का अनुशरण नहीं किया। पृष्ठ 252 के उपरोक्त लेख में ''राजा निमि को ऋषि गौतम से यज्ञ कराते देख कर अति क्रोधित होकर वशिष्ठ जी ने राजा निमि को मृत्यु का शाप दे दिया। जिससे राजा की मृत्यु हो गई। इसी प्रकार पृष्ठ 247 से 249 पर राजा मित्रसह (सौदास) को क्रोध वश शाप दे दिया कि तू राक्षस होगा। मनुष्य का मांस खाएगा।

उपरोक्त विवरण के मंथन से निष्कर्ष निकला कि -

कबीर, कहते हैं करते नहीं, मुह से बड़े लबार। जमपुर धक्के खाऐंगे, धर्मराय दरबार।।
कबीर, करनी तज कथनी कथें, अज्ञानी दिन रात। कुकर ज्यूं भौंकत फिरें, सुनि–सुनाई बात।।

उपरोक्त दोनों साखियों का भावार्थ है कि एक-दूसरे से ज्ञान ग्रहण करके ज्ञानी (पंडित) बनकर अन्य को शिक्षा देते फिरते हैं स्वयं अनुशरण नहीं करते। जैसे कुत्ता भौंकता फिरता है। ऐसे उस पंडित की स्थिति हो जा स्वयं ज्ञान का अनुशरण नहीं करता। फिर वह जमपुर अर्थात् यमलोक में नरक में गिरता है। ऐसी स्थिति महर्षि वशिष्ठ जी व पाराशर जी आदि ऋषियों की है।

उपरोक्त विवरण में यह भी लिखा है कि वशिष्ठ जी की मृत्यु राजा निमि के शाप से हो गई थी। वशिष्ठ का लिंग शरीर मित्रावरूण के वीर्य में प्रविष्ठ हुआ। उर्वशी को देखने से मित्रावरूण का वीर्य स्खलित हुआ। उस से वशिष्ठ जी को पुनर् शरीर प्राप्त हुआ। कबीर परमेश्वर द्वारा बताए तत्वज्ञान के आधार से सन्त

गरीबदास जी ने कहा है।

लिंग शरीर मोक्ष नहीं भाई। आगे जा कर देह उठाई।

भावार्थ है कि जिस साधक का सूक्ष्म शरीर साधना से चार्ज (शक्ति युक्त) हो जाता है। वह लिंग शरीर बन जाता है। जिस कारण से उसके मानव शरीर का समय अधिक बन जाता है। किसी कारण से मृत्यु हो जाती है तो फिर मानव शरीर प्राप्त हो जाता है। उसमें भक्ति से संचित शक्ति भी विद्यमान रहती है। वह व्यक्ति फिर किसी को शाप देकर किसी को आशीर्वाद देकर अपने पूर्व संचित भक्ति धन को नष्ट कर जाता है। अनुयाईयों को शास्त्रविरूद्ध साधना बता कर पाप का भागी हो जाता है। जिस कारण से उसकी बैट्री डिस्चार्ज (भक्ति शक्ति रहित शरीर हो जाता है) हो जाती है। जिस कारण से चौरासी लाख प्राणियों के शरीरों में कष्ट उठाता है, फिर नरक में गिरता है क्योंकि लिंग शरीर बनने मात्र से मोक्ष नहीं होता। वह मोक्ष मार्ग तो तत्वज्ञान द्वारा पूर्ण सन्त (तत्वदर्शी सन्त) से सारनाम प्राप्त करके ही सम्भव है अन्यथा नहीं। जो ऋषियों व देवताओं, ब्रह्मा, विष्णु तथा शिवजी को भी नहीं मिला, वह तत्वज्ञान व वास्तविक मोक्ष प्राप्ति का मार्ग परमेश्वर कबीर जी के व पूज्य गुरुजी के आशीर्वाद से मुझ दास (रामपाल दास) के पास हैं। निःशुल्क प्राप्त करें। इसलिए परम पूज्य कबीर परमेश्वर जी कहते हैं :-

सुर नर मुनि जन तैतीस करोड़ी, बन्धे सभी निरंजन डोरी।

भावार्थ :- तैतीस करोड़ देवता, ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव सहित सर्व तत्वज्ञान के अभाव से ब्रह्म तक की भक्तिकरके इसी से मिलने वाला अल्प लाभ प्राप्त करके इसी निरंजन (काल) की डोरी अर्थात् परम्परा से बंधे हैं। उनको पूर्ण परमात्मा की भक्ति के पूर्ण मोक्ष मार्ग का ज्ञान नहीं है।

निष्कर्ष :- सूक्ष्मवेद के ज्ञान के अभाव से परमात्मा प्राप्ति नहीं हुई। जिस कारण से ऋषिजन रिद्धि-सिद्धियों में लिप्त हो गए। किसी को सिद्धि से लाभ किसी को हानि करके धन उपार्जन करने लगे। उसका बिगड़ा रूप जंत्र-मंत्र बन गया है। जैसे वर्तमान में तांत्रिक तथा भूत-प्रेत विद्या जानने वालों के पास लोग जाते हैं। कहते हैं कि मेरे दुश्मन को हानि कर दो तो जो माँगोगे, वही दूँगा। कोई भूत-प्रेत से पीछा छुड़वाने के लिए स्याणों (भूत विद्या जानने वालों) के पास जाकर धन लुटाते हैं। किसी ने पीपल पूजा करना बता दिया तो वह करने लगे। किसी ने जांडी वक्ष की पूजा करने से लाभ बताया। किसी ने तुलसी के पौधे की पूजा का विधान दढ़ कर दिया। किसी तांत्रिक ने वैष्णव देवी मंदिर में जाने को कह दिया। किसी ने केदार नाथ, पशुपति आदि धामों की पूजा बता दी। दुःखी व्यक्ति ये सब करने लगे।

इस प्रकार अंध श्रद्धा भक्ति का जन्म हुआ जो वर्तमान में गहरी जड़ें जमा चुका है। अंध श्रद्धा भक्ति षड़यंत्र के तहत काल ब्रह्म ने प्रारम्भ कराई है। वह गुप्त रूप से कार्य करता है। जैसे शिवलिंग पूजा के लिए श्री ब्रह्मा जी तथा श्री विष्णु जी को भी भ्रमित कर दिया। ब्रह्मा-विष्णु भी लिंग पूजा करने लगे। इस प्रकार भ्रमित होकर सर्व ऋषि तथा श्रद्धालु करने लगे।

अब जानें काल ब्रह्म का यह षड़यंत्र :-

''कबीर परमेश्वर जी की काल से वार्ता''

अब हम काल ब्रह्म के लोक में रह रहे हैं। आत्मा के ऊपर स्थूल सूक्ष्म आदि-आदि शरीर चढ़ाकर काल ने जीव बना दिए हैं। इसने जीव को भ्रमित किया है। पूर्ण परमात्मा जो आत्मा का जनक है, भुला दिया है। स्वयं को परमात्मा सिद्ध किए हैं। यह परमात्मा के अंश जीवात्मा को परेशान करता है ताकि परमात्मा दुःखी होए। यही मन रूप में प्रत्येक आत्मा के साथ रहता है। गलती करवाता है, दण्ड जीवात्मा भोगती है। जैसे शराब, अफीम, सुल्फा आदि-आदि नशे की लत लगवाना, बलात्कार (Rape) करवाना और अन्य पाप करवाना। यह मन की प्रेरणा से काल करवाता है। जब आप जी लेखक (संत रामपाल) से दीक्षा लोगे, तब यह सीधा चलेगा क्योंकि जीवात्मा के साथ परमात्मा की शक्ति रहने लगती है। आत्मा को तत्वज्ञान से विवेक हो जाता है। परमात्मा की शक्ति के कारण आत्मा दृढ़ हो जाती है। काल ब्रह्म केवल कबीर परमात्मा से डरता है। संत गरीबदास जी ने कहा है :-

काल डरै करतार से, जय–जय–जय जगदीश। जौरा जोड़ी झाड़ता, पग रज डारे शीश।।
काल जो पीसे पीसना, जौरा है पनिहार। ये दो असल मजदूर हैं, सतगुरू कबीर के दरबार।।

भावार्थ स्पष्ट है। परमात्मा कबीर जी हमारी आत्मा को काल जाल से निकालने के लिए प्रयत्न कर रहे हैं। काल ब्रह्म फँसाने का प्रयत्न करता है। आगे के प्रकरण में प्रत्यक्ष प्रमाण है।

सर्वप्रथम परमेश्वर ने सर्व ब्रह्मण्डों तथा प्राणियों की रचना की और अपने लोक में विश्राम करने लगे। उसके बाद हम सभी काल के ब्रह्मण्ड में रह कर अपना किया हुआ कर्मदण्ड भोगने लगे और बहुत दुःखी रहने लगे। सुख व शांति की खोज में भटकने लगे और हमें अपने निज घर सतलोक की याद सताने लगी तथा वहाँ जाने के लिए भक्ति प्रारंभ की। किसी ने चारों वेदों को कंठस्थ किया, उन्हें चतुर्वेदी कहा जाने लगा। किसी ऋषि ने तीन वेदों को कण्ठस्थ किया, उनको त्रिवेदी कहा जाने लगा। किसी ऋषि ने दो वेदों को कण्ठस्थ किया। उन्हें द्विवेदी कहा जाने लगा जिससे उनकी महिमा बन गई। कोई उग्र तप करने लगा और हवन यज्ञ, ध्यान, समाधि आदि क्रियाएं प्रारम्भ की, लेकिन अपने निज घर सतलोक नहीं जा सके क्योंकि उपरोक्त क्रियाएं करने से अगले जन्मों में अच्छे समृद्ध जीवन को प्राप्त होकर (जैसे राजा-महाराजा, बड़ा व्यापारी, अधिकारी, देव-महादेव, स्वर्ग-महास्वर्ग आदि) वापिस लख चौरासी भोगने लगे। बहुत परेशान रहने लगे और परमपिता परमेश्वर से प्रार्थना करने लगे कि हे दयालु ! हमें निज घर का रास्ता दिखाओ। हम हृदय से आपकी भक्ति करते हैं। आप हमें दर्शन क्यों नहीं दे रहे हो?

यह वृतान्त कबीर साहेब ने धर्मदास जी को बताते हुए कहा कि हे धर्मदास! इन जीवों की पुकार सुनकर मैं अपने सतलोक से जोगजीत का रूप बनाकर काल लोक में आया। तब इक्कीसवें ब्रह्मण्ड में जहाँ काल का निज घर है, वहाँ पर तप्तशिला पर

जीवों को भूनकर सूक्ष्म शरीर से काल ब्रह्म के लिए खाद्य पदार्थ निकाला जा रहा था। (जैसे वर्तमान में एक ऐसा यंत्र बनाया है जिसमें मछलियों को डालकर उन पर विशेष दबाव बनाकर तेल निकाला जाता है। मछलियाँ मरती नहीं, परंतु दर्द बहुत होता है।) कबीर जी ने बताया कि मेरे पहुँचने के बाद उन जीवों की जलन समाप्त को गई। उन्होंने मुझे देखकर कहा कि हे पुरुष ! आप कौन हो? आपके दर्शन मात्र से ही हमें बड़ा सुख व शांति का आभास हो रहा है। तब मैंने बताया कि मैं पारब्रह्म परमेश्वर कबीर हूँ। आप सब जीव मेरे लोक से आकर काल ब्रह्म के लोक में फंस गए हो। यह काल रोजाना एक लाख मानव के सूक्ष्म शरीर से सूक्ष्म पदार्थ निकालकर खाता है और बाद में नाना-प्रकार की योनियों में दण्ड भोगने के लिए छोड़ देता है। तब वे जीवात्माएं कहने लगी कि हे दयालु परमश्वेर! हमें इस काल की जेल से छुड़वाओ। मैंने बताया कि ये 21 ब्रह्मण्ड काल ब्रह्म ने तीन बार तप करके मेरे से प्राप्त किए हुए हैं जो आप यहां सब वस्तुओं का प्रयोग कर रहे हो ये सभी काल की हैं और आप सब अपनी इच्छा से आए हो। इसलिए अब आपके ऊपर काल ब्रह्म का बहुत ज्यादा ऋण हो चुका है और वह ऋण मेरे सच्चे नाम के जाप के बिना नहीं उतर सकता।

जब तक आप ऋण मुक्त नहीं हो सकते, तब तक आप काल ब्रह्म की जेल से बाहर नहीं जा सकते। इसके लिए जिस समय आपको पथ्वी पर मानव जीवन प्राप्त हो, उस समय आपको मुझसे नाम उपदेश लेकर भक्ति करनी होगी। तब मैं आपको छुड़वा कर ले जाऊंगा। हम यह वार्ता कर ही रहे थे कि वहां पर काल ब्रह्म प्रकट हो गया और उसने बहुत क्रोधित होकर मेरे ऊपर हमला कर दिया और बोला कि जोगजीत तू मेरे लोक में किसलिए आया? सतलोक से तो तुमने मेरे को मार-पीटकर निकाला था। अब मैं बदला लूँगा। तेरे को मारूँगा। हे धर्मदास! तब मैंने अपनी शब्द शक्ति से उसको मूर्छित कर दिया। फिर कुछ समय बाद वह होश में आया। मेरे चरणों में गिरकर क्षमा याचना करने लगा और बोला कि आप मुझ से बड़े हो, मुझ पर कुछ दया करो और यह बताओ कि आप मेरे लोक में क्यों आए हो ? तब मैंने काल पुरुष को बताया कि कुछ जीवात्माएं भक्ति करके अपने निज घर सतलोक में वापिस जाना चाहती हैं। उन्हें सतभक्ति मार्ग नहीं मिल रहा है। इसलिए वे भक्ति करने के बाद भी इसी लोक में रह जाती हैं। मैं उनको सतभक्ति मार्ग बताने के लिए और तेरा भेद देने के लिए आया हूं कि तूं काल है, एक लाख जीवों का आहार करता है और सवा लाख जीवों को उत्पन्न करता है तथा भगवान बन कर बैठा है। मैं इनको बताऊंगा कि तुम जिसकी भक्ति करते हो वह भगवान नहीं, काल है। इतना सुनते ही काल बोला कि यदि सब जीव वापिस चले गए तो मेरे भोजन का क्या होगा ? मैं भूखा मर जाऊंगा। आपसे मेरी प्रार्थना है कि 1. तीन युगों में जीव कम संख्या में ले जाना और सबको मेरा भेद मत देना कि मैं काल हूँ, सबको खाता हूँ। जब कलियुग आए तो चाहे जितने जीवों को ले जाना। 2. अपना ज्ञान बताकर समझाकर जीव ले जाना। जोर-जबरदस्ती करके ना ले जाना। जो मानव आपके ज्ञान को स्वीकार करे, वह आपका। जो मेरे ज्ञान को स्वीकार करके साधना करे, वह मेरा। इस प्रकार के कई वचन मेरे से लिए।(जिनका

विवरण आगे के पष्ठों पर किया है।)

ये वचन काल ने मुझसे प्राप्त कर लिए। कबीर साहेब ने धर्मदास को आगे बताते हुए कहा कि सतयुग, त्रेतायुग, द्वापरयुग में भी मैं आया था और बहुत जीवों को सतलोक लेकर गया लेकिन इसका भेद नहीं बताया। अब मैं कलियुग में आया हूं और काल से मेरी वार्ता हुई है। काल ब्रह्म ने मुझ से कहा कि अब आप चाहे जितना जोर लगा लेना, आपकी बात कोई नहीं सुनेगा। प्रथम तो मैंने जीव को भक्ति के लायक ही नहीं छोड़ा है। उनमें बीड़ी, सिगरेट, शराब, मांस आदि दुर्व्यसन की आदत डाल कर इनकी वति को बिगाड़ दिया है। नाना-प्रकार की पाखण्ड पूजा में जीवात्माओं को लगा दिया है। दूसरी बात यह होगी कि जब आप अपना ज्ञान देकर वापिस अपने लोक में चले जाओगे तब मैं (काल) अपने दूत भेजकर आपके नाम (कबीर पंथ) से बारह पंथ चलाकर जीवों को भ्रमित कर दूँगा। और भी अनेक नकली पंथ अपने काल दूतों से चलाऊँगा। जिस कारण से वे महिमा तो सतलोक की बताएंगे, आपका बताया ज्ञान कथेंगे लेकिन नाम-जाप मेरा करेंगे, जिसके परिणामस्वरूप मेरा ही भोजन बनेंगे। यह बात सुनकर कबीर साहेब ने कहा कि आप अपनी कोशिश करना, मैं सतमार्ग बताकर ही जीवों को वापिस ले जाऊँगा और जो मेरा ज्ञान सुन लेगा, वह तेरे बहकावे में कभी नहीं आएगा।

सतगुरु कबीर साहेब ने कहा कि हे निरंजन ! यदि मैं चाहूं तो तेरे सारे खेल को क्षण भर में समाप्त कर सकता हूँ, परंतु ऐसा करने से मेरा वचन भंग होता है। यह सोच कर मैं अपने प्यारे हंसों को यथार्थ ज्ञान देकर शब्द का बल प्रदान करके सतलोक ले जाऊंगा और कहा कि :-

कह कबीर सुनो धर्मराया, हम शंखों हंसा पद परसाया।
जिन लीन्हा हमरा प्रवाना, सो हंसा हम किए अमाना।।

भावार्थ :- परमेश्वर कबीर जी ने कहा है कि हे धर्मराय यानि काल ब्रह्म! जिन प्राणियों ने हमारा ज्ञान सुनकर दीक्षा ली, उन संखों भक्तों को हमने (मैंने तथा मेरे भेजे संतों ने) उस परम पद को प्राप्त कराया जहाँ जाने के पश्चात् कभी संसार में लौटकर नहीं आते। उनको (अमान) अमन-चैन यानि परम शांति प्रदान कर दी। काल ने फिर कहा कि :-

(पवित्र कबीर सागर में जीवों को भूल-भूलइयां में डालने के लिए तथा अपनी भूख को मिटाने के लिए तरह-२ के तरीकों का वर्णन)

द्वादस पंथ करूं मैं साजा, नाम तुम्हारा ले करूं अवाजा।
द्वादस यम संसार पठहो, नाम तुम्हारे पंथ चलैहो।।
प्रथम दूत मम प्रगटे जाई, पीछे अंश तुम्हारा आई।।
यही विधि जीवनको भ्रमाऊं, पुरुष नाम जीवन समझाऊं।।
द्वादस पंथ नाम जो लैहे, सो हमरे मुख आन समै है।।
कहा तुम्हारा जीव नहीं माने, हमारी ओर होय बाद बखानै।।
मैं दढ़ फंदा रची बनाई, जामें जीव रहे उरझाई।।

देवल देव पाषान पूजाई, तीर्थ व्रत जप–तप मन लाई।।
यज्ञ होम अरू नेम अचारा, और अनेक फंद में डारा।।
जो ज्ञानी जाओ संसारा, जीव न मानै कहा तुम्हारा।।

(सतगुरु वचन)

ज्ञानी कहे सुनो अन्याई, काटों फंद जीव ले जाई।।
जेतिक फंद तुम रचे विचारी, सत्य शबद तै सबै बिंडारी।।
जौन जीव हम शब्द दृढावै, फंद तुम्हारा सकल मुकावै।।
चौका कर प्रवाना पाई, पुरुष नाम तिहि देऊं चिन्हाई।।
ताके निकट काल नहीं आवै, संधि देखी ताकहं सिर नावै।।

उपरोक्त विवरण से सिद्ध होता है कि जो अनेक पंथ चले हुए हैं। जिनके पास कबीर साहेब द्वारा बताया हुआ सतभक्ति मार्ग नहीं है, ये सब काल प्रेरित हैं। अतः बुद्धिमान को चाहिए कि सोच-विचार कर भक्ति मार्ग अपनाएं क्योंकि मनुष्य जन्म अनमोल है, यह बार-बार नहीं मिलता। कबीर साहेब कहते हैं कि :-

कबीर मानुष जन्म दुर्लभ है, मिले न बारम्बार।
तरूवर से पत्ता टूट गिरे, बहुर न लगता डारि।।

काल ब्रह्म द्वारा कबीर जी से तीन युगों में कम जीव ले जाने का वचन लेना

(विस्तृत व सम्पूर्ण वर्णन)

प्रश्न :- कबीर जी के नाम से चले 12 पंथों के वास्तविक मुखिया कौन हैं और तेरहवां पंथ कौन चलाएगा?

उत्तर :- परमेश्वर कबीर जी का जोगजीत के रूप में काल ब्रह्म के साथ विवाद हुआ था। वह ''स्वसमवेद बोध'' पृष्ठ 117 से 122 तक तथा ''अनुराग सागर'' 60 से 67 तक है।

परमेश्वर कबीर जी अपने पुत्र जोगजीत के रूप में प्रथम बार काल के प्रथम ब्रह्माण्ड में प्रकट हुए जो इक्कीसवां ब्रह्माण्ड है जहाँ पर तप्त शिला बनी है। काल ब्रह्म ने जोगजीत के साथ झगड़ा किया। फिर विवश होकर चरण पकड़कर क्षमा याचना की तथा प्रतिज्ञा करवाकर कुछ सुविधा माँगी।

1. तीनों युगों (सत्ययुग, त्रेतायुग, द्वापरयुग) में थोड़े जीव पार करना।

2. जोर-जबरदस्ती करके जीव मेरे लोक से न ले जाना।

3. आप अपना ज्ञान समझाना। जो आपके ज्ञान को माने, वह आपका और जो मेरे ज्ञान को माने, वह मेरा।

4. कलयुग में पहले मेरे दूत प्रकट होने चाहिऐं, पीछे आपका दूत जाए।

5. त्रेतायुग में समुद्र पर पुल बनवाना। उस समय मेरा पुत्र विष्णु रामचंद्र रूप में लंका के राजा रावण से युद्ध करेगा, समुद्र रास्ता नहीं देगा।

6. द्वापर युग में बौद्ध शरीर त्यागकर जाऊँगा। राजा इन्द्रदमन मेरे नाम से

(जगन्नाथ नाम से) समुद्र के किनारे मेरी आज्ञा से मंदिर बनवाना चाहेगा। उसको समुद्र बाधा करेगा। आप उस मंदिर की सुरक्षा करना। परमेश्वर ने सर्व माँगें स्वीकार कर ली और वचनबद्ध हो गए। तब काल ब्रह्म हँसा और कहा कि हे जोगजीत! आप जाओ संसार में। जिस समय कलयुग आएगा। उस समय मैं अपने 12 दूत (नकली सतगुरू) संसार में भेजूँगा। जब कलयुग 5505 वर्ष पूरा होगा, तब तक मेरे दूत तेरे नाम से (कबीर जी के नाम से) 12 कबीर पंथ चला दूँगा। कबीर जी ने जोगजीत रूप में काल ब्रह्म से कहा था कि कलयुग में मेरा नाम कबीर होगा और मैं कबीर नाम से पंथ चलाऊँगा। इसलिए काल ज्योति निरंजन ने कहा था कि आप कबीर नाम से एक पंथ चलाओगे तो मैं (काल) कबीर नाम से 12 पंथ चलाऊँगा। सर्व मानव को भ्रमित करके अपने जाल में फाँसकर रखूँगा। इनके अतिरिक्त और भी कई पंथ चलाऊँगा जो सतलोक, सच्चखण्ड की बातें किया करेंगे तथा सत्य साधना उनके पास नहीं होगी। जिस कारण से वे सत्यलोक की आश में गलत नामों को जाप करके मेरे जाल में ही रह जाऐंगे।

{राधा स्वामी पंथ जो सेठ शिवदयाल सिंह, पन्नी गली आगरा (उत्तर प्रदेश) ने चलाया है, यह पूरा काल का पंथ है। इसकी अन्य शाखाऐं इस प्रकार हैं :-

1. राधा स्वामी डेरा ब्यास (पंजाब)। 2. डेरा सच्चा सौदा सिरसा तथा जगमाल वाली त. कालांवाल जिला-सिरसा (हरियाणा)। 3. जय गुरूदेव (श्री तुलसी दास वाला) पंथ, मथुरा (उत्तर प्रदेश)। 4. डेरा दिनौद, जिला-भिवानी (हरियाणा)। 5. सावन कपाल पंथ, दिल्ली। 6. ठाकुर सिंह राधास्वामी पंथ।

ये सभी पंथ तथा इनके अनुयाई काल जाल में रहेंगे क्योंकि इन सर्व पंथों का प्रवर्तक श्री शिवदयाल सिंह सेठ मत्यु के पश्चात् प्रेत बना और अपनी प्रिय शिष्या बुक्की में प्रवेश करके हुक्का पीता था। भोजन खाता था तथा अपने छोटे भाई प्रताप सिंह तथा सालिगराम भक्तों से बुक्की के अंदर से बातें करता था। जब तक भक्तमति बुक्की जीवित रही, तब तक सेठ शिवदयाल जी उसके शरीर में रहे। प्रमाण :- जीवन चरित्र स्वामी जी महाराज (श्री शिवदयाल सिंह), लेखक :- सेठ प्रताप सिंह (स्वामी जी का छोटा भाई), आगरा (उत्तर प्रदेश)।

विचार करें :- जिस पंथ का मुखिया ही प्रेत बना, जो साधना वह करता था, वही साधना उपरोक्त उसकी शाखाओं के अनुयाई तथा संत करते हैं। उनकी भी यही दशा होगी। परमात्मा कबीर जी की बताई काल वार्ता सत्य है। उसका यह प्रत्यक्ष प्रमाण है क्योंकि ये सब सतलोक (सच्चखण्ड) की बातें करते हैं। जाप नकली नामों का करते हैं। इसलिए काल जाल में ही रहेंगे।}

काल ब्रह्म ने पूछा था कि आप किस समय कलयुग में अपना सत्य कबीर पंथ चलाओगे? कबीर जी ने कहा था कि जिस समय कलयुग 5505 (पाँच हजार पाँच सौ पाँच) वर्ष बीत जाएगा, तब मैं अपना यथार्थ तेरहवां कबीर पंथ चलाऊँगा।

काल ने कहा कि उस समय से पहले मैं पूरी पथ्वी के ऊपर शास्त्रविधि त्यागकर मनमाना आचरण करवाकर शास्त्रविरूद्ध ज्ञान बताकर झूठे नाम तथा

गलत साधना के अभ्यस्त कर दूँगा। जब तेरा तेरहवां अंश आकर सत्य कबीर पंथ चलाएगा, उसकी बात पर कोई विश्वास नहीं करेगा, उल्टे उसके साथ झगड़ा करेंगे। कबीर जी को पता था कि जब कलयुग के 5505 वर्ष पूरे होंगे (सन् 1997 में) तब शिक्षा की क्रांति लाई जाएगी। सर्व मानव अक्षर ज्ञानयुक्त किया जाएगा। उस समय मेरा दास सर्व धार्मिक ग्रन्थों को ठीक से समझकर मानव समाज के रूबरू करेगा। सर्व प्रमाणों को आँखों देखकर शिक्षित मानव सत्य से परिचित होकर तुरंत मेरे तेरहवें पंथ में दीक्षा लेगा और पूरा विश्व मेरे द्वारा बताई भक्ति विधि तथा तत्त्वज्ञान को हृदय से स्वीकार करके भक्ति करेगा। उस समय पुनः सत्ययुग जैसा वातावरण होगा। आपसी रागद्वेष, चोरी-जारी, लूट-ठगी कोई नहीं करेगा। कोई धन संग्रह नहीं करेगा। भक्ति को अधिक महत्त्व दिया जाएगा। जैसे उस समय उस व्यक्ति को महान माना जा रहा होगा जिसके पास अधिक धन होगा, बड़ा व्यवसाय होगा, बड़ी-बड़ी कोठियाँ बना रखी होंगी, परंतु 13वें पंथ के प्रारम्भ होने के पश्चात् उन व्यक्तियों को मूर्ख माना जाएगा और जो भक्ति करेंगे, सामान्य मकान बनाकर रहेंगे, उनको महान, बड़े और सम्मानित व्यक्ति माना जाएगा।

{विस्तृत जानकारी इसी पुस्तक के पृष्ठ 130 पर ''तप्त शिला पर जल रहे प्राणियों से वार्ता'' वाले प्रकरण में पढ़ेंगे।}

प्रमाण के लिए लगभग छः सौ वर्ष पूर्व लिखे गए पवित्र कबीर सागर के भिन्न-भिन्न अध्यायों से अमृत बानी :-

''कबीर जी तथा ज्योति निरंजन की वार्ता''

अनुराग सागर के पृष्ठ 62 से :-

''धर्मराय (ज्योति निरंजन) वचन''

धर्मराय अस विनती ठानी। मैं सेवक द्वितीया न जानी।।1
ज्ञानी बिनती एक हमारा। सो न करहू जिह से हो मोर बिगारा।।2
पुरूष दीन्ह जस मोकहं राजु। तुम भी देहहु तो होवे मम काजु।।3
अब मैं वचन तुम्हरो मानी। लीजो हंसा हम सो ज्ञानी।।4

पृष्ठ 63 से अनुराग सागर की वाणी :-

दयावन्त तुम साहेब दाता। ऐतिक कृपा करो हो ताता।।5
पुरूष शॉप मोकहं दीन्हा। लख जीव नित ग्रासन कीन्हा।।6

पृष्ठ 64 से अनुराग सागर की वाणी :-

जो जीव सकल लोक तव आवै। कैसे क्षुधा मोर मिटावै।।7
जैसे पुरूष कृपा मोपे कीन्हा। भौसागर का राज मोहे दीन्हा।।8
तुम भी कृपा मोपर करहु। जो माँगे सो मोहे देहो बरहु।।9
सतयुग, त्रेता, द्वापर मांहीं। तीनों युग जीव थोड़े जाहीं।।10
चौथा युग जब कलयुग आवै। तब तव शण जीव बहु जावै।।11

पृष्ठ 65 से अनुराग सागर की वाणी, ऊपर से वाणी पंक्ति नं. 3 से :-

प्रथम दूत मम प्रकटै जाई। पीछे अंश तुम्हारा आई।।12

पृष्ठ 64 से अनुराग सागर की वाणी, ऊपर से वाणी पंक्ति नं. 6 :-

ऐसा वचन हरि मोहे दीजै। तब संसार गवन तव कीजै।।13

''जोगजीत वचन=ज्ञानी बचन''

पृष्ठ 64 से अनुराग सागर की वाणी, ऊपर से वाणी पंक्ति नं. 7 :-

अरे काल तुम परपंच पसारा। तीनों युग जीवन दुख डारा।।14
बीनती तोरी लीन्ह मैं जानि। मोकहं ठगा काल अभिमानी।।15
जस बीनती तू मोसन कीन्ही। सो अब बख्स तोहे दीन्ही।।16
चौथा युग जब कलयुग आवै। तब हम अपना अंश पठावैं।।17

''धर्मराय (काल) वचन''

पृष्ठ 64 से अनुराग सागर की वाणी, ऊपर से वाणी पंक्ति नं. 17 :-

हे साहिब तुम पंथ चलाऊ। जीव उबार लोक लै जाऊ।।18

पृष्ठ 66 से अनुराग सागर की वाणी, ऊपर से वाणी पंक्ति नं. 8, 9, 16 से 21:-

सन्धि छाप (सार शब्द) मोहे दिजे ज्ञानी। जैसे देवोंगे हंस सहदानी।।19
जो जन मोकूं संधि (सार शब्द) बतावै। ताके निकट काल नहीं आवै।।20
कहै धर्मराय जाओ संसारा। आनहु जीव नाम आधारा।।21
जो हंसा तुम्हरे गुण गावै। ताहि निकट हम नहीं जावैं।।22
जो कोई लेहै शरण तुम्हारी। मम सिर पग दै होवै पारी।।23
हम तो तुम संग कीन्ह ढ़िठाई। तात जान किन्ही लड़काइ।।24
कोटिन अवगुन बालक करही। पिता एक चित नहीं धरही।।25
जो पिता बालक कूं देहै निकारी। तब को रक्षा करै हमारी।।26
सारनाम देखो जेहि साथा। ताहि हंस मैं नीवाऊँ माथा।।27

ज्ञानी (कबीर) वचन

अनुराग सागर पृष्ठ 66 :-

जो तोहि देहुं संधि बताई। तो तूं जीवन को हइहो दुखदाई।।28
तुम परपंच जान हम पावा। काल चलै नहीं तुम्हरा दावा।।29
धर्मराय तोहि प्रकट भाखा। गुप्त अंक बीरा हम राखा।।30
जो कोई लेई नाम हमारा। ताहि छोड़ तुम हो जाना नियारा।।31
जो तुम मोर हंस को रोको भाई। तो तुम काल रहन नहीं पाई।।32

''धर्मराय (काल निरंजन) बचन''

पृष्ठ 62 तथा 63 से अनुराग सागर की वाणी :-

बेसक जाओ ज्ञानी संसारा। जीव न मानै कहा तुम्हारा।।33
कहा तुम्हारा जीव ना मानै। हमरी और होय बाद बखानै।।34
दृढ़ फंदा मैं रचा बनाई। जामें सकल जीव उरझाई।।35
वेद-शास्त्र समर्ति गुणगाना। पुत्र मेरे तीन प्रधाना।।36
तीनहू बहु बाजी रचि राखा। हमरी महिमा ज्ञान मुख भाखा।।37

देवल देव पाषाण पुजाई। तीर्थ व्रत जप तप मन लाई।।38
पूजा विश्व देव अराधी। यह मति जीवों को राखा बाँधि।।39
जग (यज्ञ) होम और नेम आचारा। और अनेक फंद मैं डारा।।40

''ज्ञानी (कबीर) वचन''

हमने कहा सुनो अन्याई। काटों फंद जीव ले जांई।।41
जेते फंद तुम रचे विचारी। सत्य शब्द ते सबै विडारी।।42
जौन जीव हम शब्द दढ़ावैं। फंद तुम्हारा सकल मुक्तावैं।।43
जबही जीव चिन्ही ज्ञान हमारा। तजही भ्रम सब तोर पसारा।।44
सत्यनाम जीवन समझावैं। हंस उभार लोक लै जावै।।45
पुरूष सुमिरन सार बीरा, नाम अविचल जनावहूँ।
शीश तुम्हारे पाँव देके, हंस लोक पठावहूँ।।46
ताके निकट काल नहीं आवै। संधि देख ताको सिर नावै।।48
(संधि = सत्यनाम+सारनाम)

''धर्मराय (काल) वचन''

पंथ एक तुम आप चलऊ। जीवन को सतलोक लै जाऊ।।49
द्वादश पंथ करूँ मैं साजा। नाम तुम्हारा ले करों आवाजा।।50
द्वादश यम संसार पठाऊँ। नाम कबीर ले पंथ चलाऊँ।।51
प्रथम दूत मेरे प्रगटै जाई। पीछे अंश तुम्हारा आई।।52
यहि विधि जीवन को भ्रमाऊँ। आपन नाम पुरूष का बताऊँ।।53
द्वादश पंथ नाम जो लैहि। हमरे मुख में आन समैहि।।54

''ज्ञानी (कबीर) वचन'' चौपाई

अध्याय ''स्वसमवेद बोध'' पष्ठ 121 :-

अरे काल परपंच पसारा। तीनों युग जीवन दुख आधारा।।55
बीनती तोरी लीन मैं मानी। मोकहं ठगे काल अभिमानी।।56
चौथा युग जब कलयुग आई। तब हम अपना अंश पठाई।।57
काल फंद छूटै नर लोई। सकल सष्टि परवानिक (दीक्षित) होई।।58
घर–घर देखो बोध (ज्ञान) बिचारा (चर्चा)। सत्यनाम सब ठोर उचारा।।59
पाँच हजार पाँच सौ पाँचा। तब यह वचन होयगा साचा।।60
कलयुग बीत जाए जब ऐता। सब जीव परम पुरूष पद चेता।।61

भावार्थ :- (वाणी सँख्या 55 से 61 तक) परमेश्वर कबीर जी ने कहा कि हे काल! तूने विशाल प्रपंच रच रखा है। तीनों युगों (सतयुग, त्रेतायुग, द्वापरयुग) में जीवों को बहुत कष्ट देगा। जैसा तू कह रहा है। तूने मेरे से प्रार्थना की थी, वह मान ली। तूने मेरे साथ धोखा किया है, परतुं चौथा युग जब कलयुग आएगा, तब मैं अपना अंश यानि अपनी कपा पात्र आत्मा को भेजूँगा। हे काल! तेरे द्वारा बनाए सर्व फंद यानि अज्ञान आधार से गलत ज्ञान व साधना को सत्य शब्द तथा सत्य ज्ञान से समाप्त करेगा। उस समय पूरा विश्व प्रवानिक यानि उस मेरे संत से दीक्षा

लेकर दीक्षित होगा। उस समय तक यानि जब तक कलयुग पाँच हजार पाँच सौ पाँच नहीं बीत जाता, सत्यनाम, मूल नाम (सार शब्द) तथा मूल ज्ञान (तत्त्वज्ञान) प्रकट नहीं करना है। परंतु जब कलयुग पाँच हजार पाँच सौ पाँच वर्ष पूरा हो जाएगा, तब घर-घर में मेरे अध्यात्मिक ज्ञान की चर्चा हुआ करेगी और सत्यनाम, सार शब्द को सब उपदेशियों को प्रदान किया जाएगा। यह जो बात मैं कह रहा हूँ, ये मेरे वचन उस समय सिद्ध होंगे, जब कलयुग के 5505 (पाँच हजार पाँच सौ पाँच) वर्ष पूरे हो जाऐंगे। जब कलयुग इतने वर्ष बीत जाएगा। तब सर्व मानव प्राणी परम पुरूष यानि सत्य पुरूष के पद अर्थात् उस परम पद के जानकार हो जाऐंगे जिसके विषय में गीता अध्याय 15 श्लोक 4 में कहा है कि तत्त्वदर्शी संत के प्राप्त होने के पश्चात् परमेश्वर के उस परम पद की खोज करनी चाहिए जहाँ जाने के पश्चात् साधक लौटकर संसार में कभी नहीं आते। जिस परमेश्वर ने संसार रूपी वृक्ष का विस्तार किया है अर्थात् जिस परमेश्वर ने सृष्टि की रचना की है, उस परमेश्वर की भक्ति करो।

उपरोक्त वाणी का भावार्थ है कि उस समय उस परमेश्वर के पद (सत्यलोक) के विषय में सबको पूर्ण ज्ञान होगा।

स्वसमवेद बोध पृष्ठ 170 :-

अथ स्वसम वेद की स्फुटवार्ता-चौपाई

एक लाख और असि हजारा। पीर पैगंबर और अवतारा।।62
सो सब आही निरंजन वंशा। तन धरी–धरी करैं निज पिता प्रशंसा।।63
दश अवतार निरंजन के रे। राम कृष्ण सब मांही बडेरे।।64
इनसे बड़ा ज्योति निरंजन सोई। यामें फेर बदल नहीं कोई।।65

भावार्थ :- परमेश्वर कबीर जी ने बताया है कि बाबा आदम से लेकर हजरत मुहम्मद तक कुल एक लाख अस्सी हजार (1,80,000) पैगंबर तथा दस अवतार जो हिन्दु मानते हैं, ये सब काल के भेजे आए हैं। इन दस अवतारों में राम तथा कृष्ण प्रमुख हैं। ये सब काल की महिमा बनाकर सर्व जीवों को भ्रमित करके काल साधना दृढ़ कर गए हैं। इस सबका मुखिया ज्योति निरंजन काल (ब्रह्म) है।

स्वसमवेद बोध पृष्ठ 171(1515) :-

सत्य कबीर वचन

दोहे :- पाँच हजार अरू पाँच सौ पाँच जब कलयुग बीत जाय।
महापुरूष फरमान तब, जग तारन कूं आय।।66
हिन्दु तुर्क आदि सबै, जेते जीव जहान।
सत्य नाम की साख गही, पावैं पद निर्वान।।67
यथा सरितगण आप ही, मिलैं सिन्धु मैं धाय।
सत्य सुकृत के मध्य तिमि, सब ही पंथ समाय।।68
जब लग पूर्ण होय नहीं, ठीक का तिथि बार।

कपट–चातुरी तबहि लौं, स्वसम बेद निरधार।।69
सबही नारी–नर शुद्ध तब, जब ठीक का दिन आवंत।
कपट चातुरी छोड़ि के, शरण कबीर गहंत।।70
एक अनेक है गए, पुनः अनेक हों एक।
हंस चलै सतलोक सब, सत्यनाम की टेक।।71
घर घर बोध विचार हो, दुर्मति दूर बहाय।
कलयुग में सब एक होई, बरतें सहज सुभाय।।72
कहाँ उग्र कहाँ शुद्र हो, हरै सबकी भव पीर(पीड़)।।73
सो समान समदृष्टि है, समर्थ सत्य कबीर।।74

भावार्थ :- परमेश्वर कबीर जी ने बताया है कि हे धर्मदास! मैंने ज्योति निरंजन यानि काल ब्रह्म से भी कहा था, अब आपको भी बता रहा हूँ।

कबीर सागर के अध्याय ''स्वसमबेद बोध'' की वाणी सँख्या 66 से 74 का सरलार्थ :- जिस समय कलयुग पाँच हजार पाँच सौ पाँच (5505) वर्ष बीत जाएगा, उस समय एक महापुरूष विश्व को पार करने के लिए आएगा। हिन्दु, मुसलमान आदि-आदि जितने भी पंथ तब तक बनेंगे और जितने जीव संसार में हैं, वे मानव शरीर प्राप्त करके उस महापुरूष से सत्यनाम लेकर सत्यनाम की शक्ति से मोक्ष प्राप्त करेंगे। वह महापुरूष जो सत्य कबीर पंथ चलाएगा, उस (तेरहवें) पंथ में सब पंथ (बारह कबीर नाम वाले तथा अन्य सब पंथों के अनुयाई) स्वतः ऐसे तीव्र गति से समा जाएंगे जैसे भिन्न-भिन्न नदियाँ अपने आप निर्बाध दौड़कर समुद्र में गिर जाती है। उनको कोई रोक नहीं पाता। ऐसे उस तेरहवें पंथ में सब पंथ शीघ्रता से मिलकर एक पंथ बन जाएगा। परंतु जब तक ठीक का समय नहीं आएगा यानि कलयुग पाँच हजार पाँच सौ पाँच वर्ष पूरे नहीं करता, तब तक मैं जो यह ज्ञान स्वसमवेद बोध अध्याय में बोल रहा हूँ, आप लिख रहे हो, निराधार लगेगा।

जिस समय वह निर्धारित समय आएगा। उस समय स्त्री-पुरूष मेरे (कबीर जी के) भेजे सतगुरू के द्वारा मेरी वाणी के विचार सुनकर उच्च विचारों वाले तथा शुद्ध आचरण के होकर कपट, व्यर्थ की चतुराई त्यागकर मेरी (कबीर जी की) शरण ग्रहण करेंगे। परमात्मा से लाभ लेने के लिए एक ''मानव'' धर्म से अनेक पंथ (धार्मिक समुदाय) बन गए हैं, वे सब पुनः एक हो जाएंगे। सब हंस (निर्विकार भक्त) आत्माऐं सत्यनाम का जाप करके भक्ति की शक्ति से सतलोक चले जाएंगे। मेरे अध्यात्म ज्ञान की चर्चा घर-घर में होगी। जिस कारण से सबकी दुर्मति समाप्त हो जाएगी। कलयुग में फिर एक होकर सहज बर्ताव करेंगे यानि शांतिपूर्वक जीवन जीएंगे। कलयुग में फिर से सत्ययुग जैसा वातावरण होगा। सब प्रेम से रहा करेंगे। अधिक धन की इच्छा छोड़कर साधारण जीवन जीया करेंगे। उस सत्य साधना से सबका सब प्रकार का कष्ट समाप्त हुआ करेगा। कहाँ उग्र अर्थात् चाहे डाकू, लुटेरा, कसाई हो, चाहे शुद्र, अन्य बुराई करने वाला नीच होगा। परमात्मा सत्य भक्ति करने वालों की भवपीर यानि सांसारिक कष्ट हरेगा यानि दूर करेगा। सत्य साधना

से सबकी भवपीर यानि संसारिक कष्ट समाप्त हो जाएंगे और उस 13वें (तेरहवें) पंथ का प्रवर्तक सबको समान दृष्टि से देखेगा अर्थात् ऊँच-नीच में भेदभाव नहीं करेगा। वह समर्थ सत्य कबीर ही होगा। (मम् सन्त मुझे जान मेरा ही स्वरूपम्)

प्रश्न :- वह तेरहवां पंथ कौन-सा है, उसका प्रवर्तक कौन है?

उत्तर :- वह तेरहवां पंथ ''यथार्थ सत कबीर'' पंथ है। उसके प्रवर्तक स्वयं कबीर परमेश्वर जी हैं। वर्तमान में उसका संचालक उनका गुलाम रामपाल दास पुत्र स्वामी रामदेवानंद जी महाराज है। (अध्यात्मिक दृष्टि से गुरू जी पिता माने जाते हैं जो आत्मा का पोषण करते हैं।)

प्रमाण :- वैसे तो संत धर्मदास जी की वंश परंपरा वाले महंतो से जुड़े श्रद्धालुओं ने अज्ञानतावश तेरहवां पंथ और संचालक धर्मदास की बिन्द (परिवार) की धारा वालों को सिद्ध करने की कुचेष्टा की है। परंतु हाथी के वस्त्र को भैंसे पर डालकर कोई कहे कि देखो यह वस्त्र भैंसे का है। बुद्धिमान तो तुरंत समझ जाते हैं कि यह भैंसा का वस्त्र नहीं है। यह तो भैंसे से कई गुणा लंबे-चौड़े पशु का है। भले ही वे ये न बता सकें कि यह हाथी का है।

''तप्त शिला पर जल रहे प्राणियों से वार्ता''

धर्मदास जी ने प्रश्न किया हे परमेश्वर! हम आप के साथ विश्वास घात करके आए थे। आपको हम नीच आत्माओं पर फिर भी दया आ गई। आप का काल ब्रह्मके इस भयंकर लोक में कैसे तथा कब-कब आगमन हुआ।

उत्तर (कबीर देव का):- जिस समय सृष्टि रचना की तथा काल ब्रह्म ने इन आत्माओं को आकर्षित किया। ये इस के साथ स्वःइच्छा से यहाँ आ गए। कुछ समय पश्चात् ही काल ब्रह्म इनको तप्तशीला पर गर्म करके तड़फाने लगा तथा अन्य कष्टमय प्राणियों के शरीर में डालकर कष्ट भोगने के लिए विवश करने लगा तब सर्व आत्माऐं परमश्वर को याद करके सुख की इच्छा करने लगी। तब अपनी आत्माओं का कष्ट मुझ से देखा नहीं गया। मैं प्रथम सत्ययुग में इस काल ब्रह्म के लोक में अन्य रूप धारण करके आया।

सर्व प्रथम उस स्थान पर पहुँचा जहाँ पर प्रतिदिन एक लाख मानव शरीर धारी प्राणियों के सुक्ष्म शरीर को तप्त शिला पर गर्म करके उनसे निकले मैल को खाता है। तप्तशिला, एक पत्थर की टुकड़ी है। जो तवे के आकार की है जो स्वतः गर्म रहती है। उस समय उस तप्तशिला पर एक लाख प्राणी तड़फ रहे थे, हा-2 कार मचा था। दिल दहलाने वाली चीखें मार रहे थे। जैसे चावलों से खील बनाते समय चटक-मटक होती है। ऐसे सर्व प्राणी उस तप्तशिला पर चटक रहे थे। मैं उस तप्त शिला के निकट जा के खड़ा हुआ। मेरे प्रताप से तप्तशिला की अग्नि की आंच ने उन प्राणियों को प्रभावित करना बन्द कर दिया। तप्तशिला उसी प्रकार जल रही थी परन्तु मेरी उपस्थिती के कारण अग्नि की आंच उन प्राणियों को जला नहीं रही थी। सर्व प्राणी अपने आप को कष्ट रहित जानकर शान्त होकर उस तप्तशिला पर बैठकर मेरी और देखने लगे।

मुझ से पूछा हे परमेश्वर! यहाँ पर हम कौन से कर्म का दण्ड भोग रहे हैं? हे प्रभु! आप की कृपा से हमें अब कोई कष्ट नहीं है। हम अग्नि में बैठे हुए भी अपने आप को सामान्य से भी अधिक सुखी महसूस कर रहे हैं। आप कौन है? क्या आप ही काल ब्रह्म हैं? या कोई उनके अनुचर हो कृपा हमें सर्व भेद बताइऐ?

उत्तर (कविर्देव का):- मैंने उन दुःखी प्राणियों को बताया। हे जीवात्माओं! मैं काल ब्रह्म नहीं हूँ। मैं तत् ब्रह्म अर्थात् वह परमात्मा हूँ। जिसके विषय में वेद भी कहते हैं कि उस पूर्ण परमात्मा का पूर्ण ज्ञान हम नहीं जानते उस के विषय मैं तो तत्वदर्शी सन्त ही वास्तविक ज्ञान देते हैं। उन से पूछो। {यजुर्वेद अध्याय 40 श्लोक 10 व 13 में कहा है कि परमात्मा कैसा है? तथा विद्वान कौन है? यह ज्ञान धीराणाम् अर्थात् तत्वदर्शी सन्त ही बताते हैं उनसे सुनो। यही प्रमाण गीता अध्याय 4 श्लोक 34 में लिखा है कि तत्वज्ञान को तत्वदर्शी सन्तों के पास जाकर समझ जो परमात्मा के विषय में पूर्ण परिचित हैं। तत्वदर्शी सन्त की पहचान गीता अध्याय 15 श्लोक 1 में बताई है। जो श्लोक 1 से 4 के विवरण से स्पष्ट रूप से समझी जा सकती है। गीता अध्याय 13 श्लोक 2 व 11 में भी गीता ज्ञान दाता काल ब्रह्म ने कहा है कि जो तत्व ज्ञान है, वही वास्तविक ज्ञान है। ऐसा मेरा मत है।

विचारणीय विषय है कि वेदों व गीता के ज्ञान दाता काल ब्रह्म ने कहा है कि जो मेरे द्वारा दिया ज्ञान (वेदों व गीता का ज्ञान) पूर्ण नहीं है उस तत्वज्ञान को तो तत्वदर्शी सन्त ही जानते हैं। उनकी खोज करके अपना कल्याण कराओ।} **वेदों व गीता के ज्ञान के आधार से भक्ति करने वालों को जन्म-मृत्यु, स्वर्ग-नरक का चक्र तथा यह तप्तशिला का कष्ट सदा बना रहेगा। आप जिस काल ब्रह्म के विषय में जानते हो जो लोक वेद के आधार से पुरूषोत्तम प्रसिद्ध है। परन्तु वास्तव में पुरूषोत्तम तो अन्य ही है। प्रमाण गीता अध्याय 15 श्लोक 16 से 18 में गीता ज्ञान दाता स्वयं कह रहा है कि उत्तम पुरूषः अर्थात् पुरूषोतम् तो अन्य है। जो परमात्मा कहा जाता है। जो तीनों लोकों में प्रवेश करके सब का धारण पोषण करता है। वह वास्तव में अविनाशी प्रभु है। (गीता अध्याय 15 श्लोक 17 में) फिर गीता अध्याय 15 श्लोक 18 में अपने विषय में गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि मुझे तो लोक वेद के आधार से पुरूषोत्तम मानते हैं मैं वास्तव में पुरूषोत्तम नहीं हूँ। जो गीता अध्याय 11 श्लोक 32 में कहता है कि मैं काल हूँ सर्व को खाने के लिए आया हूँ। गीता अध्याय 11 श्लोक 21 में अर्जुन ने आँखों देखा विवरण कहा कि हे भगवन् आप तो उन ऋषियों को भी खा रहे हो जो आप की वेद मन्त्रों द्वारा स्तुति कर रहे हैं। आप देवताओं तथा सिद्धों के समूह को भी खाने को तैयार हो वे आप से अपनी जान की रक्षा के लिए मंगल कामना कर रहे हैं। काल भगवान ने कहा है कि मैं सर्व को खाने के लिए प्रवृत हुआ हूँ।**

हे धर्मदास! उस तप्तशिला पर ऋषि व महर्षि व अन्य वेद पाठ करने व पढ़ने वाले विद्वान भी कष्ट उठा रहे थे। जो वेदों के मन्त्रों से भी परिचित थे। वे सर्व एक स्वर में बोले हे पूर्ण परमात्मा! आप सत्य कह रहे हो यह ज्ञान वेदों में लिखा है। (वेदों का सार ज्ञान ही गीता जी में लिपी बद्ध है) सत्ययुग में सर्व मनुष्य साधनाऐं करते थे। कोई श्री विष्णु जी व श्री शिवजी की, कोई देवी की जो उस समय के गुरूओं ने प्रचलित कर

रखी थी। जो वेदों को भी ठीक से न समझने वाले ऋषियों द्वारा बताई गई थी। कुछ गुरूजन व ऋषिजन भी उसी तप्तशिला पर कष्ट भोग रहे थे। जो अपनी-2 साधनाओं को श्रेष्ठ मान कर स्वयं कर रहे थे तथा अपने अनुयाईयों से भी करा रहे थे। वे भी कहने लगे हे परमेश्वर! हमारी भक्ति शास्त्रविरूद्ध थी। अब आप की कृपा से हमें ज्ञान हुआ है। हमारी वह शास्त्रविरूद्ध साधना कोई काम नहीं आई। हम यहाँ तप्तशिला पर महाकष्ट उठा रहे है। {यही प्रमाण गीता अध्याय 16 श्लोक 23 में कहा है कि जो शास्त्रविधि को त्याग कर मनमाना आचरण (पूजा) करते हैं। उनको न तो कोई सुख होता है, न उनको कोई सिद्ध प्राप्त होती तथा न उनकी गति अर्थात् मोक्ष होता है अर्थात् शास्त्रविधि विरूद्ध भक्ति व्यर्थ है।}

तब मैने (कबीर देव ने) उन तप्त शिला पर विराजमान प्राणियों को सृष्टि रचना सुनाई(कृप्या पाठक पढ़े सृष्टि रचना इसी पुस्तक के पृष्ठ 208 पर) जिस कारण से उनको ज्ञान हुआ कि वे कैसे अपने पैर पर कुल्हाड़ी मारकर काल ब्रह्म के जाल में फंसे थे। उन सर्व प्राणियों ने कहा हे परमेश्वर! हमें इस महादुःख दायक काल लोक से निकाल लो। हमें अपने सत्यलोक में ले चलो, तब मैंने उन सर्व प्राणियों से कहा ऐसे मैं आप को सत्यलोक नहीं ले जा सकता। क्योंकि आप स्वइच्छा से इस काल ब्रह्म के साथ आए थे। आप के पुण्य समाप्त हो चुके हैं। आप पर काल ब्रह्म का ऋण है। उस ऋण से मुक्त होकर ही आप सत्यलोक जा सकते हो। उसकी विधि है कि ''जब आप को पृथ्वी पर मानव जन्म प्राप्त हो तथा मैं किसी अन्य वेश में प्रकट होकर यह तत्वज्ञान बताने आऊं या अपने किसी अंश को भेजूं तब तुम हमारे सत्य शब्द (सार शब्द) तथा सारज्ञान अर्थात् तत्व ज्ञान को ग्रहण कर के मर्यादा में रहते हुए भक्ति करना तब आपका सत्यलोक जाना सम्भव होगा।

हे धर्मदास! मैंने (कबीर परमेश्वर ने) उन ऋषियों से प्रश्न किया जो तप्तशिला पर उपस्थित थे तथा वे पृथ्वी लोक में वेद के प्राकाण्ड विद्वान प्रसिद्ध थे। प्रश्न (कबीर जी का) :- आपने वेदों को पढ़ा है। कृपा बताईये वेदों में प्रभु को साकार लिखा है वा निराकार? उन ऋषियों ने एक स्वर में उत्तर दिया परमात्मा निराकार है। केवल उसका प्रकाश ही समाधी द्वारा शरीर में देखा जा सकता है। समाधी में परमात्मा प्रत्यक्ष होता है। मैंने (कबीर परमेश्वर ने) उन मतिहिनों से पूछा प्रत्यक्ष से आपका क्या तात्पर्य है? उन्होंने उत्तर दिया कि ''प्रत्यक्ष का तात्पर्य है'' समाधी में परमात्मा का साक्षात्कार होना। मैंने कहा ''प्रत्यक्ष'' तो साकार वस्तु का होता है। जैसे किसी ने किसी से कहा जल लाना। उसने जल लाकर रख दिया। वह लाया गया पदार्थ अर्थात् जल साक्षात् वस्तु है ''जल'' शब्द नहीं। जिस किसी घड़े को देखा फिर समाधी दशा में घड़े का साक्षात्कार हुआ इस प्रकार जो साकार वस्तु बाहर है उसी का साक्षात्कार समाधी दशा में होता है। जिस वस्तु का आकार ही नहीं है। उस का साक्षात् होना असम्भव है। यह आप का मिथ्या ज्ञान है। आप को कभी भी परमात्मा का साक्षात्कार नहीं हुआ है। आप व्यर्थ में महिमा बना कर अनुयाईयों को भ्रमित करके महापाप के भागी होकर यहाँ काल ब्रह्म के लोक में महा कष्ट भोग रहे हो।

(परमेश्वर कबीर जी ने कहा) हे ऋषि जनों! आपने कहा कि परमात्मा निराकार

है केवल उसका प्रकाश ही देखा जा सकता है। हे भोले प्राणियों विचार करो जैसे कोई नेत्रहीन अन्य नेत्रहीन से सूर्य के विषय में मिथ्या ज्ञान प्राप्त करके आगे प्रचार कर रहा हो वह कह रहा हो कि ''सूर्य'' निराकार है। उसका केवल प्रकाश ही देखा जा सकता है। उस नेत्रहीन से पूछे कि सूर्य के बिना प्रकाश किस का देखा! आप सूर्य को निराकार बता रहे हो उसके प्रकाश को देखने का प्रचार कर रहे हो क्यों मिथ्या भाषण कर रहे हो। ठीक इसी प्रकार वेद ज्ञान को तत्व से जानने का मिथ्या दावा करने वाले वेद ज्ञान हीन ऋषियों व महर्षियों की दशा है। आप को न वेद ज्ञान की पूर्ण जानकारी है तथा न आप की भक्ति विधि शास्त्र अनुकूल है। आप महादोष के पात्र बन गए हो तुम्हें घोर नरक में डाला जाएगा। पृथ्वी लोक में आप को एक परम ज्ञानी मान कर आप के सैकड़ों शिष्य आप द्वारा बताए मिथ्या ज्ञान का प्रचार करके लाखों भोली आत्माओं को काल जाल में फंसा रहे हैं। आप को ऋषि व महर्षि मान कर आप की मूर्तियाँ स्थापित की जाऐंगी। कुछ धुर्त व्यक्ति वहाँ मन्दिर आदि बना कर अपना स्वार्थ सिद्ध करेगें। यह सर्व दोष भी आप को कई वर्षों तक प्राप्त होता रहेगा। भोली जनता आप जैसे अज्ञानियों को महर्षि मान कर आप के नाम से कई संस्थाऐं चलाऐंगे तथा आप के द्वारा रची अपने अनुभव की पुस्तकों को भोली जनता में बेच कर धन कमा कर अपना परिवार पोषण करेगें तथा मौज-मस्ती में उस धन को खर्च करेगें। आप द्वारा रची वेद ज्ञान विरूद्ध पुस्तक द्वारा लाखों व्यक्ति व्यर्थ ज्ञान को ग्रहण करके नरक में गिरेगें। यह सर्व दोष भी आपके सिर पर ही रखा जाएगा। पृथ्वी पर आपकी जय-2 कार वे भोले प्राणी कर रहे होगें तथा आप उस घोर नरक में गिर कर चीखें मार रहे होंगे। महाकष्ट के कारण चिल्ला-2 कर रो रहे होंगे। पृथ्वी लोक पर बनी आप की महिमा आपके क्या काम आई?

हे धर्मदास! मेरे इस तत्वज्ञान रूपी कड़वी सच्चाई से परिचित होकर वे नकली गुरू व ऋषि-महर्षि अपने कृत्य को जानकर भय से कांपने लगे। क्योंकि वहाँ पर उनको हाथों-हाथ प्रमाण मिल रहा था। मैंने उनसे कहा भाई यह सच्चाई मैं या मेरा भेजा हुआ मेरा अंश आप को पृथ्वी पर आपके इन शिष्यों के समक्ष कहता तो आप तथा आपके शिष्य मुझे वा मेरे अंश संत को मारने को दौड़ते तथा हमें सन्तों व ऋषियों का निन्दक कह कर जनता में बदनाम करते हमारी एक बात भी नहीं सुनते। सर्व नकली ऋषि-महर्षियों तथा गुरूओं तथा उनके साथ वहीं पर उपस्थित उनके अनुयाईयों ने एक स्वर में कहा आप ! सत्य कह रहे हो वहाँ पर तो हम अपने ज्ञान को सर्वोच्च मान रहे थे। हे परमेश्वर! आपने हमारी आँखें खोल दी।

परमेश्वर कबीर देव ने कहा हे धर्मदास! मैंने उन नकली महर्षियों से कहा आप ने बताया कि वेदों में परमेश्वर को निराकार बताया है। आप की यह बात भी मिथ्या है क्योंकि वेदों ने मेरे विषय में कहा है कि परमेश्वर सशरीर है वही परमात्मा अन्य शरीर धारण करके अतिथी की तरह कुछ समय इस काल ब्रह्म के लोक में आता है। उस समय अज्ञान निन्द्रा में सोए प्राणियों को तत्व ज्ञान प्रदान कराता है। प्रमाण :- यजुर्वेद अध्याय 5 श्लोक 1 में तथा अध्याय 1 श्लोक 15 में तथा ऋग्वेद मण्डल 9 सुक्त 96

मन्त्र 17 से 20 तक में भी है।

{परमेश्वर कबीर जी तप्तशिला पर हुई वार्ता द्वारा अपनी प्रिय आत्मा भक्त धर्मदास जी को भी तत्वज्ञान से परिचित करा रहे थे। यही तत्वज्ञान की अमृतवाणी धर्मदास जी ने लीपी बद्ध की जो पांचवा वेद अर्थात् कबीर सागर नाम से प्रसिद्ध है।}

परमेश्वर कबीर जी ने कहा हे धर्मदास! मेरे द्वारा बताए गए वेदों के मन्त्रों को सुनते ही उन नकली ऋषियों को याद आया कि आप सत्य कह रहे हो मालिक! वेदों में ऐसा ही लिखा है। हम पढ़ते थे परन्तु हमारी बुद्धि काल ब्रह्म ने बांध रखी थी। हम समझ ही नहीं सके। केवल लोक वेद (सुना सुनाया ज्ञान जो वेदों विरूद्ध था उसे) ही सुनाया करते थे। {गीता अध्याय 10 श्लोक 9 से 11 में प्रमाण है। जिस में कहा है कि जो मुझ काल ब्रह्म पर ही आश्रित हैं उनको में ऐसा ज्ञान देता हूँ। वे आपस मे विचार करके मेरे ही गुणों का ज्ञान ही करते कराते रहते हैं। जिस कारण वे मुझमें रमण करते रहते हैं। उन मेरे में ही आश्रित श्रद्धालुओं को मैं (काल ब्रह्म) वह ज्ञान देता हूँ जिससे वे मुझे ही प्राप्त होते हैं अर्थात् काल जाल में ही रह जाते हैं। उनके ऊपर अनुग्रह करने के लिए मैं स्वयं ही उनको वह ज्ञान देता हूँ जिससे वे मुझे ही प्राप्त होते हैं।}

(कबीर सागर से वाणी) कबीर जी का जीवों से संवाद :-

बहु विधि जीवन कीन्ह पुकारा, काल देत है कष्ट अपारा।।
यम का कष्ट सहा नहीं जाई, हे सतगुरु होहुँ सहाई।।
आए जहाँ यम जीव सतावै, काल निरंजन जीव नचावै।।
चटक–पटक करे जीव तहँ भाई, ठाढे भया पुनि तहाँ मैं जाई।।
मोहि देख जीव कीन्ह पुकारा, हे साहिब हमों लेहु उबारा।।
तब हम सत्य शब्द गुहरावा, पुरुष शबद से जीव तपत बुझावा।।
यम ते छुड़ाव लेव तुम स्वामी, दया करो प्रभु अन्तर यामि।।

भावार्थ :- उपरोक्त वाणी में तप्तशिला पर कष्ट भोग रहे प्राणियों ने परम शक्ति से कष्ट निवारण की प्रार्थना की तब मैं (कबीर परमेश्वर) उस तप्तशिला के पास प्रकट हुआ। अपनी शक्ति से तप्तशिला की गर्मी को शांत किया। सर्व प्राणियों ने तत्वज्ञान से परिचित होकर मुझ से (कबीर परमेश्वर से) काल के जाल से निकालने की प्रार्थना की।

तब मैं कहा जीवन समझाई, जोर करूं तो वचन नसाई।।

भावार्थ :- कबीर परमेश्वर जी बता रहे हैं कि तब मैंने उन प्राणियों से कहा मैं बलपूर्वक आपको काल से छुड़वा सकता हूँ। परन्तु मैंने इसको वचन दिया है कि मैं बलपूर्वक जीवों को नहीं ले जाऊगां क्योंकि मैंने ही तुम्हारी इच्छा से काल लोक में आने की आज्ञा दे रखी है तथा कहा था कि तुम यहाँ (सतलोक में) स्वइच्छा से आने की प्रार्थना करोगे तब तुम्हें भक्ति शक्तियुक्त करके सतलोक लाऊगां।

जब तुम जाय धरो जग देहा, तब तुम करिहौ शब्द स्नेहा।।
पुरुष नाम सुमिरन सहिदाना, बीरा सार गहो प्रवाना।।
देह धरो सत्य शब्द समाई, तब हम सतलोक ले जाई।।

जहाँ आशा तहाँ बासा होई, मन कर्म वचन सुमिरै जोई ।।

भावार्थ :- परमेश्वर कबीर जी कह रहे हैं कि हे प्राणियों जब तुम संसार में मानव शरीर प्राप्त करो उस समय मेरे पूर्ण सन्त से सम्पूर्ण मन्त्र (सतनाम व सारशब्द) प्राप्त करके सच्चे मन से भक्ति करना। जब तुम मानव शरीर प्राप्त करके सत्य साधना (तीनों मन्त्रों ओम्,तत्,सत्) की अन्तिम स्वांस तक करोगे तब मैं तुम्हें सतलोक ले जाऊँगा। आप अनन्य मन से कर्म वचन मन से मेरे (कबीर परमेश्वर) में सच्ची लगन लगाना उस सच्ची आशा जो सतलोक जाने की होगी उसी आधार से आप सतलोक में निवास करोगे। क्योंकि जहाँ जाने की सच्ची लगन होती है साधक अन्त समय में उसी प्रभु को प्राप्त करता है।

।।चौपाई।।

कहे जीव सुन पुरुष पुराना, देह धरी बिसरो नहीं ज्ञाना ।।
पुरुष जानि सुमिरा जमराई, बेद पुरान कहे समुझाई ।।
बेद पुरान कहे मति येहा, निराकार से किजै नेहा ।।
सुर नर मुनिजन तैंतीस करोड़ि, बंधे सब निरंजन डोरि ।।
ताके मते कीन्ह हम आशा, अब मोहि चीन्ह परा यम फांसा ।।

भावार्थ :- सर्व प्राणियों ने कहा हे आदि पुरूष परमेश्वर ! जब भी मानव शरीर प्राप्त होगा आप के इस तत्वज्ञान को नहीं भूलेंगे। हमने तो काल ब्रह्म (क्षर पुरूष) को परमेश्वर मानकर पूजा की थी। जैसा भी वेदों को हम समझ सके उस लोक वेद आधार से तथा पुराणों के ज्ञान के आधार से काल की पूजा पूर्ण परमात्मा जानकर की है। हम ही नहीं हे परमेश्वर तैतीस करोड़ देवताओं, अठ्ठासी हजार ऋषि आदि व अन्य सर्व साधक भी काल ब्रह्म को ही पूर्ण परमात्मा जानकर साधना करके काल ब्रह्म की ही डोरी से बंधें हैं अर्थात् वे भी सर्व काल में ही हैं। जन्म-मृत्यु का कुचक्र उन पर भी सदा चलेगा।

सुनो जीव यह छल यम केरा, यह यम फंदा कीन्ह घनेरा ।।

।।छन्द।।

काल कला अनेक कीन्हो, जीव कारण ठाट हो ।
बेद शास्त्र पुरान स्मृति, अन्त रोकै बाट हो ।।
सोरठा – जीव पड़े बस कालके, काल कराल प्रचण्ड ।
सतनाम चिन्हे बिना, जन्म जन्म भव दण्ड ।।

भावार्थ :- कबीर परमेश्वर जी ने कहा हे प्राणियों! सुनों! यह सर्व छल काल ब्रह्म ने आप सर्व प्राणियों को अपने जाल में फांसे रखने के लिए किया है। जो चारों वेदों (ऋग्वेद,यजुर्वेद, सामवेद तथा अथर्ववेद) का ज्ञान अधूरा है। क्योंकि पूर्ण ज्ञान तत्वदर्शी सन्त बताते हैं जो पूर्ण मोक्षदायक है। पुराणों तथा अन्य समृति व छः शास्त्रों का ज्ञान उन देवताओं व ऋषियों का अनुभव है जो स्वयं वेद ज्ञान से परिचित नहीं हैं। इसलिए तत्वज्ञान के आधार से सतनाम के सुमरण से ही पूर्ण मोक्ष सम्भव है। अन्यथा सदा जन्म-मरण का कष्ट बना रहेगा।

''परमेश्वर कबीर जी से काल ब्रह्म का विवाद करना''

हे धर्मदास! काल ब्रह्म आहार करने के लिए तप्तशिला की ओर चला। तब मैंने उन सर्व प्राणियों से कहा देखिए वह आ रहा है काल ब्रह्म साकार है, जिसे आप निराकार कहा करते। तेजोमय शरीर छोटा माथा लम्बे दांत डरावनी सूरत है। हे प्राणियों! अब आप जाओ। इतना कहते ही सर्व प्राणी जो तप्तशिला पर उपस्थित थे आकाश में उड़ गए तथा धर्मराज के दरबार में आ गए। वहाँ से कर्माधार से स्वर्ग-नरक या किसी प्राणी के शरीर में भेज दिया जाता है।

हे धर्मदास! जब काल ब्रह्म (ज्योति निरंजन) तप्त शिला के निकट आया। उस समय उसको मेरा स्वरूप मेरे उस पुत्र योगसन्तायन उर्फ योगजीत का दिखाई दिया जिस रूप में मैंने काल ब्रह्म को सतलोक से निष्काशित किया था तथा मुझे योगजीत जान कर क्रोधित होकर बोला हे योगजीत यहाँ मेरे लोक में मेरी आज्ञा के बिना किसलिए आया। आज मैं तुझे मारूंगा, तेरी जीवन लीला समाप्त करूंगा। तुने मुझे सत्यलोक से धक्के मार कर निकाला था। मैंने तेरे से बहुत विनय की थी सत्यलोक से न निकालने की परन्तु तूने एक नहीं सुनी थी। क्या आप पिता जी का (सत्यपुरूष का) कोई संदेश-आदेश लेकर आए हो वह मुझे बताइए तत्पश्चात् युद्ध के लिए तैयार हो जाइए। (मैंने जान लिया था धर्मदास कि यह मुझे योगजीत समझ रहा है इसलिए मैंने योगजीत की भूमिका करते हुए ये शब्द कहे) मैंने कहा हे काल निरंजन! मुझे पिता जी अर्थात् सत्यपुरूष ने भेजा है। तेरे लोक में सर्व आत्माऐं महाकष्ट उठा रही हैं। उनकी पुकार परमेश्वर ने सुन ली है। अब मैं तेरे नीचे के ब्रह्मण्डों में जाऊंगा। तेरे द्वारा बताए गए लोक वेद (व्यर्थ ज्ञान) का पर्दा फाश करूंगा तथा तत्वज्ञान द्वारा सर्व प्राणियों को पूर्ण परमात्मा का ज्ञान कराके सत्य साधना प्राप्त कराऊंगा। जिससे सर्व प्राणी मानव शरीर धारी सत्य साधना करके अपने पूर्व वाले स्थान सत्यलोक में चले जाऐंगे।

हे धर्मदास! मेरी बातें सुन कर काल ब्रह्म अत्यन्त क्रोधित हो गया तथा मुझे समाप्त् करने के उद्देश्य से मेरे ऊपर आक्रमण किया। मैंने सतनाम का सुमरण किया जिसके प्रभाव से काल ब्रह्म नीचे पाताल लोक में गिर गया। भयभीत होकर कांपने लगा उसकी स्थिति ऐसी हो गई जैसे पक्षी के पंख कट जाते हैं वह एक स्थान पर गिरा फड़फड़ाता है परन्तु उड़ नहीं पाता। मैं भी उसके साथ पाताल लोक में पहुँच गया। काल ब्रह्म ने जान लिया कि योगजीत के पास शक्तिशाली सिद्धि है ये मेरे से मारा नहीं जा सकता। तब उस (काल ब्रह्म) ने अपना स्वार्थ सिद्ध करने की अन्य युक्ति सोची। उसने कहा हे योगजीत आप मेरे बड़े भाई हो मैं आप का छोटा भाई हूँ। छोटे तो उत्पात ही किया करते हैं परन्तु बड़ों का बडप्पन क्षमा करने में ही होता है। मुझे क्षमा करो यह कहते हुए काल ब्रह्म घिसड़ता हुआ मेरे अति निकट आया तथा मेरे चरण पकड़ कर गिड़गड़ाने लगा। मैं उसको लेकर फिर इक्कीसवें ब्रह्मण्ड में तप्त शिला के पास ले आया। मैंने कहा हे काल निरंजन ! मैंने तुझे क्षमा कर दिया मेरे पैर छोड़ मैंने नीचे के लोकों में जाना है तथा सर्व आत्माओं को तेरे जाल से मुक्त कराना है।

काल ब्रह्म (ज्योति निरंजन) ने कहा हे बड़े भाई! मैं आप को पिता तुल्य मानता हूँ। आप मुझे कुछ वरदान दो जिस कारण से मेरे लोक की कुछ त्रुटियाँ दूर हो जाऐं। आप फिर भले ही नीचे के लोकों में चले जाना। मैंने कहा मांग क्या मांगता है। ब्रह्म काल ने कहा आप वचन बद्ध हो जाऐं तब मांगूगा। मैंने कहा मैं वचन बद्ध होता हूँ मांग क्या मांगता है ?

काल ब्रह्म ने कहा (1) तीन युगों (सत्ययुग, त्रैता, द्वापर युगों) में थोड़े जीव ले जाना। चौथे युग कलयुग में आप अधिक जीव मुक्त कराना। पिता जी ने मुझे शाप दे रखा है, एक लाख मानव शरीर धारी प्राणियों को नित्य खाने का यदि आप सर्व जीवों को एक ही युग में ले जाओगे तो मैं भूखा मर जाऊंगा। (2) मैं आप का रूप धारण कर सकूं। (3) जो आत्मा आप के ज्ञान को समझ कर आप के भक्तिमार्ग को ग्रहण करके आजीवन साधना करेगा। वह आप के लोक में जाये। जिस आत्मा का नाम खण्ड हो जाए अर्थात वह आपके भक्तिमार्ग को त्याग कर मेरी भक्ति करने लगे तथा आप के मार्ग को स्वीकार ही नहीं करे वे सर्व प्राणी मेरे लोक में ही रहें। (4) त्रेता युग में मेरे अंश विष्णु अवतार रामचन्द्र की समुद्र पर पुल बनाने में सहायता करना (5) द्वापर में मेरा अंश कृष्ण रूप में जाएगा। वह एक जगन्नाथ नाम से मन्दिर बनवाना चाहेगा समुन्द्र उसे तोड़ेगा। आप उस मंदिर कि समुद्र से रक्षा करना। उपरोक्त वर मुझे प्रदान करके आप नीचे जाईए तथा पिता जी की आज्ञा का पालन किजिए। मैंने काल ब्रह्म से कहा हे ज्योति निरंजन! जो उपरोक्त वर आपने मांगे वे सर्व मैंने आपको दे दिये। (तथा अस्तु)

हे धर्मदास ! उस स्वार्थी ने तुरन्त मेरे पैर छोड़ दिए तथा कहा हे जोगजीत! आप किस नाम जाप से भक्ति कराओगे? वह मुझे बता दो ताकि मैं उन आत्माओं को सत्यलोक जाने दूँ जिनके पास आप का मन्त्र जाप होगा। मैं उनको छोड़ दूंगा। हे धर्मदास ! काल ने मेरे से छल करना चाहा कि सत्यनाम व सारनाम को जानकर वह अपने दूतों (संदेश वाहक गुरूओं) को बता देता। उनके द्वारा बताए गए इस सारनाम का साधक को कोई लाभ नहीं मिलता तथा जब मैं या मेरा अंश यही मन्त्र जाप देते तो सर्व प्राणी कहते यह तो हमारे गुरूदेव ने जाप मन्त्र दे रखा है तुम क्या नया बता रहे हो। हे धर्मदास ! यह महा धोखा हो जाता। इसलिए मैंने काल ब्रह्म से कहा कि मैं तेरी चाल को समझ गया हूँ। मैं तुझे वह सारनाम व सारज्ञान (तत्वज्ञान) नहीं बताऊंगा। जिस प्राणी के पास हमारे द्वारा बताया सारनाम होगा उसके निकट तू नहीं जा सकेगा उसे तू नहीं रोक सकेगा वह तेरे शीश पर पैर रखकर उस सारनाम की भक्ति की शक्ति से सत्यलोक चला जाएगा।

हे धर्मदास! तब काल ब्रह्म ने हंसते हुए कहा हे सहज दास! (हे धर्मदास काल ब्रह्म को मैं भिन्न–2 रूप अपने पुत्रों के दिखा रहा था वह कभी मुझे योगजीत समझ रहा था कभी उसे लगता था शायद यह सहज दास है कभी लगता था यह ज्ञानी है ये सर्व नाम उन 16 पुत्रों के हैं जो सत्यलोक सृष्टि की आदि में अपनी वचन शक्ति से उत्पन्न किए थे। कृप्या पढ़ें सृष्टी रचना में) **आप जाओ नीचे संसार में मैंने सर्व जीवों को लोकवेद पर आधारित कर रखा है। मैंने अपने**

ऋषियों व महर्षियों को शास्त्रों (वेदों) के विपरीत ज्ञान प्रदान कर रखा है वे कहते हैं कि हम वेदों अनुसार ज्ञान बता रहे हैं परन्तु उनका लोकवेद शास्त्रों के ज्ञान के विपरीत है। उन ऋषियों को महाज्ञानी मानकर अन्य प्रजा उन्हीं के ज्ञान पर अति दृढ़ होकर लगी है। वे कहते है कि पूर्ण परमात्मा की भक्ति करो। वही मोक्ष दायक है परन्तु साधना विधि मेरे (काल ब्रह्म) जाल में फंसे रहने की ही बताते हैं जिस कारण से सर्व साधक व ऋषि जन मेरे ही फंदे में उलझे रहते हैं। कलयुग में कई धर्म बनवा दूंगा वे आपस में लड़ते मरते रहेगें। अन्य किसी भी सन्त या गुरू के ज्ञान को स्वीकार नहीं करेंगे। कलयुग में उत भूत की पूजा, भैंरौ, काली आदि की पूजा देवी व अन्य देवों की पूजा तथा तीर्थ, व्रत आदि करने में ही सर्व प्रजा अपना मोक्ष समझेगी। मन्दिर पूजा, समाध पूजा, मूर्ति पूजा या मृत्यु को प्राप्त हुए गुरूओं के धामों की पूजा तथा पितर पूजा (श्राद्ध-पिण्ड दान करना) पर ही सर्व साधक दृढ़ता से लगा दूंगा। श्री विष्णु अवतार राम व कृष्ण व श्री शिव जी को पूर्ण परमात्मा मान कर उन्हीं तीनों गुणों (रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव जी) की पूजा में ही अपना कल्याण मानेगें। इन तीनों में से विशेष कर विष्णु व शिव को सर्वेश्वर, महेश्वर, अजर, अमर इनके कोई माता पिता नहीं हैं। ये ही पूजा के योग्य हैं। इन से भिन्न कोई देव पूज्य नहीं हैं, सर्व हिन्दू समाज को कलयुग में ऐसे ज्ञान पर आश्रित कर दिया जाएगा।

जिस समय आप या आप का कोई संदेश वाहक कलयुग में सारज्ञान अर्थात् तत्वज्ञान प्रदान करना चाहेगा वह उपरोक्त साधनाओं को व्यर्थ बताएगा तथा विष्णु व शिव से ऊपर कोई अन्य परमेश्वर का ज्ञान बताएगा तो आप या आप के अंश (सन्त) की बातों को कोई नहीं सुनेगा। इसके विपरीत निन्दा के पात्र कहलाओगे तथा आप से झगड़ा भी मेरे सन्त (दूत) करेगें तथा प्रजा को आप के विरूद्ध करके आपका शत्रु बना देगें। आप मेरे द्वारा रचे चक्रव्यूह को तोड़ नहीं पाओगे। खाली हाथ लौट जाओगें। और सुन सहज दास! तुम एक पंथ चलाओगे परमेश्वर के नाम से मैं तुम्हारे पंथ जैसे बारह पंथ नकली परमेश्वर के चलाऊंगा। उन बारह पंथों में मेरे द्वारा भेजे गए दूतों से जो नाम उपदेश लेगा वे महिमा तो आप के ज्ञान अनुसार (कबीर सागर व अन्य सन्त द्वारा बोली मिलती जुलती वाणी अनुसार) बताऐंगे परन्तु नाम गलत प्रदान करेंगे। जिस से वे मेरे ही जाल में रह जाएगें। इस प्रकार मैं सर्व जीवों को भ्रमित करके मुक्त नहीं होने दूँगा।

उपरोक्त उल्लेख निम्न वाणियों का सारांश है।

।।कबीर वचन।।

चौपाई=धर्मदास जो पूछो मोहि, युग–2 कथा कहो मैं तोहि।
जबही पुरुष आज्ञा कीन्हा, जीवन काज पृथ्वी पग दीन्हा।।
करि प्रणाम तबही पगुधारा, पहुंचे जाय धर्म दरबारा।
प्रथम चले जीव के काजा, पुरुष प्रताप शीश पर छाजा।।
आवत मिले धर्म अन्याई, तिन पुनि हम से रार बढ़ाई।
मो कुँ देख धर्म ठीग आवा, महा क्रोध बोले अतुरावा।।

।। काल ब्रह्म वचन ।।

योग जीत इहवां कस आवो, सो तुम हमसो वचन सुनाओ।

कै तुम हमको मारन आओ, पुरुष वचन सो मोहि सुनाओ।।

।। कबीर वचन ।।

तासो कहयो सुनो धर्मराई, जीव काज संसार सिंधाई।
जीवन कह तुम बहुत भुलावा, बार–बार जीवन सतावा।।
पुरुष भेद तुम गुप्त राखा, अपनी महिमा प्रकट भाखा।
तपत शिला पर जीव जरावहु, जारि वारि निजस्वाद करावहु।।
तुम अस कष्ट जीवन कहै दीन्हा, ताते पुरुष मोहि आज्ञा दीन्हा।
जीव चिताय लोक ले जाऊँ, काल कष्ट से जीव बचाऊँ।।
ताते हम संसार ही जायब, दे प्रवाना लोक पठायब।
यह सुनी काल भयंकर भयऊ, हम कह त्रास दिखान लयऊ।।

।। धर्मराय (काल ब्रह्म) वचन ।।

सत्तर–2 युग हम सेवा कीन्ही, राज बड़ाई पुरुष मोहि दीन्ही।
फिर चौसठ युग सेवा ठयऊ, अष्ट खंड पुरुष महि दयऊ।।
तब तुम मारि निकारे मोहि, जोगजीत नहीं छोडु तोहि।

।। सतगुरू कबीर वचन ।।

तब हम कहयो सुनो धर्मराया, हम तुम्हरे डर नहीं डराया।
हम कंह तेज पुरुष बल आही, अरे काल तव डर मोहि नाहि।।
पुरुष प्रताप सुमिरा तिहि बारा, शब्द अंगते कालहि सारा।
ततक्षण दृष्टि ताहि पर हेरा, श्याम ललाट भयो तिहि केरा।।
पंख घात जस होय पखेरु, ऐसे काल महि पर हेरु।
करे क्रोध कछु नाहीं बसाई, तब पुनि परेऊ चरणन तर आई।।

।। निरंजन (काल ब्रह्म) वचन ।।

कह निरंजन सुनो ज्ञानी, करो विनती तोहि सो।
जान बंधु विरोध किन्हो, घाट भई अब मोहि सो।।
पुरुष सम अब तोहि जानो, नहीं दूजी भावना।
तुम बड़े सर्वज्ञ साहिब, क्षमा छत्र तनावना।।
तुम हुँ करो बखसीश, पुरुष दीन्ह जस राज हम।
षोढ़स में तुम ईश, ज्ञानी पुरुष सो एक सम।।

।। चौपाई ।।

धर्मराय अस विनती ठानी, मैं सेवक द्वितिय नहीं जानी।
दयावंत तुम साहिब दाता, एतिक कृपा करो हे ताता।
पुरुष शाप मो कंह अस दीन्हा, लख जीव नित ग्रासन कीनहा।।
जो जीव सकल लोक तुम आवे, तो कैसे क्षुद्या मोरि बुतावे।
ज्ञानी विनती एक हमारा, सो न करहुँ जिहि मोर बिगाड़ा।।
पुरुष दीन्ह जस मो कहँ राजू, तुम भी देहु तो होय काजु।
अब हम वचन तुम्हारा मानी, लीजो हंसा हम सो ज्ञानी।।
विनती एक करो तो सो ताता, वचन बंध मानो हमरी बाता।

सतयुग त्रेता द्वापर माही, तीनों युग जीव थोड़े जाही।।
चौथा युग जब कलियुग आवै, तब–त्व शरण जीव बहु जावै।
ऐसा वचन हरि मोहि दीजै, तब संसार गमन तुम कीजे।।

।।कबीर वचन।।

विनती तोर लीन्ह मैं जानी, मोकह ठगे काल अभिमानी।
जस विनती तू मो संग कीन्ही, सो अब बकस तोहि मैं दीन्ही।।
चौथा युग जब कलियुग आवै, तब हम अपना अंश पठावैं।
जिहि परवाना देह है, सत्यशब्द दे हाथ।
सो जीव यम नहिं पाय है, सदा ताहि हम साथ।।

।।निरंजन (काल) वचन।।

संधि छाप मोहि दीजे ज्ञानी, जस देहो हंस हि सहिदानी।।
जो जीव मोकहु संधि बतावे, ताके निकट काल नहीं आवै।।
नाम निशानी मो कह दीजे, हे साहिब यह दाया कीजै।।

।।सतगुरु कबीर वचन।।

जो तोहि देहुं संधि लखाई, जीवन काज होई हो दुख दाई।
तव परपंच ज्ञान हम पावा, काल चलै नहीं तुम्हारा दावा।
धर्मराय तोहि प्रकट भाखा, गुप्त अंक बीड़ा हम राखा।
जो कोई लैह नाम हमारा, ताहि छोड़ तुम होहु नियारा।
जो तुम हंस ही रोको जाई, तो तुम काल रहन नहीं पाई।।

।।धर्मराय (काल ब्रह्म) वचन।।

हे साहिब तुम पंथ चलाओ, जीव उबार लोक ले जाऊँ।
पंथ एक तुम आप चलओ, जीवन लै सतलोक पठाओ।।
द्वादस पंथ करो मैं साजा, नाम तुम्हारा ले करो अवाजा।
द्वादस यम संसार पठहो, नाम तुम्हारे पंथ चलैहो।।
प्रथम दूत मम प्रगटे जाई, पीछे अंश तुम्हारा आई।।
यही विधि जीवनको भ्रमाऊं, पुरुष नाम जीवन समझाऊं।।
द्वादस पंथ नाम जो लैहे, सो हमरे मुख आन समै है।।
कहा तुम्हारा जीव नहीं माने, हमारी ओर होय बाद बखानै।।
और अनेक पंथ चलाऊं, वासे भ्रमित ज्ञान फैलाऊं।।
मैं दृढ़ फंदा रची बनाई, जामें जीव रहे उरझाई।।
देवल देव पाषान पूजाई, तीर्थ व्रत जप–तप मन लाई।।
यज्ञ होम अरू नेम अचारा, और अनेक फंद में डारा।।
जो ज्ञानी जेहो संसारा, जीव न मानै कहा तुम्हारा।।

(सतगुरु कबीर वचन)

ज्ञानी कहे सुनो अन्याई, काटों फंद जीव ले जाई।।
जेतिक फंद तुम रचे विचारी, तत्व ज्ञान तै सबै बिंडारी।।

जौन जीव हम शब्द दृढावै, फंद तुम्हारा सकल मुकावै ।।
निश्चय कर प्रवाना पाई, पुरुष नाम तिहि देऊं चिन्हाई ।।
ताके निकट काल नहीं आवै, संधि देखी ताकहं सिर नावै ।।

।।छन्द।।

जो मेटि डारों तोहि को, अब पलटि कला दिखलाऊँ।
लै जीव बंद छोड़ाय यम सो, अमर लोक सिधावऊँ।।
यह सोच चित्त कीन्हेऊं, पुरुष वचन अस नाही।
सत्य शब्द दृढ़ जो गहे, ले पहुचाऊँ ताहि।।

।।धर्मराय (काल ब्रह्म) वचन।।

कह धर्मराय जाओ संसारा, आनहु जीव नाम आधारा।
जो हंसा तुमरो गुण गाई, ताहि निकट तो हम नहीं आई।
जो कोई जै है शरण तुम्हारा, हम सिर पग दै होवे पारा।
हमतो तुम संग किन्ही ढिठाई, पिता जान कीन्ही लरिकाई।
कोटिन अवगुन बालक करई, पिता एक हृदय नहीं धरई।
जो पितु बालक देही निकारी, तब को रक्षा करै हमारी।

।।ज्ञानी वचन (कबीर वचन)।।

धर्मराय उठ शीश निवायो, तब हम संसार सिधायो।
जब हम देखा धर्म सकाना, तब तहवां से कीन्ह पयाना।
कह कबीर सुनि धर्मनिनागर, तब मैं चली आयऊ भौसागर।
आये चतुरानन के पासा, तासो कीन्हा शब्द प्रकाशा।
वाको मैं अपना नाम जनाया, अग्नि ऋषि नाम बताया।
ब्रह्मा चित्त दै सुनवे लीन्हा, पूछो बहुत पुरुष का चिन्हा।
ब्रह्मा मोहे सतगुरू कह टेरा, अग्नि ज्ञान अद्वित है तेरा।
प्रथम मन्त्र ब्रह्मा लीन्हा, तब वहां ते गवन मैं किन्हा।
तब ही निरंजन कीन्ही उपाई, ज्येष्ठ पुत्र ब्रह्मा मोर जाई।
निरंजन मन घट आन विराजे, ब्रह्मा बुद्धि फेरि उपराजै।।

हे धर्मदास! काल ब्रह्म की उपरोक्त बातें सुनकर मैंने कहा हे ज्योतिनिरंजन! तू महा पापी है जो भोली आत्माओं के साथ महाधोखा कर रहा है। मैं तेरे सर्व दाव व्यर्थ कर दूंगा। मैं कलयुग में जब प्रकट होऊंगा तब ज्ञान तो प्रचार करके आऊंगा परन्तु सारनाम व सारज्ञान को गुप्त रखुंगा। वह सारज्ञान व सारनाम मेरे द्वारा दिए ज्ञान (पांचवें वेद) में ही होगा परन्तु वे बारह पंथ (जो कबीर नाम के पंथ कहलाऐगें वा तेरे द्वारा प्रेरित अन्य पंथ) उस ज्ञान को तथा सार नाम को नहीं समझ पाऐंगे। बारहवें पंथ में (गरीबदास पंथ में) मेरी महिमा की वाणी प्रकट होगी परन्तु बारहवें पंथ (गरीबदास पंथ) सहित सर्व पंथों के अनुयाईयों के पास सारज्ञान व सारनाम नहीं होगा। जिस कारण से वे उन बारह पंथों के अनुयाई असंख्य जन्मों तक भी सत्यलोक नहीं जा सकेंगे। क्योंकि वे अभिमानी होंगे। मेरे द्वारा भेजे वंश (अंश) की बातें नहीं मानेंगे।

फिर बारहवें पंथ (गरीबदास पंथ) में आगे चलकर हम ही आऐंगे। वह तेरहवां अंश मेरा होगा तब सर्व पंथों को समाप्त करके एक पंथ चलाएगा।

विशेष विचार :- बारह पंथों के नाम- कबीर परमेश्वर जी के पंथ में काल द्वारा कबीर नाम से चलाए बारह पंथों का उल्लेख पुस्तक=कबीर सागर अध्याय=कबीर चरित्र बोध (बोध सागर) पृष्ठ संख्या 1870 से

(1) नारायण दास पंथ (2) यागौदास (जागू) पंथ (3) सूरत गोपाल पंथ (4) मूल निरंजन पंथ (5) टकसार पंथ (6) भगवान दास (ब्रह्म) पंथ (7) सत्यनामी पंथ (8) कमालीय (कमाल का) पंथ (9) राम कबीर पंथ (10) प्रेम धाम (परम धाम) की वाणी पंथ (11) जीवा पंथ (12) गरीबदास पंथ।

अन्य प्रमाण पुस्तक ''कबीर सागर'' अध्याय=कबीर बानी पृष्ठ= 136-137 पर

द्वादश पंथ चलो सो भेद

द्वादश पंथ काल फुरमाना। भुले जीव न जाय ठिकाना।
ताते आगम कहि हम राखा। वंश हमार चूरामणि शाखा।।
प्रथम जगमें जागू भ्रमावै। बिना भेद ओ ग्रन्थ चुरावै।।
दुसरि सुरति गोपालहि होई। अक्षर जो जोग दृढ़ावे सोई।।
तिसरा मूल निरंजन बानी। लोकवेद की निर्णय ठानी।।
चौथे पंथ टकसार भेद लै आवै। नीर पवन को सन्धि बतावै।
सो ब्रह्म अभिमानी जानी। सो बहुत जीवन की करी है हानी।।
पांचौ पंथ बीज को लेखा। लोक प्रलोक कहें हममें देखा।।
पांच तत्व का मर्म दृढ़ावै। सो बीजक शुक्ल ले आवै।।
छठवां पंथ सत्यनामि प्रकाशा। घटके माहीं मार्ग निवासा।।
सातवां जीव पंथले बोले बानी। भयो प्रतीत मर्म नहिं जानी।।
आठवे राम कबीर कहावै। सतगुरु भ्रमलै जीव दृढावै।।
नौमे ज्ञानकी काल दिखावै। भई प्रतीत जीव सुख पावै।।
दसवें भेद परमधाम की बानी। साख हमारी निर्णय ठानी।।
साखी भाव प्रेम उपजावै। ब्रह्मज्ञान की राह चलावै।।
तिनमें वंश अंश अधिकारा। तिनमेंसो शब्द होय निरधारा।।
सम्वत् सत्रासै पचहतर होई, ता दिन प्रेम प्रकटै जग सोई।
साखी हमारी ले जीव समझावै, असंख्य जन्म ठोर नही पावै।
बारहवें पथ प्रकट है बानी, शब्द हमारे की निर्णय ठानी।।
अस्थिर घर का मरम न पावैं, ये बारा पंथ हमही को ध्यावैं।
बारहवें पथ हम ही चलि आवैं, सब पंथ मेटि एक ही पंथ चलावैं।

तेरहवें वंश (अंश) द्वारा सर्व पंथों को मिटा कर एक पंथ चलाने का प्रमाण :- पुस्तक=कबीर सागर= अध्याय=कबीर बानी पृष्ठ=134

बारहवें वंश प्रकट होय उजियारा, तेरहवें वंश मिटे सकल अंधियारा

इसी अध्याय में पृष्ठ 136 पर भी प्रमाण है :-

''द्वादश पंथ काल फरमाना, भूले जीव न जाऐं ठिकाना''

कबीर सागर= अध्याय=कबीर बानी (बोध सागर) में पृष्ठ 136-137 पर प्रमाणः-

धर्म दास मेरी लाख दोहाई, मूल (सार) शब्द बाहर न जाई।।
सार शब्द बाहर जो परही, बिचली पीढ़ी हंस नहीं तरही।
तेतीस अर्ब ज्ञान हम भाखा, मूल ज्ञान गुप्त हम राखा।
मूल ज्ञान तब तक छुपाई, जब लग द्वादश पंथ मिट जाई।।

पुस्तक=कबीर सागर=अध्याय जीव धर्म बोध (बोध सागर) पृष्ठ 1937 पर प्रमाण :-

धर्मदास तोहि लाख दोहाई। सार शब्द बाहर नहिं जाई।।
सार शब्द बाहर जो परि है। बिचलै पीढी हंस नहीं तरि है।।
युगन–युगन तुम सेवा किन्ही। ता पीछे हम इहां पग दीनी।।
कोटिन जन्म भक्ति जब कीन्हा। सार शब्द तब ही पै चीन्हा।।
अंकूरी जीव होय जो कोई। सार शब्द अधिकारी सोई।।
सत्यकबीर प्रमाण बखाना। ऐसो कठिन है पद निर्वाना।।

विशेषः-कबीर सागर पुस्तक के अध्याय ''कबीर बानी'' पृष्ठ 134 पर तो प्रथम पंथ का संचालक ''नारायण दास'' (धर्मदास जी का बड़ा पुत्र लिखा है। इसी अध्याय में पृष्ठ 136 पर प्रथम पंथ का संचालक ''चूरामणी'' लिखा है। जो धर्मदास जी को छोटा पुत्र कबीर परमेश्वर जी की कृपा से उत्पन्न हुआ था।) वास्तव में बारह पंथों में प्रथम पंथ का संचालक ''चूरामणी'' ही है क्योंकि नारायण दास ने तो परमेश्वर कबीर जी की बात को स्वीकार ही नहीं किया था तथा चूरामणी से द्वेष रखता था। ''चूरामणी '' बान्धव गढ़ त्याग कर ''कुदरमाल'' नामक स्थान पर चला गया था। उसके कुछ दिन पश्चात् बान्धव गढ़ शहर पूरा नष्ट हो गया था। इसलिए पृष्ठ 134 (कबीर सागर=अध्याय= कबीर बानी) पर लिखा नारायण दास नाम ठीक नहीं है वहां पर ''चूरामणी'' होना उचित है। क्योंकि कबीर सागर अध्याय'' कबीर बानी''पृष्ठ 1870 पर लिखे बारह पंथों के विवरण में चूरामणी मिलाकर बारह पंथ बनते हैं। यह फेरबदल दामाखेड़ा वालों ने करने की चेष्टा की है। परन्तु सच्चाई को मिटा नहीं पाए।

कबीर सागर ''कबीर बानी'' नामक अध्याय (बोध सागर) पृष्ठ नं. 134 से 138 पर लिखे विवरण का भावार्थ है :-

पृष्ठ नं. 134 पर बारह वंशों (अंसों) के बाद तेरहवें वंश (अंस) में सब अज्ञान अंधेरा मिट जाएगा। बारह वंश काल के वश होकर अपनी-2 चतुरता दिखाएगें। पृष्ठ नं. 136-137 पर ''बारह पंथों'' का विवरण किया है तथा लिखा है कि संवत् 1775 में प्रभु का प्रेम प्रकट होगा तथा हमारी बानी प्रकट होवेगी। (संत गरीबदास जी महाराज छुड़ानी व हरियाणा वाले का जन्म 1774 में हुआ है उनको प्रभु कबीर 1784 में मिले थे। यहाँ पर इसी का वर्णन है तथा सम्वत् 1775 के स्थान पर 1774 होना चाहिए, गलती से 1775 लिखा है)। भावार्थ है कि बारहवां पंथ जो गरीबदास जी का चलेगा यह पंथ हमारी (कबीर जी की) साखी लेकर जीव को

समझाएगें। परन्तु वास्तविक मन्त्र तथा सार ज्ञान से अपरिचित होने के कारण उन बारह पंथों के साधक असंख्य जन्म सतलोक नहीं जा सकेंगे। उपरोक्त बारह पंथ हमको ही प्रमाण करके भक्ति करेगें परन्तु स्थाई स्थान (सतलोक) अर्थात् मोक्ष प्राप्त नहीं कर सकेंगे। बारहवें पंथ (गरीबदास वाले पंथ) में आगे चलकर हम (कबीर जी) स्वयं ही आऐगें तथा सब बारह पंथों को मिटा एक ही पंथ चलाऐगें। उस समय तक सार ज्ञान तथा सारशब्द छुपा कर रखना है। यही प्रमाण सन्त गरीबदास जी महाराज ने अपनी अमृतवाणी ''असुर निकंन्दन रमैणी'' में किया है कि ''सतगुरू दिल्ली मण्डल आयसी, सूती धरती सूम जगायसी'' पुराना रोहतक जिला दिल्ली मण्डल कहलाता है। जो पहले अग्रेंजों के शासन काल में केन्द्र के आधीन था।

संत गरीबदास यानि बारहवें पंथ में भक्ति की झलक

संत गरीबदास जी महाराज (छुड़ानी वाले) को जो तत्वज्ञान परमेश्वर कबीर जी ने बताया था तथा ऊपर के सर्व ब्रह्माण्डों को आँखों दिखाया था, उसके विषय में संत गरीबदास जी ने लगभग दो हजार चार सौ (2400) अमृतवाणी बोली जो लिखी गई थी। उनको वर्तमान में ग्रन्थ के रूप में प्रिन्ट करवाया गया है। पहले हाथ से लिखी थी। इस अमृतज्ञान को ठीक से न समझकर संत गरीबदास जी के आशय के विरूद्ध ज्ञान बताना शुरू कर दिया गया तथा साधना भी ग्रन्थ के आदेश के विरूद्ध शुरू कर दी। कारण यह रहा कि संत गरीबदास जी सन् 1778 में शरीर त्याग गए थे। उस समय उनके नाममात्र ही शिष्य थे जिनको प्रथम मंत्र ही दिया था। केवल एक शीतल दास जी को गुप्त रहस्य बताया था। उसको भी गुप्त रखने का आदेश था। केवल अपने एक उत्तराधिकारी को बताने का आदेश था। यह परम्परा मेरे गुरू जी तक चली। जिस कारण से अन्य गरीबदास जी वाले साधकों को यथार्थ भक्ति विधि का ज्ञान नहीं हुआ। वे मनमानी साधना करने लगे तथा ग्रन्थ को न समझकर एक सोहं नाम का जाप करने लगे। यह माना जाता है जो सत्य भी है कि संत गरीबदास जी के बारहवें पंथ का विस्तार संत ब्रह्मसागर जी भूरीवाले (रामपुर धाम, पंजाब) के द्वारा किया गया है। पंजाब प्रान्त के अतिरिक्त हिमाचल प्रदेश में हरिद्वार व ऋषिकेश में तथा पूरे भारतवर्ष में 200 से अधिक आश्रम हैं। अकेले पंजाब में लगभग 125 गाँवों में संत गरीबदास के प्रचारक संत भूरी वाले ब्रह्मसागर जी की कुटिया आश्रम हैं। कई शहरों (लुधियाना, तलवण्डी, ऊँची, निर्वी, रामपुर, जलूर आदि) में बड़े आश्रम बने हैं। हरिद्वार व ऋषिकेश में लगभग 29 आश्रम हैं।

श्री संत भूरीवाले क्या भक्ति-साधना करते थे तथा क्या अनुयाईयों को प्रदान करते थे? उसका वर्णन करता हूँ :-

संत ब्रह्मसागर भूरी (लोई) वाले जी सोहं नाम जाप करते थे। जाप करने की विधि इस प्रकार थी :- ''सो'' का जाप श्वांस को बाहर छोड़ते समय तथा ''हं''

का जाप श्वांस के साथ अंदर लेते समय करते थे। इन्होंने सन् 1896 से सन् 1917 तक (21 वर्ष) मौन रहकर गाँव-कैलपुर जिला-लुधियाना (पंजाब) में साधना की थी। इन्होंने ही छुड़ानी धाम (हरियाणा) को रोशन किया। इन्होंने संत गरीबदास जी के मृत शरीर पर बनी छोटी-सी मंढ़ी का जीर्णोद्धार करवाकर उस पर संत गरीबदास जी की मूर्ति स्थापित करवाकर बड़ी यादगार बनवाई है जिसको छतरी साहेब कहते हैं जिस पर वर्तमान में वर्ष में दो बार बड़े समागम होते हैं। वही भक्ति जो श्री ब्रह्मसागर जी बताते थे, वहाँ छुड़ानी तथा सर्व आश्रमों में प्रचलित है। एक और कमाल है :- ''सोहं'' नाम का स्मरण केवल उनको दिया जाता है जो भगवां वस्त्र पहनते हैं तथा घर त्यागकर आश्रमों में रहकर सेवा करते हैं। जो जनता-जन अनुयाई बनते हैं, उनको केवल ''ॐ भगवते वासुदेवाय नमः'' नाम जाप करने की दीक्षा देते हैं। श्री ब्रह्मसागर जी भूरी वाले को तथा संत गरीबदास जी को साक्षात् श्री विष्णु (श्री कृष्ण) का अवतार मानते हैं। श्री ब्रह्मसागर जी एक चद्दर रखते थे जिसे पंजाब में भूरी (हरियाणा में लोई) कहते हैं। इस कारण से श्री ब्रह्मसागर जी को भूरी वाला बाबा कहने लगे। इनका जन्म 22 अगस्त सन् 1862 में जन्माष्टमी (कृष्ण जन्माष्टमी) के दिन हुआ था तथा इन्होंने 24 दिसंबर 1947 को 85 वर्ष की आयु में जलूर साहेब धाम जिला-संगरूर (पंजाब) में चोला छोड़ा। इनका जन्म स्थान गाँव-रामपुर तहसील-आनंदपुर साहेब जिला-बिलासपुर (पंजाब) था। संत गरीबदास जी के ग्रन्थ के साथ-साथ श्रीमद्भागवत (सुधा सागर) का पाठ भी इनके अनुयाई संत-भक्त करते हैं। वर्तमान में श्री दर्शन सिंह महंत जी हैं।

पाठकजनों को पता चला कि संत गरीबदास जी के बारहवें कबीर पंथ में क्या भक्ति चल रही है? इन्हें संत गरीबदास जी की अमृतवाणी का यथार्थ ज्ञान नहीं है। जिस कारण से गुरूदेव के अंग से ''सोहं'' नाम लेकर दो भाग करके भक्ति करने लगे। भोली जनता को श्री कृष्ण की पूजा का मंत्र देने लगे जो ग्रन्थ में है ही नहीं। गुरूदेव के अंग में लिखा है ''सतगुरू सोहं नाम दे, गुज बिरज बिस्तार। बिन सोहं सूझै नहीं, मूल मंत्र निज सार।।'' **इस वाणी में स्पष्ट किया है कि सतगुरू सोहं नाम देकर उसका गुप्त भेद विस्तार से बताएगा। इस नाम (सोहं) के ऊपर भी एक नाम है जिससे मोक्ष संभव है। सुमिरन के अंग में ग्रन्थ में लिखा है कि** ''सोहं ऊपर और है, सत सुकृत एक नाम। सब हंसों का वंश है, बस्ती है बिन ठाम।।'' **उस सोहं से ऊपर वाले मंत्र यानि सार शब्द बिना मोक्ष नहीं हो सकता। जिस कारण से परमेश्वर कबीर जी ने कबीर सागर के अध्याय ''कबीर बानी'' में पृष्ठ 136-137 पर स्पष्ट किया है कि :-**

बारहवें पंथ प्रकट हवै बानी। शब्द हमारे की निर्णय ठानी।।
साखी हमारी ले जीव समझावैं। असंख जन्म ठौर नहीं पावैं।।
अस्थिर घर का मर्म नहीं पावैं। ये बारह पंथ हमहीं को ध्यावैं।।
बारहवें पंथ हम ही चलि आवैं। सब पंथ मिटा एक पंथ चलावैं।।
धर्मदास मेरी लाख दोहाई। सार शब्द कहीं बाहर नहीं जाई।।
सार शब्द बाहर जो परही। बिचली पीढ़ी हंस नहीं तरहीं।।

भावार्थ :- परमेश्वर कबीर जी ने अपने परम शिष्य धर्मदास जी को बताया कि हे धर्मदास! जिस समय कलयुग पाँच हजार पाँच सौ पाँच (5505) वर्ष बीतेगा, उस समय से बीचली पीढ़ी के उद्धार के लिए यथार्थ भक्ति पंथ चलाया जाएगा। तब तक काल ब्रह्म धोखा करके मेरे (कबीर) नाम से फर्जी पंथ चलाएगा। तेरी छठी पीढ़ी को भी काल भ्रमित करके मेरे द्वारा बताई सत्य साधना छुड़वाकर गलत साधना प्रारम्भ करवा देगा। इस प्रकार काल मेरे यानि कबीर नाम से बारह नकली पंथ प्रारम्भ करवाएगा। अन्य पंथ भी शुरू करवाएगा जो सतलोक की बातें करेंगे, साधना सब व्यर्थ बताकर साधकों को काल जाल में ही रखेंगे। हे धर्मदास! मैंने तेरे को सम्पूर्ण भक्ति साधना के मंत्र बताए हैं। इनमें सारनाम (सारशब्द) भी बताया। इस सारशब्द को उस समय तक किसी को नहीं बताना है, जब तक कलयुग पाँच हजार पाँच सौ पाँच वर्ष न बीत जाए। मेरे नाम से चलने वाले पंथों में बारहवां पंथ गरीबदास पंथ होगा। उस पंथ के प्रवर्तक का जन्म विक्रमी संवत् सतरह सौ चौहत्तर (1774) में होगा। उससे यथार्थ आध्यात्मिक ज्ञान व भक्ति साधना की बानी प्रकट करवाऊँगा। उससे मेरी महिमा सुन-सुनकर मेरे प्रति भक्त समाज का प्रेम बढ़ेगा। ये बारह पंथों के अनुयाई मेरी वाणी को पढ़कर निर्णय करेंगे, परंतु ठीक से न समझकर सत्य भक्ति से वंचित रहेंगे। जिस कारण से असंख्यों जन्मों तक स्थिर घर यानि अमर लोक (सतलोक) को प्राप्त नहीं कर सकेंगे। जो बारहवां पंथ (संत गरीबदास वाला) चलेगा, उस पंथ के पश्चात् उसी बारहवें पंथ में मैं (कबीर) जाऊँगा। यथार्थ तेरहवां पंथ चलाकर सर्व पंथों (धर्मों) को तत्वज्ञान के आधार से समझाकर एक करूँगा। बीचली पीढ़ी को यथार्थ ज्ञान तथा भक्ति बताकर भक्ति की प्रेरणा करके भक्ति करवाकर सत्यलोक ले जाऊँगा।

❖ वह तेरहवां पंथ अब लेखक (संत रामपाल दास) द्वारा चलाया गया है। यह सब परमेश्वर कबीर जी की कृपा तथा गुरूदेव जी के आशीर्वाद से हो रहा है।

❖ संत ब्रह्मसागर भूरी वाले उन्हीं बारह पंथों में से बारहवें पंथ गरीबदास पंथ के अनुयाई थे। उनके द्वारा की गई साधना तथा जाप के मंत्रों से स्पष्ट है कि इनकी मुक्ति हुई या नहीं?

सारनाम बिन सतलोक प्राप्त नहीं हो सकता। वह मेरे (रामपाल दास के) अतिरिक्त विश्व में किसी के पास नहीं है।

प्रत्येक देव व परमेश्वर की स्थिति

सूक्ष्मवेद के ज्ञान को परमेश्वर कबीर जी ने बताया है :-

कबीर, अक्षर पुरूष एक पेड़ है, निरंजन वाकी डार।
त्रिदेवा शाखा भए, पात रूप संसार।। **1**
कबीर, एकै साधे सब सधै, सब साधे सब जाय।
माली सींचै मूल को, फलै–फूलै अघाय।। **2**

शब्दार्थ :- वाणी सँख्या 1-2 में परमेश्वर कबीर जी ने गीता के अध्याय 15 श्लोक 1-4 तथा 16-17 का ज्ञान बताया है।

❖ ''भक्ति किस प्रभु की करनी चाहिए'' गीता अनुसार। ❖

इसलिए सूक्ष्मवेद में कहा कि :-

"भजन करो उस रब का, जो दाता है कुल सब का"

श्रीमद् भगवत् गीता अध्याय 15 श्लोक 1 से 4 तथा 16-17 में कहा है कि यह संसार ऐसा है जैसे पीपल का वृक्ष है। जो संत इस संसार रूपी पीपल के वृक्ष की मूल (जड़ों) से लेकर तीनों गुणों रूपी शाखाओं तक सर्वांग भिन्न-भिन्न बता देता है। (सः वेद वित्) वह वेद के तात्पर्य को जानने वाला है अर्थात् वह तत्वदर्शी सन्त है।

अपने द्वारा रची सृष्टि का ज्ञान तथा वास्तविक आध्यात्म ज्ञान परमात्मा स्वयं पृथ्वी पर प्रकट होकर अपने मुख कमल से सुनाता है। परमात्मा अपने अमर धाम से चलकर पृथ्वी पर प्रकट होता है। वह अच्छी आत्माओं को मिलता है। वह तत्वदर्शी सन्त की भूमिका करके तत्व ज्ञान दोहों, चौपाईयों, शब्दों द्वारा बोलता है। उस परमेश्वर ने सन् 1398 से 1518 तक 120 वर्ष पृथ्वी पर भारत वर्ष की पावन धरती पर काशी शहर में जुलाहे (धाणक) के रूप में रहकर तत्वज्ञान बताया था।

कबीर, अक्षर पुरूष एक पेड़ है, क्षर पुरूष वाकी डार।
तीनों देवा शाखा हैं, पात रूप संसार।।
कबीर, अक्षर पुरूष वृक्ष का तना है, क्षर पुरूष है डार।
त्रयदेव शाखा भए, पात जानों संसार।।
कबीर, हम ही अलख अल्लाह हैं, मूल रूप करतार।
अनन्त कोटि ब्रह्मण्ड का, मैं ही सृजनहार।।

सरलार्थ :- वृक्ष का जो हिस्सा पृथ्वी से बाहर दिखाई देता है। उसकी जानकारी बताई है कि वृक्ष का जो तना होता है, उसे तो "अक्षर पुरूष" जानें। तने के ऊपर कई मोटी डार निकलती हैं, उनमें से एक डार को ''क्षर पुरूष'' जानें। फिर उस डार के मानों तीन शाखा निकली हैं। वे तीनों देवता :- (रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु जी तथा तमगुण शिव जी) जानें और उन शाखाओं पर लगे पत्ते जीव-जन्तु जानें।

परमेश्वर कबीर जी ने तत्वज्ञान में सब ज्ञान बताया है। कहा है कि संसार वृक्ष की मूल यानि जड़ें रूप जो परम अक्षर ब्रह्म है, वह हम यानि कबीर जी हैं। गीता अध्याय 4 श्लोक 32 में भी कहा है कि यज्ञों अर्थात् धार्मिक अनुष्ठानों की जानकारी (ब्रह्मणः मुखे) सच्चिदानन्द घन ब्रह्म अर्थात् परम अक्षर ब्रह्म ने अपने मुख कमल से बोली, वाणी में विस्तार के साथ कही है, वह तत्वज्ञान है।

गीता अध्याय 4 श्लोक 34 में कहा है कि जो तत्वज्ञान परमात्मा स्वयं बताता है। उसको उसके कृपा पात्र सन्त ही समझते हैं। उस तत्वज्ञान को तू तत्वदर्शी सन्तों के पास जाकर समझ। उनको दण्डवत् प्रणाम (पृथ्वी पर पेट के बल लम्बा लेटकर प्रणाम) करके, नम्रतापूर्वक प्रश्न करने से वे तत्वदर्शी सन्त तत्वज्ञान का उपदेश करेंगे।

परमेश्वर ने यह तत्वज्ञान स्वयं पृथ्वी पर प्रकट होकर बताया था। गीता अध्याय 15 श्लोक 1 में तत्वदर्शी सन्त की पहचान बताई है कि जो सन्त संसार रूपी वृक्ष को मूल (जड़) से लेकर सर्व अंगों को जानता है, वह तत्वदर्शी सन्त है।

❖ अब जानें संसार रूपी वृक्ष के सर्वांग :-

1. मूल (जड़) :- यह परम अक्षर ब्रह्म है जो सबका मालिक है। सबकी उत्पत्ति करता है। सबका धारण-पोषण करने वाला है जिसकी जानकारी गीता अध्याय 8 श्लोक 1 के प्रश्न का उत्तर गीता अध्याय 8 के ही श्लोक 3, 8, 9, 10 तथा 20, 21, 22 में दिया है। उसी का वर्णन गीता अध्याय 15 श्लोक 17 में है। जैसे गीता अध्याय 15 श्लोक 16 में दो पुरूष बताए हैं :- एक "क्षर पुरूष" दूसरा "अक्षर पुरूष", ये दोनों तथा इनके अन्तर्गत जितने शरीरधारी प्राणी हैं, वे सब नाशवान हैं। जीव आत्मा तो किसी की नहीं मरती।

गीता अध्याय 15 के ही श्लोक 17 में कहा है कि (उत्तम पुरूषः) अर्थात् पुरूषोत्तम तो (अन्यः) अन्य ही है जिसे (परमात्मा इति उदाहृतः) परमात्मा कहा जाता है (यः लोक त्रयम्) जो तीनों लोकों में (अविश्य विभर्ती) प्रवेश करके सबका धारण-पोषण करता है (अव्ययः ईश्वरः) अविनाशी परमेश्वर है, यह परम अक्षर ब्रह्म संसार रूपी वृक्ष की मूल (जड़) रूप परमेश्वर है। यह वह परमात्मा है जिसके विषय में सन्त गरीब दास जी ने कहा है :-

"भजन करो उस रब का, जो दाता है कुल सब का"

यह असँख्यों ब्रह्माण्डों का मालिक है। यह क्षर पुरूष तथा अक्षर पुरूष का भी मालिक तथा उत्पत्तिकर्ता है।

2. अक्षर पुरूष :- यह संसार रूपी वृक्ष का तना जानें। यह 7 शंख ब्रह्माण्डों का मालिक है, नाशवान है।

3. क्षर पुरूष :- यह गीता ज्ञान दाता है, इसको "क्षर ब्रह्म" भी कहते हैं। यह केवल 21 ब्रह्माण्डों का मालिक है, नाशवान है।

4. तीनों देवता (रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव) तीन शाखाऐं :- ये एक ब्रह्माण्ड में बने तीन लोकों (पृथ्वी लोक, पाताल लोक तथा स्वर्ग लोक) में एक-एक विभाग के मन्त्री हैं, मालिक हैं।

जैसे = रजगुण विभाग के श्री ब्रह्मा जी मालिक हैं, जिसके प्रभाव से सर्व प्राणी सन्तानोत्पत्ति करते हैं। सतगुण विभाग के श्री विष्णु जी मालिक हैं, जिससे एक-दूसरे में ममता बनी रहती है, कर्मानुसार सर्व का किया फल देते हैं। तमोगुण विभाग के श्री शंकर जी मालिक हैं, जिसके कारण सर्व का अन्त होता है और पात रूप में संसार के प्राणी जानो। यह है संसार रूपी वृक्ष के सर्वांगों की भिन्न-भिन्न जानकारी। यह ज्ञान स्वयं परमेश्वर कबीर जी ने अपने मुख कमल से बोला था। वह कबीर वाणी, कबीर बीजक, कबीर शब्दावली तथा कबीर सागर में श्री धनी धर्मदास (बाँधवगढ़ वाले) द्वारा लिखा गया था। उस परमेश्वर ने तो बताया ही था या वर्तमान में इस दास (संत रामपाल दास) ने समझा है। यह कृपा परमेश्वर कबीर जी की ही है कि सम्पूर्ण आध्यात्म ज्ञान मुझे प्राप्त है।

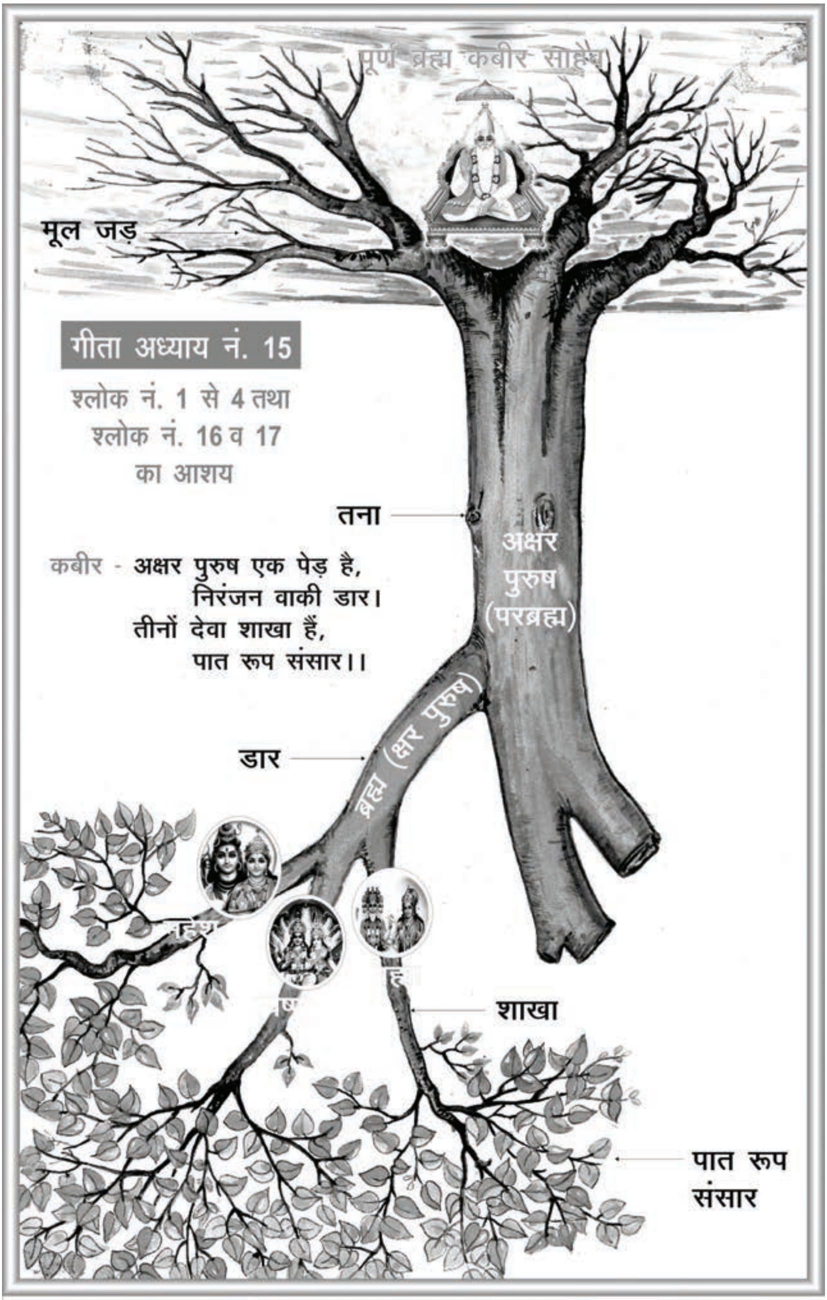

ऊपर जड़ नीचे शाखा वाला उल्टा लटका हुआ संसार रूपी वृक्ष का चित्र

गीता अध्याय 15 श्लोक 1 से 4 तथा 16 से 17 का सांराश रूप चित्र।

गीता अध्याय 15 श्लोक 1 के अनुसार तत्वदर्शी सन्त की पहचान से भी यह सिद्ध हुआ कि यह दास (संत रामपाल दास) वह तत्वदर्शी सन्त है।

पुनः प्रसंग पर आते हैं कि ''भजन करो उस रब का, जो दाता है कुल सब का।''

अभी तक तो यही बताया है कि भक्ति करनी चाहिए परंतु अब यह स्पष्ट करते हैं कि भक्ति किसकी करें? 1. श्री ब्रह्मा जी रजगुण की या 2. श्री विष्णु जी सतगुण की या 3. तमगुण श्री शिव जी रूपी तीनों शाखाओं की या फिर 4. क्षर पुरूष गीता ज्ञान दाता डार की या 5. अक्षर पुरूष तना की या 6. परम अक्षर पुरूष = मूल की।

उदाहरण :- यदि हम नर्सरी से कोई आम का पौधा लाते हैं, उसको अपने खेत या घर के आँगन में रोपते हैं तो कैसे रोपते हैं?

जमीन में गढ्ढ़ा खोदते हैं, पौधे की मूल (जड़ों) को गढ्ढ़े में रखकर मिट्टी से ढ़क देते हैं। फिर पौधे की मूल (जड़ों) में पानी से सिंचाई करते हैं, खाद डालते हैं अर्थात् पौधे की जड़ की पूजा करते हैं। जड़ों से आहार तने में, तना अपने अनुसार आहार रखकर बचा हुआ आगे डार में भेज देता है। डार अपने लिए आवश्यक आहार रखकर शेष शाखाओं में भेज देती है। इसी प्रकार शाखाऐं शेष भोजन पत्तों तक भेजती हैं। इस प्रकार वह पौधा पेड़ बनकर फल देता है।

पाठक जन बहुत बुद्धिमान हैं। समझ गए होंगे कि हमने किस परमात्मा की पूजा करनी चाहिए?

सूक्ष्मवेद में परमेश्वर कबीर जी ने बताया है कि :-

कबीर, एकै साधै सब सधै, सब साधै सब जाय।
माली सींचै मूल कूँ, फूलै फलै अघाय।।

एक मूल मालिक की पूजा करने से सर्व देवताओं की पूजा हो जाती है जो शास्त्रानुकूल है। जो तीनों देवताओं में से एक या दो (श्री विष्णु सतगुण तथा श्री शंकर तमगुण) की पूजा करते हैं या तीनों की पूजा ईष्ट रूप में करते हैं तो वह गीता अध्याय 13 श्लोक 10 में वर्णित अव्यभिचारिणी भक्ति न होने से व्यर्थ है। जैसे कोई स्त्री अपने पति के अतिरिक्त अन्य पुरूष से शारीरिक सम्बन्ध नहीं करती, वह अव्यभिचारिणी स्त्री है। जो कई पुरूषों से सम्पर्क करती है, वह व्यभिचारिणी होने से समाज में निन्दनीय होती है। वह पति के दिल से उतर जाती है।

शास्त्रानुकूल साधना अर्थात् सीधा बीजा हुआ भक्ति रूपी पौधे का चित्र इसी पुस्तक के पृष्ठ 151 पर व शास्त्रविरूद्ध साधना अर्थात् उल्टा बीजा हुआ भक्ति रूपी पौधा पृष्ठ 152 पर देखें।

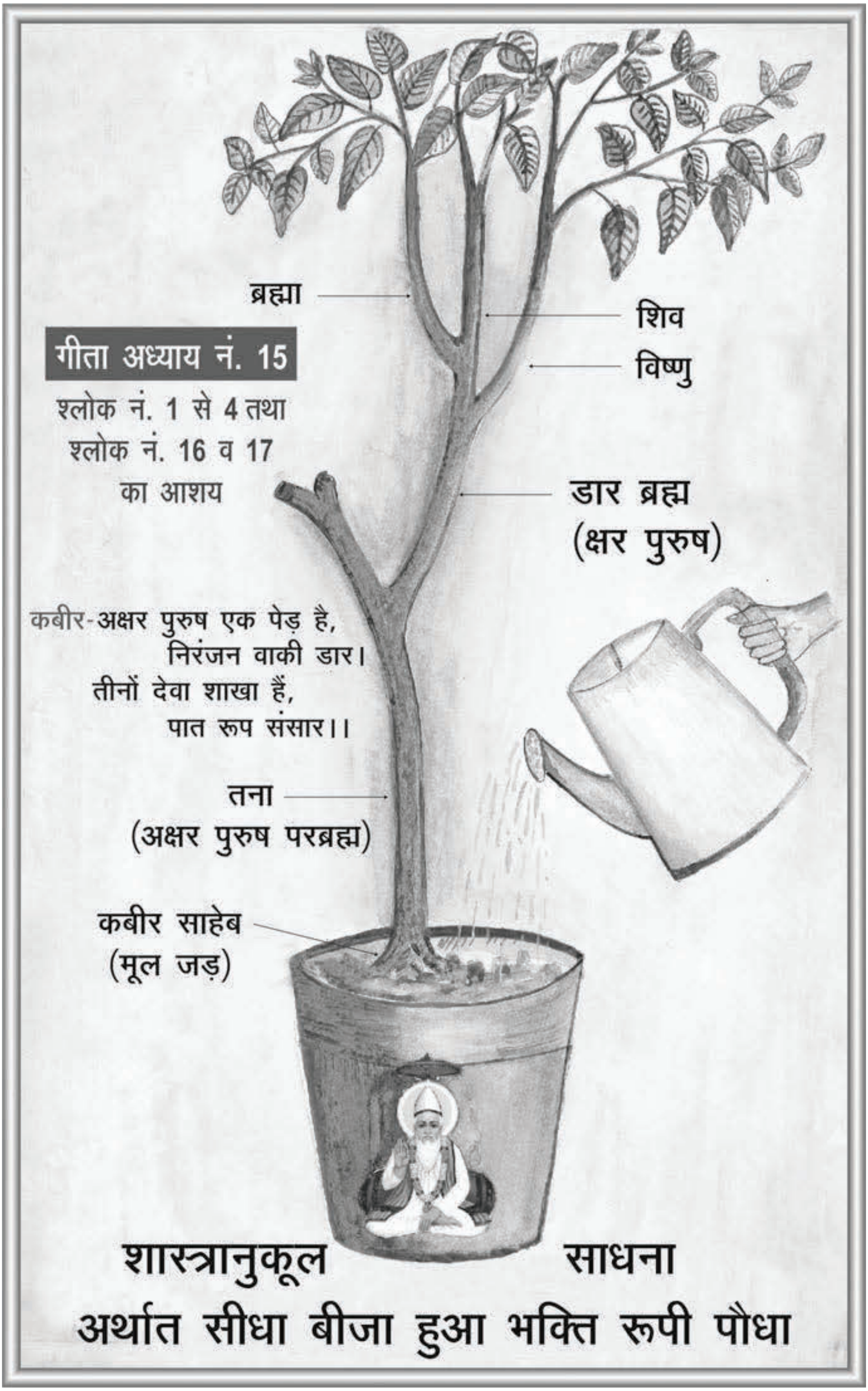
ब्रह्मा
शिव
विष्णु
गीता अध्याय नं. 15
श्लोक नं. 1 से 4 तथा
श्लोक नं. 16 व 17
का आशय
डार ब्रह्म
(क्षर पुरुष)
कबीर-अक्षर पुरुष एक पेड़ है,
निरंजन वाकी डार।
तीनों देवा शाखा हैं,
पात रूप संसार।।
तना
(अक्षर पुरुष परब्रह्म)
कबीर साहेब
(मूल जड़)
शास्त्रानुकूल साधना
अर्थात सीधा बीजा हुआ भक्ति रूपी पौधा

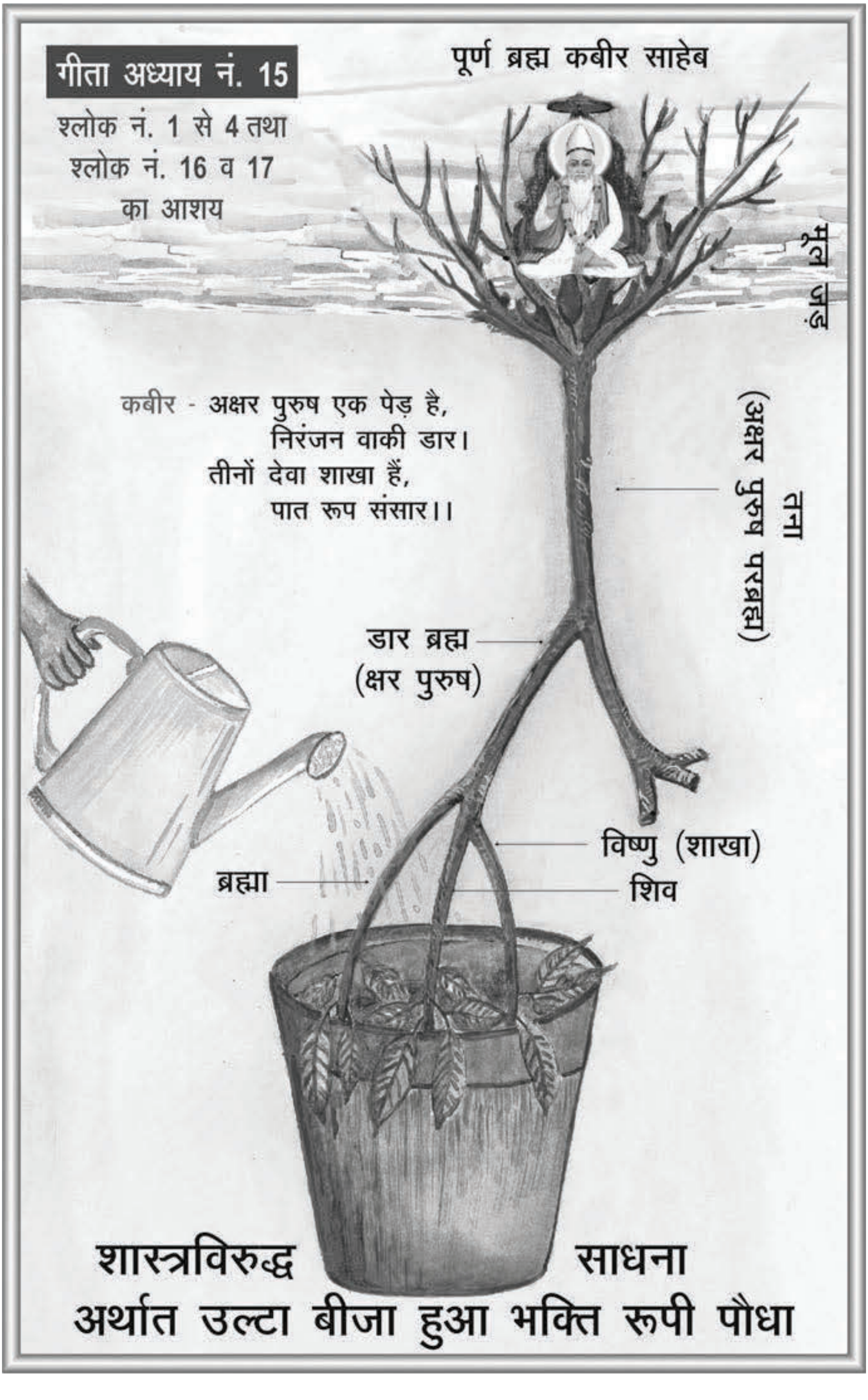
गीता अध्याय नं. 15
श्लोक नं. 1 से 4 तथा
श्लोक नं. 16 व 17
का आशय
पूर्ण ब्रह्म कबीर साहेब
मूल जड़
कबीर - अक्षर पुरुष एक पेड़ है,
निरंजन वाकी डार।
तीनों देवा शाखा हैं,
पात रूप संसार।।
तना
(अक्षर पुरुष परब्रह्म)
डार ब्रह्म
(क्षर पुरुष)
विष्णु (शाखा)
ब्रह्मा
शिव
शास्त्रविरुद्ध साधना
अर्थात उल्टा बीजा हुआ भक्ति रूपी पौधा

उपरोक्त प्रमाणों से स्पष्ट हुआ कि एक मूल मालिक की भक्ति करने से साधक का आत्म-कल्याण सम्भव है।

अन्य प्रमाण :- गीता अध्याय 3 श्लोक 10 से 15 में इसी उपरोक्त भक्ति का समर्थन किया है।

❖ गीता अध्याय 3 श्लोक 10 = प्रजापति ने अर्थात् कुल के मालिक ने संष्टि के आदि में यज्ञ सहित अर्थात् धार्मिक अनुष्ठानों के ज्ञान सहित प्रजाओं को उत्पन्न करके आदेश दिया था कि तुम सब धार्मिक अनुष्ठानों द्वारा वंद्धि को प्राप्त होओ। यह यज्ञ अर्थात् धार्मिक अनुष्ठान तुम लोगों को ईच्छित भोग प्रदान करने वाले हैं। (गीता अध्याय 3 श्लोक 10)

❖ इस शास्त्रानुकूल धार्मिक अनुष्ठान द्वारा देवताओं (संसार रूपी पौधे की शाखाओं) को उन्नत करो अर्थात् पूर्ण परमात्मा (मूल मालिक) को ईष्ट मानकर साधना करने से शाखाऐं अपने आप उन्नत हो जाती हैं जैसाकि पूर्व में स्पष्ट हो चुका है। फिर वे देवता (शाखाऐं बड़ी होकर फल देंगी) तुम लोगों को उन्नत करें अर्थात् जब हम शास्त्रानुकूल साधना करेंगे तो हमारे भक्ति कर्म बनेंगे, कर्मों का फल ये तीनों देवता (श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी रूपी शाखाऐं ही) देते हैं। इस प्रकार एक-दूसरे को उन्नत करते हुए तुम्हारा कल्याण होगा तथा इससे दूसरे परमात्मा को प्राप्त हो जाओगे। (यह ज्ञान गीता ज्ञान दाता बता रहा है। (गीता अध्याय 3 श्लोक 11)

❖ शास्त्रानुकुल किए यज्ञ अर्थात् अनुष्ठानों द्वारा बढ़ाए हुए देवता अर्थात् संसार रूपी पौधे की शाखाऐं तुम लोगों को बिना माँगे ही इच्छित भोग निश्चय ही देते रहेंगे। जैसे पौधे की मूल की सिंचाई करने से पौधा पेड़ बन जाता है व शाखाऐं फलों से लदपद हो जाती हैं। फिर उस वंक्ष की शाखाऐं अपने आप प्रतिवर्ष फल देती रहेंगी यानि आप जी का किया शास्त्रानुकूल भक्ति कर्म का फल जो संचित हो जाता है, उसे यही देवता आपको देते रहेंगे, आप माँगो या न माँगो। यदि उन देवताओं द्वारा दिया गया आपका कर्म संस्कार का धन पुनः धर्म में नहीं लगाया तो वह साधक भक्ति का चोर है। वह भविष्य में पुण्य रहित होकर हानि उठाता है। (गीता अध्याय 3 श्लोक 12)

❖ यज्ञ से बचे हुए अन्न को खाने वाले संतजन सब पापों से मुक्त हो जाते हैं। भावार्थ है कि तत्वदर्शी सन्त सर्वप्रथम परम अक्षर ब्रह्म को भोग लगाकर फिर बचे हुए भोजन को सर्व भक्तों में वितरित करता है। यह पहचान है सत्य साधना की तो वह सन्त सर्व भक्ति मन्त्र भी शास्त्रानुकूल देता है। जिस कारण से साधक सर्व पापों से मुक्त होकर सत्यलोक में चला जाता है और जो पापी लोग शास्त्रविधि अनुसार धार्मिक क्रियाऐं नहीं करते या धर्म नहीं करते, केवल अपने शरीर पोषण के लिए अन्न पकाते हैं। वे तो पाप को ही खाते हैं। (गीता अध्याय 3 श्लोक 13)

❖ सम्पूर्ण प्राणी अन्न से उत्पन्न होते हैं अर्थात् अन्न खाने से शरीर में

संतानोत्पत्ति का पदार्थ बनता है जिससे सर्व प्राणियों की उत्पत्ति होती है। अन्न की उत्पत्ति वृष्टि से होती है। वर्षा शास्त्रविधि अनुसार किए गए यज्ञ अर्थात् धार्मिक अनुष्ठान से होती है। यज्ञ अर्थात् धार्मिक अनुष्ठान शास्त्रों में वर्णित विधि से किए जाते हैं। कर्म को ब्रह्म अर्थात् क्षर पुरूष से उत्पन्न हुए जान क्योंकि हम ब्रह्म (काल) के लोक में आए हैं तो हमको कर्म करके ही सब प्राप्त होता है। जब हम सत्यलोक में थे, तब बिना कर्म किए सब प्राप्त था। इसलिए कहा है कि कर्म को ब्रह्म (काल) से उत्पन्न जान तथा ब्रह्म (काल) की उत्पत्ति अविनाशी परमात्मा से हुई। (जिसका वर्णन गीता अध्याय 15 श्लोक 17 में है तथा सृष्टि रचना अध्याय में पढ़ें।) इससे सिद्ध होता है कि (सर्वगतम् ब्रह्म) सर्वव्यापी परम अक्षर परमात्मा अर्थात् परम अक्षर ब्रह्म सदा ही यज्ञों में अर्थात् धार्मिक अनुष्ठानों में (प्रतिष्ठितम्) प्रतिष्ठित है अर्थात् सब धार्मिक क्रियाओं में परम अक्षर ब्रह्म ईष्ट रूप में पूज्य है। (गीता अध्याय 3 श्लोक 14-15)

परम अक्षर ब्रह्म गीता ज्ञान दाता से अन्य है। गीता ज्ञान दाता ने स्वयं गीता अध्याय 18 श्लोक 62 में कहा है कि हे भारत! तू सर्वभाव से उस परमेश्वर अर्थात् परम अक्षर ब्रह्म की शरण में जा, उस परमेश्वर की कृपा से ही तू परम शान्ति को तथा शाश्वत स्थान अर्थात् सनातन परम धाम को प्राप्त होगा।

❖ गीता अध्याय 15 श्लोक 4 में गीता ज्ञान दाता ने बताया है कि तत्वदर्शी सन्त मिलने के पश्चात् तत्वज्ञान रूपी शस्त्र द्वारा अज्ञान को काटकर परमेश्वर के उस परम पद की खोज करनी चाहिए जहाँ जाने के पश्चात् साधक फिर लौटकर कभी संसार में जन्म नहीं लेते अर्थात् उनको सनातन परम धाम प्राप्त हो जाता है, जहाँ परमशान्ति है, कोई कष्ट नहीं है, वहाँ मृत्यु नहीं होती, वहाँ वृद्धावस्था नहीं होती, किसी पदार्थ का अभाव नहीं हैं। जिस परमेश्वर से संसार रूपी वृक्ष की प्रवृति विस्तार को प्राप्त हुई है, उसी परमेश्वर की भक्ति करनी चाहिए।

❖ गीता अध्याय 13 श्लोक 17 में गीता ज्ञान दाता ने बताया है कि वह परब्रह्म अर्थात् मेरे से दूसरा प्रभु दूसरे शब्दों में परम अक्षर ब्रह्म(जिसके विषय में गीता अध्याय 8 श्लोक 3 में कहा है।) ज्योतियों का भी ज्योति, माया से अति परे कहा जाता है, बोधरूप (जानने योग्य) परमात्मा तत्वज्ञान से प्राप्त करने योग्य है और सबके हृदय में विशेष रूप से स्थित है। (गीता अध्याय 13 श्लोक 17)

विचार करें :- जिस तत्वज्ञान से परम अक्षर ब्रह्म प्राप्त होता है, उसे सूक्ष्म वेद भी कहते हैं। उसका ज्ञान गीता ज्ञान दाता को नहीं है। इसलिए गीता ज्ञान दाता ने गीता अध्याय 4 श्लोक 32 तथा 34 में बताया है कि यज्ञों अर्थात् धार्मिक अनुष्ठानों का विस्तारपूर्वक ज्ञान स्वयं (ब्रह्मणः मुखे) सच्चिदानन्द घन ब्रह्म परमात्मा अर्थात् परम अक्षर ब्रह्म अपने मुख कमल से बोलकर बताता है जो सच्चिदानन्द घन ब्रह्म की वाणी कही जाती है, उसे तत्वज्ञान कहते हैं। उसे जानकर साधक सर्व पापों से मुक्त हो जाता है। (गीता अध्याय 4 श्लोक 32)

❖ पाठकों से निवेदन है कि गीता अध्याय 4 श्लोक 32 के मूल पाठ में

"ब्रह्मणः" शब्द है। गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित गीता या अन्य स्थानों से प्रकाशित गीता में अनुवादकों ने ब्रह्मणः का अर्थ "वेद" किया है जो गलत है।

गीता अध्याय 17 श्लोक 23 में भी "ब्रह्मणः" शब्द है, उसमें अनुवादकों ने ठीक अर्थ "सच्चिदानन्द घन ब्रह्म" किया है। इसलिए गीता अध्याय 4 श्लोक 32 में "ब्रह्मणः मुखे" का अर्थ सच्चिदानन्द घन ब्रह्म के मुख कमल से उच्चरित वाणी में करना उचित है।

गीता अध्याय 4 श्लोक 34 में गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि उस तत्वज्ञान को जिसे परमेश्वर अपने मुख कमल से बताता है, तू तत्वदर्शी सन्तों के पास जाकर समझ, उनको दण्डवत् प्रणाम करने से, नम्रतापूर्वक प्रश्न करने से वे परमात्म तत्व को भली-भाँति जानने वाले तत्वदर्शी महात्मा तुझे तत्वज्ञान का उपदेश करेंगे।

प्रभु प्रेमी पाठक जनों! इससे सिद्ध हुआ कि वह तत्वज्ञान जिससे परम अक्षर परमात्मा प्राप्त होता है, गीता ग्रन्थ में नहीं है। गीता चारों वेदों (ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद तथा अथर्ववेद) का संक्षिप्त रूप है, उनका सारांश है। इससे सिद्ध हुआ कि सूक्ष्मवेद वाला तत्वज्ञान किसी भी प्रचलित सद्ग्रन्थ में नहीं है। वह ज्ञान मेरे (सन्त रामपाल दास) पास है, विश्व में किसी के पास नहीं है।

प्रश्न :- क्या श्री ब्रह्मा जी रजगुण, श्री विष्णु जी सतगुण तथा श्री शिव जी तमगुण भी ईष्ट रूप में पूज्य नहीं है? हिन्दू धर्म में इन्हीं देवताओं की पूजा की जाती है। हिन्दू धर्मगुरू, शंकराचार्य तथा अन्य इन्हीं की पूजा ईष्ट रूप में मानकर करने को कहते हैं, वे स्वयं भी करते हैं। आपकी बात अविश्वसनीय लगती है, क्या आप गीता में प्रमाणित कर सकते हैं?

उत्तर :- हिन्दू धर्म के धर्मगुरूओं को अपने सद्ग्रन्थों का ही ज्ञान नहीं। जैसे अक्षर ज्ञान देने वाले अध्यापक को अपने पाठ्यक्रम की पुस्तकों के उल्लेख का ही ज्ञान नहीं तो वह अध्यापक विद्यार्थियों के लिए हानिकारक होता है। वह शिक्षक ठीक नहीं, यही दशा हिन्दू धर्म के धर्मगुरूओं की है।

प्रमाण :- श्रीमद् भगवत गीता अध्याय 7 श्लोक 12 से 15 में गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि तीनों गुणों से (रजगुण श्री ब्रह्मा जी से उत्पत्ति, सतगुण श्री विष्णु जी से स्थिति तथा तमगुण श्री शंकर जी से संहार) जो हो रहा है, उसका निमित मैं हूँ, परंतु उनमें मैं तथा वे मुझमें नहीं हैं। (गीता अध्याय 7 श्लोक 12),

पहले यह प्रमाणित करते हैं कि रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव शंकर है :-

1. मार्कण्डेय पुराण (गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित केवल हिन्दी सचित्र मोटा टाईप) के पष्ठ 123 पर लिखा है कि ब्रह्मा, विष्णु तथा महेश ब्रह्म की प्रधान शक्तियाँ हैं। ये ही तीन गुण हैं, ये ही तीन देवता हैं।

2. श्री देवी पुराण (श्री खेमचन्द श्री कष्ण चन्द वैंकेटेश्वर प्रैस मुम्बई से प्रकाशित) के तीसरे स्कंद के अध्याय 5 श्लोक 8 में कहा है :-

यदा दयादर्मना सदा अम्बिके कथम् अहमं विहितः तमोगुणः
कमलजः रजगुणः कथम् विहितः च श्री हरिः सतगुणः (देवी पुराण 3/5/8)

अनुवाद :- भगवान शिव अपनी माता दुर्गा जी से प्रश्न कर रहे हैं कि हे मातः! यदि आप हम पर दयायुक्त हैं तो मुझे तमोगुण क्यों उत्पन्न किया? कमल से उत्पन्न ब्रह्मा जी को रजोगुण तथा श्री विष्णु जी को सतगुण क्यों बनाया?

❖ इससे प्रमाणित हुआ कि 1. रजगुण कहो चाहे ब्रह्मा जी कहो, 2. सतगुण कहो चाहे विष्णु जी कहो, 3. तमगुण कहो चाहे शिव जी कहो।

गीता अध्याय 7 श्लोक 12 का भावार्थ :- गीता ज्ञान दाता काल ब्रह्म है। प्रमाण गीता अध्याय 11 श्लोक 31-32, अध्याय 11 श्लोक 31 में अर्जुन ने पूछा कि:- हे महानुभाव! आप कौन हैं? जबकि श्री कष्ण जी तो अर्जुन के साले थे। श्री कष्ण जी की बहन सुभद्रा का विवाह अर्जुन से हुआ था। विचार करें कि यदि गीता ज्ञान दाता श्री कष्ण होते तो अर्जुन को यह जानने की नौबत नहीं आती कि आप कौन हो? क्या जीजा अपने साले को नहीं जानता? वास्तव में श्री कष्ण जी के शरीर में प्रेतवत् प्रवेश करके काल ब्रह्म गीता ज्ञान बोल रहा था। ("अधिक प्रमाण के लिए पढ़ें पुस्तकें "गीता तेरा ज्ञान अमत", ''गहरी नजर गीता में'', "ज्ञान गंगा", आध्यात्मिक ज्ञान गंगा तथा देखें सत्संगों की D.V.D. श्री मद्भगवत गीता का ज्ञान किसने बोला। ये सब हमारी Web Site = www.jagatgururampalji.org पर उपलब्ध है, निःशुल्क डाउनलोड कर सकते हैं। You Tube पर भी Search कर सकते हैं। (Satsang Barwala Ashram या Sant Rampal Ji) गीता ज्ञान दाता काल ब्रह्म है जो गीता अध्याय 11 श्लोक 32 में स्वयं कह रहा है कि मैं काल हूँ, अब प्रवत हुआ हूँ अर्थात् अब प्रकट हुआ हूँ। यदि श्री कष्ण जी गीता ज्ञान बोल रहे होते तो यह नहीं कहते कि मैं अब आया हूँ क्योंकि श्री कष्ण जी तो पहले ही विद्यमान थे। श्री कष्ण जी ने कभी पहले नहीं कहा कि मैं काल हूँ, न कभी बाद में कहा कि सबका नाश करने वाला बढ़ा हुआ काल हूँ। कौरवों की सभा में अपना विराट रूप भी दिखाया था। विराट रूप भक्ति युक्त प्रत्येक आत्मा का होता है। कोई-कोई ही इसे प्रकट कर सकता है। यह भक्ति की शक्ति अनुसार होता है।

गीता ज्ञान दाता ने गीता अध्याय 11 श्लोक 47 में कहा है कि अर्जुन! मेरा यह विराट रूप तेरे अतिरिक्त पहले किसी ने नहीं देखा है। "पाठकों से निवेदन है कि श्री कष्ण जी ने तो अपना विराट रूप पहले कौरवों की सभा में दिखाया था" जो उपस्थित सैंकड़ों कौरवों सहित हजारों ने देखा था। यदि श्री कष्ण जी गीता ज्ञान बोल रहे होते तों यह कदापि नहीं कहते कि यह मेरा विराट रूप तेरे अतिरिक्त पहले किसी ने नहीं देखा था। इससे स्पष्ट है कि गीता ज्ञान दाता "काल ब्रह्म" है जिसे गीता अध्याय 15 श्लोक 16 में क्षर पुरूष कहा गया है। जिसने गीता अध्याय 8 श्लोक 13 में कहा है कि :-

"ओम् इति एकाक्षरम् ब्रह्म व्यवहारन् माम् अनुस्मरन्
यः प्रयाति त्यजन् देहम् सः याति परमाम् गतिम्"

सरलार्थ :- गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि (माम् ब्रह्म) मुझ ब्रह्म का (ओम् इति एकाक्षरम्) यह एक ऊँ अक्षर है। (व्यवहारन्) उच्चारण करके (अनुस्मरन्) स्मरण करता हुआ (यः प्रयाति त्यजन् देहम्) जो साधक शरीर त्यागकर जाता है, (सः याति परमाम् गतिम्) वह ऊँ नाम से होने वाली परम गति को प्राप्त होता है, इसी को और स्पष्ट करता हूँ।

श्री देवी पुराण (सचित्र मोटा टाईप केवल हिन्दी, गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित) के सातवें स्कंद में पष्ठ 562-563 पर प्रकरण इस प्रकार है :-

श्री देवी जी राजा हिमालय को ब्रह्म ज्ञानोपदेश देती है। कहा कि हे राजन्! तू ओम् (ऊँ) नाम का जाप कर जिससे ब्रह्म की प्राप्ति होती है। यह ऊँ नाम ब्रह्म जाप मन्त्र है और सब बातों को, पूजाओं को त्यागकर केवल एक ॐ नाम का जाप कर, ब्रह्म प्राप्ति का उद्देश्य रख, तेरा कल्याण हो। इससे ब्रह्म को प्राप्त हो जाएगा, वह ब्रह्म दिव्य आकाश रूपी ब्रह्म लोक में रहता है। इस देवी महापुराण से स्पष्ट हुआ कि ओम् (ऊँ) नाम जाप ब्रह्म का है।

अन्य प्रमाण :- श्री शिव महापुराण (गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित सचित्र मोटा टाईप) के विध्वेश्वर संहिता के पष्ठ 23 से 25 पर प्रकरण इस प्रकार है :-

एक समय श्री ब्रह्मा जी रजगुण तथा विष्णु जी सतोगुण का युद्ध हो गया। कारण था कि श्री ब्रह्मा जी ने श्री विष्णु जी के निवास पर जाकर कहा कि हे अभिमानी! तूने मेरे आने पर उठकर सत्कार नहीं किया, तू पुत्र होकर भी पिता का सत्कार नहीं करता। मैं सर्व जगत की उत्पत्ति करने वाला सबका पिता हूँ। यह वचन सुनकर श्री विष्णु जी को अंदर से तो बहुत क्रोध आया परंतु ऊपर से मुस्कुराते हुए कहा कि आजा पुत्र, मैं तेरा पिता हूँ। तेरी उत्पत्ति मेरे नाभि कमल से हुई है। इसी बात पर दोनों ने हथियार उठा लिए, आपस में युद्ध करने लगे। उसी समय काल ब्रह्म ने इन दोनों के बीच में एक तेजोमय स्तंभ खड़ा कर दिया। जिस कारण से दोनों ने युद्ध करना बंद कर दिया। उसी समय काल ब्रह्म ने अपने पुत्र शिव का रूप बनाया तथा अपनी पत्नी दुर्गा को पार्वती बनाकर उनके पास प्रकट हो गए। उन दोनों से कहा कि तुम दोनों को ज्ञान नहीं है कि यहाँ का ईश कौन है? मैं ब्रह्म हूँ। यह संसार मेरा है, हे विष्णु तथा ब्रह्मा! तुम दोनों ने तप करके मेरे से एक-एक कत प्राप्त किए हैं। ब्रह्मा को सष्टि की उत्पत्ति तथा विष्णु को स्थिति। पुत्रो सुनो! मैनें इसी प्रकार महेश तथा रूद्र को भी एक-एक कत संहार तथा तिरोभाव दिए हैं। फिर कहा है कि मेरा एक अक्षर ओम् (ॐ) मन्त्र जाप करने का है। यह पाँच अवयवों (अ, उ, य, नाद तथा बिन्दु) का संग्रह एक ''ॐ'' अक्षर मन्त्र बना है। पाठक जनों को स्पष्ट हुआ कि ''ॐ'' एक अक्षर ब्रह्म का जप मंत्र है। यह भी स्पष्ट हुआ कि श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु तथा श्री महेश से अन्य काल ब्रह्म है और ब्रह्मा जी, विष्णु जी तथा शिव जी तीनों काल ब्रह्म के पुत्र हैं।

अन्य प्रमाण :- श्री शिव महापुराण (गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित, सचित्र मोटा टाईप) में रूद्र संहिता के पष्ठ 110 पर लिखा है कि रजगुण ब्रह्मा, सतगुण

विष्णु तथा तमगुण शिव तीनों देवताओं में गुण हैं। मैं इनसे भिन्न हूँ।

इन सर्व प्रमाणों से स्पष्ट हुआ कि गीता ज्ञान दाता काल ब्रह्म है, इसे श्राप लगा है कि यह प्रतिदिन एक लाख मानव शरीरधारी प्राणियों को खाएगा तथा सवा लाख प्रतिदिन उत्पन्न करेगा।

इस कारण से इसने अपने तीनों पुत्रों को एक-एक गुणयुक्त बना रखा है, इनके शरीर से निकल रहे गुणों का सूक्ष्म प्रभाव प्रत्येक प्राणी को विवश करके कार्य करवाता है। जैसे रसोई घर में मिर्चों का छौंक लगता है, छींक आती है। उन छींकों को कोई नहीं रोक पाता। स्थूल रूप में मिर्च रसोई घर में होती हैं, उनसे निकले गुण ने दूर कमरे में बैठे व्यक्तियों को प्रभावित कर दिया।

इसी प्रकार तीनों देवता (श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी) अपने-अपने लोकों में रहते हैं, परन्तु उनके शरीर से निकल रहे गुणों का सूक्ष्म प्रभाव तीनों लोकों (स्वर्ग लोक, पाताल लोक, पथ्वी लोक) के प्राणियों को प्रभावित करता रहता है। जिससे काल ब्रह्म के लिए एक लाख मानव का आहार तैयार होता है। इसीलिए गीता अध्याय 7 श्लोक 12 में गीता ज्ञान दाता ब्रह्म ने कहा है कि:-

❖ तीनों गुणों से जो कुछ भी हो रहा है, उसका निमित कारण मैं ही हूँ। जैसे रजगुण ब्रह्मा जी से उत्पत्ति, सतगुण विष्णु जी से स्थिति तथा तमगुण शिव जी से संहार होता है। यह सब मेरे लिए ही इनके द्वारा हो रहा है ऐसा जान, परन्तु वे मुझमें और मैं उनमें नहीं हूँ क्योंकि काल ब्रह्म इन तीनों देवताओं से भिन्न रहता है। (गीता अध्याय 7 श्लोक 12)

❖ सारा संसार इन्हीं तीनों गुणों (रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव) पर ही मोहित है। इन्हीं तक ज्ञान रखता है। इन तीनों देवताओं से परे मुझको तथा (अव्ययम्) उस अविनाशी परमात्मा को नहीं जानता। (गीता अध्याय 7 श्लोक 13)

❖ क्योंकि यह अलौकिक त्रिगुणमयी मेरी माया (अर्थात् मेरे पुत्रों द्वारा फैलाया मायाजाल) बड़ी दुस्तर है, निक्कमी है। जो साधक केवल मुझ (काल ब्रह्म) को भजते हैं, वे इस माया (ब्रह्मा, विष्णु, महेश की भक्ति से होने वाले लाभ से अधिक लाभ ब्रह्म भक्ति में है। इसलिए कहा है कि जो इन तीनों से मिलने वाले लाभ को त्यागकर काल ब्रह्म की साधना करते हैं, वे इनका उल्लंघन करके अर्थात् इनकी साधना का त्याग कर देते हैं) का उल्लंघन कर जाते हैं। (गीता अध्याय 7 श्लोक 14)

❖ गीता अध्याय 7 श्लोक 15 में कहा है कि :- तीनों गुणों (रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु जी तथा तमगुण शिव जी) रूपी मायाजाल द्वारा जिनका ज्ञान हरा जा चुका है अर्थात् जो साधक इन तीनों देवताओं से भिन्न प्रभु को नहीं जानते। इन्हीं से मिलने वाले नाममात्र लाभ से ही मोक्ष मानकर इन्हीं से चिपके रहते हैं, इन्हीं की पूजा करते रहते हैं। ऐसे व्यक्ति असुर स्वभाव को धारण किए हुए, मनुष्यों में नीच, दूषित कर्म करने वाले मूर्ख जन मुझ काल ब्रह्म को नहीं

भजते। (गीता अध्याय 7 श्लोक 15)

गीता अध्याय 14 श्लोक 19 में गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि जिस समय दृष्टा अर्थात् तत्वज्ञान सुनने वाला और जो तीनों गुणों (रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव) की ईष्ट रूप में पूजा करने वाला अपनी पुरानी धारणा को नहीं बदलता अर्थात् इन तीनों के अतिरिक्त किसी को कर्ता नहीं मानता और इन तीनों से परे पूर्ण परमात्मा का ज्ञान भी प्राप्त कर लेता है, वह मेरे ही जाल में रह जाता है। (गीता अध्याय 14 श्लोक 19)

गीता अध्याय 14 श्लोक 20 में गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि देहधारी मनुष्य इन तीनों का उल्लंघन करके अर्थात् इन तीनों की पूजा त्यागकर ही जन्म-मरण तथा वृद्धावस्था के तथा अन्य सब दुःखों से मुक्त होकर परमानन्द अर्थात् गीता अध्याय 18 श्लोक 62 तथा अध्याय 15 श्लोक 4 में वर्णित परम शान्ति तथा सनातन परम धाम को प्राप्त होता है।

सारांश :- तीनों देवताओं (ब्रह्मा जी रजगुण, विष्णु जी सतगुण तथा शिव जी तमगुण) की पूजा करने वाले राक्षस स्वभाव को धारण किए हुए मनुष्यों में नीच, दूषित कर्म करने वाले मूर्ख कहा है। भावार्थ है कि इनकी पूजा नहीं करनी चाहिए।

कारण :- 1. श्री ब्रह्मा जी रजगुण की पूजा हिरण्यकश्यप ने की थी, अपने पुत्र प्रहलाद का शत्रु बन गया, राक्षस कहलाया, कुत्ते वाली मौत मरा।

2. श्री शिव जी तमगुण की पूजा रावण ने की थी, जगतजननी सीता को उठाया, पत्नी बनाने की कुचेष्टा की, राक्षस कहलाया, कुत्ते की मौत मरा। भस्मासुर ने भी तमगुण शिव जी की पूजा की थी, राक्षस कहलाया, बेमौत मारा गया।

3. श्री विष्णु जी की पूजा करने वाले वैष्णव कहलाते हैं। एक समय हरिद्वार में एक कुम्भ का पर्व लगा। उस पर्व में स्नान करने के लिए सर्व सन्त (गिरी, पुरी, नाथ, नागा) पहुँच गए। नागा श्री शिव जी तमगुण के पुजारी होते हैं तथा वैष्णव श्री विष्णु सतगुण के पुजारी होते हैं। सभी हरिद्वार में हर की पैड़ी पर स्नान करने की तैयारी करने लगे जो सँख्या में लगभग 20 हजार थे। कुछ देर बाद इतनी ही सँख्या में वैष्णव साधु हर की पैड़ियों पर पहुँच गए। वैष्णव साधुओं ने नागाओं से कहा कि हम श्रेष्ठ हैं, हम पहले स्नान करेंगे। इसी बात पर झगड़ा हो गया। तलवार, कटारी, छुरों से लड़ने लगे, लगभग 25 हजार दोनों पक्षों के साधु तीनों गुणों के उपासक कटकर मर गए।

इसलिए गीता अध्याय 7 श्लोक 12 से 15 में तीनों गुणों (रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु जी तथा तमगुण शिव जी) के उपासकों को राक्षस स्वभाव को धारण किए हुए मनुष्यों में नीच दूषित कर्म करने वाले मूर्ख कहा है।

इससे सिद्ध हुआ कि श्री ब्रह्मा रजगुण, श्री विष्णु सतगुण तथा श्री शिव तमगुण की भक्ति करने वाले मूर्ख, राक्षस, मनुष्यों में नीच तथा घटिया कर्म करने वाले मूर्ख व्यक्ति हैं अर्थात् इनकी पूजा करना श्रीमद् भगवत गीता में मना किया है, इनकी ईष्ट रूप में पूजा करना व्यर्थ है।

''पूजा तथा साधना में अंतर''

प्रश्न :- काल ब्रह्म की पूजा करनी चाहिए या नहीं? गीता में प्रमाण दिखाऐं।

उत्तरः- नहीं करनी चाहिए। पहले आप जी को पूजा तथा साधना का भेद बताते हैं।

भक्ति अर्थात् पूजा :- जैसे हमारे को पता है कि पथ्वी के अन्दर मीठा शीतल जल है। उसको प्राप्त कैसे किया जा सकता है? उसके लिए बोकी के द्वारा जमीन में सुराख किया जाता है, उस सुराख (Bore) में लोहे की पाईप डाली जाती है, फिर हैण्डपम्प (नल) की मशीन लगाई जाती है, तब वह शीतल जीवनदाता जल प्राप्त होता है।

हमारा पूज्य जल है, उसको प्राप्त करने के लिए प्रयोग किए उपकरण तथा प्रयत्न साधना जानें। यदि हम उपकरणों की पूजा में लगे रहे तो जल प्राप्त नहीं कर सकते, उपकरणों द्वारा पूज्य वस्तु प्राप्त होती है।

अन्य उदाहरण :- जैसे पतिव्रता स्त्री परिवार के सर्व सदस्यों का सत्कार करती है, सास-ससुर का माता-पिता के समान, ननंद का बड़ी-छोटी बहन के समान, जेठ-देवर का बड़े-छोटे भाई के समान, जेठानी-देवरानी का बड़ी-छोटी बहनों के समान, परंतु वह पूजा अपने पति की करती है। जब वे अलग होते हैं तो अपने हिस्से की सर्व वस्तुऐं उठाकर अपने पति वाले मकान में ले जाती है।

अन्य उदाहरण :- जैसे हमारी इच्छा आम खाने की होती है, हमारे लिए आम का फल पूज्य है। उसे प्राप्त करने के लिए धन की आवश्यकता पड़ती है। धन संग्रह करने के लिए मजदूरी/नौकरी/खेती-बाड़ी करनी पड़ती है, तब आम का फल प्राप्त होता है। इसलिए आम पूज्य है तथा अन्य क्रिया साधना है। साध्य वस्तु को प्राप्त करने के लिए साधना करनी पड़ती है, साधना भिन्न है, पूजा अर्थात् भक्ति भिन्न है। स्पष्ट हुआ।

प्रश्न चल रहा है कि क्या ब्रह्म की पूजा करनी चाहिए। उत्तर में कहा है कि नहीं करनी चाहिए। अब श्रीमद् भगवत गीता में प्रमाण दिखाते हैं।

गीता अध्याय 7 श्लोक 12 से 15 में तो गीता ज्ञान दाता ने बता दिया कि तीनों गुणों (रजगुण श्री ब्रह्मा जी, सतगुण श्री विष्णु जी तथा तमगुण श्री शिव जी) की भक्ति व्यर्थ है। फिर गीता अध्याय 7 के श्लोक 16-17-18 में गीता ज्ञान दाता ब्रह्म ने अपनी भक्ति से होने वाली गति अर्थात् मोक्ष को "अनुत्तम" अर्थात् घटिया बताया है। बताया है कि मेरी भक्ति चार प्रकार के व्यक्ति करते हैं।

1. अर्थार्थी :- धन लाभ के लिए वेदों अनुसार अनुष्ठान करने वाले।

2. आर्त :- संकट निवारण के लिए वेदों अनुसार अनुष्ठान करने वाले।

3. जिज्ञासु :- परमात्मा के विषय में जानने के इच्छुक।
(ज्ञान ग्रहण करके स्वयं वक्ता बन जाने वाले)

इन तीनों प्रकार के ब्रह्म पुजारियों को व्यर्थ बताया है।

4. ज्ञानी :- ज्ञानी को पता चलता है कि मनुष्य जन्म बड़ा दुर्लभ है। मनुष्य जीवन प्राप्त करके आत्म-कल्याण कराना चाहिए। उन्हें यह भी ज्ञान हो जाता है कि अन्य देवताओं की पूजा से मोक्ष लाभ होने वाला नहीं है। इसलिए एक परमात्मा की भक्ति अनन्य मन से करने से पूर्ण मोक्ष संभव है। उनको तत्वदर्शी सन्त न मिलने से उन्होंने जैसा भी वेदों को जाना, उसी आधार से ब्रह्म को एक समर्थ प्रभु मानकर यजुर्वेद अध्याय 40 मन्त्र 15 से ओम् नाम लेकर भक्ति की, परन्तु पूर्ण मोक्ष नहीं हुआ। ओम् (ऊँ) नाम ब्रह्म साधना का है, उससे ब्रह्मलोक प्राप्त होता है जोकि पूर्व में प्रमाणित किया जा चुका है। गीता अध्याय 8 श्लोक 16 में कहा है कि ब्रह्म लोक प्रयन्त सब लोक पुनरावर्ती में हैं अर्थात् ब्रह्म लोक में गए साधक भी पुनः लौटकर संसार में जन्म-मत्यु के चक्र में गिरते हैं।

काल ब्रह्म की साधना से वह मोक्ष प्राप्त नहीं होता जो गीता अध्याय 15 श्लोक 4 में बताया है कि ”तत्वज्ञान से अज्ञान को काटकर परमेश्वर के उस परम पद की खोज करनी चाहिए जहाँ जाने के पश्चात् साधक फिर लौटकर संसार में कभी वापिस नहीं आते।‘‘

❖ गीता अध्याय 7 श्लोक 18 में गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि ये ज्ञानी आत्मा (जो चौथे नम्बर के ब्रह्म के साधक कहें हैं) हैं तो उदार अर्थात् नेक, परंतु ये तत्वज्ञान के अभाव से मेरी अनुत्तम् गति में ही स्थित रहे। गीता ज्ञान दाता ने अपनी साधना से होने वाली गति को भी अनुत्तम अर्थात् घटिया कहा है, इसलिए ब्रह्म पूजा करना भी उचित नहीं।

कारण :- एक चुणक नाम का ऋषि ज्ञानी आत्मा था। उसने ओम् (ऊँ) नाम का जाप तथा हठयोग हजारों वर्ष किया। जिससे उसमें सिद्धियाँ आ गई। ब्रह्म की साधना करने से जन्म-मत्यु, स्वर्ग-नरक का चक्र सदा बना रहेगा क्योंकि गीता अध्याय 2 श्लोक 12, गीता अध्याय 4 श्लोक 5, गीता अध्याय 10 श्लोक 2 में गीता ज्ञान दाता ब्रह्म ने कहा है कि अर्जुन! तेरे और मेरे अनेकों जन्म हो चुके हैं, तू नहीं जानता, मैं जानता हूँ। तू, मैं तथा ये सर्व राजा लोग पहले भी जन्में थे, आगे भी जन्मेंगे। यह न सोच कि हम सब अब ही जन्में हैं। मेरी उत्पत्ति को महर्षिजन तथा ये देवता नहीं जानते क्योंकि ये सब मेरे से उत्पन्न हुए हैं।

इससे स्वसिद्ध है कि जब गीता ज्ञान दाता ब्रह्म भी जन्मता-मरता है तो इसके पुजारी अमर कैसे हो सकते हैं? इससे यह सिद्ध हुआ कि ब्रह्म की उपासना से वह मोक्ष नहीं हो सकता जो गीता अध्याय 18 श्लोक 62 में तथा अध्याय 15 श्लोक 4 में कहा है। इन श्लोकों में गीता ज्ञान दाता ने स्पष्ट निर्देश दिया है कि हे भारत! तू सर्वभाव से उस परमेश्वर परम अक्षर ब्रह्म की शरण में जा। उस परमेश्वर की कपा से ही तू परमशान्ति को तथा सनातन परमधाम अर्थात् सत्यलोक को प्राप्त होगा। तत्वज्ञान समझकर उसके पश्चात् परमात्मा के उस परम पद की खोज करनी चाहिए जहाँ जाने के पश्चात् साधक फिर लौटकर संसार में कभी नहीं आते। विचार करें कि गीता ज्ञान दाता तो स्वयं जन्मता-मरता है।

इसलिए ब्रह्म की पूजा से होने वाली गति अनुत्तम कही है।

अब चुणक ऋषि का प्रसंग आगे सुनाते हैं :- चुणक ऋषि ने ऊँ (ओम्) नाम का जाप तथा हठ योग किया। वेदों (ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद) में बताई भक्ति से परमात्मा प्राप्ति नहीं होती। इसका प्रमाण गीता अध्याय 11 श्लोक 47-48 में है। गीता ज्ञान दाता ब्रह्म ने बताया है कि हे अर्जुन! मुझ काल ब्रह्म का यह विराट रूप है। मेरे इस रूप के दर्शन तेरे अतिरिक्त पहले किसी को नहीं हुए, मैंने तेरे ऊपर अनुग्रह करके यह रूप दिखाया है। मेरे इस रूप के दर्शन अर्थात् ब्रह्म प्राप्ति न तो वेदों में वर्णित विधि से अर्थात् ऊँ नाम के जाप से, न तप से, न हवन आदि-आदि यज्ञों से होते हैं अर्थात् वेदों में वर्णित विधि से ब्रह्म प्राप्ति नहीं होती। यही कारण रहा कि चुणक जैसे ऋषि भी ब्रह्म को निराकार कहते रहे। चुणक ऋषि में सिद्धियाँ आ गई। जिस कारण से संसार में प्रसिद्ध हो गया। सिद्धि प्राप्त साधक अपनी वर्षों की साधना से की गई चार्ज बैट्री से किसी को श्राप देकर अपनी भक्ति का नाश करते हैं, किसी को आशीर्वाद देकर अपनी भक्ति का नाश करते हैं। किसी पर सिद्धि से जन्त्र-मन्त्र करके अपनी भक्ति का नाश करते हैं तथा संसार में प्रशंसा के पात्र बनकर स्वयं प्रभु बन बैठते हैं।

एक मानधाता चक्रवर्ती राजा था। उसका पूरी पथ्वी पर राज्य था। उसने अपने राज्य में यह जाँचना चाहा कि क्या पथ्वी के अन्य राजा जो मेरे आधीन हैं क्या उनमें से कोई स्वतन्त्र होना चाहता है? इसलिए राजा ने अपने निजी घोड़े के गले में एक पत्र लिखकर बाँध दिया कि जिस किसी राजा को मानधाता राजा की पराधीनता स्वीकार न हो, वह इस घोड़े को पकड़ ले और युद्ध के लिए तैयार हो जाए, राजा के पास 72 अक्षौणी सेना है। उस घोड़े के साथ सैंकड़ों सैनिक भी चले। सारी पथ्वी पर चक्कर लगाया। किसी राजा ने उस घोड़े को नहीं पकड़ा। इससे स्पष्ट हो गया कि पूरी पथ्वी के छोटे राजा अपने चक्रवर्ती शासक मानधाता के आधीन हैं। सर्व सैनिक जो घोड़े के साथ थे, खुशी से वापिस आ रहे थे। रास्ते में ऋषि चुणक की कुटिया थी। चुणक ऋषि ने सैनिकों से पूछा जो घोड़ों पर सवार थे कि हे सैनिको! कहाँ गए थे? इस घोड़े का सवार कहाँ गया? सैनिकों ने ऋषि जी को सर्व बात बताई। ऋषि ने कहा क्या किसी ने राजा मानधाता का युद्ध नहीं स्वीकारा? सैनिक बोले कि है किसी की बाजुओं में दम, पिलाया है किसी माता ने दूध जो हमारे राजा के साथ युद्ध कर ले। राजा के पास 72 अक्षौणी अर्थात् 72 करोड़ सेना है। जॉड़ तोड़ देंगे यदि किसी ने युद्ध करने की हिम्मत की तो। ऋषि चुणक जो काल ब्रह्म का पुजारी था ने कहा कि हे सैनिको! आपके राजा का युद्ध मैंने स्वीकार कर लिया, यह घोड़ा बाँध दो मेरी कुटिया वाले वक्ष से। सैनिक बोले कि हे कंगले! तेरे पास दाने तो खाने को नहीं हैं, क्या युद्ध करेगा तू राजा मानधाता के साथ? अपनी भक्ति कर ले, क्यों श्यात् बोल दे रही है तेरी अर्थात् तेरी क्यों सामत आई है? ऋषि ने कहा, जो होगा सो देखा जाएगा। जाओ, कह दो तुम्हारे राजा को कि तुम्हारा युद्ध चुणक ऋषि ने स्वीकार कर लिया है। राजा को पता चला

तो सोचा कि आज एक कंगाल सिरफिरे ऋषि की हिम्मत हुई है, कल कोई अन्य हिम्मत करेगा। बुराई को प्रारम्भ में ही समाप्त कर देना चाहिए। जनता को भयभीत करने के लिए एक व्यक्ति को मारने के लिए राजा ने 72 करोड़ सेना की चार टुकड़ियाँ बनाई। एक टुकड़ी 18 करोड़ सैनिक पहले भेजे ऋषि से युद्ध करने के लिए। काल ब्रह्म के पुजारी चुणक ऋषि ने सिद्धि शक्ति से चार पुतलियाँ बनाई अर्थात् चार परमाणु बम्ब तैयार किए। एक पुतली छोड़ी, उसने 18 करोड़ सेना को काट डाला। राजा ने दूसरी टुकड़ी भेजी। ऋषि ने दूसरी पुतली छोड़ी। इस प्रकार राजा मानधाता की 72 क्षौणी सेना का नाश काल ब्रह्म के पुजारी चुणक ने कर दिया।

विचार करें :- ऋषि-महर्षियों को राजाओं के बीच में टाँग नहीं अड़ानी चाहिए। कारण यह है कि ऋषिजनों ने हजारों वर्ष ॐ नाम का जाप किया परमात्मा प्राप्ति के लिए। परमात्मा मिला नहीं क्योंकि गीता अध्याय 11 श्लोक 47-48 में लिखा है कि वेदों में (चारों वेदों ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद तथा अथर्ववेद) वर्णित भक्ति विधि से ब्रह्म प्राप्ति नहीं है। इसलिए इससे ऋषियों में सिद्धियाँ प्रकट हो जाती हैं। अज्ञानता के कारण उसी भूल-भूलइया को ये भक्ति की उपलब्धि मान बैठे। जिस कारण से भक्ति करके भी उस पद को नहीं प्राप्त कर सके, जहाँ जाने के पश्चात् पुनः जन्म नहीं होता क्योंकि इनको तत्वदर्शी सन्त नहीं मिले। सूक्ष्म वेद में कहा कि :-

कबीर, गुरू बिन काहू न पाया ज्ञाना, ज्यों थोथा भुस छड़े मूढ़ किसाना।
गुरू बिन वेद पढ़े जो प्राणी, समझे न सार रहे अज्ञानी।।
गरीब, बहतर क्षौणी खा गया, चुणक ऋषिश्वर एक।
देह धारें जौरा फिरें, सबही काल के भेष।।

भावार्थ :- तत्वदर्शी सन्त गुरू न मिलने के कारण जो साधना साधक करते हैं, वह शास्त्र विधि त्यागकर मनमाना आचरण होता है जिससे कोई लाभ साधक को नहीं होता। गीता अध्याय 16 श्लोक 23-24 में प्रमाण है कि हे भारत! जो साधक शास्त्रविधि को त्यागकर मनमाना आचरण करता है, उसको न तो सुख होता है, न सिद्धि प्राप्त होती है और न ही उसकी गति अर्थात् मोक्ष होता है। इससे तेरे लिए शास्त्र ही प्रमाण हैं कि कौन-सी साधना करनी चाहिए और कौन-सी नहीं करनी चाहिए।

गुरू बिना अर्थात् तत्वदर्शी सन्त के बिना चाहे वेदों को पढ़ते रहो, चाहे उनको कण्ठस्थ भी करलो जैसे पहले के ब्राह्मण वेदों के मन्त्रों को याद कर लेते थे। जो चारों वेदों के मन्त्र याद कर लेता था, वह चतुर्वेदी कहलाता था। जो तीन वेदों के मन्त्रों को याद कर लेता था, वह त्रिवेदी कहलाता था। परंतु उनको वेदों के गूढ़ रहस्यों का ज्ञान न होने के कारण वे ऋषिजन वेदों को पढ़कर-घोटकर भी अज्ञानी रहे। सूक्ष्मवेद में कहा है कि :-

''पीठ मनुखा दाख लदी है, ऊँट खात बबूल।''

भावार्थ है कि पहले के समय में रेगिस्तान में ऊँटों पर मुनक्का दाख

लादकर ले जाते थे। ऊँट पीठ पर तो इतनी स्वादिष्ट मनुका दाख लादे हुए होता था और स्वयं बबूल (कीकर) पेड़ के काँटों में मुख मार-मारकर बबूल के पत्ते खा रहा होता था। बिना ज्ञान के सर्व ऋषि जी चारों वेदों रूपी मनुका दाख को लादे फिरते थे और पूजा करते थे काल ब्रह्म रूपी बबूल की जिससे न सनातन परम धाम और न ही परम शांति प्राप्त होती थी। फिर सूक्ष्मवेद में कहा है कि :-

बनजारे के बैल ज्यों, फिरा देश–विदेश।
खाण्ड छोड़ भुष खात है, बिन सतगुरू उपदेश।।

भावार्थ है कि पहले के समय में बैलों के ऊपर गधे की तरह थैला (बोरा) रखकर उसमें खाण्ड भरकर बनजारे अर्थात् व्यापारी लोग एक स्थान से दूसरे स्थान पर लाते-ले जाते थे। बैल की पीठ पर बोरे में खाण्ड है, स्वयं भुष खाया करता। इसी प्रकार गुरू द्वारा तत्वज्ञान न मिलने के कारण ऋषिजन वेदों रूपी खाण्ड (चीनी) को तो कण्ठस्थ करके रखते थे। उनको ठीक से न समझकर साधना वेद विरूद्ध करते थे।

उदाहरण के लिए :-

श्री देवी पुराण (सचित्र मोटा टाईप केवल हिन्दी गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित) के 5वें स्कंद पृष्ठ 414 पर लिखा है :- वेद व्यास जी ने कहा कि सत्ययुग के ब्राह्मण वेद के पूर्ण विद्वान थे। वे देवी अर्थात् श्री दुर्गा जी की पूजा करते थे। प्रत्येक गाँव में श्री देवी का मंदिर बनवाने की उनकी प्रबल इच्छा थी।

पाठकजन विचार करें :-

चारों वेदों में तथा इन्हीं वेदों के सारांश श्रीमद् भगवत गीता में कहीं पर भी देवी की पूजा करने का निर्देश नहीं है तो सत्ययुग के ब्राह्मण क्या खाक विद्वान थे वेदों के। इसी श्री देवी पुराण के 7वें स्कंद में पृष्ठ 562, 563 पर श्री देवी जी ने राजा हिमालय से कहा था कि तू मेरी पूजा भी त्याग दे। यदि ब्रह्म प्राप्ति चाहता है तो और सब बातों को त्यागकर केवल ओम् (ॐ) का जाप कर। यह ब्रह्म का मंत्र है। इससे ब्रह्म को प्राप्त हो जाएगा। वह ब्रह्म ब्रह्मलोक रूपी दिव्य आकाश में रहता है। पाठकजन आसानी से समझेंगे कि जब सत्ययुग के ब्राह्मणों का यह ज्ञान तथा साधना थी तो वर्तमान के ब्राह्मणों को क्या ज्ञान होगा? इसी श्री देवी पुराण के 5वें स्कन्द में पृष्ठ 414 पर यह भी लिखा है कि सत्ययुग में जो राक्षस समझे जाते थे, वे कलयुग में ब्राह्मण माने जाते हैं। ब्राह्मण कोई जाति विशेष नहीं है। जो परमात्मा अर्थात् ब्रह्म के लिए प्रयत्नशील है, वही ब्राह्मण कहलाता है चाहे किसी भी जाति का हो। वर्तमान में परंपरागत ब्राह्मण कम हैं। संत रूप में ब्रह्मज्ञान देने वाले अधिक हैं जो ब्राह्मण अर्थात् मार्गदर्शक गुरू कहलाते हैं और तत्वज्ञानहीन हैं। इसलिए कहा है कि तत्वदर्शी गुरू के बिना किसी को वेदों के गूढ़ रहस्यों का ज्ञान नहीं हुआ, जिस कारण से वेदों को पढ़ते थे, परंतु साधना वेद विरूद्ध करते थे। वेदों व गीता में तीनों देवताओं (श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी) की पूजा करना निषेध है। सर्व हिन्दू समाज ज्ञानहीन संतों द्वारा इन्हीं तीनों देवताओं

पर केन्द्रित कर रखा है, श्री देवी दुर्गा तथा विष्णु जी, शिव जी की भक्ति कर तथा करा रहे हैं। पहले से ही यह लोकवेद (दंत कथा) का ज्ञान चला आ रहा है जो आज मेरे सामने दीवार बनकर खड़ी है। मैं शास्त्रोक्त ज्ञान बताता हूँ, प्रोजैक्टर पर दिखाता हूँ। परंतु पहले के अज्ञान को सत्य मानकर सत्य को आँखों देखकर भी विश्वास नहीं कर रहे। विरोध करते हैं, जेल में भिजवा देते हैं।

सूक्ष्मवेद में कहा है कि :-

गरीब, वेद पढ़ैं पर भेद न जानें, बाँचैं पुराण अठारह।
पत्थर की पूजा करें, बिसरे सिरजनहारा।।

भावार्थ है कि वेद तथा अठारह पुराणों को पढ़ते हैं और मूर्ति की पूजा करते हैं। वेदोक्त सर्व के सजनहार परम अक्षर ब्रह्म को भूल गए हैं। अन्य प्रभुओं की पूजा करके उस परम शक्ति तथा सनातन परम धाम अर्थात् परमेश्वर के उस परम पद से वंचित रह जाते हैं जो गीता अध्याय 18 श्लोक 62 तथा अध्याय 15 श्लोक 4 में कहा है। सूक्ष्मवेद में लिखा है कि :-

गुरूवां गाम बिगाड़े संतो, गुरूवां गाम बिगाड़े।
ऐसे कर्म जीव के ला दिए, फिर झड़ैं नहीं झाड़े।।

भावार्थ है कि वेद ज्ञानहीन तत्वज्ञान से अपरीचित गुरूओं ने गाँव के गाँव में शास्त्रविरूद्ध ज्ञान व भक्ति का अज्ञान सुनाकर उनको इतना भ्रमित कर दिया कि वे अब समझाए से भी शास्त्र विरूद्ध साधना को त्यागने के लिए तैयार नहीं होते।

गीता अध्याय 16 श्लोक 23 में लिखा है कि शास्त्र विधि त्यागकर मनमाना आचरण करने से न तो सिद्धि प्राप्त होती है, न सुख प्राप्त होता है और न गति होती है अर्थात् व्यर्थ साधना है।

दूसरी ओर आप जी ने चुणक ऋषि की कथा में पढ़ा कि ऋषि चुणक जी को सिद्धियाँ प्राप्त हो गई। पाठकों को यह समझना है कि सिद्धि भक्ति का बाई प्रोडैक्ट है, जैसे जौं का भी भूस (तूड़ा) होता है जिसमें तुस बहुत होते हैं। पशु खाता है तो मुख में जख्म कर देते हैं। यह सिद्धि प्राप्त होती है काल ब्रह्म की भक्ति से जो चुणक ऋषि जी को प्राप्त हुई।

जो शास्त्र विधि अनुसार भक्ति करने से सिद्धि प्राप्त होती है, वह गेहूँ का भुस (तूड़ा) समझें जो पशुओं के लिए उपयोगी तथा खाने में सुगम होता है। भावार्थ है कि शास्त्रविधि अनुसार साधना न करने से जो सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं, वे साधक को नष्ट करती हैं क्योंकि अज्ञानतावश ऋषिजन उनका प्रयोग करके किसी की हानि कर देते हैं, किसी को आशीर्वाद देकर अपनी भक्ति की शक्ति जो ॐ नाम के जाप से होती है, उसको समाप्त करके फिर से खाली हो जाते हैं।

जैसे चुणक ऋषि जी ने मानधाता चक्रवर्ती राजा की 72 करोड़ सेना का नाश कर दिया, अपनी भक्ति की सिद्धि भी खो दी। सूक्ष्मवेद में कहा है कि :-

गरीब, बहतर क्षौणी क्षय करी, चुणक ऋषिश्वर एक।
देह धारें जौरा (मत्यु) फिरैं, सब ही काल के भेष।।

भावार्थ :- ऋषियों में सर्वश्रेष्ठ ऋषि चुणक जी ने 72 करोड़ सेना का नाश कर दिया। ये दिखाई तो देते हैं महात्मा, लेकिन जब इनसे पाला पड़ता है तो ये निकलते हैं सर्प जैसे, जरा-सी बात पर श्राप दे देना, किसी से बेमतलब पंगा ले लेना इनके लिए आम बात होती है।

''ऋषि दुर्वासा की कारगुजारी''

❖ एक दुर्वासा नाम के काल ब्रह्म के पुजारी (ब्रह्म साधक) थे। वे चले जा रहे थे। रास्ते में एक अप्सरा (स्वर्ग की स्त्री) सुन्दर मोतियों की माला पहने हुए थी। ऋषि दुर्वासा ने कहा कि यह माला मुझे दे। देवपरी को पता था कि ये ऋषि तो सर्प जैसे हैं, यदि मना कर दिया तो श्राप दे देते हैं। उस अप्सरा ने तुरन्त माला गले से निकाली और ऋषि को आदर के साथ थमा दी। दुर्वासा ऋषि ने वह माला सिर पर बालों के जूड़े में डाल ली। चला जा रहा था। आगे से स्वर्ग का राजा इन्द्र अपने एरावत हाथी पर बैठा आ रहा था। उसके आगे-आगे अप्सराऐं तथा गंद्धर्व जन गाते-बजाते चल रहे थे, और भी करोड़ों देवी-देवता साथ-साथ सम्मान में चल रहे थे। दुर्वासा ऋषि ने माला अपने सिर से उठाकर इन्द्र की ओर फैंक दी। इन्द्र ने वह माला हाथी की गर्दन पर रख दी। हाथी ने वह माला अपने सूंड से उठाकर जमीन पर फैंक दी। जैसे इन्द्र को कोई भक्त या देव कोई फूलमाला भेंट करता था तो इन्द्र उसको बाद में हाथी की गर्दन पर रख देता था जब इन्द्र हाथी पर बैठा हो। हाथी उसे उठाकर नीचे फैंक देता था। हाथी ने उसी रूटीन (**Routine**) में वह माला नीचे फैंक दी थी।

इस बात से ऋषि दुर्वासा कुपित हो गये और बोले कि हे इन्द्र! तेरे को राज्य का अभिमान है। मेरे द्वारा दी गई माला का तूने अनादर किया है। मैं श्राप देता हूँ कि तेरा सर्व राज्य नष्ट हो जाए। देवराज इन्द्र एकदम काँपने लगा और बोला हे विप्र! मैंने आपकी माला को आदर से ग्रहण करके हाथी के ऊपर रखा था। हाथी ने अपनी औपचारिकतावश नीचे डाल दी, मुझे क्षमा करें। बार-बार करबद्ध होकर हाथी से नीचे उतरकर दण्डवत् प्रणाम करके भी क्षमा याचना इन्द्र ने की, परंतु दुर्वासा ऋषि नहीं माने और कहा कि जो मैंने कह दिया वह वापिस नहीं हो सकता। कुछ ही समय में इन्द्र का सर्वनाश हो गया, स्वर्ग उजड़ गया।

❖ एक बार ऋषि दुर्वासा जी द्वारका नगरी के पास जंगल में कुछ समय के लिए रूके। द्वारकावासियों को पता चला कि दुर्वासा जी अपनी नगरी के पास आए हैं। ये त्रिकालदर्शी महात्मा हैं, सिद्धियुक्त ऋषि हैं। द्वारकावासी श्री कष्ण से अधिक शाक्तिशाली किसी को नहीं मानते थे। श्री कष्ण के पुत्र श्री प्रद्यूमन सहित कई यादवों ने योजना बनाई कि सुना है दुर्वासा जी त्रिकालदर्शी हैं, मन की बात भी बता देते हैं, अन्तर्यामी हैं, उनकी परीक्षा लेते हैं। यह विचार करके प्रद्यूमन को गर्भवती स्त्री का स्वांग बनाकर दस-बारह व्यक्ति साथ चले। एक व्यक्ति को उसका पति बना लिया। दुर्वासा जी के पास जाकर कहा कि हे ऋषि जी! इस स्त्री पर

परमात्मा की कपा बहुत दिनों पश्चात् हुई है, इसको गर्भ रहा है, यह इसका पति है। ये दोनों उतावले हैं कि हमें पता चले कि गर्भ में लड़का है या कन्या। आप तो अन्तर्यामी हैं, कप्या बताऐं? उन्होंने प्रद्यूमन के पेट पर एक छोटी कढ़ाई बाँध रखी थी, उसके ऊपर रूई का लोगड़ तथा पुराने वस्त्र बाँधकर गर्भ बना रखा था, ऊपर स्त्री वस्त्र पहना रखे थे। ऋषि दुर्वासा जी ने दिव्य दष्टि से देखा और जाना कि ये मेरा मजाक करने आए हैं। दुर्वासा जी ने कहा कि इस गर्भ से यादव कुल का नाश होगा, इतना कहकर क्रोधित हो गए। सर्व व्यक्ति वहाँ से खिसक गए।

नगरी में यह बात आग की तरह फैल गई कि ऋषि दुर्वासा जी ने श्राप दे दिया है कि यादवों का नाश होगा। उनको विश्वास था कि हमारे साथ सर्व शक्तिमान भगवान अखिल ब्रह्माण्ड के नायक श्री कष्ण हैं। दुर्वासा के श्राप का प्रभाव हम पर नहीं हो पाएगा। फिर भी कुछ बुद्धिमान यादव इकट्ठे होकर श्री कष्ण जी के पास गए तथा ऋषि दुर्वासा से किया बच्चों का मजाक तथा ऋषि दुर्वासा द्वारा दिये श्राप का वत्तांत बताया। सर्व वार्ता सुनकर श्री कष्ण जी ने कुछ देर सोचकर कहा कि उन बच्चों को साथ लेकर दुर्वासा जी के पास जाओ और क्षमा याचना करो। दुर्वासा के पास गए, क्षमा याचना की, परंतु दुर्वासा ने कहा कि जो मैंने बोल दिया, वह वापिस नहीं हो सकता।

सर्व व्यक्ति फिर से श्री कष्ण जी के पास गये तथा सर्व बात बताई। द्वारका में भोजन भी नहीं बना। सर्व नगरी चिन्ता में डूब गई। श्री कष्ण जी ने कहा कि चिन्ता किस बात की। जो वस्तु गर्भ रूप में प्रयोग की थीं, उन्ही से तो हमारा विनाश होना बताया है। ऐसा करो, कपड़ों तथा रूई को जलाकर तथा लोहे की कढ़ाई को पत्थर पर घिसाकर प्रभास क्षेत्र (यमुना नदी के किनारे एक स्थान का नाम है) में यमुना नदी में डाल दो। वहीं बैठकर घिसाओ, वहीं चूरा दरिया में डाल दो, वहीं पर राख पानी में डाल दो। न रहेगा बाँस, न बजेगी बाँसुरी। जब गर्भ की वस्तुऐं ही नहीं रहेंगी तो हमारा नाश कैसे होगा? यह बात द्वारिकावासियों को अच्छी लगी और अपने को संकट मुक्त माना। श्री कष्ण जी के आदेशानुसार सब किया गया। कढ़ाई का एक कड़ा पूरी तरह नहीं घिस पाया। उसको वैसे ही यमुना नदी में फैंक दिया। वह एक मछली ने चमकीला खाद्य पदार्थ जानकर खा लिया। उस मछली को बालीया नामक भील ने पकड़ लिया। जब मछली को काटा तो उससे निकली धातु की जाँच करने के पश्चात् उसको अपने तीर को आगे के हिस्से में विषयुक्त करवाकर लगवा लिया, उसे सुरक्षित रख लिया। जो कढ़ाई का लोहे का चूरा पानी में डाला था, वह लम्बे सरकण्डे जैसे घास के रूप में यमुना नदी के किनारे-किनारे पर उग गया।

कुछ समय उपरांत द्वारिका नगरी में उत्पात मचने लगा। छोटी-सी बात पर एक-दूसरे का कत्ल करने लगे। आपस में वैर-विरोध बढ़ गया। नगर के लोगों की यह दशा देखकर नगरी के गणमान्य व्यक्ति भगवान श्री कष्ण जी के पास गए और जो कुछ भी नगरी में हो रहा था, बताया और कारण तथा समाधान श्री कष्ण जी

से जानने की इच्छा व्यक्त की क्योंकि श्री कृष्ण जी यादव तथा पाण्डवों के आध्यात्मिक गुरू थे। संकट का निवारण गुरूदेव से ही कराया जाता है। श्री कृष्ण जी ने कारण बताया कि दुर्वासा ऋषि का श्राप फल रहा है। समाधान है कि सर्व नर (Male) यादव चाहे आज का जन्मा भी लड़का क्यों न हो, सब प्रभास क्षेत्र में जहाँ पर उस कढ़ाई का चूर्ण डाला था, जाकर यमुना में स्नान करो, तुम श्राप मुक्त हो जाओगे। सर्व द्वारिकावासियों ने श्री कृष्ण जी के आदेश का पालन किया। सर्व नर यादव प्रभास क्षेत्र में श्राप मुक्त होने के उद्देश्य से स्नान करने के लिए चले गए। ऋषि दुर्वासा के श्राप के कारण सर्व यादव समूह बनाकर इकट्ठे हो गए। पहले स्नान किया कि श्राप मुक्त होने के पश्चात् हो सकता है कि आपसी मन-मुटाव दूर हो जाए। परंतु ऐसा कुछ नहीं हुआ। पहले सबने स्नान किया, फिर आपस में गाली-गलोच शुरू हुआ। फिर उस घास को उखाड़कर एक-दूसरे को मारने लगे। जो घास (सरकण्डे) लोहे की कढ़ाई के चूर्ण से उगा था, वह तलवार जैसा कार्य करने लगा। सरकण्डे को मारते ही सिर धड़ से अलग होकर गिरने लगा। इस प्रकार सर्व यादव आपस में लड़कर मृत्यु को प्राप्त हो गए। कुछ दो सौ - चार सौ शेष रहे थे। उसी समय श्री कृष्ण जी भी वहीं पहुँच गए। उन्होंने भी उस घास को उखाड़ा। उसके लोहे के मूसल बन गए। शेष बचे अपने कुल के व्यक्तियों को स्वयं श्री कृष्ण जी ने मौत के घाट उतारा।

इसके पश्चात् श्री कृष्ण जी एक वृक्ष के नीचे विश्राम करने लगे। इतने में देवयोग से वह बालीया नामक भील जिसने उस लोहे की कढ़ाई के कड़े का विषाक्त तीर (Arrow) बनवाया था, उसी तीर को लेकर शिकार की खोज में उस स्थान पर आ गया जहाँ पर श्री कृष्ण जी विश्राम कर रहे थे। श्री कृष्ण जी के दायें पैर के तलवे में पद्म बना था, उसमें सौ वॉट के बल्ब जैसी चमक थी। वृक्ष की झूर्मुट नीचे तक लटकी थी। उनके बीच से पद्म की चमक स्पष्ट नहीं दिख रही थी। बालीया भील ने सोचा कि यह हिरण की आँख दिखाई दे रही है, इसलिए तीर चला दिया हिरण को मारने के उद्देश्य से। जब तीर श्री कृष्ण जी के पैर में लगा तो श्री कृष्ण जी ने कहा मर गया रे, मर गया। बालीया भील को आभास हुआ कि तीर किसी व्यक्ति को लग गया। दौड़कर गया तो देखा द्वारिकाधीश मारे दर्द के तड़फ रहे थे। बालीया ने कहा कि हे महाराज! मुझसे धोखे से तीर चल गया। आपके पैर की चमक को मैंने हिरण की आँख जानकर तीर मार दिया, मुझसे गलती हो गई, क्षमा करो महाराज। श्री कृष्ण जी ने कहा कि तेरे से कोई गलती नहीं हुई है। यह तेरा और मेरा पिछले जन्म का लेन-देन है, वह मैंने चुका दिया है। तू त्रेतायुग में सुग्रीव का भाई बाली था, मैं रामचन्द्र पुत्र दशरथ था। मैंने भी तेरे को वृक्ष की औट लेकर धोखे से मारा था। वह अदला-बदला (Tit for tat) पूरा किया है।

इस प्रकार दुर्वासा ऋषि के श्राप से सर्व यादव कुल का नाश हुआ जो वर्तमान में यादव हैं। ये वो हैं जो उस समय माताओं के गर्भ में थे, बाद में उत्पन्न हुए थे।

सूक्ष्मवेद में लिखा है :-

गरीब, दुर्वासा कोपे तहाँ, समझ न आई नीच।
छप्पन करोड़ यादव कटे, मची रूधिर की कीच।।

सरलार्थ :- दुर्वासा ने बच्चों के मजाक को इतनी गंभीरता से लिया कि उनके कुल का नाश करने का श्राप दे दिया। उस नीच दुर्वासा ने यह भी नहीं सोचा कि क्या अनर्थ हो जाएगा। बात कुछ भी नहीं थी, दुर्वासा नीच ऋषि ने इतना जुल्म कर दिया कि छप्पन करोड़ यादव कटकर मर गए और रक्त के बहने से कीचड़ बन गया।

इसी प्रकार चुणक ऋषि ने बेमतलब पंगा लेकर मानधाता राजा की 72 करोड़ सेना का नाश कर दिया।

❖ एक कपिल नाम के ऋषि थे जिनको भगवान विष्णु के 24 अवतारों में से एक अवतार भी माना जाता है, वे तपस्या कर रहे थे।

एक सगड़ राजा था। उसके 60 हजार पुत्र थे। किसी ऋषि ने बताया कि यदि एक तालाब, एक कुआँ, एक बगीचा बना दिया जाए तो एक अश्वमेघ यज्ञ जितना फल मिलता है। राजा सगड़ के लड़कों ने यह कार्य शुरू कर दिया। समझदार व्यक्तियों ने उनसे कहा कि आप ऐसे जगह-जगह तालाब, कुएँ, बगीचे बनाओगे तो पृथ्वी पर अन्न उत्पन्न करने के लिए स्थान ही नहीं रहेगा। किसी राजा ने विरोध किया तो उससे लड़ाई कर ली। उन राजा सगड़ के लड़कों ने एक घोड़ा अपने साथ लिया। उसके गले में पत्र लिखकर बाँध दिया कि यदि कोई हमारे कार्य में बाधा करेगा, वह इस घोड़े को पकड़ ले और युद्ध के लिए तैयार हो जाए। उन सिरफिरों से कौन टक्कर ले? पृथ्वी देवी भगवान विष्णु जी के पास गई। एक गाय का रूप धारण करके कहा कि हे भगवान! पृथ्वी पर एक सगड़ राजा है। उसके 60 हजार पुत्र हैं। उनको ऐसी सिरड़ उठी है कि मेरे को खोद डाला। वहाँ मनुष्यों के खाने के लिए अन्न भी उत्पन्न नहीं हो सकता। भगवान विष्णु ने कहा तुम जाओ, वे अब कुछ नहीं करेंगे। भगवान विष्णु ने देवराज इन्द्र को बुलाया और समझाया कि राजा सघड़ के 60 हजार लड़के यज्ञ कर रहे हैं। यदि उनकी 100 यज्ञ पूरी हो गई तो तुम्हारी इन्द्र गद्दी उनको देनी पड़ेगी, समय रहते कुछ बनता है तो कर ले। इन्द्र ने हलकारे अर्थात् अपने नौकर भेजे, उनको सब समझा दिया। रात्रि के समय राजा सघड़ के पुत्र सोए पड़े थे। घोड़ा वृक्ष से बाँध रखा था। उन देवराज के फरिश्तों ने घोड़ा खोलकर कपिल तपस्वी की जाँघ पर बाँध दिया। कपिल ऋषि वर्षों से तपस्यारत था। जिस कारण से उसका शरीर अस्थिपिंजर जैसा हो गया था। आसन पदम लगाए हुए था, टाँगें पतली-पतली थी। जैसे वृक्ष की जड़ों की मिट्टी वर्षा के पानी से बह जाती हैं और जड़ों के बीच में 6-7 इंच का अन्तर (Gap) हो जाता है, ऋषि कपिल जी की टाँगें ऐसी थीं। इन्द्र के हलकारों ने घोड़े को टाँगों के बीच के रास्ते में से जाँघ के पास रस्से से बाँध दिया।

राजा के लड़कों ने सुबह उठते ही घोड़ा देखा। उसकी खोज में युद्ध करने की तैयारी करके 60 हजार का लंगार चल पड़ा। घोड़े के पद्चिन्हों के साथ-साथ कपिल मुनि के आश्रम में पहुँच गए। घोड़े को बँधा देखकर सगड़ राजा के पुत्रों ने

ऋषि की ही कोख में (दोनों बाजुओं के नीचे काखों को हरियाणवी भाषा में हींख कहते हैं) भाले चुभो दिए। कपिल ऋषि की पलकें इतनी लम्बी बढ़ चुकी थी कि जमीन पर जा टिकी थी। ऋषि को पीड़ा हुई तो क्रोधवश पलकों को हाथों से उठाया, आँखों से अग्नि बाण छूटे। 60 हजार सगड़ के पुत्रों की सेना की पूली-सी बिछ गई अर्थात् 60 हजार सगड़ के बेटे मरकर ढ़ेर हो गए।

सूक्ष्मवेद में कहा है कि :-

60 हजार सगड़ के होते, कपिल मुनिश्वर खाए।
जै परमेश्वर की करें भक्ति, तो अजर–अमर हो जाए।।
72 क्षौणी खा गया, चुणक ऋषिश्वर एक।
देह धारें जौरा फिरैं, सभी काल के भेष।।
दुर्वासा कोपे तहाँ, समझ न आई नीच।
56 करोड़ यादव कटे, मची रूधिर की कीच।।

भावार्थ :- कपिल मुनि जी, चुणक मुनि जी तथा दुर्वासा मुनि जी संसार में कितने प्रसिद्ध हैं, ये सब काल ब्रह्म की भक्ति करने वाले भेषधारी ऋषि हैं। ये चलती-फिरती मौत थी। चलती-फिरती मनुष्य रूप में घाल हैं। (घाल = एक मिट्टी के छोटे मटके को तांत्रिक विद्या से आकाश में उड़ाकर दुश्मन पर छोड़ता है। उससे बहुत हानि होती है।) गलती से भोले प्राणी इनको महान आत्मा मानते हैं।

ये सब ज्ञानी आत्मा थे, ये सब उदार हृदय के थे। इन्होंने परमात्मा प्राप्ति के लिए अपना कल्याण कराने के लिए तन-मन-धन अर्पित कर दिया, परंतु तत्वदर्शी सन्त न मिलने के कारण इन्होंने काल ब्रह्म को एक समर्थ प्रभु मानकर गलती की और उसी की साधना ओम् (ॐ) नाम के जाप के साथ तथा अधिक हठ योग समाधि के द्वारा की, जिससे परमात्मा प्राप्ति तो है ही नहीं, उल्टा हानि होती है क्योंकि यह साधना शास्त्र विरूद्ध है।

गीता अध्याय 16 श्लोक 23-24 में कहा है कि शास्त्रविधि को त्यागकर जो मनमाना आचरण करते हैं, उनकी साधना व्यर्थ है। वे उदार आत्माऐं इसी कारण काल ब्रह्म की अनुत्तम गति में स्थित रहें।

गीता अध्याय 17 श्लोक 5, 6 में कहा है कि :-

❖ जो मनुष्य शास्त्र विधि रहित केवल मन कल्पित घोर तप को तपते हैं और दम्भ अहंकार से युक्त, कामना आसक्ति अभिमान से युक्त हैं। (गीता अध्याय 17 श्लोक 5)

❖ शरीर में स्थित सर्व कमलों में देव शक्तियों तथा पूर्ण परमात्मा तथा मुझे भी कंश करने वाले अर्थात् कष्ट देने वाले अज्ञानियों को तू असुर स्वभाव के जान। (गीता अध्याय 17 श्लोक 6)

❖ यही प्रमाण गीता अध्याय 16 श्लोक 17 से 20 में है।

❖ वे अपने आपको श्रेष्ठ मानने वाले घमण्डी पुरूष धन और मान के मद से युक्त होकर केवल नाममात्र यज्ञों द्वारा पाखण्ड से शास्त्रविधि रहित पूजन करते

हैं। (गीता अध्याय 16 श्लोक 17)

❖ अहंकार, बल, घमण्ड, कामना, क्रोध आदि के वश और दूसरों की निन्दा करने वाले पुरूष अपने और दूसरों के शरीर में स्थित मुझसे द्वेष करने वाले होते हैं। (गीता अध्याय 16 श्लोक 18)

❖ उन द्वेष करने वाले पापाचीर क्रूरकर्मी "जो वचन से करोंड़ों व्यक्तियों की हत्या करने वाले" नराधमों अर्थात् नीच मनुष्यों को मैं संसार में बार-बार आसुरी अर्थात् राक्षसी योनियों में ही डालता हूँ। (गीता अध्याय 16 श्लोक 19) सूक्ष्मवेद में भी इन्हें नीच कहा है :-

दुर्वासा कोपे तहाँ, समझ न आई नीच।
56 करोड़ यादव कटे, मची रूधीर की कीच।।

❖ हे अर्जुन! वे मूर्ख मुझको न प्राप्त होकर ही जन्म-जन्म में आसुरी योनियों को प्राप्त होते हैं, उससे भी अति नीच गति को प्राप्त होते हैं अर्थात् घोर नरक में गिरते हैं। (गीता अध्याय 17 श्लोक 20)

उपरोक्त प्रमाणों से सिद्ध हुआ कि गीता अध्याय 7 श्लोक 18 में गीता ज्ञान दाता ने अपनी साधना से होने वाली गति को भी इसलिए अनुत्तम अर्थात् घटिया बताया है, कहा है कि :-

❖ गीता अध्याय 7 श्लोक 18 = गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि जो चौथी प्रकार के ज्ञानी साधक हैं, वे सभी हैं तो उदार क्योंकि परमात्मा प्राप्ति के लिए अपने शरीर के नष्ट होने की भी प्रवाह नहीं की और हजारों वर्ष भूखे-प्यासे साधनारत रहे, परंतु तत्वदर्शी सन्त न मिलने के कारण वे सभी मेरी अनुत्तम अर्थात् घटिया गति अर्थात् ब्रह्म साधना से होने वाले मोक्ष जो ऊपर ऋषियों को हुआ, उसमें स्थित रहे अर्थात् जन्म-मरण, चौरासी लाख योनियों के चक्कर वाली गति में रह गए। (गीता अध्याय 7 श्लोक 18)

❖ निष्कर्ष :- चुणक ऋषि, दुर्वासा ऋषि तथा कपिल ऋषि ने जो ओम् (ॐ) नाम जाप किया, उसकी भक्ति के फलस्वरूप ये कुछ समय ब्रह्म लोक में जाऐंगे। वहाँ भक्ति समाप्त करके फिर पथ्वी पर राजा बनेंगे क्योंकि सूक्ष्मवेद में लिखा है :-

तप से राज, राज मध मानम्, जन्म तीसरे शुकर स्वानम्।

फिर कुत्ता, गधा बनेंगे, फिर नरक जाएंगे। जब कुत्ते बनेंगे, तब इनके सिर में कीड़े पड़ेंगे। जो व्यक्ति इनके श्राप से मरे थे, उनका पाप इनको भोगना पड़ेगा, कीड़े इनका माँस चुन-चुनकर खाऐंगे। इसलिए गीता में भी ऐसे साधकों के विषय में जो बताया है, वो आप जी ने ऊपर पढ़ लिया।

❖ उपरोक्त कथाओं का सारांश :-

1. ब्रह्म साधना अनुत्तम (घटिया) है।
2. तीन ताप को श्री कष्ण जी भी समाप्त नहीं कर सके। श्राप देना तीन

ताप (दैविक ताप) में आता है। दुर्वासा के श्राप के शिकार स्वयं श्री कृष्ण सहित सर्व यादव भी हो गए।

3. श्री कृष्ण जी ने श्रापमुक्त होने के लिए यमुना में स्नान करने के लिए कहा, यह समाधान बताया था। उससे श्राप नाश तो हुआ नहीं, यादवों का नाश अवश्य हो गया। विचार करें :- जो अन्य सन्त या ब्राह्मण जो ऐसे स्नान या तीर्थ करने से संकट मुक्त करने की राय देते हैं, वे कितनी कारगर हैं? अर्थात् व्यर्थ हैं क्योंकि जब भगवान त्रिलोकी नाथ द्वारा बताए समाधान यमुना स्नान से कुछ लाभ नहीं हुआ तो अन्य टट्पुँजियों, ब्राह्मणों व गुरूओं द्वारा बताए स्नान आदि समाधान से कुछ होने वाला नहीं है।

4. पहले श्री कृष्ण जी ने दुर्वासा के श्राप से बचाव का तरीका बताया था। उस कढ़ाई को घिसाकर चूर्ण बनाकर प्रभास क्षेत्र में यमुना नदी में डाल दो। न रहेगा बाँस, न बजेगी बाँसुरी, बाँस भी रह गया, 56 करोड़ यादवों की बाँसुरी भी बज गई।

सज्जनो!

वर्तमान में बुद्धिमान मानव है, शिक्षित है, मेरे द्वारा (सन्त रामपाल दास द्वारा) बताए ज्ञान को शास्त्रों से मिलाओ, फिर भक्ति करके देखो, क्या कमाल होता है।

❖ प्रसंग आगे चलाते हैं :-

1. तीनों गुणों (रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु जी तथा तमगुण शिव जी) की भक्ति करना व्यर्थ सिद्ध हुआ।

2. गीता ज्ञान दाता ब्रह्म की भक्ति स्वयं गीता ज्ञान दाता ने गीता अध्याय 7 श्लोक 18 में अनुत्तम बताई है। उसने गीता अध्याय 18 श्लोक 62 में उस परमेश्वर अर्थात् परम अक्षर ब्रह्म की शरण में जाने को कहा है। यह भी कहा है कि उस परमेश्वर की कृपा से ही तू परम शान्ति तथा सनातन परम धाम को प्राप्त होगा।

3. गीता अध्याय 15 श्लोक 1 से 4 में संसार रूपी वृक्ष का वर्णन है तथा तत्वदर्शी सन्त की पहचान भी बताई है। संसार रूपी वृक्ष के सब हिस्से, जड़ें (मूल) कौन परमेश्वर है? तना कौन प्रभु है, डार कौन प्रभु है, शाखाऐं कौन-कौन देवता हैं? पात रूप संसार बताया है।

इसी अध्याय 15 श्लोक 16 में स्पष्ट किया है कि :-

1. क्षर पुरूष (यह 21 ब्रह्माण्ड का प्रभु है) :- इसे ब्रह्म, काल ब्रह्म, ज्योति निरंजन भी कहा जाता है। यह नाशवान है। हम इसके लोक में रह रहे हैं। हमें इसके लोक से मुक्त होना है तथा अपने परमात्मा कबीर जी के पास सत्यलोक में जाना है।

2. अक्षर पुरूष :- यह 7 संख ब्रह्माण्डों का प्रभु है, यह भी नाशवान है। हमने इसके 7 संख ब्रह्माण्डों के क्षेत्र से होकर सत्यलोक जाना है। इसलिए इसका

टोल टैक्स देना है। बस इससे हमारा इतना ही काम है।

❖ **गीता अध्याय 15 श्लोक 17 में कहा है कि :-**

उत्तमः पुरूषः तू अन्यः परमात्मा इति उदाहृतः।
यः लोक त्रयम् आविश्य विभर्ति अव्ययः ईश्वरः।।

सरलार्थ :- गीता अध्याय 15 श्लोक 16 में कहे दो पुरूष, एक क्षर पुरूष दूसरा अक्षर पुरूष हैं। इन दोनों से अन्य है उत्तम पुरूष अर्थात् पुरूषोत्तम, उसी को परमात्मा कहते हैं जो तीनों लोकों में प्रवेश करके सबका धारण-पोषण करता है। वह वास्तव में अविनाशी परमेश्वर है। (गीता अध्याय 15 श्लोक 17) गीता अध्याय 3 श्लोक 14-15 में भी स्पष्ट किया है कि सर्वगतम् ब्रह्म अर्थात् सर्वव्यापी परमात्मा, जो सचिदानन्द घन ब्रह्म है, उसे वासुदेव भी कहते हैं जिसके विषय में गीता अध्याय 7 श्लोक 19 में कहा है। वही सदा यज्ञों अर्थात् धार्मिक अनुष्ठानों में प्रतिष्ठित है अर्थात् ईष्ट रूप में पूज्य है।

पूर्ण गुरू से दीक्षा लेकर मर्यादा में रहकर भक्ति करो। इस प्रकार जीने की राह पर चलकर संसार में सुखी जीवन जीऐं तथा मोक्ष रूपी मंजिल को प्राप्त करें।

भक्ति अवश्य करो

❖ **कबीर परमेश्वर जी ने फिर बताया है कि :-**

बिन उपदेश अचम्भ है, क्यों जिवत हैं प्राण।
भक्ति बिना कहाँ ठौर है, ये नर नाहीं पाषाण।।

भावार्थ :- परमात्मा कबीर जी कह रहे हैं कि हे भोले मानव! मुझे आश्चर्य है कि बिना गुरू से दीक्षा लिए किस आशा को लेकर जीवित है। न तो शरीर तेरा है, यह भी त्यागकर जाएगा। फिर सम्पत्ति आपकी कैसे है?

कबीर, काया तेरी है नहीं, माया कहाँ से होय।
भक्ति कर दिल पाक से, जीवन है दिन दोय।।

जिनको यह विवेक नहीं कि भक्ति बिना जीव का कहीं भी ठिकाना नहीं है तो वे नर यानि मानव नहीं हैं, वे तो पत्थर हैं। उनकी बुद्धि पर पत्थर गिरे हैं। कबीर जी ने फिर कहा है कि :-

बेगार की परिभाषा :-

अगम निगम को खोज ले, बुद्धि विवेक विचार।
उदय–अस्त का राज मिले, तो बिन नाम बेगार।।

भावार्थ :- पुराने समय में पुलिस थानों में जीप-कार आदि गाड़ियाँ नहीं होती थी। जब पुलिस वालों को कहीं रैड (छापा) मारनी होती तो किसी प्राइवेट थ्री व्हीलर या फोर व्हीलर वाले को जबरदस्ती पकड़ लेते और उसके व्हीकल (थ्री व्हीलर या फोर व्हीलर) में बैठकर जहाँ जाना होता, ले जाते। ड्राईवर भी थ्री व्हीलर वाला होता था तथा पैट्रोल-डीजल भी वही अपनी जेब से डलवाता था। उस दिन की दिहाड़ी भी नहीं कर पाता था। पुलिस वाले उसको सारा दिन इधर-उधर घुमाते

रहते थे। आम व्यक्ति तो यह विचार करता था कि ये थ्री व्हीलर वाला आज तो बहुत ज्यादा कमाई करेगा। सारा दिन चला है, परंतु उसका मन ही जानता था। उस दिन उसके साथ क्या बीती होती थी। ऐसे ही राजा लोग इस जन्म में भक्ति ना करके केवल राज्य व्यवस्था को बनाए रखने में जीवन समाप्त कर रहे हैं तो वे बेगार करके जाते हैं। पूर्व जन्म के धर्म-कर्म से राजा बनता है। वर्तमान जन्म में उसी पुण्य को खर्च-खा रहा होता है। जनता को तो लगता है कि राजा बड़ी मौज कर रहा है। आध्यात्मिक दृष्टि से वह बेगार कर रहा है। भक्ति कमाई नहीं कर रहा है। यदि व्यक्ति पूर्ण गुरू से दीक्षा लेकर भक्ति नहीं करता है तो उसको चाहे उदय-अस्त का यानि पूरी पृथ्वी का राज्य भी मिल जाए तो भी वह थ्री व्हीलर वाले की तरह व्यर्थ की मारो-मार यानि गहमा-गहमी कर रहा है। उसे कुछ लाभ नहीं होना। इसलिए राजा हो या प्रजा, धनी हो या निर्धन, सबको नए सिरे से भक्ति करनी चाहिए। उसी से उनका भविष्य उज्जवल होगा।

❖ परमात्मा कबीर जी ने अपने शिष्य संत गरीबदास जी को तत्वज्ञान समझाया जो इस प्रकार है :- (राग आसावरी शब्द नं. 1)

मन तू चलि रे सुख के सागर, जहाँ शब्द सिंधु रत्नागर।। (टेक)
कोटि जन्म तोहे मरतां होगे, कुछ नहीं हाथ लगा रे।
कुकर–सुकर खर भया बौरे, कौआ हँस बुगा रे।।1।।
कोटि जन्म तू राजा किन्हा, मिटि न मन की आशा।
भिक्षुक होकर दर–दर हांड्या, मिल्या न निर्गुण रासा।।2।।
इन्द्र कुबेर ईश की पद्वी, ब्रह्मा, वरूण धर्मराया।
विष्णुनाथ के पुर कूं जाकर, बहुर अपूठा आया।।3।।
असँख्य जन्म तोहे मरते होगे, जीवित क्यूं ना मरै रे।
द्वादश मध्य महल मठ बौरे, बहुर न देह धरै रे।।4।।
दोजख बहिश्त सभी तै देखे, राज–पाट के रसिया।
तीन लोक से तृप्त नाहीं, यह मन भोगी खसिया।।5।।
सतगुरू मिलै तो इच्छा मेटैं, पद मिल पदै समाना।
चल हँसा उस लोक पठाऊँ, जो आदि अमर अस्थाना।।6।।
चार मुक्ति जहाँ चम्पी करती, माया हो रही दासी।
दास गरीब अभय पद परसै, मिलै राम अविनाशी।।7।।

सूक्ष्मवेद की वाणी का भावार्थ :-

वाणी का सरलार्थ :- आत्मा और मन को पात्र बनाकर संत गरीबदास जी ने संसार के मानव को समझाया है। कहा है कि ''यह संसार दुःखों का घर है। इससे भिन्न एक और संसार है। जहाँ कोई दुःख नहीं है। वह स्थान (सनातन परम धाम = सत्यलोक) है तथा वहाँ का प्रभु (अविनाशी परमेश्वर) सुखों का सागर है।

सुख सागर अर्थात् अमर परमात्मा तथा उसकी राजधानी अमर लोक की संक्षिप्त परिभाषा बताई है :-

शंखों लहर मेहर की ऊपजैं, कहर नहीं जहाँ कोई।
दास गरीब अचल अविनाशी, सुख का सागर सोई।।

भावार्थ :- जिस समय मैं (लेखक) अकेला होता हूँ, तो कभी-कभी ऐसी हिलोर अंदर से उठती है, उस समय सब अपने-से लगते हैं। चाहे किसी ने मुझे कितना ही कष्ट दे रखा हो, उसके प्रति द्वेष भावना नहीं रहती। सब पर दया भाव बन जाता है। यह स्थिति कुछ मिनट ही रहती है। उसको मेहर की लहर कहा है। सतलोक अर्थात् सनातन परम धाम में जाने के पश्चात् प्रत्येक प्राणी को इतना आनन्द आता है। वहाँ पर ऐसी असँख्यों लहरें आत्मा में उठती रहती हैं। जब वह लहर मेरी आत्मा से हट जाती है तो वही दुःखमय स्थिति प्रारम्भ हो जाती है। उसने ऐसा क्यों कहा?, वह व्यक्ति अच्छा नहीं है, वो हानि हो गई, यह हो गया, वह हो गया। यह कहर (दुःख) की लहर कही जाती है।

उस सतलोक में असँख्य लहर मेहर (दया) की उठती हैं, वहाँ कोई कहर (भयँकर दुःख) नहीं है। वैसे तो सतलोक में कोई दुःख नहीं है। कहर का अर्थ भयँकर कष्ट होता है। जैसे एक गाँव में आपसी रंजिश के चलते विरोधियों ने दूसरे पक्ष के एक परिवार के तीन सदस्यों की हत्या कर दी, कहीं पर भूकंप के कारण हजारों व्यक्ति मर जाते हैं, उसे कहते हैं कहर टूट पड़ा या कहर कर दिया। ऊपर लिखी वाणी में सुख सागर की परिभाषा संक्षिप्त में बताई है। कहा है कि वह अमर लोक अचल अविनाशी अर्थात् कभी चलायमान अर्थात् ध्वंस नहीं होता तथा वहाँ रहने वाला परमेश्वर अविनाशी है। वह स्थान तथा परमेश्वर सुख का समुद्र है। जैसे समुद्री जहाज बंदरगाह के किनारे से 100 या 200 किमी. दूर चला जाता है तो जहाज के यात्रियों को जल अर्थात् समुद्र के अतिरिक्त कुछ भी दिखाई नहीं देता। सब ओर जल ही जल नजर आता है। इसी प्रकार सतलोक (सत्यलोक) में सुख के अतिरिक्त कुछ भी नहीं है अर्थात् वहाँ कोई दुःख नहीं है।

अब पूर्व में लिखी वाणी का सरलार्थ किया जाता है :-

मन तू चल रे सुख के सागर, जहाँ शब्द सिंधु रत्नागर।।(टेक)
कोटि जन्म तोहे भ्रमत होगे, कुछ नहीं हाथ लगा रे।
कुकर शुकर खर भया बौरे, कौआ हँस बुगा रे।।

परमेश्वर कबीर जी ने अपनी अच्छी आत्मा संत गरीबदास जी को सूक्ष्मवेद समझाया, उसको संत गरीबदास जी (गाँव-छुड़ानी जिला-झज्जर, हरियाणा प्रान्त) ने आत्मा तथा मन को पात्र बनाकर विश्व के मानव को काल (ब्रह्म) के लोक का कष्ट तथा सतलोक का सुख बताकर उस परमधाम में चलने के लिए सत्य साधना जो शास्त्रोक्त है, करने की प्रेरणा की है। मन तू चल रे सुख के सागर अर्थात् सनातन परम धाम में चल जहाँ पर शब्द नष्ट नहीं होता। इसलिए शब्द का अर्थ अविनाशीपन से है कि वह स्थान अमरत्व का सिंधु अर्थात् सागर है और मोक्ष रूपी रत्न का आगर अर्थात् खान है। इस काल ब्रह्म के लोक में आप जी ने भक्ति भी की। परंतु शास्त्रानुकूल साधना बताने वाले तत्वदर्शी संत न मिलने के कारण आप

करोड़ों जन्मों से भटक रहे हो। करोड़ों-अरबों रूपये संग्रह करने में पूरा जीवन लगा देते हो, फिर मत्यु हो जाती है। वह जोड़ा हुआ धन जो आपके पूर्व के संस्कारों से प्राप्त हुआ था, उसे छोड़कर संसार से चला गया। उस धन के संग्रह करने में जो पाप किए, वे आप जी के साथ गए। आप जी ने उस मानव जीवन में तत्वदर्शी संत से दीक्षा लेकर शास्त्रविधि अनुसार भक्ति की साधना नहीं की। जिस कारण से आपको कुछ हाथ नहीं आया। पूर्व के पुण्यों के बदले धन ले लिया। वह धन यहीं रह गया, आपको कुछ भी नहीं मिला। आपको मिले धन संग्रह तथा भक्ति शास्त्रानुकूल न करने के पाप।

जिनके कारण आप कुकर = कुत्ता, खर = गधा, सुकर = सूअर, कौआ = एक पक्षी, हँस = एक पक्षी जो केवल सरोवर में मोती खाता है, बुगा = बुगला पक्षी आदि-आदि की योनियों को प्राप्त करके कष्ट उठाया।

कोटि जन्म तू राजा कीन्हा, मिटि न मन की आशा।
भिक्षुक होकर दर–दर हांड्या, मिला न निर्गुण रासा।।

सरलार्थ :- हे मानव! आप जी ने काल (ब्रह्म) की कठिन से कठिन साधना की। घर त्यागकर जंगल में निवास किया, फिर गाँव व नगर में घर-घर के द्वार पर हांड्या अर्थात् घूमा। भिक्षा प्राप्ति के लिए जंगल में साधनारत साधक निकट के गाँव या शहर में जाता है। एक घर से भिक्षा पूरी नहीं मिलती तो अन्य घरों से भोजन लेकर जंगल में चला जाता है। कभी-कभी तो साधक एक दिन भिक्षा माँगकर लाते हैं, उसी से दो-तीन दिन निर्वाह करते हैं। रोटियों को पतले कपड़े रूमाल जैसे कपड़े को छालना कहते हैं। छालने में लपेटकर वक्ष की टहनियों से बाँध देते थे। वे रोटियाँ सूख जाती हैं। उनको पानी में भिगोकर नर्म करके खाते थे। वे प्रतिदिन भिक्षा माँगने जाने में जो समय व्यर्थ होता था, उसकी बचत करके उस समय को काल ब्रह्म की साधना में लगाते थे। भावार्थ है कि जन्म-मरण से छुटकारा पाने के लिए अर्थात् पूर्ण मोक्ष प्राप्ति के लिए वेदों में वर्णित विधि तथा लोकवेद से घोरतप करते थे। उनको तत्वदर्शी संत न मिलने के कारण निर्गुण रासा अर्थात् गुप्त ज्ञान जिसे तत्वज्ञान कहते हैं। वह नहीं मिला क्योंकि यजुर्वेद अध्याय 40 मंत्र 10 में तथा चारों वेदों का सारांश रूप श्रीमद् भगवत गीता अध्याय 4 श्लोक 32 तथा 34 में कहा है कि जो यज्ञों अर्थात् धार्मिक अनुष्ठानों का विस्तत ज्ञान स्वयं सच्चिदानन्द घन ब्रह्म अर्थात् परम अक्षर ब्रह्म अपने मुख कमल से बोलकर सुनाता है, वह तत्वज्ञान अर्थात् सूक्ष्मवेद है। गीता ज्ञान दाता ब्रह्म ने कहा है कि उस तत्वज्ञान को तू तत्वज्ञानियों के पास जाकर समझ, उनको दण्डवत् प्रणाम करने से नम्रतापूर्वक प्रश्न करने से वे परमात्म तत्व को भली-भाँति जानने वाले तत्वदर्शी संत तुझे तत्वज्ञान का उपदेश करेंगे। इससे सिद्ध हुआ कि तत्वज्ञान न वेदों में है और न ही गीता शास्त्र में। यदि होता तो एक अध्याय और बोल देता। कह देता कि तत्वज्ञान उस अध्याय में पढ़ें। संत गरीबदास जी ने मन के बहाने मानव शरीरधारी प्राणियों को समझाया है कि वह निर्गुण रासा अर्थात् तत्वज्ञान न मिलने

के कारण काल ब्रह्म की साधना करके आप जी करोड़ों जन्मों में राजा बने। फिर भी मन की इच्छा समाप्त नहीं हुई क्योंकि राजा सोचता है कि स्वर्ग में सुख है, यहाँ राज में कोई सुख-चैन नहीं है, शान्ति नहीं है।

निर्गुण रासा का भावार्थ :- निर्गुण का अर्थ है कि वह वस्तु तो है परंतु उसका लाभ नहीं मिल रहा। वंक्ष के बीज में फल तथा वंक्ष निर्गुण रूप में है, उस बीज को मिट्टी में बीजकर सिंचाई करके वह सरगुण वस्तु (वंक्ष, वंक्ष को फल) प्राप्त की जाती है। यह ज्ञान न होने से आम के फल व छाया से वंचित रह जाते हैं। रासा = झंझट अर्थात् उलझा हुआ कार्य। सूक्ष्मवेद में परमेश्वर कबीर जी ने कहा है कि :-

नौ मन (360 कि.ग्रा.) सूत = कच्चा धागा

कबीर, नौ मन सूत उलझिया, ऋषि रहे झख मार।
सतगुरू ऐसा सुलझा दे, उलझे न दूजी बार।।

सरलार्थ :- परमेश्वर कबीर जी ने कहा है कि अध्यात्म ज्ञान रूपी नौ मन सूत उलझा हुआ है। एक कि.ग्रा. उलझे हुए सूत को सीधा करने में एक दिन से भी अधिक जुलाहों का लग जाता था। यदि सुलझाते समय धागा टूट जाता तो कपड़े में गाँठ लग जाती। गाँठ-गठीले कपड़े को कोई मोल नहीं लेता था। इसलिए परमेश्वर कबीर जुलाहे ने जुलाहों का सटीक उदाहरण बताकर समझाया है कि अधिक उलझे हुए सूत को कोई नहीं सुलझाता था। अध्यात्म ज्ञान उसी नौ मन उलझे हुए सूत के समान है जिसको सतगुरू अर्थात् तत्वदर्शी संत ऐसा सुलझा देगा जो पुनः नहीं उलझेगा। बिना सुलझे अध्यात्म ज्ञान के आधार से अर्थात् लोकवेद के अनुसार साधना करके स्वर्ग-नरक, चौरासी लाख प्रकार के प्राणियों के जीवन, पंथ्वी पर किसी टुकड़े का राज्य, स्वर्ग का राज्य प्राप्त किया, पुनः फिर जन्म-मरण के चक्र में गिरकर कष्ट पर कष्ट उठाया। परंतु काल ब्रह्म की वेदों में वर्णित विधि अनुसार साधना करने से वह परम शांति तथा सनातन परम धाम प्राप्त नहीं हुआ जो गीता अध्याय 18 श्लोक 62 में कहा है और न ही परमेश्वर का वह परम पद प्राप्त हुआ जहाँ जाने के पश्चात् साधक लौटकर संसार में कभी नहीं आते जो गीता अध्याय 15 श्लोक 4 में कहा है। काल ब्रह्म की साधना से निम्न लाभ होता रहता है।

वाणी नं 3 :– इन्द्र–कुबेर, ईश की पदवी, ब्रह्मा वरूण धर्मराया।
विष्णुनाथ के पुर कूं जाकर, बहुर अपूठा आया।।

सरलार्थ :- काल ब्रह्म की साधना करके साधक इन्द्र का पद भी प्राप्त करता है। इन्द्र स्वर्ग के राजा का पद है। इसको देवराज अर्थात् देवताओं का राजा तथा सुरपति भी कहते हैं। यह सिंचाई विभाग अर्थात् वर्षा मंत्रालय भी अपने अधीन रखता है।

प्रश्न :- इन्द्र की पदवी कैसे प्राप्त होती है?

उत्तर :- अधिक तप करने से तथा सौ मन (4 हजार कि.ग्रा.) गाय या भैंस के घी का प्रयोग करके धर्मयज्ञ करने से एक धर्मयज्ञ सम्पन्न होती है। ऐसी-ऐसी

सौ धर्मयज्ञ निर्विघ्न करने से इन्द्र की पदवी साधक प्राप्त करता है। तप या यज्ञ के दौरान यज्ञ या तप की मर्यादा भंग हो जाती है तो नए सिरे से यज्ञ तथा तप करना पड़ता है। इस प्रकार इन्द्र की पदवी प्राप्त होती है।

प्रश्न :- इन्द्र का शासन काल कितना है? मत्यु उपरांत इन्द्र के पद को छोड़कर प्राणी किस योनि को प्राप्त करता है?

उत्तर :- इन्द्र स्वर्ग के राजा के पद पर 72 चौकड़ी अर्थात् 72 चतुर्युग तक बना रहता है। एक चतुर्युग में सत्ययुग+त्रेतायुग+द्वापरयुग तथा कलयुग का समय होता है। जो 1728000+1296000+864000+432000 क्रमशः सत्ययुग + त्रेतायुग + द्वापरयुग + कलयुग का समय अर्थात् 43 लाख 20 हजार वर्ष का समय एक चतुर्युग में होता है। ऐसे बने 72 चतुर्युग तक वह साधक इन्द्र के पद पर स्वर्ग के राजा का सुख भोगता है। एक कल्प अर्थात् ब्रह्मा जी के एक दिन में (जो एक हजार आठ (1008) चतुर्युग का होता है) 14 जीव इन्द्र के पद पर रहकर अपना किया पुण्य-कर्म भोगते हैं। इन्द्र के पद को भोगकर वे प्राणी गधे का जीवन प्राप्त करते हैं।

कथा :- ‘‘मार्कण्डेय ऋषि तथा अप्सरा का संवाद‘‘

एक समय बंगाल की खाड़ी में मार्कण्डेय ऋषि तप कर रहा था। इन्द्र के पद पर विराजमान आत्मा को यह शर्त होती है कि यदि उसके शासनकाल में 72 चौकड़ी युग के दौरान यदि पथ्वी पर कोई व्यक्ति इन्द्र पद प्राप्त करने योग्य तप या धर्मयज्ञ कर लेता है और उसकी क्रिया में कोई बाधा नहीं आती है तो उस साधक को इन्द्र का पद दे दिया जाता है और वर्तमान इन्द्र से वह पद छीन लिया जाता है। इसलिए जहाँ तक संभव होता है, इन्द्र अपने शासनकाल में किसी साधक का तप या धर्मयज्ञ पूर्ण नहीं होने देता। उसकी साधना भंग करा देता है, चाहे कुछ भी करना पड़े।

जब इन्द्र को उसके दूतों ने बताया कि बंगाल की खाड़ी में मार्कण्डेय नामक ऋषि तप कर रहे हैं। इन्द्र ने मार्कण्डेय ऋषि का तप भंग करने के लिए उर्वसी (इन्द्र की पत्नी) भेजी। सर्व श्रंगार करके देवपरी मार्कण्डेय ऋषि के सामने नाचने-गाने लगी। अपनी सिद्धि से उस स्थान पर बसंत ऋतु जैसा वातावरण बना दिया। मार्कण्डेय ऋषि ने कोई उत्सुकता नहीं दिखाई। उर्वसी ने कमर का नाड़ा तोड़ दिया, निःवस्त्र हो गई। तब मार्कण्डेय ऋषि बोले, हे बेटी!, हे बहन!, हे माई! आप यह क्या कर रही हो? आप यहाँ गहरे जंगल में अकेली किसलिए आई? उर्वसी ने कहा कि ऋषि जी मेरे रूप को देखकर इस आरण्य खण्ड (बन-खण्ड) के सर्व साधक अपना संतुलन खो गए परंतु आप डगमग नहीं हुए, न जाने आपकी समाधि कहाँ थी? कप्या आप मेरे साथ इन्द्रलोक में चलो, नहीं तो मुझे सजा मिलेगी कि तू हार कर आ गई। मार्कण्डेय ऋषि ने कहा कि मेरी समाधि ब्रह्मलोक में गई थी, जहाँ पर मैं उन उर्वसियों का नाच देख रहा था जो इतनी सुंदर हैं कि तेरे जैसी तो उनकी 7-7 बांदियाँ अर्थात् नौकरानियाँ हैं। इसलिए मैं तेरे को क्या देखता, तेरे

पर क्या आसक्त होता? यदि तेरे से कोई सुंदर हो तो उसे ले आ। तब देवपरी ने कहा कि इन्द्र की पटरानी अर्थात् मुख्य रानी मैं ही हूँ। मुझसे सुन्दर स्वर्ग में कोई औरत नहीं है।

तब मार्कण्डेय ऋषि ने पूछा कि इन्द्र की मत्यु होगी, तब तू क्या करेगी? उर्वसी ने उत्तर दिया कि मैं 14 इन्द्र भोगूँगी। भावार्थ है कि श्री ब्रह्मा जी के एक दिन में 1008 चतुर्युग होते हैं जिसमें 72-72 चतुर्युग का शासनकाल पूरा करके 14 इन्द्र मत्यु को प्राप्त होते हैं। इन्द्र की रानी वाली आत्मा ने किसी मानव जन्म में इतने अत्यधिक पुण्य किए थे। जिस कारण से वह 14 इन्द्रों की पटरानी बनकर स्वर्ग सुख तथा पुरूष सुख को भोगेगी।

मार्कण्डेय ऋषि ने कहा कि वे 14 इन्द्र भी मरेंगे, तब तू क्या करेगी? उर्वसी ने कहा कि फिर मैं मत्य लोक (पथ्वी लोक को मनुष्य लोक अर्थात् मर्त्यः लोक कहते हैं) में गधी बनाई जाऊँगी और जितने इन्द्र मेरे पति होंगे, वे भी पथ्वी पर गधे की योनि प्राप्त करेंगे।

मार्कण्डेय ऋषि बोले कि फिर मुझे ऐसे लोक में क्यों ले जा रही थी जिसका राजा गधा बनेगा और रानी गधी की योनि प्राप्त करेगी? उर्वसी बोली कि अपनी इज्जत रखने के लिए, नहीं तो वे कहेंगे कि तू हारकर आई है।

मार्कण्डेय ऋषि ने कहा कि गधियों की कैसी इज्जत? तू वर्तमान में भी गधी है क्योंकि तू चौदह खसम करेगी और मत्यु उपरांत तू स्वयं स्वीकार रही है कि मैं गधी बनूंगी। गधी की कैसी इज्जत? इतने में वहीं पर इन्द्र आ गया। विधानानुसार अपना इन्द्र का राज्य मार्कण्डेय ऋषि को देने के लिए। कहा कि ऋषि जी हम हारे और आप जीते। आप इन्द्र की पदवी स्वीकार करें। मार्कण्डेय ऋषि बोले अरे-अरे इन्द्र! इन्द्र की पदवी मेरे किसी काम की नहीं। मेरे लिए तो काग (कौवे) की बीट के समान है। मार्कण्डेय ऋषि ने इन्द्र से फिर कहा कि तू मेरे बताए अनुसार साधना कर, तेरे को ब्रह्मलोक ले चलूँगा। इस इन्द्र के राज्य को छोड़ दे। इन्द्र ने कहा कि हे ऋषि जी अब तो मुझे मौज-मस्ती करने दो। फिर कभी देखूंगा।

पाठकजनो! विचार करो :- इन्द्र को पता है कि मत्यु के उपरांत गधे का जीवन मिलेगा, फिर भी उस क्षणिक सुख को त्यागना नहीं चाहता। कहा कि फिर कभी देखूंगा। फिर कब देखेगा? गधा बनने के पश्चात् तो कुम्हार देखेगा। कितना वजन गधे की कमर पर रखना है? कहाँ-सी डण्डा मारना है? ठीक इसी प्रकार इस पथ्वी पर कोई छोटे-से टुकड़े का प्रधानमंत्री, मंत्री, मुख्यमंत्री या राज्य में मंत्री बना है या किसी पद पर सरकारी अधिकारी या कर्मचारी बना है या धनी है। उसको कहा जाता है कि आप भक्ति करो नहीं तो गधे बनोगे। वे या तो नाराज हो जाते हैं। कहते हैं कि हम क्यों बनेंगे गधे? फिर से मत कहना। कुछ सभ्य होते हैं, वे कहते हैं कि किसने देखा है, गधे बनते हैं? फिर उनको बताया जाता है कि सब संत तथा ग्रन्थ बताते हैं। तो अधिकतर कहते हैं कि देखा जाएगा।

उनसे निवेदन है कि मत्यु के पश्चात् गधा बनने के बाद आप क्या देखोगे,

फिर तो कुम्हार देखेगा कि आप जी के साथ कैसा बर्ताव करना है? देखना है तो वर्तमान में देख। बुराई छोड़कर शास्त्रानुकूल साधना करो जो वर्तमान में विश्व में केवल मेरे (रामपाल दास के) पास है। आओ ग्रहण करो और अपने जीव का कल्याण कराओ।

ऊपर लिखी वाणी नं. 3 में बताया है कि इन्द्र-कुबेर तथा ईश की पदवी प्राप्त करने वाले तथा ब्रह्मा जी का पद तथा वरूण, धर्मराय का पद प्राप्त करके तथा विष्णु जी के लोक को प्राप्त कर देव पद प्राप्त भी वापिस जन्म-मरण के चक्र में रहता है।

स्वर्ग लोक में 33 करोड़ देव पद हैं। जैसे भारत वर्ष की संसद में 540 सांसदों के पद हैं। व्यक्ति बदलते रहते हैं। उन्हीं सांसदों में से प्रधानमंत्री तथा अन्य केन्द्रीय मंत्री आदि-आदि बनते हैं।

इसी प्रकार उन 33 करोड़ देवताओं में से ही कुबेर का पद अर्थात् धन के देवता का पद प्राप्त होता है जैसे वित्त मंत्री होता है। ईश की पदवी का अर्थ है प्रभु पद जो लोकवेद में कुल तीन माने गए हैं :- 1. श्री ब्रह्मा जी 2. श्री विष्णु जी तथा 3. श्री शिव जी।

वरूणदेव जल का देवता है। धर्मराय मुख्य न्यायधीश है जो सब जीवों को कर्मों का फल देता है, उसे धर्मराज भी कहते हैं। ये सर्व काल ब्रह्म की साधना करके पद प्राप्त करते हैं। पुण्य क्षीण (समाप्त) होने के पश्चात् सर्व देवता पद से मुक्त करके पशु-पक्षियों आदि की 84 लाख प्रकार की योनियों में डाले जाते हैं। फिर नए ब्रह्मा जी, नए विष्णु जी तथा नए शिव जी इन पदों पर विराजमान होते हैं।

ये सर्व उपरोक्त देवता जन्मते-मरते हैं। ये अविनाशी नहीं हैं। इनकी स्थिति आप जी को ''संष्टि रचना'' अध्याय में इसी पुस्तक में स्पष्ट होगी कि ये कितने प्रभु हैं? किसके पुत्र हैं तथा कौन इनकी माता जी हैं?

अन्य प्रमाण :- श्री देवी पुराण (सचित्र मोटा टाईप केवल हिन्दी, गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित) के तीसरे स्कंद में पंष्ठ 123 पर लिखा है कि तुम शुद्ध स्वरूपा हो, यह सारा संसार आप से ही उद्भासित हो रहा है। मैं (विष्णु), ब्रह्मा और शंकर आपकी कंप्या से विद्यमान हैं। हमारा तो आविर्भाव अर्थात् जन्म तथा तिरोभाव अर्थात् मंत्यु हुआ करता है। आप प्रकंति देवी हैं।

शंकर भगवान बोले कि हे देवी! यदि विष्णु के पश्चात् उत्पन्न होने वाले ब्रह्मा आप से उत्पन्न हुए हैं तो क्या मैं तमोगुणी लीला करने वाला शंकर क्या आपकी संतान नहीं हुआ अर्थात् मुझे भी उत्पन्न करने वाली तुम ही हो। हम तो केवल नियमित कार्य ही कर सकते हैं अर्थात् जिसके भाग्य में जो लिखा है, हम वही प्रदान कर सकते हैं। न अत्यधिक कर सकते, न कम कर सकते।

पाठकजनो! इस श्री देवी पुराण के उल्लेख से स्पष्ट हुआ कि श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शंकर जी नाशवान हैं। इनकी माता जी का नाम श्री देवी दुर्गा है। अधिक जानकारी आप ''संष्टि रचना'' अध्याय से ग्रहण करेंगे जो इसी पुस्तक में पीछे लिखी है। ये प्रधान देवता हैं। अन्य इनसे निम्न स्तर के देव हैं।

ये सर्व जन्मते-मरते हैं, अविनाशी राम नहीं हैं, अविनाशी परमात्मा नहीं हैं।

श्रीमद् भगवत गीता अध्याय 10 श्लोक 2 में लिखा है कि गीता ज्ञान दाता काल ब्रह्म ने कहा है कि ‘‘मेरी उत्पत्ति को न तो देवता जानते और न महर्षिजन जानते क्योंकि इन सबका आदि कारण मैं ही हूँ अर्थात् ये सर्व मेरे से उत्पन्न हुए हैं।‘‘

गीता अध्याय 4 श्लोक 5 में गीता ज्ञान बोलने वाले ने कहा है कि हे अर्जुन! तेरे और मेरे बहुत जन्म हो चुके हैं, तू नहीं जानता, मैं जानता हूँ। गीता अध्याय 2 श्लोक 12 में भी स्पष्ट है कि तू-मैं तथा सब राजा-सेना पहले भी जन्में थे, आगे भी जन्मेंगे।

गीता अध्याय 14 श्लोक 3 में गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि हे अर्जुन! मेरी प्रकृति अर्थात् दुर्गा तो गर्भ धारण करती है, मैं उसके गर्भ में बीज स्थापित करता हूँ जिससे सर्व प्राणियों की उत्पत्ति होती है।

गीता अध्याय 14 श्लोक 4 में गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि हे अर्जुन! नाना प्रकार की सब योनियों में जितने शरीरधारी मूर्तियाँ उत्पन्न होती हैं (महत्) प्रकृति तो उन सबकी गर्भ धारण करने वाली माता है। (अहम् ब्रह्म) मैं ब्रह्म बीज स्थापित करने वाला पिता हूँ।

गीता अध्याय 14 श्लोक 5 :- गीता ज्ञान दाता ने स्पष्ट किया है कि हे अर्जुन! सत्वगुण श्री विष्णु जी, रजगुण श्री ब्रह्मा जी तथा तमगुण श्री शिव जी, ये प्रकृति अर्थात् दुर्गा देवी से उत्पन्न तीनों देवता अर्थात् तीनों गुण अविनाशी जीवात्मा को कर्मों के अनुसार शरीर में बाँधते हैं।

उपरोक्त प्रमाणों से स्पष्ट हुआ कि उपरोक्त देवता नाशवान हैं तथा काल ब्रह्म की संतान हैं।

प्रसंग चल रहा है कि वाणी सँख्या 3 का सरलार्थ :-

इन्द्र, कुबेर, ईश अर्थात् ब्रह्मा, विष्णु, शिव तक की पदवी प्राप्त करके तथा वरूण, धर्मराय की पदवी तथा श्री विष्णुनाथ के लोक को प्राप्त करके भी जन्म-मरण के चक्र में रहते हैं।

❖ मार्कण्डेय ऋषि जी ब्रह्म साधना कर रहे थे। उसी को सर्वोत्तम मान रहे थे। इसीलिए इन्द्र को कह रहे थे कि आ तेरे को ब्रह्म साधना का ज्ञान कराऊँ। ब्रह्म लोक की तुलना में स्वर्ग का राज्य हलवे की तुलना में जैसे कौवे की बीट है।

पाठकजनो! आप जी ने ब्रह्म साधना करने वाले श्री चुणक ऋषि, श्री दुर्वासा ऋषि तथा कपिल मुनि जिन्होंने ब्रह्म साधना की थी, उनकी साधना को गीता ज्ञान दाता ने गीता अध्याय 7 श्लोक 18 में अनुत्तम अर्थात् घटिया बताया है। उसी श्रेणी की साधना मार्कण्डेय ऋषि जी की थी। जिसको अति उत्तम मानकर कर रहे थे तथा इन्द्र जी को भी राय दे रहे थे कि ब्रह्म साधना कर ले।

सूक्ष्मवेद में कहा है कि :-

औरों पंथ बतावहीं, आप न जाने राह।।1

मोती मुक्ता दर्शत नाहीं, यह जग है सब अन्ध रे।

दिखत के तो नैन चिसम हैं, फिरा मोतिया बिन्द रे।।2
वेद पढ़ें पर भेद ना जानें, बांचे पुराण अठारा।
पत्थर की पूजा करें, भूले सिरजनहारा।।3

वाणी नं. 1 का भावार्थ :- अन्य को मार्गदर्शन करते हैं, स्वयं भक्ति मार्ग का ज्ञान नहीं।

वाणी नं. 2 का भावार्थ :- तत्वदर्शी संत के अभाव के कारण मोती मुक्ता यानि मोक्ष रूपी मोती अर्थात् मोक्ष मंत्र दिखाई नहीं देता। यह सर्व संसार अध्यात्म ज्ञान नेत्रहीन अन्धा है। जिस किसी को मोतियाबिन्द जो एक प्रकार का नेत्ररोग है जिसमें आँखें स्वस्थ दिखाई देती हैं, परंतु उस रोगग्रस्त व्यक्ति को कुछ दिखाई नहीं देता। यह उदाहरण देकर बताया है कि फर्राटेदार संस्कृत भाषा बोलते हैं। लगते हैं महाविद्वान हैं, परंतु सद्ग्रन्थों के गूढ़ रहस्यों को नहीं जानते। इनको अज्ञान रूपी मोतियाबिन्द हुआ है।

वाणी नं. 3 का भावार्थ :- वेदों को पढ़कर कंठस्थ करने वाले वेदों के गूढ़ रहस्यों को न समझकर उनके विरूद्ध साधना करते-कराते हैं। वेदों में पत्थर की मूर्ति की पूजा का कहीं उल्लेख नहीं है, वे वेदों के विद्वान कहलाने वाले पत्थर पूजा करते तथा कराते हैं। वेदों में वर्णित सिरजनहार को भुला दिया है।

श्रीमद् भगवत गीता अध्याय 4 श्लोक 25 से 29 तक यही बताया है कि जो साधक जैसी भी साधना करता है, उसे उत्तम मानकर कर रहा होता है, सर्व साधक अपनी-अपनी भक्ति को पापनाश करने वाली जानते हैं।

गीता अध्याय 4 श्लोक 32 में स्पष्ट किया है कि यज्ञों अर्थात् धार्मिक अनुष्ठानों का ज्ञान स्वयं सच्चिदानन्द घन ब्रह्म ने अपने मुख कमल से बोली वाणी में विस्तार के साथ कहा है, वह तत्वज्ञान है। जिसे जानकर साधक सर्व पापों से मुक्त हो जाता है।

गीता अध्याय 4 श्लोक 34 में स्पष्ट किया है कि उस तत्वज्ञान को तत्वदर्शी संत जानते हैं, उनको दण्डवत प्रणाम करने से, नम्रतापूर्वक प्रश्न करने से वे तत्वज्ञान को जानने वाले ज्ञानी महात्मा तुझे तत्वज्ञान का उपदेश करेंगे।

वह तत्वज्ञान जिसे ऊपर की वाणी में निर्गुण रासा कहा है, नहीं मिलने से सर्व साधक जन्म-मरण के चक्र में रह गए।

मार्कण्डेय ऋषि ब्रह्म साधना कर रहा था। श्रीमद् भगवत गीता अध्याय 8 श्लोक 16 में कहा है कि ब्रह्मलोक में गए साधक भी पुनरावर्ती अर्थात् बार-बार जन्म-मरण के चक्र में ही रहते हैं।

पूर्व शब्द की वाणी सँख्या 4 :- असंख जन्म तोहे मरतां होगे, जीवित क्यों न मरै रे।
द्वादश मध्य महल मठ बोरे, बहुर न देह धरै रे।।

सरलार्थ :- हे मानव! तू अनन्त बार जन्म और मर चुका है। सत्य साधना कर तथा जीवित मर। जीवित मरने का तात्पर्य है कि भक्त को ज्ञान हो जाता है कि इस संसार की प्रत्येक वस्तु अस्थाई है। यह शरीर भी स्थाई नहीं है। जन्म-मृत्यु

का बखेड़ा भी भयँकर है। इस संसार में दुःख के अतिरिक्त कुछ नहीं है। मानव शरीर प्राप्त करके मोक्ष प्राप्त नहीं किया तो पशु जैसा जीवन जीया। जैसे गीता अध्याय 7 श्लोक 29 में कहा है कि जो साधक केवल जरा अर्थात् वृद्धावस्था के कष्ट तथा मरण के दुःख से ही मुक्ति के लिए जो साधनारत हैं, वे तत् ब्रह्म को तथा सम्पूर्ण आध्यात्म को तथा कर्मों को जानते हैं।

इसी प्रकार तत्वज्ञान होने के पश्चात् मानव को अनावश्यक वस्तुओं की इच्छा नहीं होती, तम्बाकू, शराब-माँस सेवन नहीं करता। नाच-गाना मूर्खों का काम लगता है। जैसा भोजन मिल जाए, उसी में संतुष्ट रहता है।

❖ आत्म कल्याण कराने के लिए साधक विचार करता है कि यदि मैं सत्संग में नहीं आऊँगा तो गुरू जी के दर्शन नहीं कर पाऊँगा। सत्संग विचार न सुनने से मन फिर से विकार करने लगेगा। वह साधक सर्व कार्य छोड़कर सत्संग सुनने के लिए चल पड़ता है। वह विचार करता है कि हम प्रतिदिन सुनते हैं तथा देखते हैं कि छोटे-छोटे बच्चों को छोड़कर पिता संसार से चला जाता है, मर जाता है। बड़े-बड़े पूंजीपति दुर्घटना में मर जाते हैं। सर्व सम्पत्ति जो सारे जीवन में जोड़ी थी, उसे छोड़कर चले जाते हैं, दोबारा उस सम्पत्ति को सँभालने नहीं आते। मृत्यु से पहले एक दिन भी कार्य छोड़ने का दिल नहीं करता था, अब परमानैन्ट कार्य छूट गया।

''आज भाई को फुरसत''

एक भक्त सत्संग में जाने लगा। दीक्षा ले ली, ज्ञान सुना और भक्ति करने लगा। अपने मित्र से भी सत्संग में चलने तथा भक्ति करने के लिए प्रार्थना की। परंतु दोस्त नहीं माना। कह देता कि कार्य से फुर्सत (खाली समय) नहीं है। छोटे-छोटे बच्चे हैं। इनका पालन-पोषण भी करना है। काम छोड़कर सत्संग में जाने लगा तो सारा धँधा चौपट हो जाएगा।

वह सत्संग में जाने वाला भक्त जब भी सत्संग में चलने के लिए अपने मित्र से कहता तो वह यही कहता कि अभी काम से फुर्सत नहीं है। एक वर्ष पश्चात् उस मित्र की मृत्यु हो गई। उसकी अर्थी उठाकर कुल के लोग तथा नगरवासी चले, साथ-साथ सैंकड़ों नगर-मौहल्ले के व्यक्ति भी साथ-साथ चले। सब बोल रहे थे कि राम नाम सत् है, सत् बोले गत् है।

भक्त कह रहा था कि राम नाम तो सत् है परंतु आज भाई को फुर्सत है। नगरवासी कह रहे थे कि सत् बोले गत् है, भक्त कह रहा था कि आज भाई को फुर्सत है। अन्य व्यक्ति उस भक्त से कहने लगे कि ऐसे मत बोल, इसके घर वाले बुरा मानेंगे। भक्त ने कहा कि मैं तो ऐसे ही बोलूँगा। मैंने इस मूर्ख से हाथ जोड़कर प्रार्थना की थी कि सत्संग में चल, कुछ भक्ति कर ले। यह कहता था कि अभी फुर्सत अर्थात् खाली समय नहीं है। आज इसको परमानैंट फुर्सत है। छोटे-छोटे बच्चे भी छोड़ चला जिनके पालन-पोषण का बहाना करके परमात्मा से दूर रहा। भक्ति

करता तो खाली हाथ नहीं जाता। कुछ भक्ति धन लेकर जाता। बच्चों का पालन-पोषण तो परमात्मा करता है। भक्ति करने से साधक की आयु भी परमात्मा बढ़ा देता है। भक्तजन ऐसा विचार करके भक्ति करते हैं, कार्य त्यागकर सत्संग सुनने जाते हैं।

भक्त विचार करते हैं कि परमात्मा न करे, हमारी मत्यु हो जाए। फिर हमारे कार्य कौन करेगा? हम यह मान लेते हैं कि हमारी मत्यु हो गई। हम तीन दिन के लिए मर गए, यह विचार करके सत्संग में चलें, अपने को मत मान लें और सत्संग में चले जायें। वैसे तो परमात्मा के भक्तों का कार्य बिगड़ता नहीं, फिर भी हम मान लेते हैं कि हमारी गैर-हाजिरी में कुछ कार्य खराब हो गया तो तीन दिन बाद जाकर ठीक कर लेंगे। यदि वास्तव में टिकट कट गई अर्थात् मत्यु हो गई तो परमानैंट कार्य बिगड़ गया। फिर कभी ठीक करने नहीं आ सकते। इस स्थिति को जीवित मरना कहते हैं।

वाणी का शेष सरलार्थ :- द्वादश मध्य महल मठ बौरे, बहुर न देहि धरै रे।

सरलार्थ :- श्रीमद् भगवत गीता अध्याय 15 श्लोक 4 में कहा है कि तत्वज्ञान की प्राप्ति के पश्चात् परमेश्वर के उस परमपद की खोज करनी चाहिए जहाँ जाने के पश्चात् साधक लौटकर संसार में कभी नहीं आते अर्थात् उनका पुनर्जन्म नहीं होता। वे फिर देह धारण नहीं करते। सूक्ष्मवेद की यह वाणी यही स्पष्ट कर रही है कि वह परम धाम द्वादश अर्थात् 12वें द्वार को पार करके उस परम धाम में जाया जाता है। आज तक सर्व ऋषि-महर्षि, संत, मंडलेश्वर केवल 10 द्वार बताया करते। परंतु परमेश्वर कबीर जी ने अपने स्थान को प्राप्त कराने का सत्यमार्ग, सत्य स्थान स्वयं ही बताया है। उन्होंने 12वां द्वार बताया है। इससे भी स्पष्ट हुआ कि आज तक (सन् 2012 तक) पूर्व के सर्व ऋषियों, संतों, पंथों की भक्ति काल ब्रह्म तक की थी। जिस कारण से जन्म-मत्यु का चक्र चलता रहा।

वाणी सँख्या 5 :- दोजख बहिश्त सभी तै देखे, राजपाट के रसिया।
तीन लोक से तप्त नाहीं, यह मन भोगी खसिया।।

सरलार्थ :- तत्वज्ञान के अभाव में पूर्णमोक्ष का मार्ग न मिलने के कारण कभी दोजख अर्थात् नरक में गए, कभी बहिश्त अर्थात् स्वर्ग में गए,कभी राजा बनकर आनन्द लिया। यदि इस मानव को तीन लोक का राज्य भी दे दें तो भी तप्ति नहीं होती।

उदाहरण :- यदि कोई गाँव का सरपंच बन जाता है तो वह इच्छा करता है कि विधायक बने तो मौज होवे। विधायक इच्छा करता है कि मन्त्री बनूं तो बात कुछ अलग हो जाएगी। मंत्री बनकर इच्छा करता है कि मुख्यमंत्री बनूं तो पूरी चौधर हो। आनन्द ही न्यारा होगा। सारे प्रान्त पर कमांड चलेगी। मुख्यमंत्री बनने के पश्चात् प्रबल इच्छा होती है कि प्रधानमंत्री बनूं तो जीवन सार्थक हो। तब तक जीवन लीला समाप्त हो जाएगी। फिर गधा बनकर कुम्हार के लठ (डण्डे) खा रहा होगा। इसलिए तत्वज्ञान में समझाया है कि काल ब्रह्म द्वारा बनाई स्वर्ग-नरक तथा राजपाट प्राप्ति की भूल-भुलईया में सारा जीवन व्यर्थ कर दिया। कहीं संतोष नहीं

हुआ, यह मन ऐसा खुसरा (हिजड़ा) है।

एक अब्राहिम सुल्तान अधम नाम का बलख शहर का राजा था। वह पूर्व जन्म का बहुत अच्छा भक्त था। परंतु वर्तमान के ऐश्वर्य में मस्त होकर परमात्मा को भूल चुका था। राज के ठाठ में तथा महलों में आनंदमान बैठा था। एक दिन परमात्मा सत्यलोक से आकर एक यात्री का रूप बनाकर राजा के महल में गए तथा कहा कि हे सराय वाले! एक कमरा किराए पर दे, पैसे बता, रात्रि बितानी है। राजा ने कहा हे भोले यात्री! आपको यह सराय (धर्मशाला) दिखाई देती है। मैं राजा हूँ और यह मेरा महल है। यात्री रूप में परमात्मा ने पूछा कि आप से पहले इस महल में कौन रहते थे? राजा ने कहा कि मेरे पिता, दादा-परदादा रहते थे। यात्री रूप में परमेश्वर ने पूछा कि आप कितने दिन रहोगे इस महल में? राजा ने कहा एक दिन मैं भी चला जाऊँगा इन्हें छोड़कर। परमेश्वर बोले कि यह सराय नहीं तो क्या है? यह सराय है। जैसे तेरे बाप-दादा गए, ऐसे ही तू चला जाएगा, इसलिए मैंने महलों को धर्मशाला बताया है। राजा को वास्तविकता का ज्ञान हुआ। संसार की इच्छा त्यागकर आत्म-कल्याण करवाया। सदा रहने वाला सुख तथा अमर जीवन प्राप्त करने के लिए दीक्षा ली और आजीवन भक्ति की, अपना मानव जीवन सफल किया।

वाणी सँख्या 6 :- सतगुरू मिलैं तो इच्छा मेटैं, पद मिल पदे समाना।
चल हंसा उस लोक पठाऊँ, जो आदि अमर अस्थाना।।

सरलार्थ :- यदि तत्वदर्शी संत सतगुरू मिलें तो उपरोक्त ज्ञान बताकर काल ब्रह्म के लोक की सर्व वस्तुओं से तथा पदों से इच्छा समाप्त करके ''पद मिल पदे समाना'' इसमें एक 'पद' का अर्थ है पद्धति अर्थात् शास्त्रविधि अनुसार साधना। दूसरे 'पद' का अर्थ है 'परम पद' यानि 'पदवी'। सतगुरू शास्त्रविधि अनुसार पद्यति बताकर परमेश्वर के उस परम पद की प्राप्ति करवा देता है जहाँ जाने के पश्चात् साधक फिर लौटकर संसार में कभी नहीं आते। हे भक्त! चल तुझे उस लोक में भेज दूँ जो आदि अमर अस्थान है अर्थात् गीता अध्याय 18 श्लोक 62 में वर्णित सनातन परम धाम है जहाँ पर परम शांति है।

वाणी सँख्या 7 :- चार मुक्ति जहाँ चम्पी करती, माया हो रही दासी।
दास गरीब अभय पद परसै, मिले राम अविनाशी।।

सरलार्थ :- उस सनातन परम धाम में परम शान्ति तथा अत्यधिक सुख है। काल ब्रह्म के लोक में चार मुक्ति मानी जाती हैं, जिनको प्राप्त करके साधक अपने को धन्य मानता है। परंतु वे स्थाई नहीं हैं। कुछ समय उपरांत पुण्य समाप्त होते ही फिर 84 लाख प्रकार की योनियों में कष्ट उठाता है। परंतु उस सत्यलोक में चारों मुक्ति वाला सुख सदा बना रहेगा। माया आपकी नौकरानी बनकर रहेगी।

संत गरीबदास जी ने बताया है कि अमर लोक में जाने के पश्चात् प्राणी निर्भय हो जाता है और उस सनातन परम धाम में वह अविनाशी राम अर्थात् परमेश्वर मिलेगा। इसलिए पूर्ण मोक्ष के लिए शास्त्रानुकूल भक्ति करनी चाहिए

जिससे उस भगवान तक जाया जा सकता है।

उपरोक्त वाणी तथा पूर्वोक्त विवरण से स्पष्ट हुआ कि श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा शिव जी और इनके पिता काल ब्रह्म अर्थात् क्षर पुरूष व अक्षर पुरूष सर्व राम अर्थात् प्रभु नाशवान हैं। केवल परम अक्षर ब्रह्म ही अविनाशी राम अर्थात् प्रभु है। इस परमेश्वर की भक्ति से ही परमशांति तथा सनातन परम धाम अर्थात् पूर्ण मोक्ष प्राप्त होगा जहाँ पर चार मुक्ति का सुख सदा रहेगा। माया अर्थात् सर्व सुख-सुविधाऐं साधक के नौकर की तरह हाजिर रहती हैं।

सूक्ष्मवेद में कहा है कि:-

कबीर, माया दासी संत की, उभय दे आशीष।
विलसी और लातों छड़ी, सुमर–सुमर जगदीश।।

भावार्थ :- सर्व सुख-सुविधाऐं धन से होती हैं। वह धन शास्त्रविधि अनुसार भक्ति करने वाले संत-भक्त की भक्ति का स्वतः होने वाला, जिसको प्राप्त करना उद्देश्य नहीं, वह फिर भी अवश्य प्राप्त होता है, By Product होता है। जैसे जिसने गेहूँ की फसल बोई तो उसका उद्देश्य गेहूँ का अन्न प्राप्त करना है। परंतु भुष अर्थात् चारा भी अवश्य प्राप्त होता है। चारा, तूड़ा गेहूँ के अन्न का By Product है। इसी प्रकार सत्य साधना करने वाले को अपने आप धन माया मिलती है। साधक उसको भोगता है, वह चरणों में पड़ी रहती है अर्थात् धन का अभाव नहीं रहता अपितु आवश्यकता से अधिक प्राप्त रहती है। परमेश्वर की भक्ति करके माया का भी आनन्द भक्त, संत प्राप्त करते हैं तथा पूर्ण मोक्ष भी प्राप्त करते हैं।

❖ उसी प्रसंग को आगे बढ़ाते हैं कि मानव शरीर प्राप्त प्राणी को अपना उद्देश्य याद रखना चाहिए। भक्ति करके अपना कल्याण करवाना चाहिए। सूक्ष्म वेद में लिखा है कि :- (राग आसावरी शब्द नं. 71)

यह सौदा फिर नाहीं सन्तो, यह सौदा फिर नाहीं।
लोहे जैसा ताव जात है, काया देह सराही।।
तीन लोक और भुवन चतुर्दश, सब जग सौदे आहीं।
दुगने–तिगुने किए चौगुने, किन्हूँ मूल गवाहीं।।

भावार्थ :- जैसे दो व्यापारी (Businessmen) दूर किसी शहर में सौदा करने गए और 5-5 लाख रूपये मूलधन ले गए। एक ने अपने धन का सदुपयोग किया। धर्मशाला या होटल में किराए पर कमरा लिया। सामान खरीदा और महंगे मोल बेचा। जिससे उसने 20 लाख रूपये और कमा लिए। दो वर्ष में वापिस अपने घर आ गया। सब जगह प्रसंशा हुई और धनी बन गया।

दूसरे ने भी होटल या धर्मशाला में कमरा किराए पर लिया। शराब पीने लगा, वेश्याओं के नत्य देखता, खाता और सो जाता। उसने अपना मूल धन 5 लाख रूपये भी नष्ट कर दिया, वापिस घर आया तो ऋण (कर्जा) हो गया। जिससे 5 लाख रूपये उधार लेकर गया था, उसने अपने रूपये मांगे। न देने पर उसको अपना मजदूर रखा, उससे अपना 5 लाख का धन पूरा किया। उपरोक्त वाणी का

यही तात्पर्य है कि तीन लोक (स्वर्ग लोक, पाताल लोक तथा पथ्वी लोक) में जितने भी प्राणी हैं, वे सब अपना राम-नाम का सौदा करने आए हैं। किसी ने तो दुगना, तीन गुना, चार गुना धन कमा लिया अर्थात् पूर्ण सन्त से दीक्षा लेकर मनुष्य जीवन के श्वांसों की पूँजी जो मूल धन है, उसको सत्य भक्ति करके बढ़ाया। अन्य व्यक्ति जिसने भक्ति नहीं की, शास्त्रविधि त्यागकर मनमाना आचरण किया या अन्अधिकारी गुरू से दीक्षा लेकर भक्ति की, उसको कोई लाभ नहीं मिलता। यह पवित्र गीता अध्याय 16 श्लोक 23-24 में प्रमाण है। जिस कारण से उसने भी अपना मनुष्य जीवन के श्वांस रूपी मूलधन को सत्य भक्ति बिना नष्ट कर लिया।

❖ भक्ति न करने से हानि का अन्य विवरण :-

यह दम टूटै पिण्डा फूटै, हो लेखा दरगाह मांही।
उस दरगाह में मार पड़ैगी, जम पकड़ेंगे बांही।।
नर–नारायण देहि पाय कर, फेर चौरासी जांही।
उस दिन की मोहे डरनी लागे, लज्जा रह के नांही।।
जा सतगुरू की मैं बलिहारी, जो जामण मरण मिटाहीं।
कुल परिवार तेरा कुटम्ब कबीला, मसलित एक ठहराहीं।
बाँध पींजरी आगै धर लिया, मरघट कूँ ले जाहीं।।
अग्नि लगा दिया जब लम्बा, फूंक दिया उस ठाहीं।
पुराण उठा फिर पण्डित आए, पीछे गरूड पढाहीं।।

भावार्थ :- यह दम अर्थात् श्वांस जिस दिन समाप्त हो जाऐंगे। उसी दिन यह शरीर रूपी पिण्ड छूट जाएगा। फिर परमात्मा के दरबार में पाप-पुण्यों का हिसाब होगा। भक्ति न करने वाले या शास्त्रविरूद्ध भक्ति करने वाले को यम के दूत भुजा पकड़कर ले जाऐंगे, चाहे कोई किसी देश का राजा भी क्यों न हो, उसकी पिटाई की जाएगी। सन्त गरीबदास को परमेश्वर कबीर जी मिले थे। उनकी आत्मा को ऊपर लेकर गए थे। सर्व ब्रह्माण्डों को दिखाकर सम्पूर्ण अध्यात्म ज्ञान समझाकर वापिस शरीर में छोड़ा था। सन्त गरीब दास जी आँखों देखा हाल बयान कर रहे हैं कि :- हे मानव! आपको नर शरीर मिला है जो नारायण अर्थात् परमात्मा के शरीर जैसा अर्थात् उसी का स्वरूप है। अन्य प्राणियों को यह सुन्दर शरीर नहीं मिला। इसके मिलने के पश्चात् प्राणी को आजीवन भगवान की भक्ति करनी चाहिए। ऐसा परमात्मा स्वरूप शरीर प्राप्त करके सत्य भक्ति न करने के कारण फिर चौरासी लाख वाले चक्र में जा रहा है, धिक्कार है तेरे मानव जीवन को! मुझे तो उस दिन की चिन्ता बनी है, डर लगता है कि कहीं भक्ति कम बने और उस परमात्मा के दरबार में पता नहीं इज्जत रहेगी या नहीं। मैं तो भक्ति करते-करते भी डरता हूँ कि कहीं भक्ति कम न रह जाए। आप तो भक्ति ही नहीं करते। यदि करते हो तो शास्त्रविरूद्ध कर रहे हो। तुम्हारा तो बुरा हाल होगा और मैं तो राय देता हूँ कि ऐसा सतगुरू चुनो जो जन्म-मरण के दीर्घ रोग को मिटा दे, समाप्त कर दे। जो सत्य भक्ति नहीं करते, उनका क्या हाल होता है मत्यु के पश्चात्।

आस-पास के कुल के लोग इकट्ठे हो जाते हैं। फिर सबकी एक ही मसलत अर्थात् राय बनती है कि इसको उठाओ। (उठाकर शमशान घाट पर ले जाकर फूँक देते हैं, लाठी या जैली की खोद (ठोकर) मार-मारकर छाती तोड़ते हैं। सम्पूर्ण शरीर को जला देते हैं। जो कुछ भी जेब में होता है, उसको निकाल लेते हैं। फिर शास्त्रविधि त्यागकर मनमाना आचरण कराने और करने वाले उस संसार से चले गए जीव के कल्याण के लिए गुरू गरूड पुराण का पाठ करते हैं।)

तत्वज्ञान (सूक्ष्मवेद) में कहा है कि अपना मानव जीवन पूरा करके वह जीव चला गया। परमात्मा के दरबार में उसका हिसाब होगा। वह कर्मानुसार कहीं गधा-कुत्ता बनने की पंक्ति में खड़ा होगा। मत्यु के पश्चात् गरूड पुराण का पाठ उसके क्या काम आएगा। यह व्यर्थ का शास्त्रविरूद्ध क्रियाक्रम है। उस प्राणी का मनुष्य शरीर रहते उसको भगवान के संविधान का ज्ञान करना चाहिए था। जिससे उसको अच्छे-बुरे का ज्ञान होता और वह अपना मानव जीवन सफल करता।

प्रेत शिला पर जाय विराजे, फिर पितरों पिण्ड भराहीं।
बहुर श्राद्ध खान कूं आया, काग भये कलि माहीं।।

भावार्थ है कि मत्यु उपरान्त उस जीव के कल्याण अर्थात् गति कराने के लिए की जाने वाली शास्त्रविरूद्ध क्रियाऐं व्यर्थ हैं। जैसे गरूड पुराण का पाठ करवाया। उस मरने वाले की गति अर्थात् मोक्ष के लिए। फिर अस्थियाँ गंगा में प्रवाहित की उसकी गति (मोक्ष) करवाने के लिए। फिर तेहरवीं या सतरहवीं को हवन व भण्डारा (लंगर) किया उसकी गति कराने के लिए। पहले प्रत्येक महीने एक वर्ष तक महीना क्रिया करते थे, उसकी गति कराने के लिए, फिर छठे महीने छःमाही क्रिया करते थे, उसकी गति कराने के लिए, फिर वर्षी क्रिया करते थे उसकी गति कराने के लिए, फिर उसकी पिण्डोदक क्रिया कराते हैं, उसकी गति कराने के लिए श्राद्ध निकालते हैं अर्थात् श्राद्ध क्रिया कराते हैं, श्राद्ध वाले दिन पुरोहित भोजन स्वयं बनाता है और कहता है कि कुछ भोजन मकान की छत पर रखो, कहीं आपका पिता कौआ (काग) न बन गया हो। जब कौवा भोजन खा जाता तो कहते हैं कि तेरे पिता या माता आदि जो मत्यु को प्राप्त हो चुका है जिसके हेतु यह सर्व क्रिया की गई है और यह श्राद्ध किया गया है। वह कौवा बना है, इसका श्राद्ध सफल हो गया। इस उपरोक्त विवरण से स्पष्ट हुआ कि वह व्यक्ति जिसका उपरोक्त क्रियाकर्म किया था, वह कौवा बन चुका है।

श्राद्ध करने वाले पुरोहित कहते हैं कि श्राद्ध करने से वह जीव एक वर्ष तक तप्त हो जाता है। फिर एक वर्ष में श्राद्ध फिर करना है।

विचार करें :- जीवित व्यक्ति दिन में तीन बार भोजन करता था। अब एक दिन भोजन करने से एक वर्ष तक कैसे तप्त हो सकता है? यदि प्रतिदिन छत पर भोजन रखा जाए तो वह कौवा प्रतिदिन ही भोजन खाएगा।

दूसरी बात :- मत्यु के पश्चात् की गई सर्व क्रियाऐं गति (मोक्ष) कराने के उद्देश्य से की गई थी। उन ज्ञानहीन गुरूओं ने अन्त में कौवा बनवाकर छोड़ा। वह

प्रेत शिला पर प्रेत योनि भोग रहा है। पीछे से गुरू और कौवा मौज से भोजन कर रहा है। पिण्ड भराने का लाभ बताया है कि प्रेत योनि छूट जाती है। मान लें प्रेत योनि छूट गई। फिर वह गधा या बैल बन गया तो क्या गति कराई?

नर से फिर पशुवा कीजै, गधा, बैल बनाई।
छप्पन भोग कहाँ मन बौरे, कहीं कुरड़ी चरने जाई।।

मनुष्य जीवन में हम कितने अच्छे अर्थात् 56 प्रकार के भोजन खाते हैं। भक्ति न करने से या शास्त्रविरूद्ध साधना करने से गधा बनेगा, फिर ये छप्पन प्रकार के भोजन कहाँ प्राप्त होंगे, कहीं कुरड़ियों पर पेट भरने के लिए घास खाने जाएगा। इसी प्रकार बैल आदि-आदि पशुओं की योनियों में कष्ट पर कष्ट उठाएगा।

जै सतगुरू की संगत करते, सकल कर्म कटि जाईं।
अमर पुरि पर आसन होते, जहाँ धूप न छाँइ।।

सन्त गरीब दास ने परमेश्वर कबीर जी से प्राप्त सूक्ष्मवेद में आगे कहा है कि यदि सतगुरू (तत्वदर्शी सन्त) की शरण में जाकर दीक्षा लेते तो उपरोक्त सर्व कर्मों के कष्ट कट जाते अर्थात् न प्रेत बनते, न गधा, न बैल बनते। अमरपुरी पर आसन होता अर्थात् गीता अध्याय 18 श्लोक 62 तथा अध्याय 15 श्लोक 4 में वर्णित सनातन परम धाम प्राप्त होता, परम शान्ति प्राप्त हो जाती। फिर कभी लौटकर संसार में नहीं आते अर्थात् जन्म-मरण का कष्टदायक चक्र सदा के लिए समाप्त हो जाता। उस अमर लोक (सत्यलोक) में धूप-छाया नहीं है अर्थात् जैसे धूप दुःखदाई हुई तो छाया की आवश्यकता पड़ी। उस सत्यलोक में केवल सुख है, दुःख नहीं है।

सुरत निरत मन पवन पयाना, शब्दै शब्द समाई।
गरीब दास गलतान महल में, मिले कबीर गोसांई।।

सन्त गरीबदास जी ने कहा है कि मुझे कबीर परमेश्वर मिले हैं। मुझे सुरत-निरत, मन तथा श्वांस पर ध्यान रखकर नाम का स्मरण करने की विधि बताई। जिस साधना से सतलोक में हो रही शब्द धुनि को पकड़कर सतलोक में चला गया। जिस कारण से सत्यलोक (शाश्वत स्थान) में अपने महल में आनन्द से रहता हूँ क्योंकि सत्य साधना जो परमेश्वर कबीर जी ने सन्त गरीब दास को जो बताई थी और उस स्थान (सत्यलोक) को गरीब दास जी परमेश्वर के साथ जाकर देखकर आए थे। जिस कारण से विश्वास के साथ कहा कि मैं जो शास्त्रानुकूल साधना कर रहा हूँ, यह परमात्मा ने बताई है। जिस शब्द अर्थात् नाम का जाप करने से मैं अवश्य पूर्ण मोक्ष प्राप्त करूँगा, इसमें कोई संशय नहीं रहा। जिस कारण से मैं (गरीब दास) सत्यलोक में बने अपने महल (विशाल घर) में जाऊँगा, जिस कारण से निश्चिन्त तथा गलतान (महल प्राप्ति की खुशी में मस्त) हूँ क्योंकि मुझे पूर्ण गुरू स्वयं परमात्मा कबीर जी अपने लोक से आकर मिले हैं।

गरीब, अजब नगर में ले गए, हमको सतगुरू आन।
झिलके बिम्ब अगाध गति, सूते चादर तान।।

भावार्थ :- गरीबदास जी ने बताया है कि सतगुरू अर्थात् स्वयं परमेश्वर

कबीर जी अपने निज धाम सत्यलोक से आकर मुझे साथ लेकर अजब (अद्भुत) नगर में अर्थात् सत्यलोक में बने शहर में ले गए। उस स्थान को आँखों देखकर मैं परमात्मा के बताए भक्ति मार्ग पर चल रहा हूँ। सत्यनाम, सारनाम की साधना कर रहा हूँ। इसलिए चादर तानकर सो रहा हूँ अर्थात् मेरे मोक्ष में कोई संदेह नहीं है।

चादर तानकर सोना = निश्चिंत होकर रहना। जिसका कोई कार्य शेष न हो और कोई चादर ओढ़कर सो रहा हो तो गाँव में कहते है कि अच्छा चादर तानकर सो रहा है। क्या कोई कार्य नहीं है? इसी प्रकार गरीबदास जी ने कहा है कि अब बड़े-बड़े महल बनाना व्यर्थ लग रहा है। अब तो उस सत्यलोक में जाऐंगे। जहाँ बने बनाए विशाल भवन हैं, जिनको हम छोड़कर गलती करके यहाँ काल के मत्यु लोक में आ गए हैं। अब दॉव लगा है। सत्य भक्ति मिली है तथा तत्वज्ञान मिला है।

सज्जनों! वह सत्य भक्ति वर्तमान में मेरे (रामपाल दास के) पास है। जिससे इस दुःखों के घर संसार से पार होकर वह परम शान्ति तथा शाश्वत स्थान (सनातन परम धाम) प्राप्त हो जाता है जिसके विषय में गीता अध्याय 18 श्लोक 62 में कहा है तथा गीता अध्याय 15 श्लोक 4 में कहा है कि तत्वदर्शी सन्त से तत्वज्ञान प्राप्त करके, उस तत्वज्ञान से अज्ञान का नाश करके, उसके पश्चात् परमेश्वर के उस परमपद की खोज करनी चाहिए। जहाँ जाने के पश्चात् साधक फिर लौटकर संसार में कभी नहीं आता।

''भक्ति न करने से बहुत दुःख होगा''

सूक्ष्मवेद में कहा है :-

यह संसार समझदा नाहीं, कहंदा शाम दुपहरे नूँ।
गरीबदास यह वक्त जात है, रोवोगे इस पहरे नूँ।।

आध्यात्मिक ज्ञान के अभाव में परमात्मा के विधान से अपरिचित होने के कारण यह प्राणी इस दुःखों के घर संसार में महान कष्ट झेल रहा है और इसी को सुख स्थान मान रहा है।

जैसे एक व्यक्ति जून के महीने में दिन के 12 या 1 बजे, हरियाणा प्रान्त में शराब पीकर चिलचिलाती धूप में गिरा पड़ा है, पसीनों से बुरा हाल है, रेत शरीर से लिपटा है। एक व्यक्ति ने कहा हे भाई! उठ, तुझे वक्ष के नीचे बैठा दूँ, तू यहाँ पर गर्मी में जल रहा है। शराबी बोला कि मैं बिल्कुल ठीक हूँ, मौज हो रही है, कोई कष्ट नहीं है।

❖ एक व्यक्ति किसी कारण कोर्ट में गया। वहाँ उसका रिश्तेदार मिला। एक-दूसरे से कुशल-मंगल पूछी, दोनों ने कहा, सब ठीक है, मौज है।

❖ एक व्यक्ति का इकलौता पुत्र बहुत रोगी था। उसको P.G.I. में भर्ती करा रखा था। लड़के की बचने की आशा बहुत कम थी। ऐसी स्थिति में माता-पिता की क्या दशा होती है, आसानी से समझी जा सकती है। रिश्तेदार मिलने आए और

पूछा कि बच्चे का क्या हाल है? पिता ने बताया कि बचने का भरोसा नहीं, फिर पूछा और कुशल-मंगल है, पिता ने कहा कि सब मौज है।

विचार करें :- शराब के नशे में घोर धूप के ताप को झेल रहा था। फिर भी कह रहा था कि मौज हो रही है।

❖ **कोर्ट कचहरियों में जो रिश्तेदार मिले, दोनों ही कह रहे थे कि सब मौज है। विचार करें जो व्यक्ति कोर्ट के कोल्हू में फँसा है। उसको स्वपन में भी सुख नहीं होता। फिर भी दोनों कह रहे थे कि मौज है अर्थात् आनन्द है।**

❖ **जिस व्यक्ति का इकलौता पुत्र मत्यु शैय्या पर हो, उसको मौज कैसी? इसलिए सूक्ष्मवेद में कहा है कि इस दुःखालय संसार में यह प्राणी महाकष्ट को सुख मान रहा है।**

यह संसार समझदा नाहीं, कहंदा शाम दोपहरे नूं।
गरीब दास यह वक्त जात है, रोवोगे इस पहरे नूँ।।

सन्त गरीबदास जी ने बताया है कि मनुष्य जन्म प्राप्त करके जो व्यक्ति भक्ति नहीं करता, वह कुत्ते, गधे आदि-आदि की योनि में कष्ट उठाता है। कुत्ता रात्रि में आसमान की ओर मुख करके रोता है। इसलिए गरीबदास जी ने बताया है कि यह मानव शरीर का वक्त एक बार हाथ से निकल गया और भक्ति नहीं की तो इस समय (इस पहरे) को याद करके रोया करोगे।

''भक्ति मार्ग पर यात्रा''

जब तक आध्यात्मिक ज्ञान नहीं, तब तक तो जीव माया के नशे में अपना उद्देश्य भूल चुका था और जैसा ऊपर बताया है कि शराबी नशे में ज्येष्ठ महीने की गर्मी में दिन के दोपहर के समय धूप में पड़ा-पड़ा पसीने व रेत में सना भी कह रहा होता है कि मौज हो रही है। परंतु नशा उतरने के पश्चात् उसे पता चलता है कि तू तो जंगल में पड़ा है, घर तो अभी दूर है।

कबीर जी ने कहा है कि :-

कबीर, यह माया अटपटी, सब घट आन अड़ी।
किस–किस को समझाऊँ, या कूऐ भांग पड़ी।।

अध्यात्म ज्ञान रूपी औषधि सेवन करने से जीव का नशा उतर जाता है। फिर वह भक्ति के सफर पर चलता है क्योंकि उसे परमात्मा के पास पहुँचना है जो उसका अपना पिता है तथा वह सतलोक जीव का अपना घर है।

यात्रा पर चलने वाला व्यक्ति सारे सामान को उठाकर नहीं चल सकता। केवल आवश्यक सामान लेकर यात्रा पर चलता है। इसी प्रकार भक्ति के सफर में अपने को हल्का होकर चलना होगा। तभी मंजिल को प्राप्त कर सकेंगे। भक्ति रूपी राह पर चलने के लिए अपने को मानसिक शांति का होना अनिवार्य है। मानसिक परेशानी का कारण है अपनी परंपराऐं तथा नशा, मान-बड़ाई, लोग-दिखावा, यह भार व्यर्थ के लिए खड़े हैं जैसे बड़ी कोठी-बड़ी मंहगी कार, श्रंगार करना, मंहगे

आभूषण (स्वर्ण के आभूषण), संग्रह करना, विवाह में दहेज लेना-देना, बैंड-बाजे, डीजे बजाना, घुड़चढ़ी के समय पूरे परिवार का बेशर्मों की तरह नाचना, मत्यु भोज करना, बच्चे के जन्म पर खुशी मनाना, खुशी के अवसर पर पटाखे जलाना, फिजुलखर्ची करना आदि-आदि जीवन के भक्ति सफर में बाधक होने के कारण त्यागने पड़ेंगे।

''गुरू बिन मोक्ष नहीं''

प्रश्न :- क्या गुरू के बिना भक्ति नहीं कर सकते?

उत्तर :- भक्ति कर सकते हैं, परन्तु व्यर्थ प्रयत्न रहेगा।

प्रश्न :- कारण बताऐं?

उत्तर :- परमात्मा का विधान है जो सूक्ष्मवेद में कहा है :-

कबीर, गुरू बिन माला फेरते, गुरू बिन देते दान।
गुरू बिन दोंनो निष्फल है, पूछो वेद पुराण।।
कबीर, राम कष्ण से कौन बड़ा, उन्हों भी गुरू कीन्ह।
तीन लोक के वे धनी, गुरू आगे आधीन।।
कबीर, राम कष्ण बड़े तिन्हूं पुर राजा। तिन गुरू बन्द कीन्ह निज काजा।।

भावार्थ :- गुरू धारण किए बिना यदि नाम जाप की माला फिराते हैं और दान देते हैं, वे दोनों व्यर्थ हैं। यदि आप जी को संदेह हो तो अपने वेदों तथा पुराणों में प्रमाण देखें।

श्रीमद् भगवत गीता चारों वेदों का सारांश है। गीता अध्याय 2 श्लोक 7 में अर्जुन ने कहा कि हे श्री कष्ण! मैं आपका शिष्य हूँ, आपकी शरण में हूँ। गीता अध्याय 4 श्लोक 3 में श्री कष्ण जी में प्रवेश करके काल ब्रह्म ने अर्जुन से कहा कि तू मेरा भक्त है। पुराणों में प्रमाण है कि श्री रामचन्द्र जी ने ऋषि वशिष्ठ जी से नाम दीक्षा ली थी और अपने घर व राज-काज में गुरू वशिष्ठ जी की आज्ञा लेकर कार्य करते थे। श्री कष्ण जी ने ऋषि संदीपनि जी से अक्षर ज्ञान प्राप्त किया तथा श्री कष्ण जी के आध्यात्मिक गुरू श्री दुर्वासा ऋषि जी थे।

कबीर परमेश्वर जी हमें समझाना चाहते हैं कि आप जी श्री राम तथा श्री कष्ण जी से तो किसी को बड़ा अर्थात् समर्थ नहीं मानते हो। वे तीन लोक के मालिक थे, उन्होंने भी गुरू बनाकर अपनी भक्ति की, मानव जीवन सार्थक किया। इससे सहज में ज्ञान हो जाना चाहिए कि अन्य व्यक्ति यदि गुरू के बिना भक्ति करता है तो कितना सही है? अर्थात् व्यर्थ है।

❖ गुरू के बिना देखा-देखी कही-सुनी भक्ति को लोकवेद के अनुसार भक्ति कहते हैं। लोकवेद का अर्थ है, किसी क्षेत्र में प्रचलित भक्ति का ज्ञान जो तत्वज्ञान के विपरीत होता है। लोकवेद के आधार से यह दास (संत रामपाल दास) श्री हनुमान जी, बाबा श्याम जी, श्री राम, श्री कष्ण, श्री शिव जी तथा देवी-देवताओं की भक्ति करता था। हनुमान जी की भक्ति में मंगलवार का व्रत, बुन्दी का प्रसाद बाँटना, स्वयं देशी घी का गिच चुरमा खाता था, बाबा हनुमान को

डालडा वनस्पति घी से बनी बुन्दी का भोग लगाता था। हरे राम, हरे कृष्ण, कृष्ण-कृष्ण हरे-हरे का मन्त्र जाप करता था। किसी ने बता दिया कि :-

ओम् नाम सबसे बड़ा, इससे बड़ा न कोय।
ॐ नाम का जाप करे, तो शुद्ध आत्मा होय।।

इस कारण से ओम् नाम का जाप शुरू कर दिया। ओम् नमो शिवायः, यह शिव का मन्त्र जाप करता था। ओम् भगवते वासुदेवायः नमः, यह विष्णु जी का जाप करता था। तीर्थों पर जाना, दान करना, वहाँ स्नान करना, यह भी लोकवेद के आधार से करने जाता था।

जैसे घर में सुख होते थे तो मैं मानता था कि ये सब मेरी उपरोक्त भक्ति के कारण हो रहे हैं। जैसे कक्षा में पास होना, विवाह होना, पुत्र तथा पुत्रियों का जन्म होना, नौकनी लगना। ये सर्व सुख उपरोक्त साधना से ही मानता था। कबीर परमेश्वर जी ने सूक्ष्म वेद में कहा है :-

कबीर, पीछे लाग्या जाऊं था, मैं लोक वेद के साथ।
रास्ते में सतगुरू मिले, दीपक दीन्हा हाथ।।

भावार्थ है कि साधक लोकवेद अर्थात् दन्त कथा के आधार से भक्ति कर रहा था। उस शास्त्रविरूद्ध साधना के मार्ग पर चल रहा था। रास्ते में अर्थात् भक्ति मार्ग में एक दिन तत्वदर्शी सन्त मिल गए। उन्होंने शास्त्रविधि अनुसार शास्त्र प्रमाणित साधना रूपी दीपक दे दिया अर्थात् सत्य शास्त्रानुकूल साधना का ज्ञान कराया तो जीवन नष्ट होने से बच गया। सतगुरू द्वारा बताये तत्वज्ञान की रोशनी में पता चला कि मैं गलत भक्ति कर रहा था। श्री मद्भगवत गीता अध्याय 16 श्लोक 23-24 में कहा है कि शास्त्र विधि को त्यागकर जो साधक मनमाना आचरण करते हैं, उनको न तो सुख होता है, न सिद्धि प्राप्त होती है और न ही गति अर्थात् मोक्ष की प्राप्ति होती है अर्थात् व्यर्थ साधना है। फिर गीता अध्याय 16 श्लोक 24 में कहा है कि अर्जुन! इससे तेरे लिए कर्तव्य और अकर्तव्य की व्यवस्था में शास्त्र ही प्रमाण हैं।

जो उपरोक्त साधना यह दास (संत रामपाल दास) किया करता था तथा पूरा हिन्दू समाज कर रहा है, वह सब गीता-वेदों में वर्णित न होने से शास्त्र विरूद्ध साधना हुई जो व्यर्थ है।

कबीर, गुरू बिन काहु न पाया ज्ञाना, ज्यों थोथा भुस छड़े मूढ़ किसाना।
कबीर, गुरू बिन वेद पढ़ै जो प्राणी, समझै न सार रहे अज्ञानी।।

इसलिए गुरू जी से वेद शास्त्रों का ज्ञान पढ़ना चाहिए जिससे सत्य भक्ति की शास्त्रानुकूल साधना करके मानव जीवन धन्य हो जाए।

''पूर्ण गुरू के वचन की शक्ति से भक्ति होती है''

उदाहरण :- गुरू जी से दीक्षा लेकर भक्ति करना लाभदायक है। बिना गुरू के भक्ति करने से कोई लाभ नहीं होता। उदाहरण :-

❖ एक राजा की रानी बहुत धार्मिक थी। उसने परमेश्वर कबीर जी से गुरू दीक्षा ले रखी थी। वह प्रतिदिन गुरू दर्शन के लिए जाया करती थी। राजा को यह अच्छा नहीं लगता था, परंतु वह अपनी पत्नी को वहाँ जाने से रोक नहीं पा रहा था। कारण, एक तो वह उस बड़े शक्तिशाली राजा की लड़की थी, दूसरे वह अपनी पत्नी को प्रसन्न देखना चाहता था।

एक दिन राजा ने अपनी पत्नी से कहा कि आप नाराज न हो तो बात कहूँ? रानी ने कहा कहो। राजा ने कहा कि आप अपने गुरू के पास जाती हैं, भक्ति तो गुरू के बिना भी हो सकती है। रानी ने कहा कि गुरू जी ने बताया है कि गुरू के बिना भक्ति करना व्यर्थ है। राजा ने कहा कि मैं तेरे साथ कल तेरे गुरू जी से मिलूँगा, उनसे यह बात स्पष्ट करूँगा।

राजा ने सन्त जी से प्रश्न किया कि आप जनता को मूर्ख बना रहे हो कि गुरू बिन भक्ति नहीं होती, क्यों भक्ति सफल नही होती? नाम मन्त्र जाप करने होते हैं। एक-दूसरे से पूछकर जाप कर लें, पर्याप्त है। सन्त ने कहा राजन्! आपकी बात में दम है, मैं आपके राज दरबार में आऊँगा। वहाँ इस बात का उत्तर दूँगा। निश्चित दिन को सन्त जी राजा के दरबार में गए। राजा सिंहासन पर विराजमान था, आस-पास सिपाही खड़े थे। संत के बैठने के लिए अलग से कुर्सी रखी थी। सन्त ने जाते ही आस-पास खड़े सिपाहियों से राजा की ओर हाथ करके कहा कि इसे गिरफ्तार कर लो। सिपाही टस से मस नहीं हुए। सन्त ने लगातार तीन बार यही वाक्य, आदेश दोहराया कि इसे गिरफ्तार कर लो, परन्तु राजा को सिपाहियों ने गिरफ्तार नहीं किया।

राजा को सन्त पर क्रोध आया कि यह कमबख्त मेरी पत्नी को इसलिए बहका रहा था कि इसके राज्य को प्राप्त कर लूँ। राजा ने एक बार कहा कि सिपाहियो इसे गिरफ्तार कर लो। राजा के हाथ का सन्त की ओर संकेत था। उसी समय सिपाहियों ने सन्त को गिरफ्तार कर लिया।

सन्त ने कहा कि हे राजन्! आप घर पर बुलाकर सन्त का अनादर कर रहे हो, यह अच्छी बात नहीं। राजा ने कहा आप यह क्या बकवास कर रहे थे। मुझे गिरफ्तार करने का आदेश दे रहे थे। सन्त ने कहा मैं आपके उस प्रश्न का उत्तर दे रहा था कि गुरू से दीक्षा लेकर भक्ति करना क्यों लाभदायक है? मुझे छुड़ाओ तो मैं आपको उत्तर दूँ। राजा ने सिपाहियों से कहा कि छोड़ दो। सिपाहियों ने सन्त को छोड़ दिया। सन्त ने कहा कि हे राजा जी! मैंने यही वाक्य कहा था, "इसे गिरफ्तार कर लो।" सिपाही टस से मस नहीं हुए। आप जी ने भी यही वाक्य कहा था कि तुरंत सिपाहियों ने मुझे गिरफ्तार कर लिया। आपके वचन में राज की शक्ति

है। मेरे वचन में आध्यात्मिक शक्ति है। आप उसी नाम-जाप के लिए किसी को भक्ति के लिए कहोगे तो वह मन्त्र कोई कार्य नहीं करेगा। मैं वही नाम जाप करने को कहूँगा, वह तुरन्त प्रभाव से क्रियावान होगा। इसलिए पूर्ण सन्त से दीक्षा लेने से साधक में तुरंत आध्यात्मिक प्रक्रिया प्रारम्भ हो जाती है, उसकी आत्मा में भक्ति का अंकुर निकल आता है। सूक्ष्म वेद में कहा है कि :-

सतगुरू पशु मानुष करि डारै, सिद्धि देय कर ब्रह्म बिचारें।

भावार्थ :- सतगुरू पहले मनुष्य को सत्संग सुना-सुनाकर नेक इंसान बनाते हैं, सर्व बुराईयों को छुड़वाते हैं। फिर अपनी भक्ति की सिद्धी अर्थात् शक्ति शिष्य के अन्तःकरण में शब्द से प्रवेश करके ब्रह्म अर्थात् परमात्मा की साधना करने के विचार प्रबल करते हैं जिससे साधक की रूचि भक्ति में दिनों-दिन बढ़ती है। फिर वह देवता बन जाता है। कबीर जी ने कहा है कि :-

कबीर, बलिहारी गुरू आपना, घड़ी–घड़ी सौ–सौ बार।
मानुष से देवता किया, करत ना लाई बार।।

इसलिए कहा है कि :-

कबीर, गुरू बिन माला फेरते, गुरू बिन देते दान।
गुरू बिन दोनों निष्फल हैं, चाहे पूछो बेद पुराण।।
योग, यज्ञ तप दान करावै, गुरू विमुख फल कभी नहीं पावै।।

भावार्थ :- गुरू बिन नाम जाप की माला फिराते हैं या दान देते हैं, वह व्यर्थ है। यह वेदों तथा पुराणों में भी प्रमाण है। फिर अन्तिम चौपाई का भावार्थ है कि यदि दीक्षा लेकर फिर गुरू को छोड़कर उन्हीं मन्त्रों का जाप करता रहे तथा यज्ञ, हवन, दान भी करता रहे, वह भी व्यर्थ है। उसको कोई लाभ नहीं होगा।

कबीर, तांते सतगुरू शरणा लीजै, कपट भाव सब दूर करिजै।

अन्य प्रमाण :-

कबीर, गर्भयोगेश्वर गुरू बिना, करते हरि की सेव।
कहैं कबीर बैकुंठ से, फेर दिया सुखदेव।।
राजा जनक गुरू किया, फिर किन्ही हर की सेव।
कहैं कबीर बैंकुठ में, चले गए सुखदेव।।

भावार्थ :- ऋषि वेदव्यास जी के पुत्र सुखदेव जी अपने पूर्व जन्म की भक्ति की शक्ति से उड़कर स्वर्ग में चले जाते थे। एक दिन वे श्री विष्णु जी के लोक में बने स्वर्ग में प्रवेश करने लगे। वहाँ के कर्मचारियों ने ऋषि सुखदेव जी से स्वर्ग द्वार पर पूछा कि ऋषि जी अपने पुज्य गुरूजी का नाम बताओ। सुखदेव जी ने कहा कि गुरू की क्या अवश्यक्ता है? अन्य गुरू धारण करके यहाँ आए हैं, मेरे में स्वयं इतनी शक्ति है कि मैं बिना गुरू के आ गया हूँ। द्वारपालों ने बताया ऋषि जी यह आपकी पूर्व जन्म में संग्रह की हुई भक्ति की शक्ति है। यदि फिर से गुरू धारण करके भक्ति नहीं करोगे तो पूर्व की भक्ति कुछ दिन ही चलेगी। आपका मानव जीवन नष्ट हो जाएगा।

उदाहरण के लिए :- वर्तमान में इन्वर्टर की बैट्री को चार्जर लगाकर चार्ज कर रखा है। यदि चार्जर हटा दिया जाए तो भी इन्वर्टर अपना कार्य करता रहेगा क्योंकि उसमें ऊर्जा संग्रह हो चुकी है। कुछ समय पश्चात् वह सर्व कार्य करना छोड़ देता है, न ट्यूब जलेंगी, न पँखा चलेगा। उसको फिर से चार्ज करना अनिवार्य है। उसके लिए चार्जर चाहिए। चार्जर गुरू जानो, बिजली परमेश्वर जानो।

ऋषि सुखदेव में अपनी सिद्धि का अभिमान था, वह नहीं माना। बात भगवान विष्णु जी तक पहुँच गई। श्री विष्णु जी ने भी यह बात कही कि ऋषि जी पहले आप गुरू बनाओ, फिर यहाँ आओ। सुखदेव जी ने कहा भगवान पृथ्वी लोक पर मेरे समान कोई नहीं है, न कोई ढ़ंग का गुरू है। कृपा आप ही बताऐं कि मैं किसको गुरू बनाऊँ? श्री विष्णु जी ने बताया कि आप राजा जनक को गुरू बनाओ। यह कहकर श्री विष्णु जी अपने महल में चले गए। सुखदेव ऋषि वापिस पृथ्वी पर आए। राजा जनक से दीक्षा लेकर उनके बताए भक्ति मन्त्रों का जाप किया, तब ऋषि सुखदेव जी को स्वर्ग में रहने दिया। इसलिए गुरू बनाकर भक्ति करने से ही सफलता सम्भव है। बिना गुरू भक्ति, दान, आदि-आदि करना व्यर्थ है।

❖ गुरू पूरा हो, झूठे गुरू से कोई लाभ नहीं होता।

प्रश्न :- पूरे गुरू की क्या पहचान है? हम तो जिस भी सन्त से ज्ञान सुनते हैं, वह पूर्ण सतगुरू लगता है।

उत्तर :- सूक्ष्मवेद में गुरू के लक्षण बताए हैं :-

गरीब, सतगुरू के लक्षण कहूँ, मधुरे बैन विनोद।
चार वेद छः शास्त्र, कह अठारह बोध।।

सन्त गरीबदास जी (गाँव-छुड़ानी जिला-झज्जर, हरियाणा) को परमेश्वर कबीर जी मिले थे। उनकी आत्मा को ऊपर अपने सत्यलोक (सनातन परम धाम) में लेकर गए थे। ऊपर के सर्व लोकों का अवलोकन कराकर वापिस पृथ्वी पर छोड़ा था। उनको सम्पूर्ण आध्यात्म ज्ञान बताया था। उनका ज्ञानयोग परमेश्वर कबीर जी ने खोला था। उसके आधार से सन्त गरीबदास जी ने गुरू की पहचान बताई है कि जो सच्चा गुरू अर्थात् सतगुरू होगा, वह ऐसा ज्ञान बताता है कि उसके वचन आत्मा को आनन्दित कर देते हैं, बहुत मधुर लगते हैं क्योंकि वे सत्य पर आधारित होते हैं। कारण है कि सतगुरू चार वेदों तथा सर्व शास्त्रों का ज्ञान विस्तार से कहता है।

यही प्रमाण परमेश्वर कबीर जी ने सूक्ष्मवेद में कबीर सागर के अध्याय ''जीव धर्म बोध'' में पृष्ठ 1960 पर दिया है" :-

गुरू के लक्षण चार बखाना, प्रथम वेद शास्त्र को ज्ञाना।।
दुजे हरि भक्ति मन कर्म बानि, तीजे समदृष्टि करि जानी।।
चौथे वेद विधि सब कर्मा, ये चार गुरू गुण जानों मर्मा।।

सरलार्थ :- कबीर परमेश्वर जी ने कहा है कि जो सच्चा गुरू होगा, उसके चार मुख्य लक्षण होते हैं :-

1. सब वेद तथा शास्त्रों को वह ठीक से जानता है।

2. दूसरे वह स्वयं भी भक्ति मन-कर्म-वचन से करता है अर्थात् उसकी कथनी और करनी में कोई अन्तर नहीं होता।

3. तीसरा लक्षण यह है कि वह सर्व अनुयाईयों से समान व्यवहार करता है, भेदभाव नहीं रखता।

4. चौथा लक्षण यह है कि वह सर्व भक्ति कर्म वेदों (चार वेद तो सर्व जानते हैं 1. ऋग्वेद, 2. यजुर्वेद, 3. सामवेद, 4. अथर्ववेद तथा पाँचवां वेद सूक्ष्मवेद है, इन सर्व वेदों) के अनुसार करता और कराता है।

❖ वेदों (चारों वेदों ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद तथा अथर्ववेद) में केवल ओम् = ॐ यह एक नाम है जाप करने का।

प्रमाण = यजुर्वेद अध्याय 40 मन्त्र 15 तथा 17 में।

मन्त्र 15 में कहा है कि ओम् (ॐ) नाम का स्मरण कार्य करते-करते करो, विशेष तड़फ के साथ करो, मनुष्य जीवन का परम कर्त्तव्य मानकर स्मरण करो, ॐ का जाप मृत्यु पर्यन्त करने से इतना अमरत्व प्राप्त हो जाएगा जितना ॐ के स्मरण से होता है। (यजुर्वेद 40/15)

❖ यजुर्वेद अध्याय 40 मन्त्र 17 में वेद ज्ञान दाता ब्रह्म ही है। कहा है कि जो पूर्ण परमात्मा है, वह तो परोक्ष (छुपा है यानि अव्यक्त) है। वह सबकी दृष्टि में नहीं आता। (उसकी जानकारी यजुर्वेद अध्याय 40 मन्त्र 10 में बताई है कि उसका यथार्थ ज्ञान तत्वदर्शी सन्त ही जानते हैं, उनसे सुनो) फिर यजुर्वेद अध्याय 40 मन्त्र 17 में आगे कहा है कि (अहम् खम् ब्रह्म) मैं ब्रह्म हूँ। मेरा ओम् = ॐ नाम है। मैं ऊपर दिव्य आकाश रूपी ब्रह्म लोक में रहता हूँ। (यजुर्वेद 40/17)

यही प्रमाण श्री देवी महापुराण :- (गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित, सचित्र मोटा टाईप केवल हिन्दी) के सातवें स्कंद में पृष्ठ 562-563 पर श्री देवी जी ने राजा हिमालय को बताया है कि राजन्! आप यदि आत्म-कल्याण चाहते हो तो मेरी भक्ति सहित सर्व बातों को छोड़ दो, केवल एक ॐ नाम का जाप करो, ब्रह्म प्राप्ति का उद्देश्य रखो। इससे आप ब्रह्म को प्राप्त हो जाओगे, वह ब्रह्म ब्रह्मलोक रूपी दिव्य आकाश में रहता है। इससे स्पष्ट हुआ कि वेदों मे केवल एक "ओम्" नाम ही जाप का है। श्रीमद् भगवत गीता जो वेदों का सारांश है, उसमें अध्याय 8 श्लोक 13 में कहा है :-

ओम् इति एकाक्षरम् ब्रह्म व्याहरन् माम् अनुस्मरन्।
यः प्रयाति त्वजन् देहम् सः याति परमाम् गतिम्।।

अनुवाद :- गीता ज्ञान दाता ब्रह्म ने कहा है कि मुझ ब्रह्म का केवल ओम्=ॐ, यह एक अक्षर है, इसका उच्चारण-स्मरण करता हुआ जो साधक शरीर त्यागकर जाता है, वह मृत्यु उपरान्त ॐ नाम के स्मरण से मिलने वाली परम गति अर्थात् ब्रह्म लोक को प्राप्त होता है।

श्री मद्भगवत गीता तथा वेदों में इसके अतिरिक्त अर्थात् "ओम्" = ॐ के अतिरिक्त कोई नाम ब्रह्म साधना का नहीं है।

प्रमाणित हुआ कि ॐ = ओम् नाम का जाप शास्त्र प्रमाणित है।

❖ गीता ज्ञान दाता ने स्पष्ट किया है कि अर्जुन! तेरे और मेरे बहुत जन्म हो चुके हैं, आगे भी होंगे। मेरी उत्पत्ति को ऋषि तथा देवतागण नहीं जानते। (गीता अध्याय/श्लोक 2/12, 4/5, 10/2)

इससे सिद्ध हुआ कि गीता ज्ञान दाता ब्रह्म नाशवान है तथा जन्मता-मरता है। इसके पुजारी भी जन्म-मरण के चक्र में ही रहेंगे। इसलिए गीता अध्याय 8 श्लोक 16 में कहा है कि ब्रह्म लोक में गए साधक भी पुनर्जन्म में रहते हैं। इसलिए गीता ज्ञान दाता ने गीता अध्याय 18 श्लोक 62 में कहा है कि हे भारत! तू सर्वभाव से उस परमेश्वर की शरण में जा, उस परमेश्वर की कृपा से ही तू परमशान्ति तथा सनातन परम धाम अर्थात् सत्यलोक को प्राप्त होगा।

❖ फिर गीता अध्याय 15 श्लोक 4 में गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि जब तत्वदर्शी सन्त से तत्वज्ञान प्राप्त हो जाए, उसके बताए अनुसार साधना करके उसके पश्चात् परमेश्वर के उस परम पद की खोज करनी चाहिए जहाँ जाने के पश्चात् साधक फिर लौटकर संसार में कभी नहीं आते। केवल उस परमेश्वर की पूजा करो।

गीता अध्याय 7 श्लोक 29 में गीता ज्ञान दाता ने कहा है :-

जरा मरण मोक्षाय माम् आश्रित्य यतन्ति ये।
ते तत् ब्रह्म विदुः कृतस्नम् अध्यात्मम् कर्म च अधिलम्।।

भावार्थ :- गीता ज्ञान दाता ने बताया है कि जो मेरे बताए ज्ञान पर आश्रित होकर अर्थात् मेरे कहे अनुसार तत्वदर्शी संतों से तत्वज्ञान जान लेते हैं। जो जरा अर्थात् वृद्धावस्था तथा मृत्यु के कष्ट से मोक्ष प्राप्त करने के लिए प्रयत्न करते हैं। संसार की किसी कीमती वस्तु की इच्छा भक्ति के प्रतिफल में नहीं करते हैं। वे (तत् ब्रह्म विदुः) उस ब्रह्म को संपूर्ण आध्यात्म को और सर्व कर्मों को जानते हैं।

❖ अर्जुन ने गीता अध्याय 8 श्लोक 1 में पूछा कि "तत् ब्रह्म" क्या है? इसका उत्तर गीता ज्ञान दाता ने गीता अध्याय 8 के ही श्लोक 3 में दिया है। कहा है कि वह "परम अक्षर ब्रह्म" है।

❖ गीता अध्याय 8 श्लोक 5 तथा 7 में तो गीता ज्ञान दाता ने अपनी भक्ति करने को कहा है और विश्वास दिलाया है कि मेरी भक्ति से मुझे प्राप्त होगा, मेरी भक्ति से जन्म-मरण, कर्म चक्र बना रहेगा, युद्ध भी करना पड़ेगा, परमशान्ति नहीं हो सकती।

❖ फिर गीता ज्ञान दाता ने तुरन्त गीता अध्याय 8 श्लोक 8, 9, 10 में कहा है कि ''तत् ब्रह्म'' अर्थात् "परम अक्षर ब्रह्म" की भक्ति करने वाला उस सच्चिदानन्द घन ब्रह्म अर्थात् मेरे से दूसरे दिव्य परमेश्वर को प्राप्त होगा।

❖ इसी प्रकार परम अक्षर ब्रह्म की महिमा गीता अध्याय 15 श्लोक 17 में बताई है। गीता अध्याय 15 श्लोक 16 में दो पुरूष बताए हैं, एक क्षर पुरूष। यह गीता ज्ञान दाता है जिसका 21 ब्रह्मण्ड का क्षेत्र है। यह गीता ज्ञान दाता ब्रह्म है।

दूसरा अक्षर पुरूष बताया है जिसका 7 शंख ब्रह्माण्ड का क्षेत्र है। ये दोनों नाशवान बताऐं हैं। इनके लोकों में सर्व जीव भी नाशवान बताए हैं:-

गीता अध्याय 15 श्लोक 17 में बताया है कि :-

उत्तम पुरूषः तू अन्यः परमात्मा इति उदाहृतः
यः लोक त्रयम् आविश्य विभर्ति अव्ययः ईश्वरः

अनुवाद :- उत्तम पुरूष = पुरूषोत्तम अर्थात् परम अक्षर ब्रह्म तो ऊपर वर्णित क्षर पुरूष तथा अक्षर पुरूष से अन्य है जो परमात्मा कहा जाता है जो तीनों लोकों {क्षर पुरूष के 21 ब्रह्माण्डों के क्षेत्र वाला लोक, दूसरा अक्षर पुरूष के 7 शंख ब्रह्माण्डों वाला लोक, तीसरा ऊपर के चार लोकों (सत्यलोक, अलख लोक, अगम लोक तथा अनामी लोक) इस प्रकार बने तीनों लोकों} में प्रवेश करके सबका धारण-पोषण करता है, वह वास्तव में अविनाशी परमेश्वर है।

❖ **गीता अध्याय 17 श्लोक 23 में इस परम अक्षर ब्रह्म की प्राप्ति के मन्त्र बताए हैं :-**

ॐ तत् सत् इति निर्देशः ब्रह्मणः त्रिविधः स्मृतः।
ब्राह्मणाः तेन वेदाः यज्ञाः च विहिता पुरा।।

ब्रह्मणः = सच्चिदानन्द घन ब्रह्म अर्थात् परम अक्षर ब्रह्म की भक्ति की साधना के अर्थात् परमेश्वर के उस परमपद को प्राप्त करने के मन्त्र बताए हैं, जहाँ जाने के पश्चात् साधक फिर लौटकर संसार में कभी नहीं आते हैं। जहाँ परम शान्ति को प्राप्त होते हैं जो सनातन परम धाम है।

ॐ = "ब्रह्म" अर्थात् "क्षर पुरूष" का मन्त्र है जो प्रत्यक्ष है।

तत् = यह "अक्षर पुरूष" का जाप मन्त्र है। यह मन्त्र सांकेतिक है, वास्तविक मन्त्र सूक्ष्मवेद में बताया है। यह मन्त्र दीक्षा के समय दीक्षार्थी को सार्वजनिक किया जाता है, अन्य को नहीं बताया जाता।

सत् = यह "परम अक्षर पुरूष" की साधना का मन्त्र है। यह भी सांकेतिक है। दीक्षार्थी को दीक्षा के समय बताया जाता है। यथार्थ मन्त्र सूक्ष्मवेद में लिखा है। यही प्रमाण सामवेद के मंत्र सँख्या 822 में भी है कि तीन नाम के जाप से पूर्ण मोक्ष प्राप्त होता है :-

संख्या न. 822 सामवेद उतार्चिक अध्याय 3 खण्ड न. 5 श्लोक न. 8(संत रामपाल दास द्वारा भाषा-भाष्य):-

मनीषिभिः पवते पूर्व्यः कविर्नभिर्यतः परि कोशां असिष्यदत्।
त्रितस्य नाम जनयन्मधु क्षरन्निन्द्रस्य वायुं सख्याय वर्धयन्।।8।।

मनीषिभिः—पवते—पूर्व्यः—कविर्—नभिः—यतः—परि—कोशान्—असिष्यदत्—त्रि—तस्य—नाम—जनयन्—मधु—क्षरनः—न—इन्द्रस्य—वायुम्—सख्याय—वर्धयन्।

शब्दार्थ—(पूर्व्यः) सनातन अर्थात् सबसे प्रथम प्रकट (कविर नभिः) कबीर परमेश्वर मानव रूप धारण करके अर्थात् गुरु रूप में प्रकट होकर (मनीषिभिः) बुद्धिमान भक्तों को (त्रि) तीन (नाम) मन्त्र अर्थात् नाम उपदेश देकर (पवते) पापरहित यानि पवित्र करके (जनयन्)

जन्म व (क्षरनः) मत्यु से (न) रहित करता है तथा (तस्य) उसके (वायुम्) प्राण अर्थात् जीवन–स्वांसों को जो संस्कारवश गिनती के डाले हुए होते हैं को (कोशान्) अपने भण्डार से (सख्याय) मित्रता के आधार से (परि) पूर्ण रूप से (वर्धयन्) बढ़ाता है। (यतः) जिस कारण से (इन्द्रस्य) परमेश्वर के (मधु) वास्तविक आनन्द को (असिष्यदत्) अपने आशीर्वाद प्रसाद से प्राप्त करवाता है।

भावार्थ :- इस मन्त्र में स्पष्ट किया है कि पूर्ण परमात्मा कविर अर्थात् कबीर मानव शरीर में गुरु रूप में प्रकट होकर प्रभु प्रेमीयों को तीन नाम का जाप देकर सत्य भक्ति कराता है तथा उस मित्र भक्त को पवित्रकरके अपने आशीर्वाद से पूर्ण परमात्मा अर्थात् अपनी प्राप्ति का मार्ग बताकर पूर्ण सुख प्राप्त कराता है। साधक की आयु बढाता है। यही प्रमाण गीता अध्याय 17 श्लोक 23 में है कि ओम्-तत्-सत् इति निर्देशः ब्रह्मणः त्रिविद्य स्मतः भावार्थ है कि पूर्ण परमात्मा को प्राप्त करने का ॐ (1) तत् (2) सत् (3) यह मन्त्र जाप स्मरण करने का निर्देश है। इस नाम को तत्वदर्शी संत से प्राप्त करो। तत्वदर्शी संत के विषय में गीता अध्याय 4 श्लोक नं. 34 में कहा है तथा गीता अध्याय नं. 15 श्लोक नं. 1 व 4 में तत्वदर्शी सन्त की पहचान बताई तथा कहा है कि तत्वदर्शी सन्त से तत्वज्ञान जानकर उसके पश्चात् उस परमपद परमेश्वर की खोज करनी चाहिए। जहां जाने के पश्चात् साधक लौट कर संसार में नहीं आते अर्थात् पूर्ण मुक्त हो जाते हैं। उसी पूर्ण परमात्मा से संसार की रचना हुई है।

विशेष :- उपरोक्त विवरण से स्पष्ट हुआ कि पवित्र चारों वेद भी साक्षी हैं कि पूर्ण परमात्मा ही पूजा के योग्य है, उसका वास्तविक नाम कविर्देव (कबीर परमेश्वर) है तथा तीन मंत्र के नाम का जाप करने से ही पूर्ण मोक्ष होता है।

यह तीन मन्त्र का जाप चारों वेदों के सारांश श्री मद्भगवत गीता में प्रमाण है कि इससे वह स्थान प्राप्त होता है, जहाँ जाने के बाद साधक लौटकर कभी संसार में नहीं आते। जो सनातन परम धाम है, जहाँ जाने के पश्चात् परम शान्ति प्राप्त होती है।

वेदों व गीता में यह अनमोल तीन नाम का मन्त्र अस्पष्ट अर्थात् सांकेतिक है। इसलिए चारों वेदों व गीतानुसार साधना करने से वह स्थान व परमात्मा प्राप्त नहीं हो सकता। इसलिए गीता अध्याय 4 श्लोक 32 तथा 34 में गीता ज्ञान दाता ने स्पष्ट किया है कि यज्ञों अर्थात् धार्मिक अनुष्ठानों का यथार्थ ज्ञान (ब्रह्मणः मुखे) सच्चिदानन्द घन ब्रह्म अर्थात् परम अक्षर ब्रह्म अपने मुख-कमल से वाणी बोलकर बताता है, वह सच्चिदानन्द घन ब्रह्म की वाणी कही जाती है, उसे तत्वज्ञान तथा सूक्ष्म वेद भी कहते हैं। उसके जानने के पश्चात् सर्वपापों से मुक्त हो जाता है। जिसमें सम्पूर्ण भक्ति मन्त्र तथा विधि बताई है। (गीता अध्याय 4 श्लोक 32)

❖ गीता अध्याय 4 श्लोक 34 = उस तत्वज्ञान को तू तत्वदर्शी सन्तों के पास जाकर समझ, उनको दण्डवत् प्रणाम करने से, कपट छोड़कर नम्रतापूर्वक प्रश्न करने से वे परमात्मा तत्व को भली-भाँति जानने वाले ज्ञानी महात्मा तुझे तत्वज्ञान का उपदेश करेंगे। (गीता अध्याय 4 श्लोक 34)

सज्जनों ! वह तत्वदर्शी सन्त यह दास (संत रामपाल दास) है। वह तत्वज्ञान मेरे पास है। मेरे अतिरिक्त वर्तमान में किसी के पास नहीं है। विश्व में लगभग 7 अरब मानव आबादी है। इन अरबों मनुष्यों में मेरे अतिरिक्त कोई इस ज्ञान को जानने वाला नहीं है।

गीता अध्याय 7 श्लोक 12 से 15 तक तो गीता ज्ञान दाता ने तीनों गुणों (रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु जी तथा तमगुण शिव जी) की भक्ति करने वाले 1. राक्षस स्वभाव को धारण किए हुए, 2. मनुष्यों में नीच, 3. दूषित कर्म करने वाले, 4. मूर्ख मेरी भक्ति भी नहीं करते।

फिर गीता ज्ञान दाता ने गीता अध्याय 7 श्लोक 16 से 18 तक अपनी साधना करने वालों की स्थिति बताई है कि मेरी भक्ति चार प्रकार के (1. आर्त, 2. अथार्थी, 3. जिज्ञासु, 4. ज्ञानी) करते हैं। इनमें केवल ज्ञानी साधक श्रेष्ठ बताया, परंतु वह भी तत्वज्ञान न होने के कारण मेरे वाली अर्थात् ब्रह्म की अनुतम् अर्थात् घटिया गति में ही स्थित रह गया।

❖ गीता अध्याय 7 श्लोक 19 में गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि मेरी पूजा भी जन्म-जन्मान्तरों के अन्त के जन्म में कोई ज्ञानी आत्मा ठीक से करता है। अन्यथा अन्य उपासना में ही लगे रहते हैं। यह बताने वाला महात्मा तो बहुत दुर्लभ है कि केवल वासुदेव अर्थात् सर्वगतम् ब्रह्म ही सब कुछ है। उसी की भक्ति से परम शान्ति प्राप्त होती है, उसी की भक्ति से सनातन परम धाम प्राप्त होता है। उसी की भक्ति से वह परम पद प्राप्त होता है जहाँ जाने के पश्चात् साधक फिर लौटकर संसार में कभी नहीं आते, वह परम अक्षर ब्रह्म सर्व का उत्पत्तिकर्ता है, वही संसार रूपी वृक्ष की मूल है जो तीनों लोकों में प्रवेश करके सबका धारण-पोषण करता है, वही पापनाशक है। वही पूर्ण मोक्षदायक है, उसी की भक्ति करनी चाहिए।

प्रिय पाठको! वह तत्वदर्शी सन्त वर्तमान में यह दास (संत रामपाल दास) है। मेरे पास सम्पूर्ण वेद-शास्त्रों का ज्ञान है। वासुदेव भगवान की भक्ति के सम्पूर्ण मन्त्र हैं। अब ”वासुदेव‘‘ की परिभाषा बताते हैं :-

”वासुदेव की परिभाषा“

गीता अध्याय 3 श्लोक 14-15 में कहा है कि सम्पूर्ण प्राणी अन्न से उत्पन्न होते हैं। अधिक जानकारी आपको पूर्व में दे रखी है, वहाँ से पढ़े। यहाँ पर केवल इस विषय को लेते हैं।

फिर कहा है कि ब्रह्म अर्थात् क्षर पुरूष की उत्पत्ति अविनाशी परमात्मा से हुई है जिसके विषय में गीता अध्याय 15 श्लोक 17 में कहा है। इससे सिद्ध है कि ”सर्वगतम् ब्रह्म“ = सर्वव्यापी परम अक्षर ब्रह्म अर्थात् वासुदेव सदा ही यज्ञों में प्रतिष्ठित है।

विचार करें :- सर्वगतम् ब्रह्म का अर्थ है सर्वव्यापी परम अक्षर परमात्मा। (गीता अध्याय 3 श्लोक 15)

1. श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी तीनों देवता एक ब्रह्माण्ड में बने तीनों लोकों (स्वर्ग लोक, पथ्वी लोक, पाताल लोक) में केवल एक-एक विभाग अर्थात् गुण के प्रधान हैं। ये सर्वगतम् ब्रह्म अर्थात् सर्वव्यापी परमात्मा = वासुदेव नहीं हैं।

2. ब्रह्म अर्थात् क्षर पुरूष :- यह केवल 21 ब्रह्माण्डों का प्रभु है। यह भी सर्वव्यापी अर्थात् वासुदेव नहीं है।

3. अक्षर पुरूष :- यह केवल 7 शंख ब्रह्माण्डों का प्रभु है, यह भी सर्वव्यापी अर्थात् वासुदेव नहीं है।

4. परम अक्षर ब्रह्म :- यह सर्व ब्रह्माण्डों का स्वामी है, सर्व का धारण-पोषण करने वाला है, यह वासुदेव है।

विशेष :- अधिक जानकारी के लिए पढ़ें इसी पुस्तक के "सष्टि रचना" अध्याय में।

❖ जैसा कि आप जी को पूर्व में बताया है कि परम अक्षर ब्रह्म स्वयं पथ्वी पर प्रकट होकर अच्छी आत्माओं को मिलते हैं। उनको तत्वज्ञान बताते हैं। इसी विधानानुसार वही परमात्मा सन्त गरीबदास जी को (गाँव = छुड़ानी, जिला-झज्जर, प्रांत-हरियाणा) सन् 1727 में मिले थे। एक जिन्दा महात्मा की वेशभूषा में थे। गरीब दास जी की आत्मा को उस सनातन परम धाम में ले गए थे। फिर ऊपर के सर्व ब्रह्माण्डों तथा प्रभुओं की स्थिति बताकर तत्वज्ञान से परीचित कराकर वापिस शरीर में छोड़ा था। उस समय सन्त गरीब दास जी की आयु 10 वर्ष थी। उस दिन सन्त गरीबदास जी को मत जानकर चिता पर रखकर अन्तिम संस्कार की तैयारी कर रहे थे। उसी समय उनकी आत्मा को शरीर में प्रवेश करा दिया। जीवित होने पर सर्व कुल के लोगों की खुशी का ठिकाना नहीं रहा। उसके पश्चात् सन्त गरीबदास जी ने एक अनमोल ग्रन्थ की रचना की। उसमें आँखों देखा तथा स्वयं परमात्मा द्वारा बताए ज्ञान को बताया जो एक गोपाल दास नामक दादू पंथी साधु ने लिखा था। जो वर्तमान में प्रिंट करा रखा है।

❖ पंजाब प्रान्त में लुधियाना शहर के पास एक वासीयर गाँव है। उसमें एक प्रभु प्रेमी व्यक्ति रामराय उर्फ झूमकरा रहता था। उसने सन्त गरीब दास जी की महिमा सुनी तो दर्शनार्थ गाँव छुड़ानी में चला आया। सन्त गरीबदास जी ने यह ज्ञान सुनाया जो इस दास (संत रामपाल दास) को सन्त गरीब दास से प्राप्त हुआ है जो आप जी को इस पुस्तक तथा अन्य पुस्तकों के द्वारा सुनाया है।

उस रामराय ने प्रश्न किया कि हे महात्मा जी! यह ज्ञान तो आज तक किसी ने नहीं बताया। सन्त गरीब दास जी ने वाणी के द्वारा बताया।

कोट्यों मध्य कोई नहीं राई झूमकरा, अरबों में कोई गरक सुनो राई झूमकरा।।

अनुवाद व भावार्थ :- सन्त गरीबदास जी ने बताया कि यह ज्ञान करोड़ों में किसी के पास नहीं मिलेगा, अरबों में किसी एक के पास मिलेगा। वह संत सर्व ज्ञान सम्पन्न सम्पूर्ण साधना के मन्त्रों से गरक अर्थात् परिपूर्ण होता है। प्रिय

पाठको! वह संत वर्तमान में बरवाला जिला-हिसार वाला है। ज्ञान समझो और लाभ उठाओ।

प्रश्न :- प्राचीन काल से चली आ रही भक्ति की साधना को आप गलत कैसे कह सकते हो? जैसे तप सर्व ऋषिजन किया करते थे, हम सर्व हिन्दू समाज में देख रहे हैं - सब हरे कष्णा, हरे राम, राधे-राधे श्याम मिला दे, ओम नमः शिवाय, ओम नमो भगवते वासुदेवायः नमः, जय सियाराम, राधे श्याम, ओम तत् सत्, में से कोई एक मन्त्र का जाप करते आ रहे हैं। वर्तमान में भी कर रहे हैं। श्री रामचन्द्र जी, श्री कष्ण जी को हम पूर्ण परमात्मा मानते हैं, इसलिए इनके नाम जपते हैं। आप इन नाम जाप मन्त्रों को व्यर्थ जाप बताते हैं, स्पष्टीकरण दें।

उत्तर :- प्राचीन काल में यदि यह साधना होती और ये मन्त्र होते तो श्री मद्भगवत गीता अध्याय 4 श्लोक 1-2 में गीता ज्ञान दाता ये नहीं कहते कि यह योग अर्थात् जो भक्ति विधि मैं गीता ज्ञान में बता रहा हूँ, यह अब लुप्त प्रायः हो गया है, नष्ट हो गया है। यह ज्ञान तथा भक्ति मैंने सूर्यदेव से कही था, फिर मनु को सूर्य ने, मनु ने अपने पुत्र इक्ष्वाकु को कहा, फिर कुछ राज ऋषियों ने जाना। अब बहुत समय से अर्थात् द्वापर से बहुत समय पहले से ही लुप्त था तथा मनु, इक्ष्वाकु आदि-आदि सर्व सत्ययुग के प्रथम चरण में हुए थे। यदि आप श्री रामचन्द्र जी पुत्र राजा दशरथ तथा श्री कष्ण चन्द्र पुत्र श्री वासुदेव को पूर्ण परमात्मा मानते हैं। इसलिए इनके नाम हरे राम, हरे कष्ण, आदि-आदि जाप करते हैं और इन्हीं से मोक्ष मानते हैं तो श्रीमद्भगवत गीता मे वर्णित यथार्थ प्राचीन योग अर्थात् भक्ति की विधि के विपरीत होने से व्यर्थ हैं। शास्त्रविधि त्यागकर मनमाना आचरण हुआ। जिस कारण से उपरोक्त प्रश्न में लिखे अन्य मन्त्र भी शास्त्र प्रमाणित नहीं हैं, इसलिए व्यर्थ हैं। गीता अध्याय 16 श्लोक 23-24 में कहा है कि जो पुरूष शास्त्रविधि को त्यागकर मनमाना आचरण करते हैं। उनको न तो सुख प्राप्त होता है, न सिद्धि प्राप्त होती है, न उनकी गति होती है अर्थात् व्यर्थ साधना है। (गीता अध्याय 16 श्लोक 23)

❖ गीता अध्याय 16 श्लोक 24 में कहा है कि इससे तेरे लिए अर्जुन, कर्तव्य और अकर्तव्य की व्यवस्था में शास्त्र ही प्रमाण हैं। भावार्थ है कि जो भक्ति की विधि प्रमाणित शास्त्रों में (चारों वेदों = ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद तथा अथर्ववेद तथा इन्हीं चारों वेदों का सारांश श्री मद्भगवत गीता तथा सूक्ष्मवेद = जो परमात्मा स्वयं ने अपने मुख से बोला था। ये भक्ति के ज्ञान तथा समाधान के प्रमाणित शास्त्र हैं) वर्णित नहीं है, वह शास्त्रविरूद्ध साधना है। इसलिए भक्ति के कौन-से कर्म करने चाहिए और कौन-से नहीं करने चाहिए, उनके लिए शास्त्रों को ही आधार मानों। शास्त्रों में वर्णित भक्ति विधि को अपनाओ और सब त्याग दो।

❖ श्री राम जी का जन्म त्रेतायुग के अन्तिम चरण में हुआ था। श्री कष्ण जी का जन्म द्वापरयुग के अन्तिम चरण में हुआ था। सत्ययुग से ही मानव भक्ति करता आ रहा है। उस समय कौन राम थे? आप कहोगे कि श्री विष्णु जी तो

सत्ययुग से भी पहले के हैं और श्री राम, श्री कृष्ण भी स्वयं श्री विष्णु जी ही थे। सत्ययुग में भी प्रमाण है कि महर्षि बाल्मिकी जी राम-राम नाम जपते थे, वे विष्णु-विष्णु नहीं जपते थे। इससे सिद्ध हुआ कि श्री विष्णु जी, श्री राम, श्री कृष्ण जी से भिन्न कोई "राम" अर्थात् "मालिक" है। उस राम का जाप करना चाहिए जो गीता अध्याय 7 श्लोक 29 में है। जिसके विषय में कहा है कि "तत् ब्रह्म" को जानने वाले केवल जरा अर्थात् वृद्ध अवस्था तथा मृत्यु से छुटकारा पाने के लिए ही भक्ति करते हैं। अर्जुन ने गीता अध्याय 8 श्लोक 1 में प्रश्न किया कि वह "तत् ब्रह्म" क्या है?

गीता ज्ञान दाता ने गीता अध्याय 8 श्लोक 3 में उत्तर दिया कि वह "परम अक्षर ब्रह्म" है। गीता अध्याय 8 के ही श्लोक 5, 7 में गीता दान दाता ने अपनी भक्ति करने को कहा है जिसका जाप मन्त्र गीता अध्याय 8 के ही श्लोक 13 में बताया है। (ओम् इति एकाक्षरम् ब्रह्म व्यवहारन् माम् अनुस्मरन्.......)

❖ गीता अध्याय 8 के ही श्लोक 8, 9, 10 में गीता ज्ञान दाता ने अपने से अन्य उस तत् ब्रह्म अर्थात् परम अक्षर ब्रह्म की भक्ति करने को कहा है। उसकी भक्ति का नाम जाप मन्त्र गीता अध्याय 17 श्लोक 23 में बताया है:-

ॐ तत् सत् इति निर्देशः ब्रह्मणः त्रिविधः स्मरतः।
ब्राह्मणाः तेन वेदाः च यज्ञाः च विहिताः पुरा।।

सरलार्थ :- ब्रह्मणः = सच्चिदानन्द घन ब्रह्म अर्थात् परम अक्षर ब्रह्म की भक्ति का ॐ, तत्, सत् मन्त्र के स्मरण का (निर्देशः) आदेश है। जो (त्रिविधः) तीन प्रकार से (स्मतः) स्मरण के लिए कहा है (ब्राह्मणाः) विद्वान् अर्थात् तत्वदर्शी सन्त (तेन) उस (वेदाः) ज्ञान के आधार से भक्ति करते थे (च) और (यज्ञाः) धार्मिक यज्ञों का अनुष्ठान (च) और अन्य भक्ति कर्म (पुरा) सृष्टि की आदि अर्थात् सृष्टि के प्रारम्भ में (विहिता) किए जाते थे।

श्रीमद् भगवत गीता से सिद्ध हुआ कि गीता ज्ञान दाता से अन्य कोई पूर्ण परमात्मा है जो श्री विष्णु जी, श्री ब्रह्मा जी तथा श्री शिव जी से भी भिन्न है। जिसके विषय में गीता अध्याय 15 श्लोक 1, 4, 17 में तथा गीता अध्याय 18 श्लोक 62 में तथा और अनेकों स्थानों पर गीता में कहा गया है, वह पूर्ण परमात्मा है। गीता अध्याय 15 श्लोक 16 में दो पुरूष बताए हैं। दोनों नाशवान बताए हैं। उनके अन्तर्गत जितने प्राणी हैं, वे भी नाशवान हैं। (1) (क्षर पुरूष है, यह केवल इक्कीस ब्रह्माण्डों का प्रभु है, (2) अक्षर पुरूष यह 7 शंख ब्रह्माण्ड का प्रभु है। ये दोनों ही पूर्ण परमात्मा नहीं हैं। (गीता अध्याय 15 श्लोक 16)

❖ गीता अध्याय 15 श्लोक 17 में गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि उत्तमः पुरूषः तूः अन्यः अर्थात पुरूषोतम तो कोई ऊपर वर्णित दोनों पुरूषों (क्षर पुरूष तथा अक्षर पुरूष) से भिन्न है जिसको (परमात्मा इति उदाहृतः) परमात्मा कहा गया है। (यः लोकत्रयम्) जो तीनों लोकों में (आविश्य विभर्ति) प्रवेश करके धारण-पोषण करता है, (अव्ययः ईश्वरः) अविनाशी परमेश्वर है। (गीता अध्याय 15 श्लोक 17)

❖ पूर्ण परमात्मा परम अक्षर ब्रह्म है सिद्ध हुआ। उसकी भक्ति का मन्त्र ॐ, तत्, सत् है, यह भी सिद्ध हुआ। ॐ, तत्, सत्, जो तीन मन्त्र हैं, ये उपरोक्त तीनों प्रभुओं (ॐ = क्षर पुरूष अर्थात् क्षर ब्रह्म गीता ज्ञान दाता का, तत् = यह सांकेतिक है जो इसी पुस्तक में पूर्व में विवरण है, वहाँ पढ़ें, यह तत् नाम जाप = अक्षर पुरूष का है) सत् = यह भी सांकेतिक है, अधिक विस्तार पूर्व में दिए प्रकरण में इसी पुस्तक में पढ़ें। यह सत् मन्त्र परम अक्षर ब्रह्म) का है। श्री मद्भगवत गीता में ये पूर्ण मोक्ष प्राप्ति के सांकेतिक मन्त्र हैं। जो आज तक (सन् 2012 तक) किसी ने नहीं स्पष्ट किए। आप जी जो हरि ओम, तत् सत् जाप करते हैं, वह भी व्यर्थ है क्योंकि आप जी को तत् तथा सत् के वास्तविक मन्त्रों का ज्ञान नहीं है।

उदाहरण :- एक धनी व्यक्ति ने अपने धन को अपने घर में गढ्ढ़ा खोदकर दबा दिया। उस स्थान का केवल धनी व्यक्ति को ही पता था। उस धनी व्यक्ति ने एक बही (पैड) में सांकेतिक स्थान लिख दिया। धनी व्यक्ति की मत्यु अचानक हो गई। पिता का संस्कार करके पुत्रों ने वह पैड उठाई जिसमें पिता जी कहता था कि इस बही में धन कहाँ है, यह लिखा है। जिसे पिता जी किसी को नहीं दिखाते थे।

धनी व्यक्ति के मकान के आगे आँगन था, उस आंगन के एक कोने में मन्दिर बना था। बही (पैड) में लिखा था कि चाँदनी चौदस रात्रि 2 बजे सारा धन मन्दिर के गुम्बज में दबा रखा है। लड़कों ने मन्दिर का गुम्बज रात्रि के 2 बजे फोड़कर धन खोजा, कुछ नहीं मिला। बच्चों को बड़ा दुःख हुआ। एक दिन उनके पिता का मित्र दूसरे गाँव से शोक व्यक्त करने आया। बच्चों ने यथास्थान पर धन न मिलने की चिंता जताई। उस धनी के मित्र ने वह बही मँगाई और व्याख्या पढ़ी तो कहा कि मन्दिर के गुम्बज का पुनः निर्माण कराओ। वैसा ही कराना। मैं फिर किसी दिन आऊँगा, तब धन वाला स्थान बताऊँगा। वह व्यक्ति चांदनी चौदस को आया। रात्रि के दो बजे जिस स्थान पर मन्दिर के गुम्बज की चाँद की रोशनी से छाया थी, उस स्थान पर खुदाई कराई। सारा धन जो बही में लिखा था, वह मिल गया। बच्चे खुश तथा धनी हुए।

आप जी जो हरि ॐ तत् सत् का जाप कर रहे हो। आप मन्दिर का गुम्बज खोद रहे हो, कुछ भी हाथ नहीं आएगा। यथास्थान वास्तविक मन्त्र मेरे (सन्त रामपाल दास के) पास हैं। उनको ग्रहण करके भक्ति धनी तथा सुखी होओ।

प्रश्न :- राधा जी गाँव-बरसाना (उत्तर प्रदेश) नजदीक वन्दावन की रहने वाली थी। वहाँ के व्यक्ति "राधे-राधे" नाम जपते हैं। सुबह-सुबह या कभी-कभी आपस में मिलते हैं तो वे राम-राम नहीं बुलाते। वे कहते हैं, चाचा राधे-राधे। चाचा कहता है कि बेटा राधे-राधे। क्या वे मूर्ख हैं?

उत्तर :- तत्वज्ञान के अभाव से लोकवेद को सत्य ज्ञान मानकर यह शास्त्रविरूद्ध मन्त्रों का जाप चल रहा है। वैसे तो आप जी को पूर्व में स्पष्ट कर ही दिया है कि गीता अध्याय 16 श्लोक 23-24 में कहा है कि जो शास्त्रविधि को

त्यागकर मनमाना आचरण करते हैं अर्थात् जो नाम जाप शास्त्रों में नहीं हैं, उनका जाप करते हैं, उनको न सुख प्राप्त होता है, न सिद्धि प्राप्त होती है, न उनकी गति होती है अर्थात् व्यर्थ जाप साधना है। इससे तेरे लिए अर्जुन कर्तव्य और अकर्तव्य की व्यवस्था में शास्त्र ही प्रमाण हैं। यह पहले बता चुका हूँ। अब बात है कि चाचा-भतीजा राधे-राधे शब्द क्यों उच्चारण करते हैं। आप जानते हैं कि राधा जी कौन थी? राधा भगवान श्री क्ष्ण जी की प्रेमिका थी। उस समय बरसाना गाँव के व्यक्ति राधा जी को कुल्टा, बदचलन, निर्लज आदि-आदि विशेषणों से सम्बोधित करते थे। कहते थे यह दूसरे गाँव के नंद बाबा के लड़के से छिप-छिपकर मिलने जाती है, इसे अपने घर पर भी न आने देना। बेटियों पर गलत प्रभाव पड़ेगा। श्रीमान् जी! अब उसी बरसाना के व्यक्ति राधा जी के लिए स्वयं (स्त्री-पुरूष, युवतियाँ) कहते हैं कि राधे-राधे श्याम मिला दे, जैसा कि आप जी ने पूर्व के प्रश्न में बताया था कि हम यह नाम भी जाप करते हैं। अब न राधा जी हैं और न श्री क्ष्ण जी। अब बड़बड़ा रहे हैं सनिपात के ज्वर के रोगी की तरह राधे-राधे श्याम मिला दे। यही स्थिति अन्य मन्त्रों की हैं जो आपने पूर्व प्रश्न में कहे हैं, उनकी जानो। वे भी शास्त्र प्रमाणित न होने से व्यर्थ हैं।

❖ अब आपके इस प्रश्न का उत्तर बताता हूँ कि चाचा भी कहता है राधे-राधे, भतीजा भी कहता है राधे-राधे। आपको भी पता है कि राधा जी श्री क्ष्ण जी की प्रेमिका थी। आपको यह भी पता है कि जब रूकमणी जी को श्री क्ष्ण जी भगाकर रथ में बैठाकर लाने लगा तो रूकमणी जी का भाई अपनी बहन को छुड़ाने के लिए घोड़े पर सवार होकर पीछे दौड़ा था। श्री क्ष्ण जी ने पहले तो उसे पीटा था। फिर रथ के पीछे बाँधकर घसीटा था। रूकमणी जी भी श्री क्ष्ण जी की प्रेमिका थी। उनके बीच में रूकमणी का भाई आया था। उसकी क्या दशा की थी। श्री क्ष्ण जी ने रूकमणी की प्रार्थना पर रूकमणी के भाई की जान बख्सी थी। यदि आज भगवान क्ष्ण वर्तमान में होते, राधा भी होती और बरसाना वाले चाचा-भतीजा आपस में ये शब्द बोलते कि 'राधे-राधे' तो क्या श्री क्ष्ण जी पसन्द करते? कभी नहीं, चाचा-भतीजा दोनों को रथ से बाँधकर घसीटते। यदि आप किसी की प्रेमिका का नाम लेकर बड़बड़ाओगे तो प्रेमी के ऊपर कैसी गुजरेगी? यदि ताकतवर होगा तो मुँह फोड़ देगा, कमजोर होगा तो रोएगा। उसकी जान को कोसेगा, क्या वह प्रसन्न होगा? नहीं। इसलिए ये नाम जो शास्त्र प्रमाणित नहीं हैं, उनका जाप व्यर्थ है। शास्त्र प्रमाणित नाम मेरे पास हैं। आओ और अपना कल्याण कराओ।

प्रश्न :- आपने प्रश्न (पूर्ण गुरू की क्या पहचान है?) के उत्तर में एक स्थान पर लिखा है कि प्रमाणित हुआ कि ॐ (ओम्) नाम का जाप शास्त्र प्रमाणित है। (काल ब्रह्म की पूजा करनी चाहिए या नहीं?) के उत्तर में बहुत सारे ऋषियों की पूजा को शास्त्रविधि त्यागकर मनमाना आचरण कही है जो ॐ (ओम्) नाम का जाप करते थे।

उत्तर :- वे ऋषि जी ओम् (ॐ) नाम के जाप के साथ हठ करके घोर तप

भी करते थे। जिस कारण से उनकी साधना को शास्त्र विरूद्ध कहा है। ओम् (ॐ) नाम का जाप शास्त्र प्रमाणित तो है, परंतु मोक्षदायक नहीं है जिससे अनुत्तम गति (मुक्ति) प्राप्त होती है। इसलिए उन ऋषियों की पूजा विधि शास्त्रविरूद्ध है। वेद तथा गीता में उस पूर्ण परमात्मा की भक्ति करने को कहा है। उसकी भक्ति न करके मनमानी पूजा शास्त्रविरूद्ध है

प्रश्न :- महर्षि बाल्मिकी जी तो सत्ययुग में हुए थे, वे भी राम-राम जपते थे। क्या यह मन्त्र भी शास्त्र प्रमाणित नहीं हैं?

उत्तर :- पूर्व में बताया है कि गीता अध्याय 4 श्लोक 1-2 में गीता ज्ञान दाता ने बताया है कि यह ज्ञान मैंने सूर्य को सुनाया था। उसने अपने पुत्र मनु जी को सुनाया। फिर कुछेक राजऋषियों को प्राप्त हुआ। सत्ययुग के प्रारम्भ में ही ये सब सूर्य, मनु व राजर्षि हुए हैं। उनके बाद यह ज्ञान नष्ट हो गया था। महर्षि बाल्मिकी जी को सप्त ऋषि मिले थे। उन्होंने तपस्या करके सिद्धियाँ प्राप्त की थी। वही हठयोग करके तप विधि महर्षि बाल्मिकी जी को उन्होंने बता दी। जिस हठ योग तप को महर्षि बाल्मिकी जी ने तन-मन से श्रद्धा से किया। कुछ समय उपरान्त शरीर के ऊपर के भाग (सिर) में से आवाज सुनाई दी थी। वह थी "राम-राम"। उसी शब्द का उच्चारण महर्षि बाल्मिकी जी तपस्या के दौरान करने लगे। सुनने वाले को ऐसा लगता है जैसे ये मरा, मरा बोल रहे हैं, वास्तव में राम-राम का ही उच्चारण करते थे। उनको तपस्या का परिणाम मिला, उनमें सिद्धियाँ प्रवेश हो गईं। उनकी दिव्य दृष्टि खुल गई। जिस कारण से उन्होंने श्री रामचन्द्र जी के जन्म से हजारों वर्ष पूर्व ही रामायण अर्थात् श्री रामचन्द्र जी के जन्म की जीवन की सर्व घटनाऐं लिख दी थी, ग्रन्थ का नाम है "बाल्मिकी रामायण" जो संस्कृत भाषा में लिखी गई थी। राम-राम के जाप से कोई आध्यात्मिक लाभ नहीं होता। परंतु परमात्मा का बोधक शब्द होने से उच्चारण करने से परमात्मा की भूल नहीं पड़ती। इसलिए राम-नाम के उच्चारण का प्रचलन हिन्दू धर्म में प्राचीन समय से है। जैसे स्वामी रामानन्द जी राम-राम शब्द से सम्बोधित करते थे। उसके शिष्य भी एक-दूसरे को राम-राम से सम्बोधित करते थे, परन्तु जाप मन्त्र "ॐ" था। इसी प्रकार हम कबीर पंथी "सत साहेब" बुलाते हैं। हमारा जाप मन्त्र अन्य है। उसी भक्ति से भगवान तक जाया जाता है। सूक्ष्म वेद में कहा है :-

सतगुरू मिले तो इच्छा मेटै, पद मिल पदै समाना।
चल हंसा उस लोक पठाऊँ, जो अजर अमर अस्थाना।
चार मुक्ति जहाँ चम्पी करती, माया हो रही दासी।
दास गरीब अभय पद परसै, मिलै राम अविनाशी।।

''संक्षिप्त सृष्टि रचना''

श्री देवी भागवत पुराण के पहले स्कन्ध में अध्याय 1 से 8 पृष्ठ 21 से 43 पर प्रमाण है कि महर्षि व्यास जी के परम शिष्य श्री सूत जी से शौनकादि ऋषियों ने प्रश्न किया कि हे सूत जी! कृपा आप देवी पुराण की पावन कथा सुनाऐं। श्री सूत जी ने कहा (पृष्ठ 23) पौराणिकों एवं वैदिकों का कथन है तथा यह भली–भांति विदित भी है कि ब्रह्मा जी इस अखिल जगत् के सृष्टा हैं। साथ ही वे यह भी कहते हैं कि ब्रह्मा जी का जन्म भगवान् विष्णु जी के नाभि कमल से हुआ है। फिर ऐसी स्थिती में ब्रह्मा जी स्वतन्त्र सृष्टा कैसे ठहरे ? भगवान् विष्णु को स्वतन्त्र सृष्टा नहीं कह सकते क्योंकि वे शेष नाग की शय्या पर सोए थे। नाभि से कमल निकला और उस पर ब्रह्मा जी प्रकट हुए। किन्तु वे श्री विष्णु जी भी तो किसी आधार पर अवलम्बित थे। उनके आधार भूत क्षीर समुन्द्र को भी स्वतन्त्र सृष्टा नहीं माना जा सकता क्योंकि वह रस है, रस बिना पात्र के ठहरता नहीं कोई न कोई उसका आधार रहना ही चाहिए। अतएव चराचर जगत् की आधार भूता भगवती जगदम्बिका ही सृष्टा रूप में निश्चित हुई'' (देवी पुराण के पृष्ठ 41 पर लिखा है :–) ऋषियों ने पूछा :– महाभाग सूत जी ! इस कथा प्रसंग को जानकर तो हमें बड़ा ही आश्चर्य हो रहा है, क्योंकि वेद, शास्त्र, पुराण और विज्ञ जनों ने सदा यही निर्णय किया है कि ब्रह्मा, विष्णु और शंकर–ये ही तीनों सनातन देवता हैं। इनसे बढ़कर इस ब्रह्माण्ड में दूसरा कोई देवता है ही नहीं। आपने इस सर्व की सृष्टि कारण भूत जिस जगदम्बिका (दुर्गा) के विषय में कहा है वह कौन शक्ति है उसकी सृष्टि (उत्पति) कैसे हुई। यह सब बताने की कृपा करें।

सूत जी कहते हैं :– मुनिवरों ! चराचर सहित इस त्रिलोकी में कौन ऐसा है जो इस संदेह को दूर कर सके। ब्रह्मा जी के पुत्र नारद, कपिल आदि दिव्य महापुरूष भी इस प्रश्न का समाधान करने में निरूपाय हो जाते हैं। महानुभावों ! यह बड़ा ही गहन और विचारणीय है। इस सम्बन्ध में मैं क्या कह सकता हूँ?

(श्री देवीपुराण के तीसरे स्कन्ध के अध्याय 13 पृष्ठ 115 पर) नारद जी ने अपने पिता ब्रह्मा जी से पूछा ''पिता जी! यह सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड कहां से उत्पन्न हुआ है। विभो! आपने सम्यक प्रकार से इसकी रचना की है? अथवा विष्णु इस विश्व के रचियता हैं? या शंकर ने इसकी सृष्टि की है ? जगत् प्रभो! आप विश्व की आत्मा हैं। सच्ची बात बताने की कृपा करें। किस देवता की पूजा करनी चाहिए? तथा कौन देवता (प्रभु) सबसे बड़ा एवं सर्व समर्थ है? इन सभी प्रश्नों का समाधान करके मेरे हृदय के संदेह को दूर करने की कृपा कीजिए। ब्रह्मा जी ने कहा–बेटा मैं इस प्रश्न का क्या उत्तर दूँ? यह प्रश्न बड़ा ही जटिल है। इस संसार में कोई भी रागी पुरूष ऐसा नहीं है जिसे यह रहस्य विदित हो। (श्री देवी पुराण से लेख समाप्त)

प्रिय पाठक जनों ! जिस सृष्टि रचना के विषय में तथा सर्व समर्थ प्रभु के विषय में न व्यास जी जानते हैं न श्री ब्रह्मा जी। उस रहस्य को इस सृष्टि रचना के उल्लेख में निम्न पढ़ें :-

प्रभु प्रेमी आत्माऐं प्रथम बार निम्न सृष्टि की रचना को पढ़ेंगे तो ऐसे लगेगा जैसे दन्त कथा हो, परन्तु सर्व पवित्र सद्ग्रन्थों के प्रमाणों को पढ़कर दाँतों तले

ऊँगली दबाऐंगे कि यह वास्तविक अध्यात्मिक अमृत ज्ञान कहाँ छुपा था? कृप्या धैर्य के साथ पढ़ते रहिए तथा इस अमृत ज्ञान को सुरक्षित रखिए। आप की एक सौ एक पीढ़ी तक काम आएगा। पवित्रात्माऐं कृप्या सत्यनारायण (अविनाशी प्रभु अर्थात् सतपुरुष) द्वारा रची सृष्टि रचना अर्थात् अपने द्वारा निर्मित सर्व लोकों की रचना का वास्तविक ज्ञान पढ़ें।

सबसे पहले सतपुरुष अकेले थे, कोई रचना नहीं थी। सर्वप्रथम परमेश्वर जी ने चार अविनाशी लोक की रचना वचन (शब्द) से की।

1. अनामी लोक जिसको अकह लोक भी कहते हैं।

2. अगम लोक 3. अलख लोक 4. सतलोक।

फिर परमात्मा ने चारों लोकों में चार रुप धारण किए। चार उपमात्मक नामों से प्रत्येक लोक में प्रसिद्ध हुए।

1. अनामी लोक में अनामी पुरुष या अकह पुरुष।

2. अगम लोक में अगम पुरुष।

3. अलख लोक में अलख पुरुष।

4. सतलोक में सतपुरुष उपमात्मक नाम रखे।

फिर चारों लोकों में परमात्मा ने वचन से ही एक-एक सिंहासन (तख्त) बनाया। प्रत्येक सिंहासन पर सम्राट के समान मुकुट आदि धारण करके विराजमान हो गए। फिर सतलोक में परमेश्वर ने अन्य रचना की। एक शब्द (वचन) से 16 द्वीपों तथा एक मानसरोवर की रचना की। पुनः 16 वचन से 16 पुत्रों की उत्पत्ति की। उनमें मुख्य भूमिका अचिन्त, तेज, सहजदास, जोगजीत, कूर्म, इच्छा, धैर्य और ज्ञानी की रही है।

अपने पुत्रों को सबक सिखाने के लिए कि समर्थ के बिना कोई कार्य सफल नहीं हो सकता। जिसका काम उसी को साजे और करे तो मूर्ख बाजे।

सतपुरुष ने अपने पुत्र अचिन्त से कहा कि आप अन्य रचना सतलोक में करें। मैंने कुछ शक्ति तेरे को प्रदान कर दी है। अचिन्त ने अपने वचन से अक्षर पुरुष की उत्पत्ति की। अक्षर पुरुष युवा उत्पन्न हुआ। मानसरोवर में स्नान करने गया, उसी जल पर तैरने लगा। कुछ देर में निंद्रा आ गई। सरोवर में गहरा नीचे चला गया। (सतलोक में अमर शरीर है, वहाँ पर शरीर श्वांसों पर निर्भर नहीं है।) बहुत समय तक अक्षर पुरूष जल से बाहर नहीं आया। अचिन्त आगे संष्टि नहीं कर सका, तब सतपुरुष (परम अक्षर पुरुष) ने मानसरोवर पर जाकर कुछ जल अपनी चुल्लु (हाथ) में लिया। उसका एक विशाल अण्डा वचन से बनाया तथा एक आत्मा वचन से उत्पन्न करके अण्डे में प्रवेश की और अण्डे को जल में छोड़ दिया। जल में अण्डा नीचे जाने लगा तो उसकी गड़गड़ाहट के शोर से अक्षर पुरूष की निंद्रा भंग हो गई। अक्षर पुरुष ने क्रोध से देखा कि किसने मुझे जगा दिया। क्रोध उस अण्डे पर गिरा तो अण्डा फूट गया। उसमें से एक युवा तेजोमय व्यक्ति निकला। उसका नाम क्षर पुरुष रखा। (आगे चलकर यही काल कहलाया) सतपुरुष ने दोनों

से कहा कि आप जल से बाहर आओ। अक्षर पुरुष तुम निंद्रा में थे, तेरे को नींद से उठाने के लिए यह सब किया है। अक्षर पुरुष और क्षर पुरुष से सतपुरुष ने कहा कि आप दोनों अचिंत के लोक में रहो।

कुछ समय के पश्चात् (क्षर पुरुष जिसे ज्योति निरंजन काल भी कहते हैं) ने मन में विचार किया कि हम तीन तो एक लोक में रह रहे हैं। मेरे अन्य भाई एक-एक द्वीप में रह रहे हैं। यह विचार कर उसने अलग द्वीप प्राप्त करने के लिए तप प्रारम्भ किया। इससे पहले सतपुरुष जी ने अपने पुत्र अचिन्त से कहा कि आप सष्टि रचना नहीं कर सकते। मैंने तुम्हें यह शिक्षा देने के लिए ही आप से कहा कि अन्य रचना कर। परन्तु अचिन्त आप तो अक्षर पुरुष को भी नहीं उठा सके। अब आगे कोई भी यह कोशिश न करना। सर्व रचना मैं अपनी शब्द शक्ति से रचूँगा।

सतपुरुष जी ने सतलोक में असँख्यों लोक रचे तथा प्रत्येक में अपने वचन (शब्द) से अन्य आत्माओं की उत्पत्ति की। ये सब लोक सतपुरुष के सिंहासन के इर्द-गिर्द थे। इनमें केवल नर हंस (सतलोक में मनुष्यों को हंस कहते हैं) ही रहते हैं और उनको परमेश्वर ने शक्ति दे रखी है कि वे अपना परिवार (नर हंस) वचन से उत्पन्न कर सकते है। वे केवल दो पुत्र ही उत्पन्न कर सकते हैं।

क्षर पुरुष (ज्योति निरंजन) ने तप करना शुरु किया। उसने 70 युग तक तप किया। सत्पुरुष जी ने क्षर पुरुष से पूछा कि आप तप किसलिए कर रहे हो? क्षर पुरुष ने कहा कि यह स्थान मेरे लिए कम है। मुझे अलग स्थान चाहिए। परमेश्वर (सतपुरुष) जी ने उसे 70 युग के तप के प्रतिफल में 21 ब्रह्माण्ड दे दिए जो सतलोक के बाहरी क्षेत्र में थे जैसे 21 प्लॉट मिल गए हों। ज्योति निरंजन (क्षर पुरुष) ने विचार किया कि इन ब्रह्माण्डों में कुछ रचना भी होनी चहिए। उसके लिए, फिर 70 युग तक तप किया। फिर सतपुरुष जी ने पूछा कि अब क्या चाहता है? क्षर पुरुष ने कहा कि सष्टि रचना की सामग्री देने की कपा करें। सतपुरुष जी ने उसको पाँच तत्व (जल, पथ्वी, अग्नि, वायु तथा आकाश) तथा तीन गुण (रजगुण, सतगुण तथा तमगुण) दे दिये तथा कहा कि इनसे अपनी रचना कर।

क्षर पुरूष ने तीसरी बार फिर तप प्रारम्भ किया। जब 64 (चौंसठ) युग तप करते हो गए तो सत्य पुरूष जी ने पूछा कि आप और क्या चाहते हैं? क्षर पुरूष (ज्योति निरंजन) ने कहा कि मुझे कुछ आत्मा दे दो। मेरा अकेले का दिल नहीं लग रहा। क्षर पुरूष को आत्मा ऐसे मिली, आगे पढ़ें :-

''हम काल के लोक में कैसे आए?''

जिस समय क्षर पुरुष (ज्योति निरंजन) एक पैर पर खड़ा होकर तप कर रहा था। तब हम सभी आत्माऐं इस क्षर पुरुष पर आकर्षित हो गए। जैसे जवान बच्चे अभिनेता व अभिनेत्री पर आसक्त हो जाते हैं। लेना एक न देने दो। व्यर्थ में चाहने लग जाते हैं। वे अपनी कमाई करने के लिए नाचते-कूदते हैं। युवा-बच्चे उन्हें देखकर अपना धन नष्ट करते हैं। ठीक इसी प्रकार हम अपने परमपिता सतपुरुष

को छोड़कर काल पुरुष (क्षर पुरुष) को हृदय से चाहने लग गए थे। जो परमेश्वर हमें सर्व सुख सुविधा दे रहा था। उससे मुँह मोड़कर इस नकली ड्रामा करने वाले काल ब्रह्म को चाहने लगे। सत पुरुष जी ने बीच-बीच में बहुत बार आकाशवाणी की कि बच्चो तुम इस काल की क्रिया को मत देखो, मस्त रहो। हम ऊपर से तो सावधान हो गए, परन्तु अन्दर से चाहते रहे। परमेश्वर तो अन्तर्यामी है। इन्होंने जान लिया कि ये यहाँ रखने के योग्य नहीं रहे। काल पुरुष (क्षर पुरुष = ज्योति निरंजन) ने जब दो बार तप करके फल प्राप्त कर लिया तब उसने सोचा कि अब कुछ जीवात्मा भी मेरे साथ रहनी चाहिए। मेरा अकेले का दिल नहीं लगेगा। इसलिए जीवात्मा प्राप्ति के लिए तप करना शुरु किया। 64 युग तक तप करने के पश्चात् परमेश्वर जी ने पूछा कि ज्योति निरंजन अब किसलिए तप कर रहा है? क्षर पुरुष ने कहा कि कुछ आत्माएं प्रदान करो, मेरा अकेले का दिल नहीं लगता। सतपुरुष ने कहा कि तेरे तप के बदले में और ब्रह्माण्ड दे सकता हूं, परन्तु अपनी आत्माएं नहीं दूँगा। ये मेरे शरीर से उत्पन्न हुई हैं। हाँ, यदि वे स्वयं जाना चाहते हैं तो वह जा सकते हैं। युवा कविर् (समर्थ कबीर) के वचन सुनकर ज्योति निरंजन हमारे पास आया। हम सभी हंस आत्मा पहले से ही उस पर आसक्त थे। हम उसे चारों तरफ से घेरकर खड़े हो गए। ज्योति निरंजन ने कहा कि मैंने पिता जी से अलग 21 ब्रह्माण्ड प्राप्त किए हैं। वहाँ नाना प्रकार के रमणीय स्थल बनाए हैं। क्या आप मेरे साथ चलोगे? हम सभी हंसों ने जो आज 21 ब्रह्माण्डों में परेशान हैं, कहा कि हम तैयार हैं। यदि पिता जी आज्ञा दें, तब क्षर पुरूष(काल), पूर्ण ब्रह्म महान् कविर् (समर्थ कबीर प्रभु) के पास गया तथा सर्व वार्ता कही। तब कविरग्नि (कबीर परमेश्वर) ने कहा कि मेरे सामने स्वीकृति देने वाले को आज्ञा दूँगा। क्षर पुरूष तथा परम अक्षर पुरूष (कविर्मितौजा) दोनों हम सभी हंसात्माओं के पास आए। सत् कविर्देव ने कहा कि जो हंसात्मा ब्रह्म के साथ जाना चाहता हैं, हाथ ऊपर करके स्वीकृति दें। अपने पिता के सामने किसी की हिम्मत नहीं हुई। किसी ने स्वीकृति नहीं दी। बहुत समय तक सन्नाटा छाया रहा। तत्पश्चात् एक हंस आत्मा ने साहस किया तथा कहा कि पिता जी मैं जाना चाहता हूँ। फिर तो उसकी देखा-देखी (जो आज काल(ब्रह्म) के इक्कीस ब्रह्माण्डों में फँसी हैं) हम सभी आत्माओं ने स्वीकृति दे दी। परमेश्वर कबीर जी ने ज्योति निरंजन से कहा कि आप अपने स्थान पर जाओ। जिन्होंने तेरे साथ जाने की स्वीकृति दी है, मैं उन सर्व हंस आत्माओं को आपके पास भेज दूँगा। ज्योति निरंजन अपने 21 ब्रह्माण्डों में चला गया। उस समय तक यह इक्कीस ब्रह्माण्ड सतलोक में ही थे।

तत्पश्चात् पूर्ण ब्रह्म ने सर्व प्रथम स्वीकृति देने वाले हंस को लड़की का रूप दिया परन्तु स्त्री इन्द्री नहीं रची तथा सर्व आत्माओं को (जिन्होंने ज्योति निरंजन (ब्रह्म) के साथ जाने की सहमति दी थी) उस लड़की के शरीर में प्रवेश कर दिया तथा उसका नाम आष्ट्रा (आदि माया/प्रकृति देवी/दुर्गा) पड़ा तथा सत्यपुरूष ने कहा कि पुत्री मैंने तेरे को शब्द शक्ति प्रदान कर दी है। जितने जीव ब्रह्म कहे आप

उत्पन्न कर देना। पूर्ण ब्रह्म कर्विदेव (कबीर साहेब) ने अपने पुत्र सहज दास के द्वारा प्रकृति को क्षर पुरूष के पास भिजवा दिया। सहज दास जी ने ज्योति निरंजन को बताया कि पिता जी ने इस बहन के शरीर में उन सब आत्माओं को प्रवेश कर दिया है, जिन्होंने आपके साथ जाने की सहमति व्यक्त की थी। इसको वचन शक्ति प्रदान की है, आप जितने जीव चाहोगे प्रकृति अपने शब्द से उत्पन्न कर देगी। यह कहकर सहजदास वापिस अपने द्वीप में आ गया।

युवा होने के कारण लड़की का रंग-रूप निखरा हुआ था। ब्रह्म के अन्दर विषय-वासना उत्पन्न हो गई तथा प्रकृति देवी के साथ अभद्र गतिविधि प्रारम्भ की। तब दुर्गा ने कहा कि ज्योति निरंजन मेरे पास पिता जी की प्रदान की हुई शब्द शक्ति है। आप जितने प्राणी कहोगे मैं वचन से उत्पन्न कर दूँगी। आप मैथुन परम्परा शुरू मत करो। आप भी उसी पिता के शब्द से अण्डे से उत्पन्न हुए हो तथा मैं भी उसी परमपिता के वचन से ही बाद में उत्पन्न हुई हूँ। आप मेरे बड़े भाई हो, बहन-भाई का यह योग महापाप का कारण बनेगा। परन्तु ज्योति निरंजन ने प्रकृति देवी की एक भी प्रार्थना नहीं सुनी तथा अपनी शब्द शक्ति द्वारा नाखुनों से स्त्री इन्द्री (भग) प्रकृति को लगा दी तथा बलात्कार करने की ठानी। उसी समय दुर्गा ने अपनी इज्जत रक्षा के लिए कोई और चारा न देखकर सूक्ष्म रूप बनाया तथा ज्योति निरंजन के खुले मुख के द्वारा पेट में प्रवेश करके पूर्ण ब्रह्म कविर् देव से अपनी रक्षा के लिए याचना की। उसी समय कर्विदेव(कविर् देव) अपने पुत्र योग संतायन अर्थात् जोगजीत का रूप बनाकर वहाँ प्रकट हुए तथा कन्या को ब्रह्म के उदर से बाहर निकाला तथा कहा ज्योति निरंजन आज से तेरा नाम 'काल' होगा। तेरे जन्म-मृत्यु होते रहेंगे। इसीलिए तेरा नाम क्षर पुरूष होगा तथा एक लाख मानव शरीर धारी प्रणियों को प्रतिदिन खाया करेगा व सवा लाख उत्पन्न किया करेगा। आप दोनों को इक्कीस ब्रह्माण्ड सहित निष्कासित किया जाता है। इतना कहते ही इक्कीस ब्रह्माण्ड विमान की तरह चल पड़े। सहज दास के द्वीप के पास से होते हुए सतलोक से सोलह शंख कोस (एक कोस लगभग 3 कि.मी. का होता है) की दूरी पर आकर रूक गए।

विशेष विवरण :- अब तक तीन शक्तियों का विवरण आया है।

1. पूर्णब्रह्म जिसे अन्य उपमात्मक नामों से भी जाना जाता है, जैसे सतपुरूष, अकालपुरूष, शब्द स्वरूपी राम, परम अक्षर ब्रह्म/पुरूष आदि। यह पूर्णब्रह्म असंख्य ब्रह्माण्डों का स्वामी है तथा वास्तव में अविनाशी है।

2. परब्रह्म जिसे अक्षर पुरूष भी कहा जाता है। यह वास्तव में अविनाशी नहीं है। यह सात शंख ब्रह्माण्डों का स्वामी है।

3. ब्रह्म जिसे ज्योति निरंजन, काल, कैल, क्षर पुरूष तथा धर्मराय आदि नामों से जाना जाता है जो केवल इक्कीस ब्रह्माण्ड का स्वामी है। अब आगे इसी ब्रह्म (काल) की सृष्टि के एक ब्रह्माण्ड का परिचय दिया जाएगा जिसमें तीन और नाम आपके पढ़ने में आयेंगे:- ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव।

<u>ब्रह्म तथा ब्रह्मा में भेद</u> - एक ब्रह्माण्ड में बने सर्वोपरि स्थान पर ब्रह्म (क्षर पुरूष) स्वयं तीन गुप्त स्थानों की रचना करके ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव रूप में रहता है तथा अपनी पत्नी प्रकृति (दुर्गा) के सहयोग से तीन पुत्रों की उत्पत्ति करता है। उनके नाम भी ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव ही रखता है। जो ब्रह्म का पुत्र ब्रह्मा है, वह एक ब्रह्माण्ड में केवल तीन लोकों (पृथ्वी लोक, स्वर्ग लोक तथा पाताल लोक) में एक रजोगुण विभाग का मंत्री (स्वामी) है। इसे त्रिलोकिय ब्रह्मा कहा है तथा ब्रह्म जो ब्रह्मलोक में ब्रह्मा रूप में रहता है, उसे महाब्रह्मा व ब्रह्मलोकिय ब्रह्मा कहा है। इसी ब्रह्म (काल) को सदाशिव, महाशिव, महाविष्णु भी कहा है।

श्री विष्णु पुराण में प्रमाण :- चतुर्थ अंश अध्याय 1 पृष्ठ 230-231 पर श्री ब्रह्मा जी ने कहा:- जिस अजन्मा सर्वमय विधाता परमेश्वर का आदि, मध्य, अन्त, स्वरूप, स्वभाव और सार हम नहीं जान पाते। (श्लोक 83)

जो मेरा रूप धारण कर संसार की रचना करता है, स्थिति के समय जो पुरूष रूप है तथा जो रूद्र रूप से विश्व का ग्रास कर जाता है, अनन्त रूप से सम्पूर्ण जगत् को धारण करता है। (श्लोक 86)

"श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी व श्री शिव जी की उत्पत्ति"

काल(ब्रह्म) ने प्रकृति (दुर्गा) से कहा कि अब मेरा कौन क्या बिगाड़ेगा? मनमानी करूँगा। प्रकृति ने फिर प्रार्थना की कि आप कुछ शर्म करो। प्रथम तो आप मेरे बड़े भाई हो क्योंकि उसी पूर्ण परमात्मा (कविर्देव) की वचन शक्ति से आपकी (ब्रह्म) की अण्डे से उत्पत्ति हुई तथा बाद मे मेरी उत्पत्ति उसी परमेश्वर के वचन से हुई है। दूसरे मैं आपके पेट से बाहर निकली हूँ। मैं आपकी बेटी हुई तथा आप मेरे पिता हुए। इन पवित्र नातों में बिगाड़ करना महापाप होगा। मेरे पास पिता की प्रदान की हुई शब्द शक्ति है, जितने प्राणी आप कहोगे मैं वचन से उत्पन्न कर दूँगी। ज्योति निरंजन ने दुर्गा की एक भी विनय नहीं सुनी तथा कहा कि मुझे जो सजा मिलनी थी, मिल गई। मुझे सतलोक से निष्कासित कर दिया। अब मैं मनमानी करूँगा। यह कहकर काल पुरूष (क्षर पुरूष) ने प्रकृति के साथ जबरदस्ती शादी की तथा तीन पुत्रों (रजगुण युक्त ब्रह्मा जी, सतगुण युक्त विष्णु जी तथा तमगुण युक्त शिव शंकर जी) की उत्पत्ति की। जवान होने तक तीनों पुत्रों को दुर्गा के द्वारा अचेत करवा देता है, फिर युवा होने पर श्री ब्रह्मा जी को कमल के फूल पर, श्री विष्णु जी को शेष नाग की शैय्या पर तथा श्री शिव जी को कैलाश पर्वत पर सचेत करके इकट्ठे कर देता है। तत्पश्चात् प्रकृति (दुर्गा) द्वारा इन तीनों का विवाह कर दिया जाता है तथा एक ब्रह्माण्ड में तीन लोकों (स्वर्ग लोक, पृथ्वी लोक, तथा पाताल लोक) में एक-एक विभाग के मंत्री पद को संभालता है। एक ब्रह्माण्ड में एक ब्रह्मलोक की रचना की है। उसी में तीन गुप्त स्थान बनाए हैं। एक रजोगुण प्रधान स्थान है जहाँ पर यह ब्रह्म (काल) स्वयं महाब्रह्मा (मुख्यमंत्री) रूप में रहता है तथा अपनी पत्नी दुर्गा को महासावित्री रूप में रखता है। इन दोनों के संयोग

(देखें एक ब्रह्माण्ड का लघु चित्र)

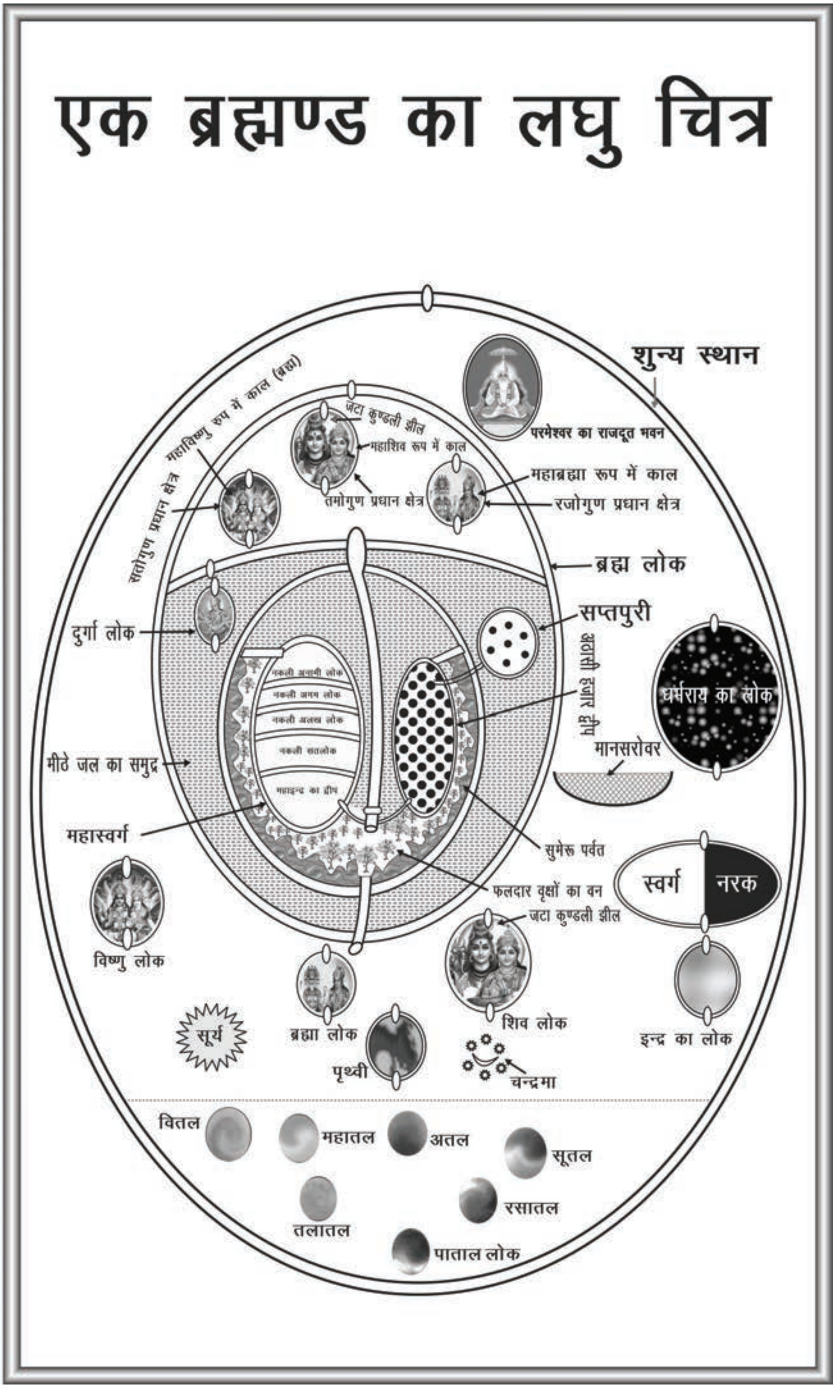

से जो पुत्र इस स्थान पर उत्पन्न होता है, वह स्वतः ही रजोगुणी बन जाता है। दूसरा स्थान सतोगुण प्रधान स्थान बनाया है। वहाँ पर यह क्षर पुरूष स्वयं महाविष्णु रूप बनाकर रहता है तथा अपनी पत्नी दुर्गा को महालक्ष्मी रूप में रखकर जो पुत्र उत्पन्न करता है उसका नाम विष्णु रखता है, वह बालक सतोगुण युक्त होता है तथा तीसरा इसी काल ने वहीं पर एक तमोगुण प्रधान क्षेत्र बनाया है। उसमें यह स्वयं सदाशिव रूप बनाकर रहता है तथा अपनी पत्नी दुर्गा को महापार्वती रूप में रखता है। इन दोनों के पति-पत्नी व्यवहार से जो पुत्र उत्पन्न होता है, उसका नाम शिव रख देते हैं तथा तमोगुण युक्त कर देते हैं। (प्रमाण के लिए देखें पवित्र श्री शिव महापुराण, विध्वेश्वर संहिता के पष्ठ 24-26 पर जिसमें ब्रह्मा, विष्णु, रूद्र तथा महेश्वर से अन्य सदाशिव है तथा रूद्र संहिता अध्याय 6 तथा 7,9 पष्ठ नं०. 100 से, 105 तथा 110 पर अनुवादकर्ता श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार, गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित तथा पवित्र श्रीमद् देवी महापुराण तीसरा स्कंद पष्ठ नं. 114 से 123 तक, गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित, जिसके अनुवाद कर्ता है श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार चिमन लाल गोस्वामी) फिर इन्हीं को धोखे में रखकर अपने खाने के लिए जीवों की उत्पत्ति श्री ब्रह्मा जी द्वारा तथा स्थिति (एक-दूसरे को मोह-ममता में रखकर काल जाल में रखना) श्री विष्णु जी से तथा संहार (क्योंकि काल पुरूष को शापवश एक लाख मानव शरीर धारी प्राणियों के सूक्ष्म शरीर से मैल निकालकर खाना होता है, उसके लिए इक्कीसवें ब्रह्माण्ड में एक तप्तशिला है जो स्वतः गर्म रहती है, उस पर गर्म करके मैल पिघलाकर खाता है, जीव मरते नहीं परन्तु कष्ट असहनीय होता है, फिर प्राणियों को कर्म आधार पर अन्य शरीर प्रदान करता है) श्री शिव जी द्वारा करवाता है। जैसे किसी मकान में तीन कमरे बने हों। एक कमरे में अश्लील चित्र लगे हों। उस कमरे में जाते ही मन में वैसे ही मलीन विचार उत्पन्न हो जाते हैं। दूसरे कमरे में साधु-सन्तों, भक्तों के चित्र लगे हों तो मन में अच्छे विचार, प्रभु का चिंतन ही बना रहता है। तीसरे कमरे में देशभक्तों व शहीदों के चित्र लगे हों तो मन में वैसे ही जोशीले विचार उत्पन्न हो जाते हैं। ठीक इसी प्रकार ब्रह्म(काल) ने अपनी सूझ-बूझ से उपरोक्त तीनों गुण प्रधान स्थानों की रचना की हुई है।

(देखें ब्रह्म लोक का लघु चित्र व ज्योति निरंजन (काल) ब्रह्म, के लोक 21 ब्रह्माण्ड का लघु चित्र इसी पुस्तक के पष्ठ 216 व 217 पर)

ब्रह्म लोक का लघु चित्र

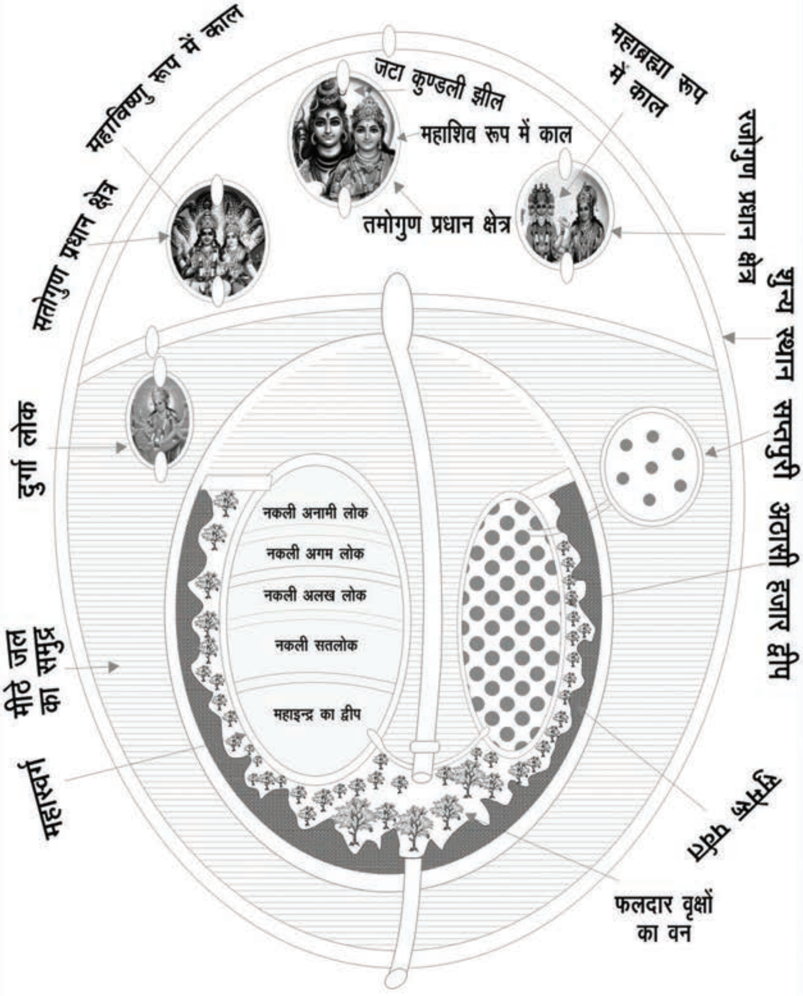

ज्योति निरंजन (काल) ब्रह्म के लोक (21 ब्रह्मण्ड) का लघु चित्र

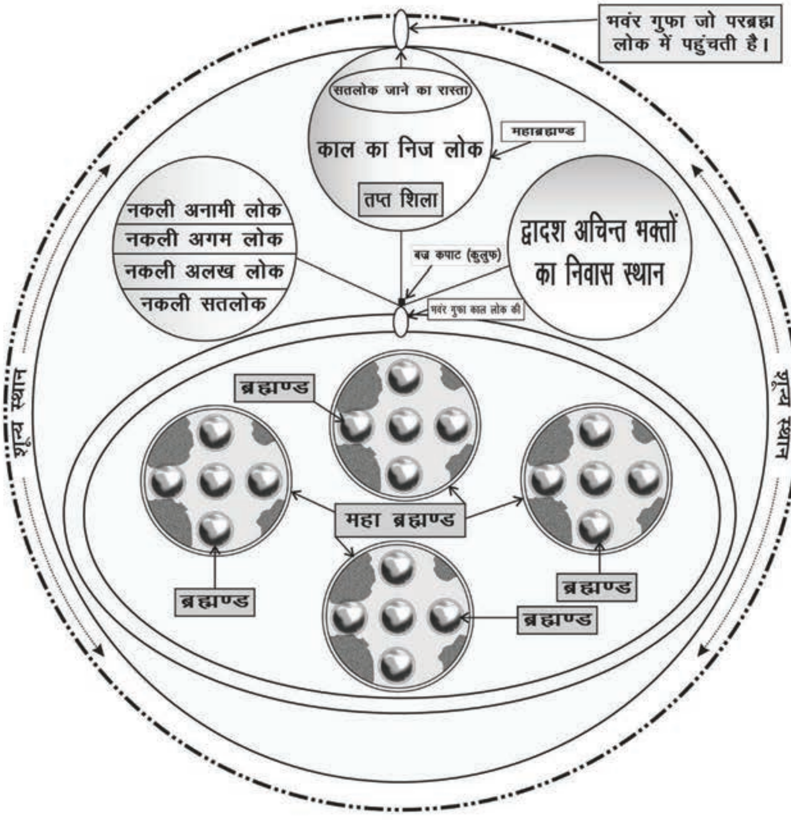

''सम्पूर्ण स॑ष्टि रचना''

(सूक्ष्मवेद से निष्कर्ष रूप स॑ष्टि रचना का वर्णन)

प्रभु प्रेमी आत्माऐं प्रथम बार निम्न स॑ष्टि की रचना को पढेंगे तो ऐसे लगेगा जैसे दन्त कथा हो, परन्तु सर्व पवित्र सद्ग्रन्थों के प्रमाणों को पढ़कर दाँतों तले उँगली दबाऐंगे कि यह वास्तविक अम॑त ज्ञान कहाँ छुपा था? क॑प्या धैर्य के साथ पढ़ते पढ़ें तथा इस अम॑त ज्ञान को सुरक्षित रखें। आप की एक सौ एक पीढ़ी तक काम आएगा। पवित्रात्माऐं क॑प्या सत्यनारायण (अविनाशी प्रभु/सतपुरुष) द्वारा रची स॑ष्टि रचना का वास्तविक ज्ञान पढ़ें।

1. पूर्ण ब्रह्म :- इस स॑ष्टि रचना में सतपुरुष-सतलोक का स्वामी (प्रभु), अलख पुरुष-अलख लोक का स्वामी (प्रभु), अगम पुरुष-अगम लोक का स्वामी (प्रभु) तथा अनामी पुरुष-अनामी अकह लोक का स्वामी (प्रभु) तो एक ही पूर्ण ब्रह्म है, जो वास्तव में अविनाशी प्रभु है जो भिन्न-२ रूप धारण करके अपने चारों लोकों में रहता है। जिसके अन्तर्गत असंख्य ब्रह्माण्ड आते हैं।

2. परब्रह्म :- यह केवल सात संख ब्रह्माण्ड का स्वामी (प्रभु) है। यह अक्षर पुरुष भी कहलाता है। परन्तु यह तथा इसके ब्रह्माण्ड भी वास्तव में अविनाशी नहीं है।

3. ब्रह्म :- यह केवल इक्कीस ब्रह्माण्ड का स्वामी (प्रभु) है। इसे क्षर पुरुष, ज्योति निरंजन, काल आदि उपमा से जाना जाता है। यह तथा इसके सर्व ब्रह्माण्ड नाशवान हैं।

(उपरोक्त तीनों पुरूषों (प्रभुओं) का प्रमाण पवित्र श्री मद्भगवत गीता अध्याय 15 श्लोक 16-17 में भी है।)

4. ब्रह्मा :- ब्रह्मा इसी ब्रह्म का ज्येष्ठ पुत्र है, विष्णु मध्य वाला पुत्र है तथा शिव अंतिम तीसरा पुत्र है। ये तीनों ब्रह्म के पुत्र केवल एक ब्रह्माण्ड में एक विभाग (गुण) के स्वामी (प्रभु) हैं तथा नाशवान हैं। विस्त॑त विवरण के लिए क॑प्या पढ़ें निम्न लिखित स॑ष्टि रचना :-

{कविर्देव (कबीर परमेश्वर) ने सुक्ष्म वेद अर्थात् कबिर्बाणी में अपने द्वारा रची स॑ष्टि का ज्ञान स्वयं ही बताया है जो निम्नलिखित है}

सर्व प्रथम केवल एक स्थान 'अनामी (अनामय) लोक' था। जिसे अकह लोक भी कहा जाता है, पूर्ण परमात्मा उस अनामी लोक में अकेला रहता था। उस परमात्मा का वास्तविक नाम कविर्देव अर्थात् कबीर परमेश्वर है। सभी आत्माऐं उस पूर्ण धनी के शरीर में समाई हुई थी। इसी कविर्देव का उपमात्मक (पदवी का) नाम अनामी पुरुष है (पुरुष का अर्थ प्रभु होता है। प्रभु ने मनुष्य को अपने ही स्वरूप में बनाया है, इसलिए मानव का नाम भी पुरुष ही पड़ा है।) अनामी पुरूष के एक रोम कूप का प्रकाश संख सूर्यों की रोशनी से भी अधिक है।

परमेश्वर कबीर साहेब के असंख्य ब्रह्मण्डों का लघु चित्र

अनामी लोक : इस लोक में आत्मा और परमात्मा एक रूप होकर कबीर साहेब ही अनामी रूप में है। जैसे मिट्टी के ढले (छोटे–छोटे टुकड़े) हो जाते हैं। फिर वर्षा होने पर एक पृथ्वी बन जाती है, अलग आस्तित्व नहीं रहता।

अगम लोक : इस लोक में भी कबीर साहेब अगम पुरूष रूप में रहते हैं।

अलख लोक : इस लोक में भी कबीर साहेब अलख पुरूष रूप में रहते हैं।

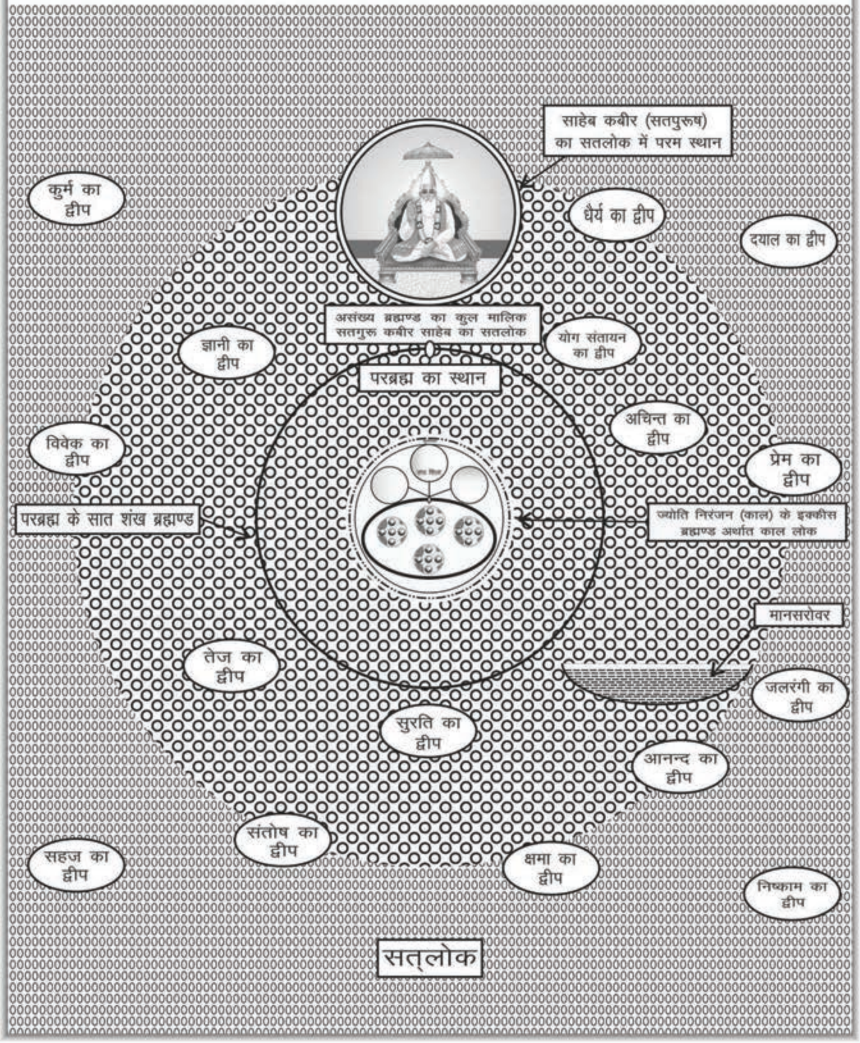

विशेष :- जैसे किसी देश के आदरणीय प्रधान मंत्री जी का शरीर का नाम तो अन्य होता है तथा पद का उपमात्मक (पदवी का) नाम प्रधानमंत्री होता है। कई बार प्रधानमंत्री जी अपने पास कई विभाग भी रख लेते हैं। तब जिस भी विभाग के दस्तावेजों पर हस्ताक्षर करते हैं तो उस समय उसी पद को लिखते हैं। जैसे गृह मंत्रालय के दस्तावेजों पर हस्ताक्षर करेगें तो अपने को गृह मंत्री लिखेगें। वहाँ उसी व्यक्ति के हस्ताक्षर की शक्ति कम होती है। इसी प्रकार कबीर परमेश्वर (कविर्देव) की रोशनी में अंतर भिन्न-२ लोकों में होता जाता है।

ठीक इसी प्रकार पूर्ण परमात्मा कविर्देव (कबीर परमेश्वर) ने नीचे के तीन और लोकों (अगमलोक, अलख लोक, सतलोक) की रचना शब्द(वचन) से की। यही पूर्णब्रह्म परमात्मा कविर्देव (कबीर परमेश्वर) ही अगम लोक में प्रकट हुआ तथा कविर्देव (कबीर परमेश्वर) अगम लोक का भी स्वामी है तथा वहाँ इनका उपमात्मक (पदवी का) नाम अगम पुरुष अर्थात् अगम प्रभु है। इसी अगम प्रभु का मानव सदृश शरीर बहुत तेजोमय है जिसके एक रोम कूप की रोशनी खरब सूर्य की रोशनी से भी अधिक है।

यह पूर्ण परमात्मा कविर्देव (कबिर देव=कबीर परमेश्वर) अलख लोक में प्रकट हुआ तथा स्वयं ही अलख लोक का भी स्वामी है तथा उपमात्मक (पदवी का) नाम अलख पुरुष भी इसी परमेश्वर का है तथा इस पूर्ण प्रभु का मानव सदृश शरीर तेजोमय (स्वर्ज्योति) स्वयं प्रकाशित है। एक रोम कूप की रोशनी अरब सूर्यों के प्रकाश से भी ज्यादा है।

यही पूर्ण प्रभु सतलोक में प्रकट हुआ तथा सतलोक का भी अधिपति यही है। इसलिए इसी का उपमात्मक (पदवी का) नाम सतपुरुष (अविनाशी प्रभु)है। इसी का नाम अकालमूर्ति - शब्द स्वरूपी राम - पूर्ण ब्रह्म - परम अक्षर ब्रह्म आदि हैं। इसी सतपुरुष कविर्देव (कबीर प्रभु) का मानव सदृश शरीर तेजोमय है। जिसके एक रोमकूप का प्रकाश करोड़ सूर्यों तथा इतने ही चन्द्रमाओं के प्रकाश से भी अधिक है।

इस कविर्देव (कबीर प्रभु) ने सतपुरुष रूप में प्रकट होकर सतलोक में विराजमान होकर प्रथम सतलोक में अन्य रचना की।

एक शब्द (वचन) से सोलह द्वीपों की रचना की। फिर सोलह शब्दों से सोलह पुत्रों की उत्पत्ति की। एक मानसरोवर की रचना की जिसमें अमृत भरा। सोलह पुत्रों के नाम हैं :-(1) ''कूर्म'', (2)''ज्ञानी'', (3) ''विवेक'', (4) ''तेज'', (5) ''सहज'', (6) ''सन्तोष'', (7)''सुरति'', (8) ''आनन्द'', (9) ''क्षमा'', (10) ''निष्काम'', (11) 'जलरंगी' (12)''अचिन्त'', (13) ''प्रेम'', (14) ''दयाल'', (15) ''धैर्य'' (16) ''योग संतायन'' अर्थात् ''योगजीत''।

सतपुरुष कविर्देव ने अपने पुत्र अचिन्त को सत्यलोक की अन्य रचना का भार सौंपा तथा शक्ति प्रदान की। अचिन्त ने अक्षर पुरुष (परब्रह्म) की शब्द से उत्पत्ति की तथा कहा कि मेरी मदद करना। अक्षर पुरुष स्नान करने मानसरोवर पर गया,

वहाँ आनन्द आया तथा सो गया। लम्बे समय तक बाहर नहीं आया। तब अचिन्त की प्रार्थना पर अक्षर पुरुष को नींद से जगाने के लिए कविर्देव (कबीर परमेश्वर) ने उसी मानसरोवर से कुछ अमृत जल लेकर एक अण्डा बनाया तथा उस अण्डे में एक आत्मा प्रवेश की तथा अण्डे को मानसरोवर के अमृत जल में छोड़ा। अण्डे की गड़गड़ाहट से अक्षर पुरुष की निंद्रा भंग हुई। उसने अण्डे को क्रोध से देखा जिस कारण से अण्डे के दो भाग हो गए। उसमें से ज्योति निरंजन (क्षर पुरुष) निकला जो आगे चलकर 'काल' कहलाया। इसका वास्तविक नाम ''कैल'' है। तब सतपुरुष (कविर्देव) ने आकाशवाणी की कि आप दोनों बाहर आओ तथा अचिंत के द्वीप में रहो। आज्ञा पाकर अक्षर पुरुष तथा क्षर पुरुष (कैल) दोनों अचिंत के द्वीप में रहने लगे (बच्चों की नालायकी उन्हीं को दिखाई कि कहीं फिर प्रभुता की तड़फ न बन जाए, क्योंकि समर्थ बिन कार्य सफल नहीं होता) फिर पूर्ण धनी कविर्देव ने सर्व रचना स्वयं की। अपनी शब्द शक्ति से एक राजेश्वरी (राष्ट्री) शक्ति उत्पन्न की, जिससे सर्व ब्रह्माण्डों को स्थापित किया। इसी को पराशक्ति परानन्दनी भी कहते हैं। पूर्ण ब्रह्म ने सर्व आत्माओं को अपने ही अन्दर से अपनी वचन शक्ति से अपने मानव शरीर सदृश उत्पन्न किया। प्रत्येक हंस आत्मा का परमात्मा जैसा ही शरीर रचा जिसका तेज 16 (सोलह) सूर्यों जैसा मानव सदृश ही है। परन्तु परमेश्वर के शरीर के एक रोम कूप का प्रकाश करोड़ों सूर्यों से भी ज्यादा है। बहुत समय उपरान्त क्षर पुरुष (ज्योति निरंजन) ने सोचा कि हम तीनों (अचिन्त - अक्षर पुरुष - क्षर पुरुष) एक द्वीप में रह रहे हैं तथा अन्य एक-एक द्वीप में रह रहे हैं। मैं भी साधना करके अलग द्वीप प्राप्त करूँगा। उसने ऐसा विचार करके एक पैर पर खड़ा होकर सत्तर (70) युग तक तप किया।

"आत्माऐं काल के जाल में कैसे फँसी?"

विशेष :- जब ब्रह्म (ज्योति निरंजन) तप कर रहा था हम सभी आत्माऐं, जो आज ज्योति निरंजन के इक्कीस ब्रह्माण्डों में रहते हैं इसकी साधना पर आसक्त हो गए तथा अन्तरात्मा से इसे चाहने लगे। अपने सुखदाई प्रभु सत्य पुरूष से विमुख हो गए। जिस कारण से पतिव्रता पद से गिर गए। पूर्ण प्रभु के बार-बार सावधान करने पर भी हमारी आसक्ति क्षर पुरुष से नहीं हटी। {यही प्रभाव आज भी काल सृष्टि में विद्यमान है। जैसे नौजवान बच्चे फिल्म स्टारों (अभिनेताओं तथा अभिनेत्रियों) की बनावटी अदाओं तथा अपने रोजगार उद्देश्य से कर रहे भूमिका पर अति आसक्त हो जाते हैं, रोकने से नहीं रूकते। यदि कोई अभिनेता या अभिनेत्री निकटवर्ती शहर में आ जाए तो देखें उन नादान बच्चों की भीड़ केवल दर्शन करने के लिए बहु संख्या में एकत्रित हो जाती हैं। 'लेना एक न देने दो' रोजी रोटी अभिनेता कमा रहे हैं, नौजवान बच्चे लुट रहे हैं। माता–पिता कितना ही समझाऐं किन्तु बच्चे नहीं मानते। कहीं न कहीं, कभी न कभी, लुक–छिप कर जाते ही रहते हैं।}

पूर्ण ब्रह्म कविर्देव (कबीर प्रभु) ने क्षर पुरुष से पूछा कि बोलो क्या चाहते हो?

उसने कहा कि पिता जी यह स्थान मेरे लिए कम है, मुझे अलग से द्वीप प्रदान करने की कृपा करें। हक्का कबीर (सत् कबीर) ने उसे 21 (इक्कीस) ब्रह्माण्ड प्रदान कर दिए। कुछ समय उपरान्त ज्योति निरंजन ने सोचा इस में कुछ रचना करनी चाहिए। खाली ब्रह्माण्ड(प्लाट) किस काम के। यह विचार कर 70 युग तप करके पूर्ण परमात्मा कविर्देव (कबीर प्रभु) से रचना सामग्री की याचना की। सतपुरुष ने उसे तीन गुण तथा पाँच तत्व प्रदान कर दिए, जिससे ब्रह्म (ज्योति निरंजन) ने अपने ब्रह्माण्डों में कुछ रचना की। फिर सोचा कि इसमें जीव भी होने चाहिए, अकेले का दिल नहीं लगता। यह विचार करके 64 (चौसठ) युग तक फिर तप किया। पूर्ण परमात्मा कविर् देव के पूछने पर बताया कि मुझे कुछ आत्मा दे दो, मेरा अकेले का दिल नहीं लग रहा। तब सतपुरुष कविरग्नि (कबीर परमेश्वर) ने कहा कि ब्रह्म तेरे तप के प्रतिफल में मैं तुझे और ब्रह्माण्ड दे सकता हूँ, परन्तु मेरी आत्माओं को किसी भी जप-तप साधना के फल रूप में नहीं दे सकता। हाँ, यदि कोई स्वेच्छा से तेरे साथ जाना चाहे तो वह जा सकता है। युवा कविर् (समर्थ कबीर) के वचन सुन कर ज्योति निरंजन हमारे पास आया। हम सभी हंस आत्मा पहले से ही उस पर आसक्त थे। हम उसे चारों तरफ से घेर कर खड़े हो गए। ज्योति निंरजन ने कहा कि मैंने पिता जी से अलग 21 ब्रह्माण्ड प्राप्त किए हैं। वहाँ नाना प्रकार के रमणीय स्थल बनाए हैं। क्या आप मेरे साथ चलोगे? हम सभी हंसों ने जो आज 21 ब्रह्माण्डों में परेशान हैं, कहा कि हम तैयार हैं यदि पिता जी आज्ञा दें तब क्षर पुरुष पूर्ण ब्रह्म महान् कविर् (समर्थ कबीर प्रभु) के पास गया तथा सर्व वार्ता कही। तब कविरग्नि (कबीर परमेश्वर) ने कहा कि मेरे सामने स्वीकृति देने वाले को आज्ञा दूंगा। क्षर पुरुष तथा परम अक्षर पुरुष (कविरमितौजा=कविर अमित औजा यानि जिसकी शक्ति का कोई वार नहीं, वह कबीर) दोनों हम सभी हंसात्माओं के पास आए। सत् कविर्देव ने कहा कि जो हंस आत्मा ब्रह्म के साथ जाना चाहता है हाथ ऊपर करके स्वीकृति दे। अपने पिता के सामने किसी की हिम्मत नहीं हुई। किसी ने स्वीकृति नहीं दी। बहुत समय तक सन्नाटा छाया रहा। तत्पश्चात् एक हंस आत्मा ने साहस किया तथा कहा कि पिता जी मैं जाना चाहता हूँ। फिर तो उसकी देखा-देखी (जो आज काल (ब्रह्म) के इक्कीस ब्रह्माण्डों में फंसी हैं) हम सभी आत्माओं ने स्वीकृति दे दी। परमेश्वर कबीर जी ने ज्योति निरंजन से कहा कि आप अपने स्थान पर जाओ। जिन्होंने तेरे साथ जाने की स्वीकृति दी है मैं उन सर्व हंस आत्माओं को आपके पास भेज दूंगा। ज्योति निरंजन अपने 21 ब्रह्माण्डों में चला गया। उस समय तक यह इक्कीस ब्रह्माण्ड सतलोक में ही थे।

तत्पश्चात् पूर्ण ब्रह्म ने सर्व प्रथम स्वीकृति देने वाले हंस को लड़की का रूप दिया परन्तु स्त्री इन्द्री नहीं रची तथा सर्व आत्माओं को (जिन्होंने ज्योति निरंजन (ब्रह्म) के साथ जाने की सहमति दी थी) उस लड़की के शरीर में प्रवेश कर दिया तथा उसका नाम आष्ट्रा (आदि माया/ प्रकृति देवी/ दुर्गा) पड़ा तथा सत्य पुरूष ने कहा कि पुत्री मैंने तेरे को शब्द शक्ति प्रदान कर दी है जितने जीव ब्रह्म कहे

आप उत्पन्न कर देना। पूर्ण ब्रह्म कविर्देव (कबीर साहेब) अपने पुत्र सहज दास के द्वारा प्रकति को क्षर पुरुष के पास भिजवा दिया। सहज दास जी ने ज्योति निरंजन को बताया कि पिता जी ने इस बहन के शरीर में उन सर्व आत्माओं को प्रवेश कर दिया है जिन्होंने आपके साथ जाने की सहमति व्यक्त की थी तथा इसको पिता जी ने वचन शक्ति प्रदान की है, आप जितने जीव चाहोगे प्रकति अपने शब्द से उत्पन्न कर देगी। यह कह कर सहजदास वापिस अपने द्वीप में आ गया।

युवा होने के कारण लड़की का रंग-रूप निखरा हुआ था। ब्रह्म के अन्दर विषय-वासना उत्पन्न हो गई तथा प्रकति देवी के साथ अभद्र गति विधि प्रारम्भ की। तब दुर्गा ने कहा कि ज्योति निरंजन मेरे पास पिता जी की प्रदान की हुई शब्द शक्ति है। आप जितने प्राणी कहोगे मैं वचन से उत्पन्न कर दूँगी। आप मैथुन परम्परा शुरु मत करो। आप भी उसी पिता के शब्द से अण्डे से उत्पन्न हुए हो तथा मैं भी उसी परमपिता के वचन से ही बाद में उत्पन्न हुई हूँ। आप मेरे बड़े भाई हो, बहन-भाई का यह योग महापाप का कारण बनेगा। परन्तु ज्योति निरंजन ने प्रकति देवी की एक भी प्रार्थना नहीं सुनी तथा अपनी शब्द शक्ति द्वारा नाखुनों से स्त्री इन्द्री (भग) प्रकति को लगा दी तथा बलात्कार करने की ठानी। उसी समय दुर्गा ने अपनी इज्जत रक्षा के लिए कोई और चारा न देख सुक्ष्म रूप बनाया तथा ज्योति निरंजन के खुले मुख के द्वारा पेट में प्रवेश करके पूर्णब्रह्म कविर् देव से अपनी रक्षा के लिए याचना की। उसी समय कविर्देव (कविर् देव) अपने पुत्र योग संतायन अर्थात् जोगजीत का रूप बनाकर वहाँ प्रकट हुए तथा कन्या को ब्रह्म के उदर से बाहर निकाला तथा कहा कि ज्योति निरंजन आज से तेरा नाम 'काल' होगा। तेरे जन्म-मत्यु होते रहेंगे। इसीलिए तेरा नाम क्षर पुरुष होगा तथा एक लाख मानव शरीर धारी प्राणियों को प्रतिदिन खाया करेगा व सवा लाख उत्पन्न किया करेगा। आप दोनों को इक्कीस ब्रह्माण्ड सहित निष्कासित किया जाता है। इतना कहते ही इक्कीस ब्रह्माण्ड विमान की तरह चल पड़े। सहज दास के द्वीप के पास से होते हुए सतलोक से सोलह संख कोस (एक कोस लगभग 3 कि. मी. का होता है) की दूरी पर आकर रूक गए।

विशेष विवरण - अब तक तीन शक्तियों का विवरण आया है।

1. पूर्णब्रह्म जिसे अन्य उपमात्मक नामों से भी जाना जाता है, जैसे सतपुरुष, अकालपुरुष, शब्द स्वरूपी राम, परम अक्षर ब्रह्म/पुरुष आदि। यह पूर्णब्रह्म असंख्य ब्रह्माण्डों का स्वामी है तथा वास्तव में अविनाशी है।

2. परब्रह्म जिसे अक्षर पुरुष भी कहा जाता है। यह वास्तव में अविनाशी नहीं है। यह सात शंख ब्रह्माण्डों का स्वामी है।

3. ब्रह्म जिसे ज्योति निरंजन, काल, कैल, क्षर पुरुष तथा धर्मराय आदि नामों से जाना जाता है, जो केवल इक्कीस ब्रह्माण्ड का स्वामी है। अब आगे इसी ब्रह्म (काल) की सष्टि के एक ब्रह्माण्ड का परिचय दिया जाएगा, जिसमें तीन और नाम आपके पढ़ने में आयेंगे - ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव।

एक ब्रह्माण्ड का लघु चित्र

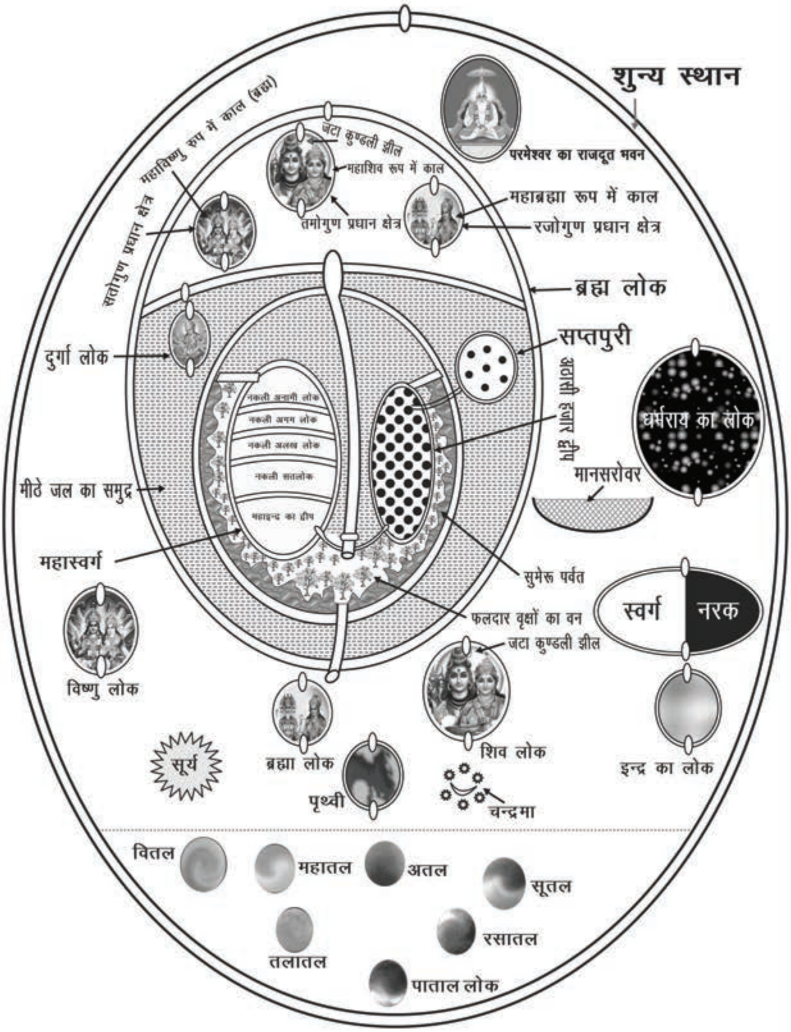

<u>ब्रह्म तथा ब्रह्मा में भेद</u> - एक ब्रह्माण्ड में बने सर्वोपरि स्थान पर ब्रह्म (क्षर पुरुष) स्वयं तीन गुप्त स्थानों की रचना करके ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव रूप में रहता है तथा अपनी पत्नी प्रकृति (दुर्गा) के सहयोग से तीन पुत्रों की उत्पत्ति करता है। उनके नाम भी ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव ही रखता है। जो ब्रह्म का पुत्र ब्रह्मा है वह एक ब्रह्माण्ड में केवल तीन लोकों (पृथ्वी लोक, स्वर्ग लोक तथा पाताल लोक) में एक रजोगुण विभाग का मंत्री (स्वामी) है। इसे त्रिलोकीय ब्रह्मा कहा है तथा ब्रह्म जो ब्रह्मलोक में ब्रह्मा रूप में रहता है उसे महाब्रह्मा व ब्रह्मलोकिय ब्रह्मा कहा है। इसी ब्रह्म (काल) को सदाशिव, महाशिव, महाविष्णु भी कहा है।

श्री विष्णु पुराण में प्रमाण :- चतुर्थ अंश अध्याय 1 पृष्ठ 230-231 पर श्री ब्रह्मा जी ने कहा :- जिस अजन्मा, सर्वमय विधाता परमेश्वर का आदि, मध्य, अन्त, स्वरूप, स्वभाव और सार हम नहीं जान पाते (श्लोक 83)

जो मेरा रूप धारण कर संसार की रचना करता है, स्थिति के समय जो पुरूष रूप है तथा जो रूद्र रूप से विश्व का ग्रास कर जाता है, अनन्त रूप से सम्पूर्ण जगत् को धारण करता है। (श्लोक 86)

"श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी व श्री शिव जी की उत्पत्ति"

काल (ब्रह्म) ने प्रकृति (दुर्गा) से कहा कि अब मेरा कौन क्या बिगाडेगा? मन मानी करूंगा प्रकृति ने फिर प्रार्थना की कि आप कुछ शर्म करो। प्रथम तो आप मेरे बड़े भाई हो, क्योंकि उसी पूर्ण परमात्मा (कविर्देव) की वचन शक्ति से आप की (ब्रह्म की) अण्डे से उत्पत्ति हुई तथा बाद में मेरी उत्पत्ति उसी परमेश्वर के वचन से हुई है। दूसरे मैं आपके पेट से बाहर निकली हूँ, मैं आपकी बेटी हुई तथा आप मेरे पिता हुए। इन पवित्र नातों में बिगाड़ करना महापाप होगा। मेरे पास पिता की प्रदान की हुई शब्द शक्ति है, जितने प्राणी आप कहोगे मैं वचन से उत्पन्न कर दूंगी। ज्योति निरंजन ने दुर्गा की एक भी विनय नहीं सुनी तथा कहा कि मुझे जो सजा मिलनी थी मिल गई, मुझे सतलोक से निष्कासित कर दिया। अब मनमानी करूंगा। यह कह कर काल पुरूष (क्षर पुरूष) ने प्रकृति के साथ जबरदस्ती शादी की तथा तीन पुत्रों (रजगुण युक्त - ब्रह्मा जी, सतगुण युक्त - विष्णु जी तथा तमगुण युक्त - शिव शंकर जी) की उत्पत्ति की। जवान होने तक तीनों पुत्रों को दुर्गा के द्वारा अचेत करवा देता है, फिर युवा होने पर श्री ब्रह्मा जी को कमल के फूल पर, श्री विष्णु जी को शेष नाग की शैय्या पर तथा श्री शिव जी को कैलाश पर्वत पर सचेत करके इक्ट्ठे कर देता है। तत्पश्चात् प्रकृति (दुर्गा) द्वारा इन तीनों का विवाह कर दिया जाता है तथा एक ब्रह्माण्ड में तीन लोकों (स्वर्ग लोक, पृथ्वी लोक तथा पाताल लोक) में एक-एक विभाग के मंत्री (प्रभु) नियुक्त कर देता है। जैसे श्री ब्रह्मा जी को रजोगुण विभाग का तथा विष्णु जी को सत्तोगुण विभाग का तथा श्री शिव शंकर जी को तमोगुण विभाग का तथा स्वयं गुप्त (महाब्रह्मा - महाविष्णु - महाशिव) रूप से मुख्य मंत्री पद को संभालता है। एक ब्रह्माण्ड में एक

ब्रह्मलोक की रचना की है। उसी में तीन गुप्त स्थान बनाए हैं। एक रजोगुण प्रधान स्थान है जहाँ पर यह ब्रह्म (काल) स्वयं महाब्रह्मा (मुख्यमंत्री) रूप में रहता है तथा अपनी पत्नी दुर्गा को महासावित्री रूप में रखता है। इन दोनों के संयोग से जो पुत्र इस स्थान पर उत्पन्न होता है वह स्वतः ही रजोगुणी बन जाता है। दूसरा स्थान सतोगुण प्रधान स्थान बनाया है। वहाँ पर यह क्षर पुरुष स्वयं महाविष्णु रूप बना कर रहता है तथा अपनी पत्नी दुर्गा को महालक्ष्मी रूप में रख कर जो पुत्र उत्पन्न करता है उसका नाम विष्णु रखता है, वह बालक सतोगुण युक्त होता है तथा तीसरा इसी काल ने वहीं पर एक तमोगुण प्रधान क्षेत्र बनाया है। उसमें यह स्वयं सदाशिव रूप बनाकर रहता है तथा अपनी पत्नी दुर्गा को महापार्वती रूप में रखता है। इन दोनों के पति-पत्नी व्यवहार से जो पुत्र उत्पन्न होता है उसका नाम शिव रख देते हैं तथा तमोगुण युक्त कर देते हैं। (प्रमाण के लिए देखें पवित्र श्री शिव महापुराण, विद्यवेश्वर संहिता पंष्ठ 24-26 जिस में ब्रह्मा, विष्णु, रूद्र तथा महेश्वर से अन्य सदाशिव है तथा रूद्र संहिता अध्याय 6 तथा 7, 9 पंष्ठ नं. 100 से, 105 तथा 110 पर अनुवाद कर्ता श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार, गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित तथा पवित्र श्रीमद्देवीमहापुराण तीसरा स्कंद पंष्ठ नं. 114 से 123 तक, गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित, अनुवादक - श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार चिमन लाल गोस्वामी) फिर इन्हीं को धोखे में रख कर अपने खाने के लिए जीवों की उत्पत्ति श्री ब्रह्मा जी द्वारा तथा स्थिति (एक-दूसरे को मोह-ममता में रख कर काल जाल में रखना) श्री विष्णु जी से तथा संहार (क्योंकि काल पुरुष को शापवश एक लाख मानव शरीर धारी प्राणियों के सूक्ष्म शरीर से मैल निकाल कर खाना होता है उसके लिए इक्कीसवें ब्रह्माण्ड में एक तप्तशिला है जो स्वतः गर्म रहती है, उस पर गर्म करके मैल पिंघला कर खाता है, जीव मरते नहीं परन्तु कष्ट असहनीय होता है, फिर प्राणियों को कर्म आधार पर अन्य शरीर प्रदान करता है) श्री शिव जी द्वारा करवाता है। जैसे किसी मकान में तीन कमरे बने हों। एक कमरे में अश्लील चित्र लगे हों। उस कमरे में जाते ही मन में वैसे ही मलिन विचार उत्पन्न हो जाते हैं। दूसरे कमरे में साधु-संतों, भक्तों के चित्र लगे हों तो मन में अच्छे विचार, प्रभु का चिंतन ही बना रहता है। तीसरे कमरे में देश भक्तों व शहीदों के चित्र लगे हों तो मन में वैसे ही जोशीले विचार उत्पन्न हो जाते हैं। ठीक इसी प्रकार ब्रह्म (काल) ने अपनी सूझ-बूझ से उपरोक्त तीनों गुण प्रधान स्थानों की रचना की हुई है।

''तीनों गुण क्या हैं? प्रमाण सहित''

''तीनों गुण रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु जी, तमगुण शिव जी हैं। ब्रह्म (काल) तथा प्रकंति (दुर्गा) से उत्पन्न हुए हैं तथा तीनों नाशवान हैं''

प्रमाण :- गीताप्रैस गोरखपुर से प्रकाशित श्री शिव महापुराण जिसके सम्पादक हैं श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार पंष्ठ सं. 24 से 26 विद्यवेश्वर संहिता तथा पंष्ठ 110 अध्याय 9 रूद्र संहिता ''इस प्रकार ब्रह्मा-विष्णु तथा शिव तीनों देवताओं में गुण हैं, परन्तु शिव

(ब्रह्म-काल) गुणातीत कहा गया है।

दूसरा प्रमाण :- गीताप्रैस गोरखपुर से प्रकाशित श्रीमद् देवीभागवत पुराण जिसके सम्पादक हैं श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार चिमन लाल गोस्वामी, तीसरा स्कंद, अध्याय 5 पष्ठ 123 :- भगवान विष्णु ने दुर्गा की स्तुति की : कहा कि मैं (विष्णु), ब्रह्मा तथा शंकर तुम्हारी कपा से विद्यमान हैं। हमारा तो आविर्भाव (जन्म) तथा तिरोभाव (मत्यु) होती है। हम नित्य (अविनाशी) नहीं हैं। तुम ही नित्य हो, जगत् जननी हो, प्रकति और सनातनी देवी हो। भगवान शंकर ने कहा : यदि भगवान ब्रह्मा तथा भगवान विष्णु तुम्हीं से उत्पन्न हुए हैं तो उनके बाद उत्पन्न होने वाला मैं तमोगुणी लीला करने वाला शंकर क्या तुम्हारी संतान नहीं हुआ ? अर्थात् मुझे भी उत्पन्न करने वाली तुम ही हों। इस संसार की सष्टि-स्थिति-संहार में तुम्हारे गुण सदा सर्वदा हैं। इन्हीं तीनों गुणों से उत्पन्न हम, ब्रह्मा-विष्णु तथा शंकर नियमानुसार कार्य में तत्पर रहते हैं।

उपरोक्त यह विवरण केवल हिन्दी में अनुवादित श्री देवीमहापुराण से है, जिसमें कुछ तथ्यों को छुपाया गया है। इसलिए यही प्रमाण देखें श्री मद्देवीभागवत महापुराण सभाषटिकम् समहात्यम्, खेमराज श्री कष्ण दास प्रकाशन मुम्बई, इसमें संस्कत सहित हिन्दी अनुवाद किया है। तीसरा स्कंद अध्याय 4 पष्ठ 10, श्लोक 42:-

ब्रह्मा – अहम् ईश्वरः फिल ते प्रभावात्सर्वे वयं जनि युता न यदा तू नित्याः
के अन्ये सुराः शतमख प्रमुखाः च नित्या नित्या त्वमेव जननी प्रकतिः पुराणा। (42)

हिन्दी अनुवाद :- हे मात! ब्रह्मा, मैं तथा शिव तुम्हारे ही प्रभाव से जन्मवान हैं, नित्य नही हैं अर्थात् हम अविनाशी नहीं हैं, फिर अन्य इन्द्रादि दूसरे देवता किस प्रकार नित्य हो सकते हैं। तुम ही अविनाशी हो, प्रकति तथा सनातनी देवी हो।

पष्ठ 11-12, अध्याय 5, श्लोक 8 :- यदि दयार्द्रमना न सदांबिके कथमहं विहितः च तमोगुणः कमलजश्च रजोगुणसंभवः सुविहितः किमु सत्वगुणों हरिः।(8)

अनुवाद :- भगवान शंकर बोले :-हे मात! यदि हमारे ऊपर आप दयायुक्त हो तो मुझे तमोगुण क्यों बनाया, कमल से उत्पन्न ब्रह्मा को रजोगुण किस लिए बनाया तथा विष्णु को सतगुण क्यों बनाया? अर्थात् जीवों के जन्म-मत्यु रूपी दुष्कर्म में क्यों लगाया?

श्लोक 12 :- रमयसे स्वपतिं पुरुषं सदा तव गतिं न हि विह विद्म शिवे (12)

हिन्दी - अपने पति पुरुष अर्थात् काल भगवान के साथ सदा भोग-विलास करती रहती हो। आपकी गति कोई नहीं जानता।

निष्कर्ष :- उपरोक्त प्रमाणों से प्रमाणित हुआ की रजगुण - ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव है ये तीनों नाशवान है। दुर्गा का पति ब्रह्म (काल) है यह उसके साथ भोग विलास करता है।

“ब्रह्म (काल) की अव्यक्त रहने की प्रतिज्ञा”

(सूक्ष्मवेद से शेष सष्टि रचना)

तीनों पुत्रों की उत्पत्ति के पश्चात् ब्रह्म ने अपनी पत्नी दुर्गा (प्रकति) से कहा मैं प्रतिज्ञा करता हुँ कि भविष्य में मैं किसी को अपने वास्तविक रूप में दर्शन नहीं दूंगा।

जिस कारण से मैं अव्यक्त माना जाऊँगा। दुर्गा से कहा कि आप मेरा भेद किसी को मत देना। मैं गुप्त रहूँगा। दुर्गा ने पूछा कि क्या आप अपने पुत्रों को भी दर्शन नहीं दोगे? ब्रह्म ने कहा मैं अपने पुत्रों को तथा अन्य को किसी भी साधना से दर्शन नहीं दूंगा, यह मेरा अटल नियम रहेगा। दुर्गा ने कहा यह तो आपका उत्तम नियम नहीं है जो आप अपनी संतान से भी छुपे रहोगे। तब काल ने कहा दुर्गा मेरी विवशता है। मुझे एक लाख मानव शरीर धारी प्राणियों का आहार करने का शाप लगा है। यदि मेरे पुत्रों (ब्रह्मा, विष्णु, महेश) को पता लग गया तो ये उत्पत्ति, स्थिति तथा संहार का कार्य नहीं करेंगे। इसलिए यह मेरा अनुत्तम नियम सदा रहेगा। जब ये तीनों कुछ बड़े हो जाएें तो इन्हें अचेत कर देना। मेरे विषय में नहीं बताना, नहीं तो मैं तुझे भी दण्ड दूंगा, दुर्गा इस डर के मारे वास्तविकता नहीं बताती। इसीलिए गीता अध्याय 7 श्लोक 24 में कहा है कि यह बुद्धिहीन जन समुदाय मेरे अनुत्तम नियम से अपरिचित हैं कि मैं कभी भी किसी के सामने प्रकट नहीं होता अपनी योग माया से छुपा रहता हूँ। इसलिए मुझ अव्यक्त को मनुष्य रूप में आया हुआ अर्थात् कष्ण मानते हैं।

(अबुद्धयः) बुद्धि हीन (मम्) मेरे (अनुत्तमम्) अनुत्तम अर्थात् घटिया (अव्ययम्) अविनाशी (परम् भावम्) विशेष भाव को (अजानन्तः) न जानते हुए (माम् अव्यक्तम्) मुझ अव्यक्त को (व्यक्तिम्) मनुष्य रूप में (आपन्नम) आया (मन्यन्ते) मानते हैं अर्थात् मैं कष्ण नहीं हूँ। (गीता अध्याय 7 श्लोक 24)

गीता अध्याय 11 श्लोक 47 तथा 48 में कहा है कि यह मेरा वास्तविक काल रूप है। इसके दर्शन अर्थात् ब्रह्म प्राप्ति न वेदों में वर्णित विधि से, न जप से, न तप से तथा न किसी क्रिया से हो सकती है।

जब तीनों बच्चे युवा हो गए तब माता भवानी (प्रकति, अष्टंगी) ने कहा कि तुम सागर मन्थन करो। प्रथम बार सागर मन्थन किया तो (ज्योति निरंजन ने अपने श्वांसों द्वारा चार वेद उत्पन्न किए। उनको गुप्त वाणी द्वारा आज्ञा दी कि सागर में निवास करो) चारों वेद निकले वह ब्रह्मा ने लिए। वस्तु लेकर तीनों बच्चे माता के पास आए तब माता ने कहा कि चारों वेदों को ब्रह्मा रखे व पढे।

नोट :- वास्तव में पूर्णब्रह्म ने, ब्रह्म अर्थात् काल को पाँच वेद प्रदान किए थे। लेकिन ब्रह्म ने केवल चार वेदों को प्रकट किया। पाँचवां वेद छुपा दिया। जो पूर्ण परमात्मा ने स्वयं प्रकट होकर कविर्गिर्भीः अर्थात् कविर्वाणी (कबीर वाणी) द्वारा लोकोक्तियों व दोहों के माध्यम से प्रकट किया है।

दूसरी बार सागर मन्थन किया तो तीन कन्याऐं मिली। माता ने तीनों को बांट दिया। प्रकति (दुर्गा) ने अपने ही अन्य तीन रूप (सावित्री,लक्ष्मी तथा पार्वती) धारण किए तथा समुन्द्र में छुपा दी। सागर मन्थन के समय बाहर आ गई। वही प्रकति तीन रूप हुई तथा भगवान ब्रह्मा को सावित्री, भगवान विष्णु को लक्ष्मी, भगवान शंकर को पार्वती पत्नी रूप में दी। तीनों ने भोग विलास किया, सुर तथा असुर दोनों पैदा हुए।

{जब तीसरी बार सागर मन्थन किया तो चौदह रत्न ब्रह्मा को तथा अमत विष्णु को व देवताओं को, मद्य(शराब) असुरों को तथा विष परमार्थ शिव ने अपने कंठ में

ठहराया। यह तो बहुत बाद की बात है।} जब ब्रह्मा वेद पढ़ने लगा तो पता चला कि कोई सर्व ब्रह्माण्डों की रचना करने वाला कुल का मालिक पुरूष (प्रभु) और है। तब ब्रह्मा जी ने विष्णु जी व शंकर जी को बताया कि वेदों में वर्णन है कि सजनहार कोई और प्रभु है परन्तु वेद कहते हैं कि भेद हम भी नहीं जानते, उसके लिए संकेत है कि किसी तत्वदर्शी संत से पूछो। तब ब्रह्मा माता के पास आया और सब वतांत कह सुनाया। माता कहा करती थी कि मेरे अतिरिक्त और कोई नहीं है। मैं ही कर्ता हूँ। मैं ही सर्वशक्तिमान हूँ परन्तु ब्रह्मा ने कहा कि वेद ईश्वर कत हैं यह झूठ नहीं हो सकते। दुर्गा ने कहा कि तेरा पिता तुझे दर्शन नहीं देगा, उसने प्रतिज्ञा की हुई है। तब ब्रह्मा ने कहा माता जी अब आप की बात पर अविश्वास हो गया है। मैं उस पुरूष (प्रभु) का पता लगाकर ही रहूँगा। दुर्गा ने कहा कि यदि वह तुझे दर्शन नहीं देगा तो तुम क्या करोगे? ब्रह्मा ने कहा कि मैं आपको शक्ल नहीं दिखाऊँगा। दूसरी तरफ ज्योति निरंजन ने कसम खाई है कि मैं अव्यक्त रहूँगा किसी को दर्शन नहीं दूंगा अर्थात् 21 ब्रह्माण्ड में कभी भी अपने वास्तविक काल रूप में आकार में नहीं आऊँगा।

गीता अध्याय नं. 7 का श्लोक नं. 24

अव्यक्तम्, व्यक्तिम्, आपन्नम्, मन्यन्ते, माम्, अबुद्धयः ।
परम्, भावम्, अजानन्तः, मम, अव्ययम्, अनुत्तमम् ।।24 ।।

अनुवाद : (अबुद्धयः) बुद्धिहीन लोग (मम्) मेरे (अनुतमम्) अश्रेष्ठ (अव्ययम्) अटल (परम्) परम (भावम्) भावको (अजानन्तः) न जानते हुए (अव्यक्तम्) अदश्यमान (माम्) मुझ कालको (व्यक्तिम्) नर रूप आकार में कष्ण (आपन्नम्) प्राप्त हुआ (मन्यन्ते) मानते हैं।

गीता अध्याय नं. 7 का श्लोक नं. 25

न, अहम्, प्रकाशः, सर्वस्य, योगमायासमावतः ।
मूढः, अयम्, न, अभिजानाति, लोकः, माम्, अजम्, अव्ययम् ।।25 ।।

अनुवाद : (अहम्) मैं (योगमाया समावतः) योगमायासे छिपा हुआ (सर्वस्य) सबके (प्रकाशः) प्रत्यक्ष (न) नहीं होता अर्थात् अदश्य अर्थात् अव्यक्त रहता हूँ इसलिये (अजम्) जन्म न लेने वाले (अव्ययम्) अविनाशी अटल भावको (अयम्) यह (मूढः) अज्ञानी (लोकः) जनसमुदाय संसार (माम्) मुझे (न) नहीं (अभिजानाति) जानता अर्थात् मुझको कष्ण समझता है। क्योंकि ब्रह्म अपनी शब्द शक्ति से अपने नाना रूप बना लेता है, यह दुर्गा का पति है इसलिए इस मंत्र में कह रहा है कि मैं श्री कष्ण आदि की तरह दुर्गा से जन्म नहीं लेता।

"ब्रह्मा का अपने पिता (काल/ब्रह्म) की प्राप्ति के लिए प्रयत्न"

तब दुर्गा ने ब्रह्मा जी से कहा कि अलख निरंजन तुम्हारा पिता है परन्तु वह तुम्हें दर्शन नहीं देगा। ब्रह्मा ने कहा कि मैं दर्शन करके ही लौटूंगा। माता ने पूछा कि यदि तुझे दर्शन नहीं हुए तो क्या करेगा ? ब्रह्मा ने कहा मैं प्रतिज्ञा करता हूँ। यदि पिता के दर्शन नहीं हुए तो मैं आपके समक्ष नहीं आऊंगा। यह कह कर ब्रह्मा जी व्याकुल होकर उत्तर दिशा की तरफ चल दिया जहाँ अन्धेरा ही अन्धेरा है। वहाँ ब्रह्मा ने चार युग तक ध्यान लगाया परन्तु कुछ भी प्राप्ति नहीं हुई। काल ने आकाशवाणी की कि दुर्गा सष्टि

रचना क्यों नहीं की ? भवानी ने कहा कि आप का ज्येष्ठ पुत्र ब्रह्मा जिद्द करके आप की तलाश में गया है। ब्रह्म (काल) ने कहा उसे वापिस बुला लो। मैं उसे दर्शन नहीं दूँगा। ब्रह्मा के बिना जीव उत्पति का सब कार्य असम्भव है। तब दुर्गा (प्रकृति) ने अपनी शब्द शक्ति से गायत्री नाम की लड़की उत्पन्न की तथा उसे ब्रह्मा को लौटा लाने को कहा। गायत्री ब्रह्मा जी के पास गई परंतु ब्रह्मा जी समाधि लगाए हुए थे उन्हें कोई आभास ही नहीं था कि कोई आया है। तब आदि कुमारी (प्रकृति) ने गायत्री को ध्यान द्वारा बताया कि इस के चरण स्पर्श कर। तब गायत्री ने ऐसा ही किया। ब्रह्मा जी का ध्यान भंग हुआ तो क्रोध वश बोले कि कौन पापिन है जिसने मेरा ध्यान भंग किया है। मैं तुझे शाप दूंगा। गायत्री कहने लगी कि मेरा दोष नहीं है पहले मेरी बात सुनो तब शाप देना। मेरे को माता ने तुम्हें लौटा लाने को कहा है क्योंकि आपके बिना जीव उत्पत्ति नहीं हो सकती। ब्रह्मा ने कहा कि मैं कैसे जाऊँ? पिता जी के दर्शन हुए नहीं, ऐसे जाऊँ तो मेरा उपहास होगा। यदि आप माता जी के समक्ष यह कह दें कि ब्रह्मा को पिता (ज्योति निरंजन) के दर्शन हुए हैं, मैंने अपनी आँखो से देखा है तो मैं आपके साथ चलूं। तब गायत्री ने कहा कि आप मेरे साथ संभोग (सैक्स) करोगे तो मैं आपकी झूठी साक्षी (गवाही) भरूंगी। तब ब्रह्मा ने सोचा कि पिता के दर्शन हुए नहीं, वैसे जाऊँ तो माता के सामने शर्म लगेगी और चारा नहीं दिखाई दिया, फिर गायत्री से रति क्रिया (संभोग) की।

तब गायत्री ने कहा कि क्यों न एक गवाह और तैयार किया जाए। ब्रह्मा ने कहा बहुत ही अच्छा है। तब गायत्री ने शब्द शक्ति से एक लड़की (पुहपवति नाम की) पैदा की तथा उससे दोनों ने कहा कि आप गवाही देना कि ब्रह्मा ने पिता के दर्शन किए हैं। तब पुहपवति ने कहा कि मैं क्यों झूठी गवाही दूँ ? हाँ, यदि ब्रह्मा मेरे से रति क्रिया (संभोग) करे तो गवाही दे सकती हूँ। गायत्री ने ब्रह्मा को समझाया (उकसाया) कि और कोई चारा नहीं है तब ब्रह्मा ने पुहपवति से संभोग किया तो तीनों मिलकर आदि माया (प्रकृति) के पास आए। दोनों देवियों ने उपरोक्त शर्त इसलिए रखी थी कि यदि ब्रह्मा माता के सामने हमारी झूठी गवाही को बता देगा तो माता हमें शाप दे देगी। इसलिए उसे भी दोषी बना लिया।

(यहाँ महाराज गरीबदास जी कहते हैं कि – ''दास गरीब यह चूक धुरों धुर'')

"माता (दुर्गा) द्वारा ब्रह्मा को शाप देना"

तब माता ने ब्रह्मा से पूछा क्या तुझे तेरे पिता के दर्शन हुए? ब्रह्मा ने कहा हाँ मुझे पिता के दर्शन हुए हैं। दुर्गा ने कहा साक्षी बता। तब ब्रह्मा ने कहा इन दोनों के समक्ष साक्षात्कार हुआ है। देवी ने उन दोनों लड़कियों से पूछा क्या तुम्हारे सामने ब्रह्म का साक्षात्कार हुआ है तब दोनों ने कहा कि हाँ, हमने अपनी आँखों से देखा है। फिर भवानी (प्रकृति) को संशय हुआ कि मुझे तो ब्रह्म ने कहा था कि मैं किसी को दर्शन नहीं दूंगा, परन्तु ये कहते हैं कि दर्शन हुए हैं। तब अष्टंगी ने ध्यान लगाया और काल/ज्योति निरंजन से पूछा कि यह क्या कहानी है? ज्योति निंरजन जी ने कहा कि

ये तीनों झूठ बोल रहे हैं। तब माता ने कहा तुम झूठ बोल रहे हो। आकाशवाणी हुई है कि इन्हें कोई दर्शन नहीं हुए। यह बात सुनकर ब्रह्मा ने कहा कि माता जी मैं सौगंध खाकर पिता की तलाश करने गया था। परन्तु पिता (ब्रह्म) के दर्शन हुए नहीं। आप के पास आने में शर्म लग रही थी। इसलिए हमने झूठ बोल दिया। तब माता (दुर्गा) ने कहा कि अब मैं तुम्हें शाप देती हूँ।

ब्रह्मा को शॉप : -- तेरी पूजा जग में नहीं होगी। आगे तेरे वंशज होंगे वे बहुत पाखण्ड करेंगे। झूठी बात बना कर जग को ठगेंगे। ऊपर से तो कर्म काण्ड करते दिखाई देंगे अन्दर से विकार करेंगे। कथा पुराणों को पढ़कर सुनाया करेंगे, स्वयं को ज्ञान नहीं होगा कि सद्ग्रन्थों में वास्तविकता क्या है, फिर भी मान वश तथा धन प्राप्ति के लिए गुरु बन कर अनुयाइयों को लोकवेद (शास्त्र विरुद्ध दंत कथा) सुनाया करेंगे। देवी-देवों की पूजा करके तथा करवाके, दूसरों की निन्दा करके कष्ट पर कष्ट उठायेंगे। जो उनके अनुयाई होंगे उनको परमार्थ नहीं बताएंगे। दक्षिणा के लिए जगत को गुमराह करते रहेंगे। अपने आपको सबसे अच्छा मानेंगे, दूसरों को नीचा समझेंगे। जब माता के मुख से यह सुना तो ब्रह्मा मुर्छित होकर जमीन पर गिर गया। बहुत समय उपरान्त होश में आया।

गायत्री को शॉप : -- तेरे कई सांड पति होंगे। तू मतलोक में गाय बनेगी।

पुहपवति को शॉप : -- तेरी जगह गंदगी में होगी। तेरे फूलों को कोई पूजा में नहीं लाएगा। इस झूठी गवाही के कारण तुझे यह नरक भोगना होगा। तेरा नाम केवड़ा केतकी होगा। (हरियाणा में कुसोंधी कहते हैं। यह गंदगी (कुरड़ियों) वाली जगह पर होती है।)

इस प्रकार तीनों को शाप देकर माता भवानी बहुत पछताई। {इस प्रकार पहले तो जीव बिना सोचे मन (काल निरंजन) के प्रभाव से गलत कार्य कर देता है परन्तु जब आत्मा (सतपुरूष अंश) के प्रभाव से उसे ज्ञान होता है तो पीछे पछताना पड़ता है। जिस प्रकार माता-पिता अपने बच्चों को छोटी सी गलती के कारण ताड़ते हैं (क्रोधवश होकर) परन्तु बाद में बहुत पछताते हैं। यही प्रक्रिया मन (काल-निंरजन) के प्रभाव से सर्व जीवों में क्रियावान हो रही है।} हाँ, यहाँ एक बात विशेष है कि निरंजन (काल-ब्रह्म) ने भी अपना कानून बना रखा है कि यदि कोई जीव किसी दुर्बल जीव को सताएगा तो उसे उसका बदला देना पड़ेगा। जब आदि भवानी (प्रकति, अष्टंगी) ने ब्रह्मा, गायत्री व पुहपवति को शाप दिया तो अलख निंरजन (ब्रह्म-काल) ने कहा कि हे भवानी (प्रकति/अष्टंगी) यह आपने अच्छा नहीं किया। अब मैं (निरंजन) आपको शाप देता हूँ कि द्वापर युग में तेरे भी पाँच पति होंगे। (द्रोपदी ही आदिमाया का अवतार हुई है।) जब यह आकाश वाणी सुनी तो आदि माया ने कहा कि हे ज्योति निंरजन (काल) मैं तेरे वश पड़ी हूँ जो चाहे सो कर ले।

"विष्णु का अपने पिता (काल/ब्रह्म) की प्राप्ति के लिए प्रस्थान व माता का आशीर्वाद पाना"

इसके बाद विष्णु से प्रकृति ने कहा कि पुत्र तू भी अपने पिता का पता लगा ले। तब विष्णु अपने पिता जी काल (ब्रह्म) का पता करते-करते पाताल लोक में चले गए, जहाँ शेषनाग था। उसने विष्णु को अपनी सीमा में प्रविष्ट होते देख कर क्रोधित हो कर जहर भरा फुंकारा मारा। उसके विष के प्रभाव से विष्णु जी का रंग सांवला हो गया, जैसे स्प्रे पेंट हो जाता है। तब विष्णु ने चाहा कि इस नाग को मजा चखाना चाहिए। तब ज्योति निरंजन (काल) ने देखा कि अब विष्णु को शांत करना चाहिए। तब आकाशवाणी हुई कि विष्णु अब तू अपनी माता जी के पास जा और सत्य-सत्य सारा विवरण बता देना तथा जो कष्ट आपको शेषनाग से हुआ है, इसका प्रतिशोध द्वापर युग में लेना। द्वापर युग में आप (विष्णु) तो कृष्ण अवतार धारण करोगे और कालीदह में कालिन्द्री नामक नाग, शेष नाग का अवतार होगा।

ऊँच होई के नीच सतावै, ताकर ओएल (बदला) मोही सों पावै।
जो जीव देई पीर पुनी काँहु, हम पुनि ओएल दिवावें ताहूँ।।

तब विष्णु जी माता जी के पास आए तथा सत्य-सत्य कह दिया कि मुझे पिता के दर्शन नहीं हुए। इस बात से माता (प्रकृति) बहुत प्रसन्न हुई और कहा कि पुत्र तू सत्यवादी है। अब मैं अपनी शक्ति से आपको तेरे पिता से मिलाती हूँ तथा तेरे मन का संशय खत्म करती हूँ।

कबीर, देख पुत्र तोहि पिता भीटाऊँ, तौरे मन का धोखा मिटाऊँ।
मन स्वरूप कर्ता कह जानों, मन ते दूजा और न मानो।
स्वर्ग पाताल दौर मन केरा, मन अस्थीर मन अहै अनेरा।
निंरकार मन ही को कहिए, मन की आस निश दिन रहिए।
देख हूँ पलटि सुन्य मह ज्योति, जहाँ पर झिलमिल झालर होती।।

इस प्रकार माता (अष्टंगी, प्रकृति) ने विष्णु से कहा कि मन ही जग का कर्ता है, यही ज्योति निरंजन है। ध्यान में जो एक हजार ज्योतियाँ नजर आती हैं वही उसका रूप है। जो शंख, घण्टा आदि का बाजा सुना, यह महास्वर्ग में निरंजन का ही बज रहा है। तब माता (अष्टंगी, प्रकृति) ने कहा कि हे पुत्र तुम सब देवों के सरताज हो और तेरी हर कामना व कार्य मैं पूर्ण करूंगी। तेरी पूजा सर्व जग में होगी। आपने मुझे सच-सच बताया है। काल के इक्कीस ब्रह्माण्ड़ों के प्राणियों की विशेष आदत है कि अपनी व्यर्थ महिमा बनाता है। जैसे दुर्गा जी श्री विष्णु जी को कह रही है कि तेरी पूजा जग में होगी। मैंने तुझे तेरे पिता के दर्शन करा दिए। दुर्गा ने केवल प्रकाश दिखा कर श्री विष्णु जी को बहका दिया। श्री विष्णु जी भी प्रभु की यही स्थिति अपने अनुयाइयों को समझाने लगे कि परमात्मा का केवल प्रकाश दिखाई देता है। परमात्मा निराकार है। इसके बाद आदि भवानी रूद्र(महेश जी) के पास गई तथा कहा कि महेश तू भी कर ले अपने पिता की खोज तेरे दोनों भाइयों को तो तुम्हारे पिता के दर्शन नहीं हुए

उनको जो देना था वह प्रदान कर दिया है अब आप माँगो जो माँगना है। तब महेश ने कहा कि हे जननी ! मेरे दोनों बड़े भाईयों को पिता के दर्शन नहीं हुए फिर प्रयत्न करना व्यर्थ है। कृपा मुझे ऐसा वर दो कि मैं अमर (मृत्युंजय) हो जाऊँ। तब माता ने कहा कि यह मैं नहीं कर सकती। हाँ युक्ति बता सकती हूँ, जिससे तेरी आयु सबसे लम्बी बनी रहेगी। विधि योग समाधि है (इसलिए महादेव जी ज्यादातर समाधि में ही रहते हैं)। इस प्रकार माता (अष्टंगी, प्रकृति) ने तीनों पुत्रों को विभाग बाँट दिए : -

भगवान ब्रह्मा जी को काल लोक में लख चौरासी के चोले (शरीर) रचने (बनाने) का अर्थात् रजोगुण प्रभावित करके संतान उत्पत्ति के लिए विवश करके जीव उत्पत्ति कराने का विभाग प्रदान किया। भगवान विष्णु जी को इन जीवों के पालन पोषण (कर्मानुसार) करने, तथा मोह-ममता उत्पन्न करके स्थिति बनाए रखने का विभाग दिया।

भगवान शिव शंकर (महादेव) को संहार करने का विभाग प्रदान किया क्योंकि इनके पिता निरंजन को एक लाख मानव शरीर धारी जीव प्रतिदिन खाने पड़ते हैं।

यहां पर मन में एक प्रश्न उत्पन्न होगा कि ब्रह्मा, विष्णु तथा शंकर जी से उत्पत्ति, स्थिति और संहार कैसे होता है। ये तीनों अपने-२ लोक में रहते हैं। जैसे आजकल संचार प्रणाली को चलाने के लिए उपग्रहों को ऊपर आसमान में छोड़ा जाता है और वे नीचे पृथ्वी पर संचार प्रणाली को चलाते हैं। ठीक इसी प्रकार ये तीनों देव जहां भी रहते हैं इनके शरीर से निकलने वाले सूक्ष्म गुण की तरंगें तीनों लोकों में अपने आप हर प्राणी पर प्रभाव बनाए रहती है।

उपरोक्त विवरण एक ब्रह्माण्ड में ब्रह्म (काल) की रचना का है। ऐसे-ऐसे क्षर पुरुष (काल) के इक्कीस ब्रह्माण्ड हैं।

परन्तु क्षर पुरूष (काल) स्वयं व्यक्त अर्थात् वास्तविक शरीर रूप में सबके सामने नहीं आता। उसी को प्राप्त करने के लिए तीनों देवों (ब्रह्मा जी, विष्णु जी, शिव जी) को वेदों में वर्णित विधि अनुसार भरसक साधना करने पर भी ब्रह्म (काल) के दर्शन नहीं हुए। बाद में ऋषियों ने वेदों को पढ़ा। उसमें लिखा है कि 'अग्नेः तनूर् असि' (पवित्र यजुर्वेद अ. 1 मंत्र 15) परमेश्वर सशरीर है तथा पवित्र यजुर्वेद अध्याय 5 मंत्र 1 में लिखा है कि 'अग्नेः तनूर् असि विष्णवे त्वा सोमस्य तनूर् असि'। इस मंत्र में दो बार वेद गवाही दे रहा है कि सर्वव्यापक, सर्वपालन कर्ता सतपुरुष सशरीर है। पवित्र यजुर्वेद अध्याय 40 मंत्र 8 में कहा है कि (कविर् मनिषी) जिस परमेश्वर की सर्व प्राणियों को चाह है, वह कविर् अर्थात् कबीर है। उसका शरीर बिना नाड़ी (अस्नाविरम्) का है, (शुक्रम्) वीर्य से बनी पाँच तत्व से बनी भौतिक (अकायम्) काया रहित है। वह सर्व का मालिक सर्वोपरि सत्यलोक में विराजमान है, उस परमेश्वर का तेजपुंज का (स्वर्ज्योति) स्वयं प्रकाशित शरीर है जो शब्द रूप अर्थात् अविनाशी है। वही कविर्देव (कबीर परमेश्वर) है जो सर्व ब्रह्माण्डों की रचना करने वाला (व्यदधाता) सर्व ब्रह्माण्डों का रचनहार (स्वयम्भूः) स्वयं प्रकट होने वाला (यथा तथ्य अर्थान्) वास्तव में (शाश्वत्) अविनाशी है (गीता अध्याय 15 श्लोक 17 में भी प्रमाण है।) भावार्थ है कि पूर्ण ब्रह्म का शरीर का नाम कबीर (कविर देव)

है। उस परमेश्वर का शरीर नूर तत्व से बना है। परमात्मा का शरीर अति सूक्ष्म है जो उस साधक को दिखाई देता है जिसकी दिव्य दृष्टि खुल चुकी है। इस प्रकार जीव का भी सुक्ष्म शरीर है जिसके ऊपर पाँच तत्व का खोल (कवर) अर्थात् पाँच तत्व की काया चढ़ी होती है जो माता-पिता के संयोग से (शुक्रम) वीर्य से बनी है। शरीर त्यागने के पश्चात् भी जीव का सुक्ष्म शरीर साथ रहता है। वह शरीर उसी साधक को दिखाई देता है जिसकी दिव्य दृष्टि खुल चुकी है। इस प्रकार परमात्मा व जीव की स्थिति को समझें। वेदों में ओ३म् नाम के स्मरण का प्रमाण है जो केवल ब्रह्म साधना है। इस उद्देश्य से ओ३म् नाम के जाप को पूर्ण ब्रह्म का मान कर ऋषियों ने भी हजारों वर्ष हठयोग (समाधि लगा कर) करके प्रभु प्राप्ति की चेष्टा की, परन्तु प्रभु दर्शन नहीं हुए, सिद्धियाँ प्राप्त हो गई। उन्हीं सिद्धी रूपी खिलौनों से खेल कर ऋषि भी जन्म-मृत्यु के चक्र में ही रह गए तथा अपने अनुभव के शास्त्रों में परमात्मा को निराकार लिख दिया। ब्रह्म (काल) ने कसम खाई है कि मैं अपने वास्तविक रूप में किसी को दर्शन नहीं दूँगा। मुझे अव्यक्त जाना करेंगे (अव्यक्त का भावार्थ है कि कोई आकार में है परन्तु व्यक्तिगत रूप से स्थूल रूप में दर्शन नहीं देता। जैसे आकाश में बादल छा जाने पर दिन के समय सूर्य अदृश हो जाता है। वह दृश्यमान नहीं है, परन्तु वास्तव में बादलों के पार ज्यों का त्यों है, इस अवस्था को अव्यक्त कहते हैं।)। (प्रमाण के लिए गीता अध्याय 7 श्लोक 24-25, अध्याय 11 श्लोक 48 तथा 32)

पवित्र गीता जी बोलने वाला ब्रह्म (काल) श्री कृष्ण जी के शरीर में प्रेतवत प्रवेश करके कह रहा है कि अर्जुन मैं बढ़ा हुआ काल हूँ और सर्व को खाने के लिए आया हूँ। (गीता अध्याय 11 का श्लोक नं. 32) यह मेरा वास्तविक रूप है, इसको तेरे अतिरिक्त न तो कोई पहले देख सका तथा न कोई आगे देख सकता है अर्थात् वेदों में वर्णित यज्ञ-जप-तप तथा ओ३म् नाम आदि की विधि से मेरे इस वास्तविक स्वरूप के दर्शन नहीं हो सकते। (गीता अध्याय 11 श्लोक नं 48) मैं कृष्ण नहीं हूँ, ये मूर्ख लोग कृष्ण रूप में मुझ अव्यक्त को व्यक्त (मनुष्य रूप) मान रहे हैं। क्योंकि ये मेरे घटिया नियम से अपरिचित हैं कि मैं कभी वास्तविक इस काल रूप में सबके सामने नहीं आता। अपनी योग माया से छुपा रहता हूँ (गीता अध्याय 7 श्लोक नं. 24-25) विचार करें :- अपने छुपे रहने वाले विधान को स्वयं अश्रेष्ठ (अनुत्तम) क्यों कह रहे हैं?

यदि पिता अपनी सन्तान को भी दर्शन नहीं देता तो उसमें कोई त्रुटि है जिस कारण से छुपा है तथा सुविधाएं भी प्रदान कर रहा है। काल (ब्रह्म) को शापवश एक लाख मानव शरीर धारी प्राणियों का आहार करना पड़ता है तथा 25 प्रतिशत प्रतिदिन जो ज्यादा उत्पन्न होते हैं उन्हें ठिकाने लगाने के लिए तथा कर्म भोग का दण्ड देने के लिए चौरासी लाख योनियों की रचना की हुई है। यदि सबके सामने बैठ कर किसी की पुत्री, किसी की पत्नी, किसी के पुत्र, माता-पिता को खाएगा तो सर्व को ब्रह्म से घृणा हो जाए तथा जब भी कभी पूर्ण परमात्मा कविरग्नि (कबीर

ब्रह्म लोक का लघु चित्र

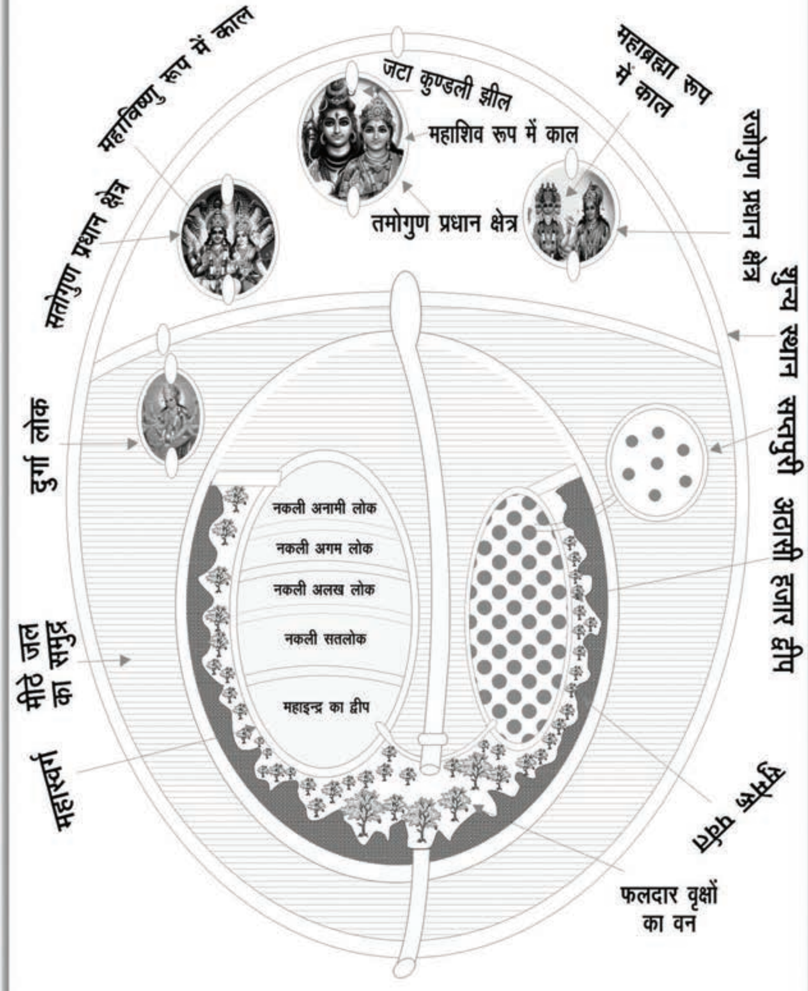

ज्योति निरंजन (काल) ब्रह्म के लोक (21 ब्रह्मण्ड) का लघु चित्र

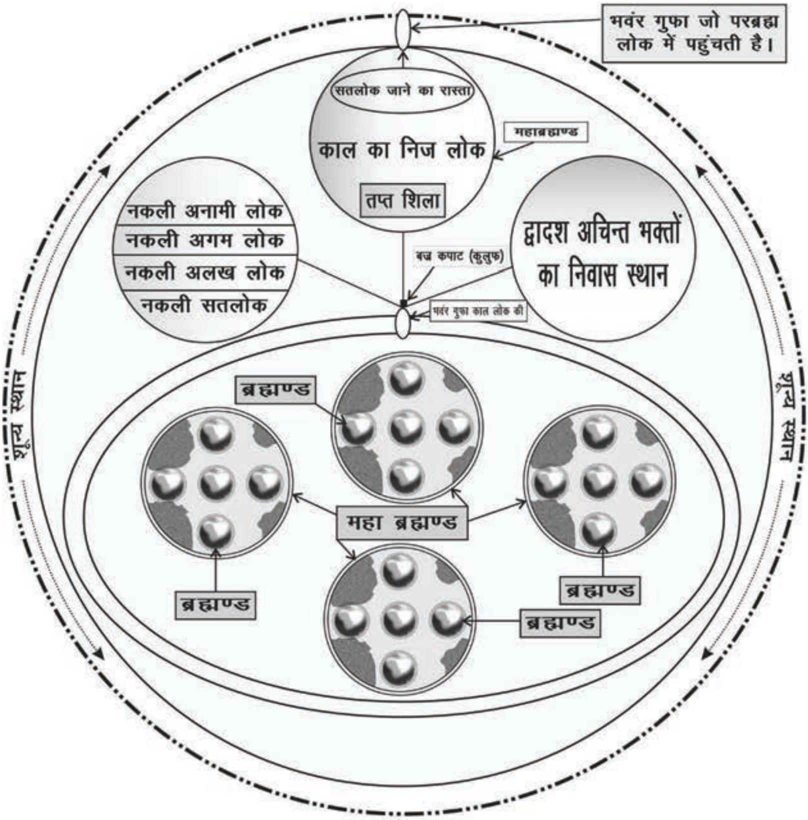

परमेश्वर) स्वयं आए या अपना कोई संदेशवाहक (दूत) भेंजे तो सर्व प्राणी सत्यभक्ति करके काल के जाल से निकल जाऐं।

इसलिए धोखा देकर रखता है तथा पवित्र गीता अध्याय 7 श्लोक 18,24,25 में अपनी साधना से होने वाली मुक्ति (गति) को भी (अनुत्तमाम्) अति अश्रेष्ठ कहा है तथा अपने विधान (नियम)को भी (अनुत्तम) अश्रेष्ठ कहा है।

प्रत्येक ब्रह्माण्ड में बने ब्रह्मलोक में एक महास्वर्ग बनाया है। महास्वर्ग में एक स्थान पर नकली सतलोक - नकली अलख लोक - नकली अगम लोक तथा नकली अनामी लोक की रचना प्राणियों को धोखा देने के लिए प्रकृति (दुर्गा/आदि माया) द्वारा करवा रखी है। कबीर साहेब का एक शब्द है 'कर नैनों दीदार महल में प्यारा है' में वाणी है कि 'काया भेद किया निरवारा, यह सब रचना पिण्ड मंझारा है। माया अविगत जाल पसारा, सो कारीगर भारा है। आदि माया किन्ही चतुराई, झूठी बाजी पिण्ड दिखाई, अविगत रचना रचि अण्ड माहि वाका प्रतिबिम्ब डारा है।'

एक ब्रह्माण्ड में अन्य लोकों की भी रचना है, जैसे श्री ब्रह्मा जी का लोक, श्री विष्णु जी का लोक, श्री शिव जी का लोक। जहाँ पर बैठकर तीनों प्रभु नीचे के तीन लोकों (स्वर्गलोक अर्थात् इन्द्र का लोक - पृथ्वी लोक तथा पाताल लोक) पर एक - एक विभाग के मालिक बन कर प्रभुता करते हैं तथा अपने पिता काल के खाने के लिए प्राणियों की उत्पत्ति, स्थिति तथा संहार का कार्यभार संभालते हैं। तीनों प्रभुओं की भी जन्म व मृत्यु होती है। तब काल इन्हें भी खाता है। इसी ब्रह्माण्ड {इसे अण्ड भी कहते हैं क्योंकि ब्रह्माण्ड की बनावट अण्डाकार है, इसे पिण्ड भी कहते हैं क्योंकि शरीर (पिण्ड) में एक ब्रह्माण्ड की रचना कमलों में टी.वी. की तरह देखी जाती है} में एक मानसरोवर तथा धर्मराय (न्यायधीश) का भी लोक है तथा एक गुप्त स्थान पर पूर्ण परमात्मा अन्य रूप धारण करके रहता है जैसे प्रत्येक देश का राजदूत भवन होता है। वहाँ पर कोई नहीं जा सकता। वहाँ पर वे आत्माऐं रहती हैं जिनकी सत्यलोक की भक्ति अधूरी रहती है। जब भक्ति युग आता है तो उस समय परमेश्वर कबीर जी अपना प्रतिनिधी पूर्ण संत सतगुरु भेजते हैं। इन पुण्यात्माओं को पृथ्वी पर उस समय मानव शरीर प्राप्त होता है तथा ये शीघ्र ही सत भक्ति पर लग जाते हैं तथा सतगुरु से दीक्षा प्राप्त करके पूर्ण मोक्ष प्राप्त कर जाते हैं। उस स्थान पर रहने वाले हंस आत्माओं की निजी भक्ति कमाई खर्च नहीं होती। परमात्मा के भण्डार से सर्व सुविधाऐं उपलब्ध होती हैं। ब्रह्म (काल) के उपासकों की भक्ति कमाई स्वर्ग-महा स्वर्ग में समाप्त हो जाती है क्योंकि इस काल लोक (ब्रह्म लोक) तथा परब्रह्म लोक में प्राणियों को अपना किया कर्मफल ही मिलता है।

क्षर पुरुष (ब्रह्म) ने अपने 20 ब्रह्माण्डों को चार महाब्रह्माण्डों में विभाजित किया है। एक महाब्रह्माण्ड में पाँच ब्रह्माण्डों का समूह बनाया है तथा चारों ओर से अण्डाकार गोलाई (परिधि) में रोका है तथा चारों महा ब्रह्माण्डों को भी फिर अण्डाकार गोलाई (परिधि) में रोका है। इक्कीसवें ब्रह्माण्ड की रचना एक महाब्रह्माण्ड

जितना स्थान लेकर की है। इक्कीसवें ब्रह्माण्ड में प्रवेश होते ही तीन रास्ते बनाए हैं। इक्कीसवें ब्रह्माण्ड में भी बांई तरफ नकली सतलोक, नकली अलख लोक, नकली अगम लोक, नकली अनामी लोक की रचना प्राणियों को धोखे में रखने के लिए आदि माया (दुर्गा) से करवाई है तथा दांई तरफ बारह सर्व श्रेष्ठ ब्रह्म साधकों (भक्तों) को रखता है। फिर प्रत्येक युग में उन्हें अपने संदेश वाहक (सन्त सतगुरू) बनाकर पृथ्वी पर भेजता है, जो शास्त्र विधि रहित साधना व ज्ञान बताते हैं तथा स्वयं भी भक्तिहीन हो जाते हैं तथा अनुयाइयों को भी काल जाल में फंसा जाते हैं। फिर वे गुरु जी तथा अनुयाई दोनों ही नरक में जाते हैं। फिर सामने एक ताला (कुलुफ) लगा रखा है। वह रास्ता काल (ब्रह्म) के निज लोक में जाता है। जहाँ पर यह ब्रह्म (काल) अपने वास्तविक मानव सदृश काल रूप में रहता है। इसी स्थान पर एक पत्थर की टुकड़ी तवे के आकार की (चपाती पकाने की लोहे की गोल प्लेट सी होती है) स्वतः गर्म रहती है। जिस पर एक लाख मानव शरीरधारी प्राणियों के सूक्ष्म शरीर को भूनकर उनमें से गंदगी निकाल कर खाता है। उस समय सर्व प्राणी बहुत पीड़ा अनुभव करते हैं तथा हाहाकार मच जाती है। फिर कुछ समय उपरान्त वे बेहोश हो जाते हैं। जीव मरता नहीं। फिर धर्मराय के लोक में जाकर कर्माधार से अन्य जन्म प्राप्त करते हैं तथा जन्म-मृत्यु का चक्कर बना रहता है। उपरोक्त सामने लगा ताला ब्रह्म (काल) केवल अपने आहार वाले प्राणियों के लिए कुछ क्षण के लिए खोलता है। पूर्ण परमात्मा के सत्यनाम व सारनाम से यह ताला स्वयं खुल जाता है। ऐसे काल का जाल पूर्ण परमात्मा कविर्देव (कबीर साहेब) ने स्वयं ही अपने निजी भक्त धर्मदास जी को समझाया।

"परब्रह्म के सात संख ब्रह्माण्डों की स्थापना"

कबीर परमेश्वर (कविर्देव) ने आगे बताया है कि परब्रह्म (अक्षर पुरुष) ने अपने कार्य में गफलत की क्योंकि यह मानसरोवर में सो गया तथा जब परमेश्वर (मैंनें अर्थात् कबीर साहेब ने) उस सरोवर में अण्डा छोड़ा तो अक्षर पुरुष (परब्रह्म) ने उसे क्रोध से देखा। इन दोनों अपराधों के कारण इसे भी सात संख ब्रह्माण्डों सहित सतलोक से बाहर कर दिया। अन्य कारण अक्षर पुरुष (परब्रह्म) अपने साथी ब्रह्म (क्षर पुरुष) की विदाई में व्याकुल होकर परमपिता कविर्देव (कबीर परमेश्वर) की याद भूलकर उसी को याद करने लगा तथा सोचा कि क्षर पुरुष (ब्रह्म) तो बहुत आनन्द मना रहा होगा, वह स्वतंत्र राज्य करेगा, मैं पीछे रह गया तथा अन्य कुछ आत्माऐं जो परब्रह्म के साथ सात संख ब्रह्माण्डों में जन्म-मृत्यु का कर्मदण्ड भोग रही हैं, उन हंस आत्माओं की विदाई की याद में खो गई जो ब्रह्म (काल) के साथ इक्कीस ब्रह्माण्डों में फंसी हैं तथा पूर्ण परमात्मा, सुखदाई कविर्देव की याद भुला दी। परमेश्वर कविर् देव के बार-बार समझाने पर भी आस्था कम नहीं हुई। परब्रह्म (अक्षर पुरुष) ने सोचा कि मैं भी अलग स्थान प्राप्त करूं तो अच्छा रहे। यह सोच कर राज्य प्राप्ति की इच्छा से सारनाम का जाप प्रारम्भ कर दिया। इसी प्रकार अन्य

आत्माओं ने (जो परब्रह्म के सात संख ब्रह्माण्डों में फंसी हैं) सोचा कि वे जो ब्रह्म के साथ आत्माऐं गई हैं वे तो वहाँ मौज-मस्ती मनाऐंगे, हम पीछे रह गये। परब्रह्म के मन में यह धारणा बनी कि क्षर पुरुष अलग होकर बहुत सुखी होगा। यह विचार कर अन्तरात्मा से भिन्न स्थान प्राप्ति की ठान ली। परब्रह्म (अक्षर पुरुष) ने हठ योग नहीं किया, परन्तु केवल अलग राज्य प्राप्ति के लिए सहज ध्यान योग विशेष कसक के साथ करता रहा। अलग स्थान प्राप्त करने के लिए पागलों की तरह विचरने लगा, खाना-पीना भी त्याग दिया। अन्य कुछ आत्माऐं जो पहले काल ब्रह्म के साथ गई आत्माओं के प्रेम में व्याकुल थी, वे अक्षर पुरूष के वैराग्य पर आसक्त होकर उसे चाहने लगी। पूर्ण प्रभु के पूछने पर परब्रह्म ने अलग स्थान माँगा तथा कुछ हंसात्माओं के लिए भी याचना की। तब कविर्देव ने कहा कि जो आत्मा आपके साथ स्वेच्छा से जाना चाहें उन्हें भेज देता हूँ। पूर्ण प्रभु ने पूछा कि कौन हंस आत्मा परब्रह्म के साथ जाना चाहता है, सहमति व्यक्त करे। बहुत समय उपरान्त एक हंस ने स्वीकति दी, फिर देखा-देखी उन सर्व आत्माओं ने भी सहमति व्यक्त कर दी। सर्व प्रथम स्वीकति देने वाले हंस को स्त्री रूप बनाया, उसका नाम ईश्वरी माया (प्रकति सुरति) रखा तथा अन्य आत्माओं को उस ईश्वरी माया में प्रवेश करके अचिन्त द्वारा अक्षर पुरुष (परब्रह्म) के पास भेजा। (पतिव्रता पद से गिरने की सजा पाई।) कई युगों तक दोनों सात संख ब्रह्माण्डों में रहे, परन्तु परब्रह्म ने दुर्व्यवहार नहीं किया। ईश्वरी माया की स्वेच्छा से अंगीकार किया तथा अपनी शब्द शक्ति द्वारा नाखुनों से स्त्री इन्द्री (योनि) बनाई। ईश्वरी देवी की सहमति से संतान उत्पन्न की। इस लिए परब्रह्म के लोक (सात संख ब्रह्माण्डों) में प्राणियों को तप्तशिला का कष्ट नहीं है तथा वहाँ पशु-पक्षी भी ब्रह्म लोक के देवों से अच्छे चरित्र युक्त हैं। आयु भी बहुत लम्बी है, परन्तु जन्म - मत्यु कर्माधार पर कर्मदण्ड तथा परिश्रम करके ही उदर पूर्ति होती है। स्वर्ग तथा नरक भी ऐसे ही बने हैं। परब्रह्म (अक्षर पुरुष) को सात संख ब्रह्माण्ड उसके इच्छा रूपी भक्ति ध्यान अर्थात् सहज समाधि विधि से की उस की कमाई के प्रतिफल में प्रदान किये तथा सत्यलोक से भिन्न स्थान पर गोलाकार परिधि में बन्द करके सात संख ब्रह्माण्डों सहित अक्षर ब्रह्म व ईश्वरी माया को निष्कासित कर दिया।

पूर्ण ब्रह्म (सतपुरुष) असंख्य ब्रह्माण्डों जो सत्यलोक आदि में हैं तथा ब्रह्म के इक्कीस ब्रह्माण्डों तथा परब्रह्म के सात संख ब्रह्माण्डों का भी प्रभु (मालिक) है अर्थात् परमेश्वर कविर्देव कुल का मालिक है।

श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी आदि के चार-चार भुजाएं तथा 16 कलाएं हैं तथा प्रकति देवी (दुर्गा) की आठ भुजाएं हैं तथा 64 कलाएं हैं। ब्रह्म (क्षर पुरुष) की एक हजार भुजाएं हैं तथा एक हजार कलाएं है तथा इक्कीस ब्रह्माण्ड़ों का प्रभु है। परब्रह्म (अक्षर पुरुष) की दस हजार भुजाएं हैं तथा दस हजार कला हैं तथा सात संख ब्रह्माण्डों का प्रभु है। पूर्ण ब्रह्म (परम अक्षर पुरुष अर्थात् सतपुरुष) की असंख्य भुजाएं तथा असंख्य कलाएं हैं तथा ब्रह्म के इक्कीस ब्रह्माण्ड

व परब्रह्म के सात संख ब्रह्माण्डों सहित असंख्य ब्रह्माण्डों का प्रभु है। प्रत्येक प्रभु अपनी सर्व भुजाओं को समेट कर केवल दो भुजाएं भी रख सकते हैं तथा जब चाहें सर्व भुजाओं को भी प्रकट कर सकते हैं। पूर्ण परमात्मा परब्रह्म के प्रत्येक ब्रह्माण्ड में भी अलग स्थान बनाकर अन्य रूप में गुप्त रहता है। यूं समझो जैसे एक घूमने वाला कैमरा बाहर लगा देते हैं तथा अन्दर टी.वी. (टेलीविजन) रख देते हैं। टी. वी. पर बाहर का सर्व दृश्य नजर आता है तथा दूसरा टी.वी. बाहर रख कर अन्दर का कैमरा स्थाई करके रख दिया जाए, उसमें केवल अन्दर बैठे प्रबन्धक का चित्र दिखाई देता है। जिससे सर्व कर्मचारी सावधान रहते हैं।

इसी प्रकार पूर्ण परमात्मा अपने सतलोक में बैठ कर सर्व को नियंत्रित किए हुए हैं तथा प्रत्येक ब्रह्माण्ड में भी सतगुरु कविर्देव विद्यमान रहते हैं जैसे सूर्य दूर होते हुए भी अपना प्रभाव अन्य लोकों में बनाए हुए है।

"पवित्र अथर्ववेद में सृष्टि रचना का प्रमाण"

अथर्ववेद काण्ड नं. 4 अनुवाक नं. 1 मंत्र नं. 1 :-

ब्रह्म जज्ञानं प्रथमं पुरस्ताद् वि सीमतः सुरुचो वेन आवः।
स बुध्न्या उपमा अस्य विष्ठाः सतश्च योनिमसतश्च वि वः।। 1।।

ब्रह्म—ज—ज्ञानम्—प्रथमम्—पुरस्तात्—विसिमतः—सुरुचः—वेनः—आवः—सः—
बुध्न्याः —उपमा—अस्य—विष्ठाः—सतः—च—योनिम्—असतः—च—वि वः

अनुवाद :— (प्रथमम्) प्राचीन अर्थात् सनातन (ब्रह्म) परमात्मा ने (ज) प्रकट होकर (ज्ञानम्) अपनी सूझ—बूझ से (पुरस्तात्) शिखर में अर्थात् सतलोक आदि को (सुरुचः) स्वइच्छा से बड़े चाव से स्वप्रकाशित (विसिमतः) सीमा रहित अर्थात् विशाल सीमा वाले भिन्न लोकों को उस (वेनः) जुलाहे ने ताने अर्थात् कपड़े की तरह बुनकर (आवः) सुरक्षित किया (च) तथा (सः) वह पूर्ण ब्रह्म ही सर्व रचना करता है (अस्य) इसलिए उसी (बुध्न्याः) मूल मालिक ने (योनिम्) मूलस्थान सत्यलोक की रचना की है (अस्य) इस के (उपमा) सदृश अर्थात् मिलते जुलते (सतः) अक्षर पुरुष अर्थात् परब्रह्म के लोक कुछ स्थाई (च) तथा (असतः) क्षर पुरुष के अस्थाई लोक आदि (वि वः) आवास स्थान भिन्न (विष्ठाः) स्थापित किए।

भावार्थ :- पवित्र वेदों को बोलने वाला ब्रह्म (काल) कह रहा है कि सनातन परमेश्वर ने स्वयं अनामय (अनामी) लोक से सत्यलोक में प्रकट होकर अपनी सूझ-बूझ से कपड़े की तरह रचना करके ऊपर के सतलोक आदि को सीमा रहित स्वप्रकाशित अजर - अमर अर्थात् अविनाशी ठहराए तथा नीचे के परब्रह्म के सात संख ब्रह्माण्ड तथा ब्रह्म के 21 ब्रह्माण्ड व इनमें छोटी-से छोटी रचना भी उसी परमात्मा ने अस्थाई की है।

अथर्ववेद काण्ड नं. 4 अनुवाक नं. 1 मंत्र नं. 2 :-

इयं पित्र्या राष्ट्र्येत्वग्रे प्रथमाय जनुषे भुवनेष्ठाः।
तस्मा एतं सुरुचं ह्वारमह्यं घर्मं श्रीणन्तु प्रथमाय धास्यवे।।2।।

इयम्—पित्र्या—राष्ट्रि—एतु—अग्रे—प्रथमाय—जनुषे—भुवनेष्ठाः—तस्मा—एतम्—सुरुचम् — हवारमह्यम्—धर्मम्—श्रीणान्तु—प्रथमाय—धास्यवे

अनुवाद :– (इयम्) इसी (पित्र्या) जगतपिता परमेश्वर ने (एतु) इस (अग्रे) सर्वोत्तम् (प्रथमाय) सर्व से पहली माया परानन्दनी (राष्ट्रि) राजेश्वरी शक्ति अर्थात् पराशक्ति जिसे आकर्षण शक्ति भी कहते हैं, को (जनुषे) उत्पन्न करके (भुवनेष्ठाः) लोक स्थापना की (तस्मा) उसी परमेश्वर ने (सुरुचम्) बड़े चाव के साथ स्वेच्छा से (एतम्) इस (प्रथमाय) प्रथम उत्पत्ति की शक्ति अर्थात्। पराशक्ति के द्वारा (ह्वारमह्यम्) एक दूसरे के वियोग को रोकने अर्थात् आकर्षण शक्ति के (श्रीणान्तु) गुरूत्व आकर्षण को परमात्मा ने आदेश दिया सदा रहो उस कभी समाप्त न होने वाले (धर्मम्) स्वभाव से (धास्यवे) धारण करके ताने अर्थात् कपड़े की तरह बुनकर रोके हुए है।

भावार्थ :- जगतपिता परमेश्वर ने अपनी शब्द शक्ति से राष्ट्री अर्थात् सबसे पहली माया राजेश्वरी उत्पन्न की तथा उसी पराशक्ति के द्वारा एक-दूसरे को आकर्षण शक्ति से रोकने वाले कभी न समाप्त होने वाले गुण से उपरोक्त सर्व ब्रह्माण्डों को स्थापित किया है।

अथर्ववेद काण्ड नं. 4 अनुवाक नं. 1 मंत्र नं. 3 :-

प्र यो जज्ञे विद्वानस्य बन्धुर्विश्वा देवानां जनिमा विवक्ति।
ब्रह्म ब्रह्मण उज्जभार मध्यान्नीचैरुच्चैः स्वधा अभि प्र तस्थौ।।3।।

प्र—यः—जज्ञे—विद्वानस्य—बन्धुः—विश्वा—देवानाम्—जनिमा—विवक्ति—ब्रह्मः—ब्रह्मणः— उज्जभार—मध्यात्—निचैः—उच्चैः—स्वधा—अभिः—प्रतस्थौ

अनुवाद :– (प्र) सर्व प्रथम (देवानाम्) देवताओं व ब्रह्माण्डों की (जज्ञे) उत्पति के ज्ञान को (विद्वानस्य) जिज्ञासु भक्त का (यः) जो (बन्धुः) वास्तविक साथी अर्थात् पूर्ण परमात्मा ही अपने निज सेवक को (जनिमा) अपने द्वारा सृजन किए हुए को (विवक्ति) स्वयं ही ठीक–ठीक विस्त्तार पूर्वक बताता है कि (ब्रह्मणः) पूर्ण परमात्मा ने (मध्यात्) अपने मध्य से अर्थात् शब्द शक्ति से (ब्रह्मः) ब्रह्म–क्षर पुरूष अर्थात् काल को (उज्जभार) उत्पन्न करके (विश्वा) सारे संसार को अर्थात् सर्व लोकों को (उच्चैः) ऊपर सत्यलोक आदि (निचैः) नीचे परब्रह्म व ब्रह्म के सर्व ब्रह्माण्ड (स्वधा) अपनी धारण करने वाली (अभिः) आकर्षण शक्ति से (प्र तस्थौ) दोनों को अच्छी प्रकार स्थित किया।

भावार्थ :- पूर्ण परमात्मा अपने द्वारा रची सृष्टि का ज्ञान तथा सर्व आत्माओं की उत्पत्ति का ज्ञान अपने निजी दास को स्वयं ही सही बताता है कि पूर्ण परमात्मा ने अपने मध्य अर्थात् अपने शरीर से अपनी शब्द शक्ति के द्वारा ब्रह्म (क्षर पुरुष/काल) की उत्पत्ति की तथा सर्व ब्रह्माण्डों को ऊपर सतलोक, अलख लोक, अगम लोक, अनामी लोक आदि तथा नीचे परब्रह्म के सात संख ब्रह्माण्ड तथा ब्रह्म के 21 ब्रह्माण्डों को अपनी धारण करने वाली आकर्षण शक्ति से ठहराया हुआ है।

जैसे पूर्ण परमात्मा कबीर परमेश्वर (कविर्देव) ने अपने निजी सेवक अर्थात् सखा श्री धर्मदास जी, आदरणीय गरीबदास जी आदि को अपने द्वारा रची सृष्टि का ज्ञान स्वयं ही बताया। उपरोक्त वेद मंत्र भी यही समर्थन कर रहा है।

अथर्ववेद काण्ड नं. 4 अनुवाक नं. 1 मंत्र नं. 4

सः हि दिवः सः पृथिव्या ऋतस्था मही क्षेमं रोदसी अस्कभायत्।

महान् मही अस्कभायद् वि जातो द्यां सद्म पार्थिवं च रजः।।4।।

हि–दिवः–स–पृथिव्या–ऋतस्था–मही–क्षेमम्–रोदसी–अकस्भायत्–

महान् –मही–अस्कभायद्–विजातः–धाम्–सदम्–पार्थिवम्–च–रजः

अनुवाद – (सः)उसी सर्वशक्तिमान परमात्मा ने (हि) निःसंदेह (दिवः) ऊपर के चारों दिव्य लोक जैसे सत्य लोक, अलख लोक, अगम लोक तथा अनामी अर्थात् अकह लोक अर्थात् दिव्य गुणों युक्त लोकों को (ऋतस्था) सत्य स्थिर अर्थात् अजर–अमर रूप से स्थिर किए (स) उन्हीं के समान (पृथिव्या) नीचे के पृथ्वी वाले सर्व लोकों जैसे परब्रह्म के सात संख तथा ब्रह्म/काल के इक्कीस ब्रह्माण्ड (मही) पृथ्वी तत्व से (क्षेमम्) सुरक्षा के साथ (अस्कभायत्) ठहराया (रोदसी) आकाश तत्व तथा पृथ्वी तत्व दोनों से ऊपर नीचे के ब्रह्माण्डों को{जैसे आकाश एक सुक्ष्म तत्व है, आकाश का गुण शब्द है, पूर्ण परमात्मा ने ऊपर के लोक शब्द रूप रचे जो तेजपुंज के बनाए हैं तथा नीचे के परब्रह्म (अक्षर पुरूष) के सप्त संख ब्रह्माण्ड तथा ब्रह्म/क्षर पुरूष के इक्कीस ब्रह्माण्डों को पृथ्वी तत्व से अस्थाई रचा} (महान्) पूर्ण परमात्मा ने (पार्थिवम्) पृथ्वी वाले (वि) भिन्न–भिन्न (धाम्) लोक (च) और (सदम्) आवास स्थान (मही) पृथ्वी तत्व से (रजः) प्रत्येक ब्रह्माण्ड में छोटे–छोटे लोकों की (जातः) रचना करके (अस्कभायत्) स्थिर किया।

भावार्थ :- ऊपर के चारों लोक सत्यलोक, अलख लोक, अगम लोक, अनामी लोक, यह तो अजर-अमर स्थाई अर्थात् अविनाशी रचे हैं तथा नीचे के ब्रह्म तथा परब्रह्म के लोकों को अस्थाई रचना करके तथा अन्य छोटे-छोटे लोक भी उसी परमेश्वर ने रच कर स्थिर किए।

अथर्ववेद काण्ड नं. 4 अनुवाक नं. 1 मंत्र 5

सः बुध्न्यादाष्ट्र जनुषोऽभ्यग्रं बृहस्पतिर्देवता तस्य सम्राट्।

अहर्यच्छुक्रं ज्योतिषो जनिष्टाथ द्युमन्तो वि वसन्तु विप्राः।।5।।

सः–बुध्न्यात्–आष्ट्र–जनुषेः–अभि–अग्रम्–बृहस्पतिः–देवता–तस्य–सम्राट–अहः– यत्–शुक्रम्–ज्योतिषः–जनिष्ट–अथ–द्युमन्तः–वि–वसन्तु–विप्राः

अनुवाद :– (सः) उसी (बुध्न्यात्) मूल मालिक से (अभि–अग्रम्) सर्व प्रथम स्थान पर (आष्ट्र) अष्टँगी माया–दुर्गा अर्थात् प्रकृति देवी (जनुषेः) उत्पन्न हुई क्योंकि नीचे के परब्रह्म व ब्रह्म के लोकों का प्रथम स्थान सतलोक है यह तीसरा धाम भी कहलाता है (तस्य) इस दुर्गा का भी मालिक यही (सम्राट) राजाधिराज (बृहस्पतिः) सबसे बड़ा पति व जगतगुरु (देवता) परमेश्वर है। (यत्) जिस से (अहः) सबका वियोग हुआ (अथ) इसके बाद (ज्योतिषः) ज्योति रूप निरंजन अर्थात् काल के (शुक्रम्) वीर्य अर्थात् बीज शक्ति से (जनिष्ट) दुर्गा के उदर से उत्पन्न होकर (विप्राः) भक्त आत्माएं (वि) अलग से (द्युमन्तः) मनुष्य लोक तथा स्वर्ग लोक में ज्योति निरंजन के आदेश से दुर्गा ने कहा (वसन्तु) निवास करो, अर्थात् वे निवास करने लगी।

भावार्थ :- पूर्ण परमात्मा ने ऊपर के चारों लोकों में से जो नीचे से सबसे प्रथम

अर्थात् सत्यलोक में आष्ट्रा अर्थात् अष्टंगी (प्रकति देवी/दुर्गा) की उत्पत्ति की। यही राजाधिराज, जगतगुरु, पूर्ण परमेश्वर (सतपुरुष) है जिससे सबका वियोग हुआ है। फिर सर्व प्राणी ज्योति निरंजन (काल) के (वीर्य) बीज से दुर्गा (आष्ट्रा) के गर्भ द्वारा उत्पन्न होकर स्वर्ग लोक व पथ्वी लोक पर निवास करने लगे।

अथर्ववेद काण्ड नं. 4 अनुवाक नं. 1 मंत्र 6

नूनं तदस्य काव्यो हिनोति महो देवस्य पूर्व्यस्य धाम।
एष जज्ञे बहुभिः साकमित्था पूर्वे अर्धे विषिते ससन् नु।।6।।

नूनम्–तत्–अस्य–काव्यः–महः–देवस्य–पूर्व्यस्य–धाम–हिनोति–पूर्वे–विषिते–एष– जज्ञे–बहुभिः–साकम्–इत्था–अर्धे–ससन्–नु।

अनुवाद – (नूनम्) निसंदेह (तत्) वह पूर्ण परमेश्वर अर्थात् तत् ब्रह्म ही (अस्य) इस (काव्यः) भक्त आत्मा जो पूर्ण परमेश्वर की भक्ति विधिवत करता है को वापिस (महः) सर्वशक्तिमान (देवस्य) परमेश्वर के (पूर्व्यस्य) पहले के (धाम) लोक में अर्थात् सत्यलोक में (हिनोति) भेजता है।

(पूर्वे) पहले वाले (विषिते) विशेष चाहे हुए (एष) इस परमेश्वर को व (जज्ञे) संष्टि उत्पति के ज्ञान को जान कर (बहुभिः) बहुत आनन्द (साकम्) के साथ (अर्धे) आधा (ससन्) सोता हुआ (इत्था) विधिवत् इस प्रकार (नु) सच्ची आत्मा से स्तुति करता है।

भावार्थ :- वही पूर्ण परमेश्वर सत्य साधना करने वाले साधक को उसी पहले वाले स्थान (सत्यलोक) में ले जाता है, जहाँ से बिछुड़ कर आए थे। वहाँ उस वास्तविक सुखदाई प्रभु को प्राप्त करके खुशी से आत्म विभोर होकर मस्ती से स्तुति करता है कि हे परमात्मा असंख्य जन्मों के भूले-भटकों को वास्तविक ठिकाना मिल गया। इसी का प्रमाण पवित्र ऋग्वेद मण्डल 10 सुक्त 90 मंत्र 16 में भी है।

आदरणीय गरीबदास जी को इसी प्रकार पूर्ण परमात्मा कविर्देव (कबीर परमेश्वर) स्वयं सत्यभक्ति प्रदान करके सत्यलोक लेकर गए थे, तब अपनी अमतवाणी में आदरणीय गरीबदास जी महाराज ने आँखों देखकर कहाः-

गरीब, अजब नगर में ले गए, हमकुँ सतगुरु आन। झिलके बिम्ब अगाध गति, सुते चादर तान।।

अथर्ववेद काण्ड नं. 4 अनुवाक नं. 1 मंत्र 7

योऽथर्वाणं पित्तरं देवबन्धुं बहस्पतिं नमसाव च गच्छात्।
त्वं विश्वेषां जनिता यथासः कविर्देवो न दभायत् स्वधावान्।।7।।

यः–अथर्वाणम्–पित्तरम्–देवबन्धुम्–बहस्पतिम्–नमसा–अव–च– गच्छात्–त्वम्–विश्वेषाम्–जनिता–यथा–सः–कविर्देवः–न–दभायत्–स्वधावान्

अनुवाद :– (यः) जो (अथर्वाणम्) अचल अर्थात् अविनाशी (पित्तरम्) जगत पिता (देव बन्धुम्) भक्तों का वास्तविक साथी अर्थात् आत्मा का आधार (बहस्पतिम्) जगतगुरु (च) तथा (नमसा) विनम्र पुजारी अर्थात् विधिवत् साधक को (अव) सुरक्षा के साथ (गच्छात्) सतलोक गए हुओं को अर्थात् जिनका पूर्ण मोक्ष हो गया, वे सत्यलोक में जा चुके हैं। उनको सतलोक ले जाने वाला (विश्वेषाम्) सर्व ब्रह्माण्डों की (जनिता) रचना करने वाला जगदम्बा अर्थात् माता वाले गुणों से भी युक्त (न दभायत्) काल की तरह धोखा न देने

वाले (स्वधावान्) स्वभाव अर्थात् गुणों वाला (यथा) ज्यों का त्यों अर्थात् वैसा ही (सः) वह (त्वम्) आप (कविर्देवः/ कविर्देवः) कविर्देव है अर्थात् भाषा भिन्न इसे कबीर परमेश्वर भी कहते हैं।

भावार्थ :- इस मंत्र में यह भी स्पष्ट कर दिया कि उस परमेश्वर का नाम कविर्देव अर्थात् कबीर परमेश्वर है, जिसने सर्व रचना की है।

जो परमेश्वर अचल अर्थात् वास्तव में अविनाशी (गीता अध्याय 15 श्लोक 16-17 में भी प्रमाण है) जगत् गुरु, आत्माधार, जो पूर्ण मुक्त होकर सत्यलोक गए हैं उनको सतलोक ले जाने वाला, सर्व ब्रह्माण्डों का रचनहार, काल (ब्रह्म) की तरह धोखा न देने वाला ज्यों का त्यों वह स्वयं कविर्देव अर्थात् कबीर प्रभु है। यही परमेश्वर सर्व ब्रह्माण्डों व प्राणियों को अपनी शब्द शक्ति से उत्पन्न करने के कारण (जनिता) माता भी कहलाता है तथा (पित्तरम्) पिता तथा (बन्धु) भाई भी वास्तव में यही है तथा (देव) परमेश्वर भी यही है। इसलिए इसी कविर्देव (कबीर परमेश्वर) की स्तुति किया करते हैं। त्वमेव माता च पिता त्वमेव त्वमेव बन्धु च सखा त्वमेव, त्वमेव विद्या च द्रविणंम त्वमेव, त्वमेव सर्वं मम् देव देव। इसी परमेश्वर की महिमा का पवित्र ऋग्वेद मण्डल नं. 1 सूक्त नं. 24 में विस्तृत विवरण है।

"पवित्र ऋग्वेद में सृष्टि रचना का प्रमाण"

ऋग्वेद मण्डल 10 सुक्त 90 मंत्र 1

सहस्त्रशीर्षा पुरूषः सहस्राक्षः सहस्त्रपात्।
स भूमिं विश्वतों वृत्वात्यतिष्ठद्दशाङ्गुलम्।।1।।

सहस्त्रशिर्षा—पुरूषः—सहस्राक्षः—सहस्त्रपात्
स—भूमिम्—विश्वतः—वृत्वा—अत्यातिष्ठत् —दशंगुलम्।

अनुवाद :— (पुरूषः) विराट रूप काल भगवान अर्थात् क्षर पुरुष (सहस्रशिर्षा) हजार सिरों वाला (सहस्राक्षः) हजार आँखों वाला (सहस्रपात्) हजार पैरों वाला है (स) वह काल (भूमिम्) पृथ्वी वाले इक्कीस ब्रह्माण्डों को (विश्वतः) सब ओर से (दशंगुलम्) दसों अंगुलियों से अर्थात् पूर्ण रूप से काबू किए हुए (वृत्वा) गोलाकार घेरे में घेर कर (अत्यातिष्ठत्) इस से बढ़कर अर्थात् अपने काल लोक में सबसे न्यारा भी इक्कीसवें ब्रह्माण्ड में ठहरा है अर्थात् रहता है।

भावार्थ :- इस मंत्र में विराट (काल/ब्रह्म) का वर्णन है। (गीता अध्याय 10-11 में भी इसी काल/ब्रह्म का ऐसा ही वर्णन है अध्याय 11 मंत्र नं. 46 में अर्जुन ने कहा है कि हे सहस्राबाहु अर्थात् हजार भुजा वाले आप अपने चतुर्भुज रूप में दर्शन दीजिए)

जिसके हजारों हाथ, पैर, हजारों आँखे, कान आदि हैं वह विराट रूप काल प्रभु अपने आधीन सर्व प्राणियों को पूर्ण काबू करके अर्थात् 20 ब्रह्माण्डों को गोलाकार परिधि में रोककर स्वयं इनसे ऊपर (अलग) इक्कीसवें ब्रह्माण्ड में बैठा है।

ऋग्वेद मण्डल 10 सुक्त 90 मंत्र 2

पुरूष एवेदं सर्वं यद्भूतं यच्च भाव्यम्।
उतामृतत्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति।।2।।

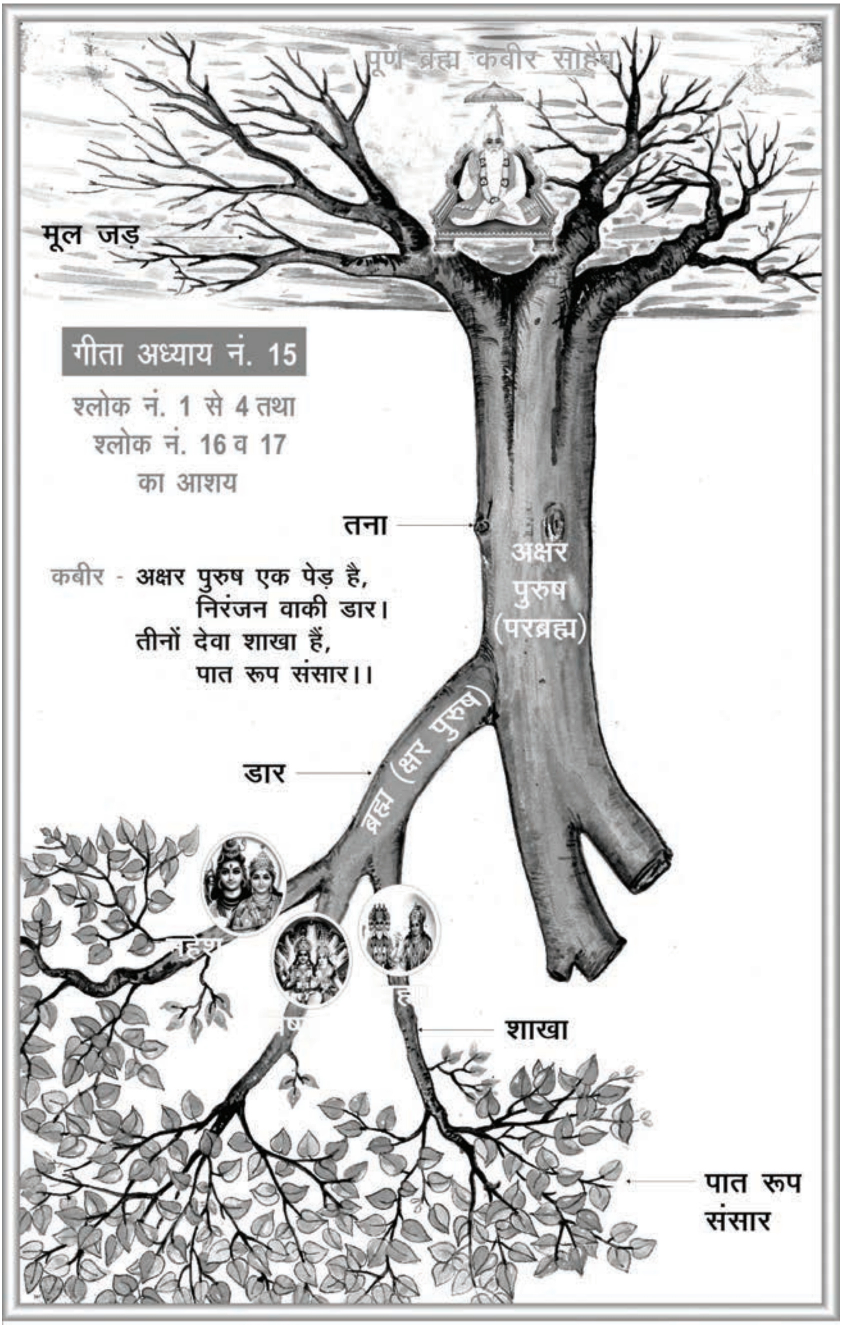

ऊपर जड़ नीचे शाखा वाला उल्टा लटका हुआ संसार रूपी वृक्ष का चित्र

पुरूष—एव—इदम्—सर्वम्—यत्—भूतम्—यत्—च—भाव्यम्

उत—अमंतत्वस्य— इशानः—यत्—अन्नेन—अतिरोहति

अनुवाद :— (एव) इसी प्रकार कुछ सही तौर पर (पुरूष) भगवान है वह अक्षर पुरूष अर्थात् परब्रह्म है (च) और (इदम्) यह (यत्) जो (भूतम्) उत्पन्न हुआ है (यत्) जो (भाव्यम्) भविष्य में होगा (सर्वम्) सब (यत्) प्रयत्न से अर्थात् मेहनत द्वारा (अन्नेन) अन्न से (अतिरोहति) विकसित होता है। यह अक्षर पुरूष भी (उत) सन्देह युक्त (अमंतत्वस्य) मोक्ष का (इशानः) स्वामी है अर्थात् भगवान तो अक्षर पुरूष भी कुछ सही है परन्तु पूर्ण मोक्ष दायक नहीं है।

भावार्थ :- इस मंत्र में परब्रह्म (अक्षर पुरुष) का विवरण है जो कुछ भगवान वाले लक्षणों से युक्त है, परन्तु इसकी भक्ति से भी पूर्ण मोक्ष नहीं है, इसलिए इसे संदेहयुक्त मुक्ति दाता कहा है। इसे कुछ प्रभु के गुणों युक्त इसलिए कहा है कि यह काल की तरह तप्तशिला पर भून कर नहीं खाता। परन्तु इस परब्रह्म के लोक में भी प्राणियों को परिश्रम करके कर्माधार पर ही फल प्राप्त होता है तथा अन्न से ही सर्व प्राणियों के शरीर विकसित होते हैं, जन्म तथा मंत्यु का समय भले ही काल पुरुष) से अधिक है, परन्तु फिर भी उत्पत्ति प्रलय तथा चौरासी लाख योनियों में यातना बनी रहती है।

मण्डल 10 सुक्त 90 मंत्र 3

एतावानस्य महिमातो ज्यायाँश्च पुरूषः।
पादोऽस्य विश्वा भूतानि त्रिपादस्यामंतं दिवि।।3।।

तावान्—अस्य—महिमा—अतः—ज्यायान्—च—पुरूषः

पादः—अस्य—विश्वा— भूतानि—त्रि—पाद्—अस्य—अमंतम्—दिवि

अनुवाद :— (अस्य) इस अक्षर पुरूष अर्थात्। परब्रह्म की तो (एतावान्) इतनी ही (महिमा) प्रभुता है। (च) तथा (पुरूषः) वह परम अक्षर ब्रह्म अर्थात् पूर्ण ब्रह्म परमेश्वर तो (अतः) इससे भी (ज्यायान्) बड़ा है (विश्वा) समस्त (भूतानि) क्षर पुरूष तथा अक्षर पुरूष तथा इनके लोकों में तथा सत्यलोक तथा इन लोकों में जितने भी प्राणी हैं (अस्य) इस पूर्ण परमात्मा परम अक्षर पुरूष का (पादः) एक पैर है अर्थात् एक अंश मात्र है। (अस्य) इस परमेश्वर के (त्रि) तीन (दिवि) दिव्य लोक जैसे सत्यलोक–अलख लोक–अगम लोक (अमंतम्) अविनाशी (पाद्) दूसरा पैर है अर्थात् जो भी सर्व ब्रह्माण्डों में उत्पन्न है वह सत्यपुरूष पूर्ण परमात्मा का ही अंश या अंग है।

भावार्थ :- इस ऊपर के मंत्र 2 में वर्णित अक्षर पुरुष (परब्रह्म) की तो इतनी ही महिमा है तथा वह पूर्ण पुरुष कविर्देव तो इससे भी बड़ा है अर्थात् सर्वशक्तिमान है तथा सर्व ब्रह्माण्ड उसी के अंश मात्र पर ठहरे हैं। इस मंत्र में तीन लोकों का वर्णन इसलिए है क्योंकि चौथा अनामी (अनामय) लोक अन्य रचना से पहले का है। यही तीन प्रभुओं (क्षर पुरुष-अक्षर पुरूष तथा इन दोनों से अन्य परम अक्षर पुरूष) का विवरण श्रीमद्भगवत गीता अध्याय 15 श्लोक संख्या 16-17 में है {इसी का प्रमाण आदरणीय गरीबदास साहेब जी कहते हैं कि :-

गरीब, जाके अर्ध रूम पर सकल पसारा, ऐसा पूर्ण ब्रह्म हमारा।।
गरीब, अनन्त कोटि ब्रह्माण्ड का, एक रति नहीं भार।
सतगुरु पुरुष कबीर हैं, कुल के सजनहार।।

इसी का प्रमाण आदरणीय दादू साहेब जी कह रहे हैं कि :-

जिन मोकुं निज नाम दिया, सोई सतगुरु हमार। दादू दूसरा कोए नहीं, कबीर सजनहार।।

इसी का प्रमाण आदरणीय नानक साहेब जी देते हैं कि :-

यक अर्ज गुफतम पेश तो दर कून करतार।
हक्का कबीर करीम तू, बेएब परवरदिगार।।

(श्री गुरु ग्रन्थ साहेब, पष्ठ नं. 721, महला 1, राग तिलंग)

कून करतार का अर्थ होता है सर्व का रचनहार, अर्थात् शब्द शक्ति से रचना करने वाला शब्द स्वरूपी प्रभु, हक्का कबीर का अर्थ है सत् कबीर, करीम का अर्थ दयालु, परवरदिगार का अर्थ परमात्मा है।}

मण्डल 10 सुक्त 90 मंत्र 4

त्रिपादूर्ध्व उदैत्पुरूषः पादोऽस्येहाभवत्पुनः।
ततो विष्व ङ्व्यक्रामत्साशनानशने अभि।।4।।

त्रि–पाद–ऊर्ध्वः–उदैत्–पुरूषः–पादः–अस्य–इह–अभवत्–पूनः
ततः– विश्वङ्– व्यक्रामत्–सः–अशनानशने–अभि

अनुवाद :– (पुरूषः) यह परम अक्षर ब्रह्म अर्थात् अविनाशी परमात्मा (ऊर्ध्वः) ऊपर (त्रि) तीन लोक जैसे सत्यलोक–अलख लोक–अगम लोक रूप (पाद) पैर अर्थात् ऊपर के हिस्से में (उदैत्) प्रकट होता है अर्थात् विराजमान है (अस्य) इसी परमेश्वर पूर्ण ब्रह्म का (पादः) एक पैर अर्थात् एक हिस्सा जगत रूप (पुनर्) फिर (इह) यहाँ (अभवत्) प्रकट होता है (ततः) इसलिए (सः) वह अविनाशी पूर्ण परमात्मा (अशनानशने) खाने वाले काल अर्थात् क्षर पुरूष व न खाने वाले परब्रह्म अर्थात् अक्षर पुरूष के भी (अभि)ऊपर (विश्वङ्)सर्वत्र (व्यक्रामत्)व्याप्त है अर्थात् उसकी प्रभुता सर्व ब्रह्माण्डों व सर्व प्रभुओं पर है वह कुल का मालिक है। जिसने अपनी शक्ति को सर्व के ऊपर फैलाया है।

भावार्थ :- यही सर्व संष्टि रचन हार प्रभु अपनी रचना के ऊपर के हिस्से में तीनों स्थानों (सतलोक, अलखलोक, अगमलोक) में तीन रूप में स्वयं प्रकट होता है अर्थात् स्वयं ही विराजमान है। यहाँ अनामी लोक का वर्णन इसलिए नहीं किया क्योंकि अनामी लोक में कोई रचना नहीं है तथा अकह (अनामय) लोक शेष रचना से पूर्व का है फिर कहा है कि उसी परमात्मा के सत्यलोक से बिछुड़ कर नीचे के ब्रह्म व परब्रह्म के लोक उत्पन्न होते हैं और वह पूर्ण परमात्मा खाने वाले ब्रह्म अर्थात् काल से (क्योंकि ब्रह्म/काल विराट शाप वश एक लाख मानव शरीर धारी प्राणियों को खाता है) तथा न खाने वाले परब्रह्म अर्थात् अक्षर पुरुष से (परब्रह्म प्राणियों को खाता नहीं, परन्तु जन्म-मंत्यु, कर्मदण्ड ज्यों का त्यों बना रहता है) भी ऊपर सर्वत्र व्याप्त है अर्थात् इस पूर्ण परमात्मा की प्रभुता सर्व के ऊपर है, कबीर परमेश्वर ही कुल का मालिक है। जिसने अपनी शक्ति को सर्व के ऊपर फैलाया

है जैसे सूर्य अपने प्रकाश को सर्व के ऊपर फैला कर प्रभावित करता है, ऐसे पूर्ण परमात्मा ने अपनी शक्ति रूपी रेंज (क्षमता) को सर्व ब्रह्माण्डों को नियन्त्रित रखने के लिए छोड़ा हुआ है जैसे मोबाईल फोन का टावर एक देशिय होते हुए अपनी शक्ति अर्थात् मोबाइल फोन की रेंज (क्षमता) चहुं ओर फैलाए रहता है। इसी प्रकार पूर्ण प्रभु ने अपनी निराकार शक्ति सर्व व्यापक की है जिससे पूर्ण परमात्मा सर्व ब्रह्माण्डों को एक स्थान पर बैठ कर नियन्त्रित रखता है।

इसी का प्रमाण आदरणीय गरीबदास जी महाराज दे रहे हैं (अमृतवाणी राग कल्याण)

तीन चरण चिन्तामणी साहेब, शेष बदन पर छाए।
माता, पिता, कुल न बन्धु, ना किन्हें जननी जाये।।

मण्डल 10 सुक्त 90 मंत्र 5

तस्माद्विराळजायत विराजो अधि पूरूषः।
स जातो अत्यरिच्यत पश्चाद्भूमिमथो पुरः।।5।।

तस्मात्—विराट्—अजायत—विराजः—अधि—पुरूषः
स—जातः—अत्यरिच्यत— पश्चात् —भूमिम्—अथः—पुरः।

अनुवाद :— (तस्मात्) उसके पश्चात् उस परमेश्वर सत्यपुरूष की शब्द शक्ति से (विराट्) विराट अर्थात् ब्रह्म, जिसे क्षर पुरूष व काल भी कहते हैं (अजायत) उत्पन्न हुआ है (पश्चात्) इसके बाद (विराजः) विराट पुरूष अर्थात् काल भगवान से (अधि) बड़े (पुरूषः) परमेश्वर ने (भूमिम्) पृथ्वी वाले लोक, काल ब्रह्म तथा परब्रह्म के लोक को (अत्यरिच्यत) अच्छी तरह रचा (अथः) फिर (पुरः) अन्य छोटे—छोटे लोक (स) उस पूर्ण परमेश्वर ने ही (जातः) उत्पन्न किया अर्थात् स्थापित किया।

भावार्थ :- उपरोक्त मंत्र 4 में वर्णित तीनों लोकों (अगमलोक, अलख लोक तथा सतलोक) की रचना के पश्चात पूर्ण परमात्मा ने ज्योति निरंजन (ब्रह्म) की उत्पत्ति की अर्थात् उसी सर्व शक्तिमान परमात्मा पूर्ण ब्रह्म कविर्देव (कबीर प्रभु) से ही विराट अर्थात् ब्रह्म (काल) की उत्पत्ति हुई। यही प्रमाण गीता अध्याय 3 मन्त्र 15 में है कि अक्षर पुरूष अर्थात् अविनाशी प्रभु से ब्रह्म उत्पन्न हुआ यही प्रमाण अर्थववेद काण्ड 4 अनुवाक 1 सुक्त 3 में है कि पूर्ण ब्रह्म से ब्रह्म की उत्पत्ति हुई उसी पूर्ण ब्रह्म ने (भूमिम्) भूमि आदि छोटे-बड़े सर्व लोकों की रचना की। वह पूर्णब्रह्म इस विराट भगवान अर्थात् ब्रह्म से भी बड़ा है अर्थात् इसका भी मालिक है।

मण्डल 10 सुक्त 90 मंत्र 15

सप्तास्यासन्परिधयस्त्रिः सप्त समिधः कृताः।
देवा यद्यज्ञं तन्वाना अबध्नन्पुरूषं पशुम्।।15।।

सप्त—अस्य—आसन्—परिधयः—त्रिसप्त—समिधः—कृताः
देवा—यत्—यज्ञम्— तन्वानाः— अबध्नन्—पुरूषम्—पशुम्।

अनुवाद :— (सप्त) सात संख ब्रह्माण्ड तो परब्रह्म के तथा (त्रिसप्त) इक्कीस ब्रह्माण्ड काल ब्रह्म के (समिधः) कर्मदण्ड दुःख रूपी आग से दुःखी (कृताः) करने वाले (परिधयः)

गोलाकार घेरा रूप सीमा में (आसन्) विद्यमान हैं (यत्) जो (पुरूषम्) पूर्ण परमात्मा की (यज्ञम्) विधिवत् धार्मिक कर्म अर्थात् पूजा करता है (पशुम्) बलि के पशु रूपी काल के जाल में कर्म बन्धन में बंधे (देवा) भक्तात्माओं को (तन्वानाः) काल के द्वारा रचे अर्थात् फैलाये पाप कर्म बंधन जाल से (अबध्नन्) बन्धन रहित करता है अर्थात् बन्दी छुड़ाने वाला बन्दी छोड़ है।

भावार्थ :- सात संख ब्रह्माण्ड परब्रह्म के तथा इक्कीस ब्रह्माण्ड ब्रह्म के हैं जिन में गोलाकार सीमा में बंद पाप कर्मों की आग में जल रहे प्राणियों को वास्तविक पूजा विधि बता कर सही उपासना करवाता है जिस कारण से बलि दिए जाने वाले पशु की तरह जन्म-मंत्यु के काल (ब्रह्म) के खाने के लिए तप्त शिला के कष्ट से पीड़ित भक्तात्माओं को काल के कर्म बन्धन के फैलाए जाल को तोड़कर बन्धन रहित करता है अर्थात् बंधन छुड़वाने वाला बन्दी छोड़ है। इसी का प्रमाण पवित्र यजुर्वेद अध्याय 5 मंत्र 32 में है कि कविरंघारिसि (कविर्) कबिर परमेश्वर (अंघ) पाप का (अरि) शत्रु (असि) है अर्थात् पाप विनाशक कबीर है। बम्भारिसि (बम्भारि) बन्धन का शत्रु अर्थात् बन्दी छोड़ कबीर परमेश्वर (असि) है।

मण्डल 10 सुक्त 90 मंत्र 16

यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन्।
ते ह नाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः ।।16।।

यज्ञेन्–अयज्ञम–अ–यजन्त–देवाः–तानि–धर्माणि–प्रथमानि– आसन्–ते–ह–नाकम्– महिमानः– सचन्त– यत्र–पूर्वे–साध्याः–सन्ति देवाः।

अनुवाद :– जो (देवाः) निर्विकार देव स्वरूप भक्तात्माएं (अयज्ञम्) अधूरी गलत धार्मिक पूजा के स्थान पर (यज्ञेन) सत्य भक्ति धार्मिक कर्म के आधार पर (अयजन्त) पूजा करते हैं (तानि) वे (धर्माणि) धार्मिक शक्ति सम्पन्न (प्रथमानि) मुख्य अर्थात् उत्तम (आसन्) हैं (ते ह) वे ही वास्तव में (महिमानः) महान भक्ति शक्ति युक्त होकर (साध्याः) सफल भक्त जन (नाकम्) पूर्ण सुखदायक परमेश्वर को (सचन्त) भक्ति निमित कारण अर्थात् सत्भक्ति की कमाई से प्राप्त होते हैं, वे वहाँ चले जाते हैं। (यत्र) जहाँ पर (पूर्वे) पहले वाली संष्टि के (देवाः) पापरहित देव स्वरूप भक्त आत्माएं (सन्ति) रहती हैं।

भावार्थ :- जो निर्विकार (जिन्होने मांस,शराब, तम्बाकू सेवन करना त्याग दिया है तथा अन्य बुराईयों से रहित है वे) देव स्वरूप भक्त आत्माएं शास्त्र विधि रहित पूजा को त्याग कर शास्त्रानुकूल साधना करते हैं वे भक्ति की कमाई से धनी होकर काल के ऋण से मुक्त होकर अपनी सत्य भक्ति की कमाई के कारण उस सर्व सुखदाई परमात्मा को प्राप्त करते हैं अर्थात् सत्यलोक में चले जाते हैं जहाँ पर सर्व प्रथम रची संष्टि के देव स्वरूप अर्थात् पाप रहित हंस आत्माएं रहती हैं।

जैसे कुछ आत्माएं तो काल (ब्रह्म) के जाल में फंस कर यहाँ आ गई, कुछ परब्रह्म के साथ सात संख ब्रह्माण्डों में आ गई, फिर भी असंख्य आत्माएं जिनका विश्वास पूर्ण परमात्मा में अटल रहा, जो पतिव्रता पद से नहीं गिरी वे वहीं रह गई, इसलिए यहाँ वही वर्णन पवित्र वेदों ने भी सत्य बताया है। यही प्रमाण गीता अध्याय 8 के श्लोक संख्या 8 से 10 में वर्णन है कि जो साधक पूर्ण परमात्मा की सतसाधना

शास्त्रविधि अनुसार करता है वह भक्ति की कमाई के बल से उस पूर्ण परमात्मा को प्राप्त होता है अर्थात् उसके पास चला जाता है। इससे सिद्ध हुआ कि तीन प्रभु हैं ब्रह्म - परब्रह्म - पूर्णब्रह्म। इन्हीं को 1. ब्रह्म - ईश - क्षर पुरुष 2. परब्रह्म - अक्षर पुरुष/अक्षर ब्रह्म ईश्वर तथा 3. पूर्ण ब्रह्म - परम अक्षर ब्रह्म - परमेश्वर - सतपुरुष आदि पर्यायवाची शब्दों से जाना जाता है।

यही प्रमाण ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मंत्र 17 से 20 में स्पष्ट है कि पूर्ण परमात्मा कविर्देव (कबीर परमेश्वर) शिशु रूप धारण करके प्रकट होता है तथा अपना निर्मल ज्ञान अर्थात् तत्वज्ञान (कविर्गीर्भिः) कबीर वाणी के द्वारा अपने अनुयाइयों को बोल-बोल कर वर्णन करता है। वह कविर्देव (कबीर परमेश्वर) ब्रह्म (क्षर पुरुष) के धाम तथा परब्रह्म (अक्षर पुरुष) के धाम से भिन्न जो पूर्ण ब्रह्म (परम अक्षर पुरुष) का तीसरा ऋतधाम (सतलोक) है, उसमें आकार में विराजमान है तथा सतलोक से चौथा अनामी लोक है, उसमें भी यही कविर्देव (कबीर परमेश्वर) अनामी पुरुष रूप में मनुष्य सदृश आकार में विराजमान है।

''पवित्र श्रीमद्देवी महापुराण में सृष्टि रचना का प्रमाण''

''ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव के माता–पिता''

(दुर्गा और ब्रह्म के योग से ब्रह्मा, विष्णु और शिव का जन्म)

पवित्र श्रीमद्देवी महापुराण तीसरा स्कन्द अध्याय 1-3(गीताप्रैस गोरखपुर से प्रकाशित, अनुवादकर्ता श्री हनुमानप्रसाद पोद्दार तथा चिमन लाल गोस्वामी जी, पृष्ठ नं. 114 से)

पृष्ठ नं. 114 से 118 तक विवरण है कि कितने ही आचार्य भवानी को सम्पूर्ण मनोरथ पूर्ण करने वाली बताते हैं। वह प्रकृति कहलाती है तथा ब्रह्म के साथ अभेद सम्बन्ध है जैसे पत्नी को अर्धांगनी भी कहते हैं अर्थात् दुर्गा ब्रह्म (काल) की पत्नी है। एक ब्रह्माण्ड की सृष्टि रचना के विषय में राजा श्री परीक्षित के पूछने पर श्री व्यास जी ने बताया कि मैंने श्री नारद जी से पूछा था कि हे देवर्षे ! इस ब्रह्माण्ड की रचना कैसे हुई? मेरे इस प्रश्न के उत्तर में श्री नारद जी ने कहा कि मैंने अपने पिता श्री ब्रह्मा जी से पूछा था कि हे पिता श्री इस ब्रह्माण्ड की रचना आपने की या श्री विष्णु जी इसके रचयिता हैं या शिव जी ने रचा है? सच-सच बताने की कृपा करें। तब मेरे पूज्य पिता श्री ब्रह्मा जी ने बताया कि बेटा नारद, मैंने अपने आपको कमल के फूल पर बैठा पाया था, मुझे नहीं मालूम इस अगाध जल में मैं कहाँ से उत्पन्न हो गया। एक हजार वर्ष तक पृथ्वी का अन्वेषण करता रहा, कहीं जल का ओर-छोर नहीं पाया। फिर आकाशवाणी हुई कि तप करो। एक हजार वर्ष तक तप किया। फिर सृष्टि करने की आकाशवाणी हुई। इतने में मधु और कैटभ नाम के दो राक्षस आए, उनके भय से मैं कमल का डण्ठल पकड़ कर नीचे उतरा। वहाँ भगवान विष्णु जी शेष शैय्या पर अचेत पड़े थे। उनमें से एक स्त्री (प्रेतवत प्रविष्ट दुर्गा) निकली। वह आकाश में आभूषण पहने दिखाई देने लगी। तब भगवान विष्णु होश में आए। अब मैं तथा विष्णु जी दो थे।

इतने में भगवान शंकर भी आ गए। देवी ने हमें विमान में बैठाया तथा ब्रह्म लोक में ले गई। वहाँ एक ब्रह्मा, एक विष्णु तथा एक शिव और देखा फिर एक देवी देखी,उसे देख कर विष्णु जी ने विवेक पूर्वक निम्न वर्णन किया (ब्रह्म काल ने भगवान विष्णु को चेतना प्रदान कर दी, उसको अपने बाल्यकाल की याद आई तब बचपन की कहानी सुनाई)।

पृष्ठ नं. 119-120 पर भगवान विष्णु जी ने श्री ब्रह्मा जी तथा श्री शिव जी से कहा कि यह हम तीनों की माता है, यही जगत् जननी प्रकृति देवी है। मैंने इस देवी को तब देखा था जब मैं छोटा सा बालक था, यह मुझे पालने में झुला रही थी।

तीसरा स्कंद पृष्ठ नं. 123 पर श्री विष्णु जी ने श्री दुर्गा जी की स्तुति करते हुए कहा - तुम शुद्ध स्वरूपा हो, यह सारा संसार तुम्हीं से उद्भासित हो रहा है, मैं (विष्णु), ब्रह्मा और शंकर हम सभी तुम्हारी कृपा से ही विद्यमान हैं। हमारा आविर्भाव (जन्म) और तिरोभाव (मृत्यु) हुआ करता है अर्थात् हम तीनों देव नाशवान हैं, केवल तुम ही नित्य (अविनाशी) हो, जगत जननी हो, प्रकृति देवी हो।

भगवान शंकर बोले - देवी यदि महाभाग विष्णु तुम्हीं से प्रकट (उत्पन्न) हुए हैं तो उनके बाद उत्पन्न होने वाले ब्रह्मा भी तुम्हारे ही बालक हुए। फिर मैं तमोगुणी लीला करने वाला शंकर क्या तुम्हारी संतान नहीं हुआ अर्थात् मुझे भी उत्पन्न करने वाली तुम्हीं हो।

विचार करें :- उपरोक्त विवरण से सिद्ध हुआ कि श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी, श्री शिव जी नाशवान हैं। मृत्युंजय (अजर-अमर) व सर्वेश्वर नहीं हैं तथा दुर्गा (प्रकृति) के पुत्र हैं तथा ब्रह्म (काल-सदाशिव) इनका पिता है।

तीसरा स्कंद पृष्ठ नं. 125 पर ब्रह्मा जी के पूछने पर कि हे माता! वेदों में जो ब्रह्म कहा है वह आप ही हैं या कोई अन्य प्रभु है ? इसके उत्तर में यहाँ तो दुर्गा कह रही है कि मैं तथा ब्रह्म एक ही हैं। फिर इसी स्कंद अ. 6 के पृष्ठ नं. 129 पर कहा है कि अब मेरा कार्य सिद्ध करने के लिए विमान पर बैठ कर तुम लोग शीघ्र पधारो (जाओ)। कोई कठिन कार्य उपस्थित होने पर जब तुम मुझे याद करोगे, तब मैं सामने आ जाऊँगी। देवताओं मेरा (दुर्गा का) तथा ब्रह्म का ध्यान तुम्हें सदा करते रहना चाहिए। हम दोनों का स्मरण करते रहोगे तो तुम्हारे कार्य सिद्ध होने में तनिक भी संदेह नहीं है।

उपरोक्त व्याख्या से स्वसिद्ध है कि दुर्गा (प्रकृति) तथा ब्रह्म (काल) ही तीनों देवताओं के माता-पिता हैं तथा ब्रह्मा, विष्णु व शिव जी नाशवान हैं व पूर्ण शक्ति युक्त नहीं हैं।

तीनों देवताओं (श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी, श्री शिव जी) की शादी दुर्गा (प्रकृति देवी) ने की। पृष्ठ नं. 128-129 पर, तीसरे स्कंद में।

गीता अध्याय नं. 7 का श्लोक नं. 12

ये, च, एव, सात्विकाः, भावाः, राजसाः, तामसाः, च, ये,
मतः, एव, इति, तान्, विद्धि, न, तु, अहम्, तेषु, ते, मयि।।

अनुवाद : (च) और (एव) भी (ये) जो (सात्विकाः) सत्वगुण विष्णु जी से स्थिति (भावाः) भाव हैं और (ये) जो (राजसाः) रजोगुण ब्रह्मा जी से उत्पत्ति (च) तथा (तामसाः) तमोगुण

शिव से संहार हैं (तान्) उन सबको तू (मत:,एव) मेरे द्वारा सुनियोजित नियमानुसार ही होने वाले हैं (इति) ऐसा (विद्धि) जान (तु) परन्तु वास्तवमें (तेषु) उनमें (अहम्) मैं और (ते) वे (मयि) मुझमें (न) नहीं हैं।

''पवित्र शिव महापुराण में संष्टि रचना का प्रमाण''

(काल ब्रह्म व दुर्गा से विष्णु, ब्रह्मा व शिव की उत्पत्ति)

इसी का प्रमाण पवित्र श्री शिव पुराण गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित, अनुवादकर्ता श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार, इसके अध्याय 6 रूद्र संहिता, पंष्ठ नं. 100 पर कहा है कि जो मूर्ति रहित परब्रह्म है, उसी की मूर्ति भगवान सदाशिव है। इनके शरीर से एक शक्ति निकली, वह शक्ति अम्बिका, प्रकंति (दुर्गा), त्रिदेव जननी (श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी को उत्पन्न करने वाली माता) कहलाई। जिसकी आठ भुजाऐं हैं। वे जो सदाशिव हैं, उन्हें शिव, शंभू और महेश्वर भी कहते हैं। (पंष्ठ नं. 101 पर) वे अपने सारे अंगों में भस्म रमाये रहते हैं। उन काल रूपी ब्रह्म ने एक शिवलोक नामक क्षेत्र का निर्माण किया। फिर दोनों ने पति-पत्नी का व्यवहार किया जिससे एक पुत्र उत्पन्न हुआ। उसका नाम विष्णु रखा (शिव पुराण पंष्ठ नं. 102)।

फिर रूद्र संहिता अध्याय नं. 7 पंष्ठ नं. 103 पर ब्रह्मा जी ने कहा कि मेरी उत्पत्ति भी भगवान सदाशिव (ब्रह्म-काल) तथा प्रकंति (दुर्गा) के संयोग से अर्थात् पति-पत्नी के व्यवहार से ही हुई। फिर मुझे बेहोश कर दिया।

फिर रूद्र संहिता अध्याय नं. 9 पंष्ठ नं. 110 पर कहा है कि इस प्रकार ब्रह्मा, विष्णु तथा रूद्र इन तीनों देवताओं में गुण हैं, परन्तु शिव (काल-ब्रह्म) गुणातीत माने गए हैं।

यहाँ पर चार सिद्ध हुए अर्थात् सदाशिव (काल-ब्रह्म) व प्रकंति (दुर्गा) से ही ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव उत्पन्न हुए हैं। तीनों भगवानों (श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी) की माता जी श्री दुर्गा जी तथा पिता जी श्री ज्योति निरंजन (ब्रह्म) है। यही तीनों प्रभु रजगुण-ब्रह्मा जी, सतगुण-विष्णु जी, तमगुण-शिव जी हैं।

''पवित्र श्रीमद्भगवत गीता जी में संष्टि रचना का प्रमाण''

इसी का प्रमाण पवित्र गीता जी अध्याय 14 श्लोक 3 से 5 तक है। ब्रह्म (काल) कह रहा है कि प्रकंति (दुर्गा) तो मेरी पत्नी है, मैं ब्रह्म (काल) इसका पति हूँ। हम दोनों के संयोग से सर्व प्राणियों सहित तीनों गुणों (रजगुण - ब्रह्मा जी, सतगुण - विष्णु जी, तमगुण - शिवजी) की उत्पत्ति हुई है। मैं (ब्रह्म) सर्व प्राणियों का पिता हूँ तथा प्रकंति (दुर्गा) इनकी माता है। मैं इसके उदर में बीज स्थापना करता हूँ जिससे सर्व प्राणियों की उत्पत्ति होती है। प्रकंति (दुर्गा) से उत्पन्न तीनों गुण (रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव) जीव को कर्म आधार से शरीर में बांधते हैं। यही प्रमाण अध्याय 15 श्लोक 1 से 4 तथा 16, 17 में भी है।

गीता अध्याय नं. 15 का श्लोक नं. 1

ऊर्ध्वमूलम्, अध:शाखम्, अश्वत्थम्, प्राहु:, अव्ययम्,

छन्दांसि, यस्य, पर्णानि, यः, तम्, वेद, सः, वेदवित् ।।

अनुवाद : (ऊर्ध्वमूलम्) ऊपर को पूर्ण परमात्मा आदि पुरुष परमेश्वर रूपी जड़ वाला (अधःशाखम्) नीचे को तीनों गुण अर्थात् रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु व तमगुण शिव रूपी शाखा वाला (अव्ययम्) अविनाशी (अश्वत्थम्) विस्तारित पीपल का वृक्ष है, (यस्य) जिसके (छन्दांसि) जैसे वेद में छन्द है ऐसे संसार रूपी वृक्ष के भी विभाग छोटे–छोटे हिस्से टहनियाँ व (पर्णानि) पत्ते (प्राहुः) कहे हैं (तम्) उस संसाररूप वृक्षको (यः) जो (वेद) इसे विस्तार से जानता है (सः) वह (वेदवित्) पूर्ण ज्ञानी अर्थात् तत्वदर्शी है।

गीता अध्याय नं. 15 का श्लोक नं. 2

अधः, च, ऊर्ध्वम्, प्रसृताः, तस्य, शाखाः, गुणप्रवृद्धाः,
विषयप्रवालाः, अधः, च, मूलानि, अनुसन्ततानि, कर्मानुबन्धीनि, मनुष्यलोके ।।

अनुवाद : (तस्य) उस वृक्षकी (अधः) नीचे (च) और (ऊर्ध्वम्) ऊपर (गुणप्रवृद्धाः) तीनों गुणों ब्रह्मा–रजगुण, विष्णु–सतगुण, शिव–तमगुण रूपी (प्रसृता) फैली हुई (विषयप्रवालाः) विकार– काम क्रोध, मोह, लोभ अहंकार रूपी कोपल (शाखाः) डाली ब्रह्मा, विष्णु, शिव (कर्मानुबन्धीनि) जीवको कर्मों में बाँधने की (मूलानि) जड़ें अर्थात् मुख्य कारण हैं (च) तथा (मनुष्यलोके) मनुष्यलोक – अर्थात् पृथ्वी लोक में (अधः) नीचे – नरक, चौरासी लाख जूनियों में (ऊर्ध्वम्) ऊपर स्वर्ग लोक आदि में (अनुसन्ततानि) व्यवस्थित किए हुए हैं।

गीता अध्याय नं. 15 का श्लोक नं. 3

न, रूपम्, अस्य, इह, तथा, उपलभ्यते, न, अन्तः, न, च, आदिः, न, च,
सम्प्रतिष्ठा, अश्वत्थम्, एनम्, सुविरूढमूलम्, असंगशस्त्रेण, दृढेन, छित्वा ।।

अनुवाद : (अस्य) इस रचना का (न) नहीं (आदिः) शुरूवात (च) तथा (न) नहीं (अन्तः) अन्त है (न) नहीं (तथा) वैसा (रूपम्) स्वरूप (उपलभ्यते) पाया जाता है (च) तथा (इह) यहाँ विचार काल में अर्थात् मेरे द्वारा दिया जा रहा गीता ज्ञान में पूर्ण जानकारी मुझे भी (न) नहीं है (सम्प्रतिष्ठा) क्योंकि सर्वब्रह्माण्डों की रचना की अच्छी तरह स्थिति का मुझे भी ज्ञान नहीं है (एनम्) इस (सुविरूढमूलम्) अच्छी तरह स्थाई स्थिति वाला (अश्वत्थम्) मजबूत स्वरूपवाले संसार रूपी वृक्ष के ज्ञान को (असंङ्गशस्त्रेण) पूर्ण ज्ञान रूपी (दृढेन्) दृढ़ सूक्षम वेद अर्थात् तत्वज्ञान के द्वारा जानकर (छित्वा) काटकर अर्थात् निरंजन की भक्ति को क्षणिक अर्थात् क्षण भंगुर जानकर ब्रह्मा, विष्णु, शिव, ब्रह्म तथा परब्रह्म से भी आगे पूर्णब्रह्म की तलाश करनी चाहिए।

गीता अध्याय नं. 15 का श्लोक नं. 4

ततः, पदम्, तत्, परिमार्गितव्यम्, यस्मिन्, गताः, न, निवर्तन्ति, भूयः,
तम्, एव्, च, आद्यम्, पुरुषम्, प्रपद्ये, यतः, प्रवृतिः, प्रसृता, पुराणी ।।

अनुवाद : जब तत्वदर्शी संत मिल जाए (ततः) इसके पश्चात् (तत्) उस परमात्मा के (पदम्) पद स्थान अर्थात् सतलोक को (परिमार्गितव्यम्) भली भाँति खोजना चाहिए (यस्मिन्) जिसमें (गताः) गए हुए साधक (भूयः) फिर (न, निवर्तन्ति) लौटकर संसार में नहीं आते (च) और (यतः) जिस परमात्मा–परम अक्षर ब्रह्म से (पुराणी) आदि (प्रवृतिः) रचना–सृष्टि (प्रसृता) उत्पन्न हुई है (तम्) अज्ञात (आद्यम्) आदि यम अर्थात् मैं काल निरंजन (पुरुषम्) पूर्ण परमात्मा की (एव) ही (प्रपद्ये) मैं शरण में हूँ तथा उसी की पूजा करता हूँ।

गीता अध्याय नं. 15 का श्लोक नं. 16

द्वौ, इमौ, पुरुषौ, लोके, क्षरः, च, अक्षरः, एव, च,
क्षरः, सर्वाणि, भूतानि, कूटस्थः, अक्षरः, उच्यते।।

अनुवाद : (लोके) इस संसारमें (द्वौ) दो प्रकारके (क्षरः) नाशवान् (च) और (अक्षरः) अविनाशी (पुरुषौ) भगवान हैं (एव) इसी प्रकार (इमौ) इन दोनों प्रभुओं के लोकों में (सर्वाणि) सम्पूर्ण (भूतानि) प्राणियों के शरीर तो (क्षरः) नाशवान् (च) और (कूटस्थः) जीवात्मा (अक्षरः) अविनाशी (उच्यते) कहा जाता है।

गीता अध्याय नं. 15 का श्लोक नं. 17

उत्तमः, पुरुषः, तु, अन्यः, परमात्मा, इति, उदाहृतः,
यः, लोकत्रयम् आविश्य, बिभर्ति, अव्ययः, ईश्वरः।।

अनुवाद : (उत्तमः) उत्तम (पुरुषः) प्रभु (तु) तो (अन्यः) उपरोक्त दोनों प्रभुओं ''क्षर पुरूष तथा अक्षर पुरूष'' से भी अन्य ही है (इति) यह वास्तव में (परमात्मा) परमात्मा (उदाहृतः) कहा गया है (यः) जो (लोकत्रयम्) तीनों लोकों में (आविश्य) प्रवेश करके (बिभर्ति) सबका धारण पोषण करता है एवं (अव्ययः) अविनाशी (ईश्वरः) ईश्वर (प्रभुओं में श्रेष्ठ अर्थात् समर्थ प्रभु) है।

भावार्थ - गीता ज्ञान दाता प्रभु ने केवल इतना ही बताया है कि यह संसार उल्टे लटके वंक्ष तुल्य जानो। ऊपर जड़ें (मूल) तो पूर्ण परमात्मा है। नीचे टहनीयां आदि अन्य हिस्से जानों। इस संसार रूपी वंक्ष के प्रत्येक भाग का भिन्न-भिन्न विवरण जो संत जानता है वह तत्वदर्शी संत है जिसके विषय में गीता अध्याय 4 श्लोक नं. 34 में कहा है। गीता अध्याय 15 श्लोक नं. 2-3 में केवल इतना ही बताया है कि तीन गुण रूपी शाखा हैं। यहां विचारकाल में अर्थात् गीता में आपको मैं (गीता ज्ञान दाता) पूर्ण जानकारी नहीं दे सकता क्योंकि मुझे इस संसार की रचना के आदि व अंत का ज्ञान नहीं है। उस के लिए गीता अध्याय 4 श्लोक नं. 34 में कहा है कि किसी तत्व दर्शी संत से उस पूर्ण परमात्मा का ज्ञान जानों इस गीता अध्याय 15 श्लोक 1 में उस तत्वदर्शी संत की पहचान बताई है कि वह संसार रूपी वंक्ष के प्रत्येक भाग का ज्ञान कराएगा। उसी से पूछो। गीता अध्याय 15 के श्लोक 4 में कहा है कि उस तत्वदर्शी संत के मिल जाने के पश्चात् उस परमपद परमेश्वर की खोज करनी चाहिए अर्थात् उस तत्वदर्शी संत के बताए अनुसार साधना करनी चाहिए जिससे पूर्ण मोक्ष (अनादि मोक्ष) प्राप्त होता है। गीता अध्याय 15 श्लोक 16-17 में स्पष्ट किया है कि तीन प्रभु हैं एक क्षर पुरूष (ब्रह्म) दूसरा अक्षर पुरूष (परब्रह्म) तीसरा परम अक्षर पुरूष (पूर्ण ब्रह्म)। क्षर पुरूष तथा अक्षर पुरूष वास्तव में अविनाशी नहीं हैं। वह अविनाशी परमात्मा तो इन दोनों से अन्य ही है। वही तीनों लोकों में प्रवेश करके सर्व का धारण पोषण करता है।

उपरोक्त श्रीमद्भगवत गीता अध्याय 15 श्लोक 1 से 4 तथा 16-17 में यह प्रमाणित हुआ कि उल्टे लटके हुए संसार रूपी वंक्ष की मूल अर्थात् जड़ तो परम अक्षर ब्रह्म अर्थात् पूर्ण ब्रह्म है जिससे पूर्ण वंक्ष का पालन होता है तथा वंक्ष का जो हिस्सा पंथ्वी के तुरन्त बाहर जमीन के साथ दिखाई देता है वह तना होता है उसे अक्षर पुरुष अर्थात् परब्रह्म जानों। उस तने से ऊपर चल कर अन्य मोटी डार निकलती है उनमें से एक डार को ब्रह्म अर्थात् क्षर पुरुष जानों तथा उसी डार से अन्य तीन शाखाएं

निकलती हैं उन्हें ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव जानों तथा शाखाओं से आगे पत्ते रूप में सांसारिक प्राणी जानों। उपरोक्त गीता अध्याय 15 श्लोक 16-17 में स्पष्ट है कि क्षर पुरुष (ब्रह्म) तथा अक्षर पुरुष (परब्रह्म) तथा इन दोनों के लोकों में जितने प्राणी हैं उनके स्थूल शरीर तो नाशवान हैं तथा जीवात्मा अविनाशी है अर्थात् उपरोक्त दोनों प्रभु व इनके अन्तर्गत सर्व प्राणी नाशवान हैं। भले ही अक्षर पुरुष (परब्रह्म) को अविनाशी कहा है परन्तु वास्तव में अविनाशी परमात्मा तो इन दोनों से अन्य है। वह तीनों लोकों में प्रवेश करके सबका पालन-पोषण करता है। उपरोक्त विवरण में तीन प्रभुओं का भिन्न-भिन्न विवरण दिया है।

"पवित्र बाईबल तथा पवित्र कुरान शरीफ में संष्टि रचना का प्रमाण"

इसी का प्रमाण पवित्र बाईबल में तथा पवित्र कुरान शरीफ में भी है।

कुरान शरीफ में पवित्र बाईबल का भी ज्ञान है, इसलिए इन दोनों पवित्र सद्ग्रन्थों ने मिल-जुल कर प्रमाणित किया है कि कौन तथा कैसा है संष्टि रचनहार तथा उसका वास्तविक नाम क्या है।

पवित्र बाईबल (उत्पत्ति ग्रन्थ पंष्ठ नं. 2 पर, अ. 1:20 - 2:5 पर)

छटवां दिन :— प्राणी और मनुष्य :

अन्य प्राणियों की रचना करके 26. फिर परमेश्वर ने कहा, हम मनुष्य को अपने स्वरूप के अनुसार अपनी समानता में बनाएं, जो सर्व प्राणियों को काबू रखेगा। 27. तब परमेश्वर ने मनुष्य को अपने स्वरूप के अनुसार उत्पन्न किया, अपने ही स्वरूप के अनुसार परमेश्वर ने उसको उत्पन्न किया, नर और नारी करके मनुष्यों की संष्टि की।

29. प्रभु ने मनुष्यों के खाने के लिए जितने बीज वाले छोटे पेड़ तथा जितने पेड़ों में बीज वाले फल होते हैं वे भोजन के लिए प्रदान किए हैं, (माँस खाना नहीं कहा है।)

सातवां दिन :— विश्राम का दिन :

परमेश्वर ने छः दिन में सर्व संष्टि की उत्पत्ति की तथा सातवें दिन विश्राम किया।

पवित्र बाईबल ने सिद्ध कर दिया कि परमात्मा मानव सदंश शरीर में है, जिसने छः दिन में सर्व संष्टि की रचना की तथा फिर विश्राम किया।

पवित्र कुरान शरीफ (सुरत फुर्कानि 25, आयत नं. 52, 58, 59)

आयत 52 :— फला तुतिअल् — काफिरन् व जहिद्हुम बिही जिहादन् कबीरा (कबीरन्)।।52।

इसका भावार्थ है कि हजरत मुहम्मद जी का खुदा (प्रभु) कह रहा है कि हे पैगम्बर ! आप काफिरों (जो एक प्रभु की भक्ति त्याग कर अन्य देवी—देवताओं तथा मूर्ति आदि की पूजा करते हैं) का कहा मत मानना, क्योंकि वे लोग कबीर को पूर्ण परमात्मा नहीं मानते। आप मेरे द्वारा दिए इस कुरान के ज्ञान के आधार पर अटल रहना कि कबीर ही पूर्ण प्रभु है तथा कबीर अल्लाह के लिए संघर्ष करना (लड़ना नहीं) अर्थात् अडिग रहना।

आयत 58 :— व तवक्कल् अलल् — हय्यिल्लजी ला यमूतु व सब्बिह् बिहम्दिही व कफा बिही बिजुनूबि अिबादिही खबीरा (कबीरा)।।58।

भावार्थ है कि हजरत मुहम्मद जी जिसे अपना प्रभु मानते हैं वह अल्लाह (प्रभु)

किसी और पूर्ण प्रभु की तरफ संकेत कर रहा है कि ऐ पैगम्बर उस कबीर परमात्मा पर विश्वास रख जो तुझे जिंदा महात्मा के रूप में आकर मिला था। वह कभी मरने वाला नहीं है अर्थात् वास्तव में अविनाशी है। तारीफ के साथ उसकी पाकी (पवित्र महिमा) का गुणगान किए जा, वह कबीर अल्लाह (कविर्देव) पूजा के योग्य है तथा अपने उपासकों के सर्व पापों को विनाश करने वाला है।

आयत 59 :– अल्ल्जी खलकस्समावाति वल्अर्ज व मा बैनहुमा फी सित्तति अय्यामिन् सुम्मस्तवा अलल्अर्शि अर्रह्मानु फस्अल् बिही खबीरन्(कबीरन्)।।59।।

भावार्थ है कि हजरत मुहम्मद को कुरान शरीफ बोलने वाला प्रभु (अल्लाह) कह रहा है कि वह कबीर प्रभु वही है जिसने जमीन तथा आसमान के बीच में जो भी विद्यमान है सर्व सष्टि की रचना छः दिन में की तथा सातवें दिन ऊपर अपने सत्यलोक में सिंहासन पर विराजमान हो (बैठ) गया। उसके विषय में जानकारी किसी (बाखबर) तत्वदर्शी संत से पूछो

उस पूर्ण परमात्मा की प्राप्ति कैसे होगी तथा वास्तविक ज्ञान तो किसी तत्वदर्शी संत (बाखबर) से पूछो, मैं नहीं जानता।

उपरोक्त दोनों पवित्र धर्मों (ईसाई तथा मुसलमान) के पवित्र शास्त्रों ने भी मिल-जुल कर प्रमाणित कर दिया कि सर्व सष्टि रचनहार, सर्व पाप विनाशक, सर्व शक्तिमान, अविनाशी परमात्मा मानव सदश शरीर में आकार में है तथा सत्यलोक में रहता है। उसका नाम कबीर है, उसी को अल्लाहु अकबिरू भी कहते हैं।

आदरणीय धर्मदास जी ने पूज्य कबीर प्रभु से पूछा कि हे सर्वशक्तिमान ! आज तक यह तत्वज्ञान किसी ने नहीं बताया, वेदों के मर्मज्ञ ज्ञानियों ने भी नहीं बताया। इससे सिद्ध है कि चारों पवित्र वेद तथा चारों पवित्र कतेब (कुरान शरीफ आदि) झूठे हैं। पूर्ण परमात्मा ने कहा :-

कबीर, बेद कतेब झूठे नहीं भाई, झूठे हैं जो समझे नाहिं।

भावार्थ है कि चारों पवित्र वेद (ऋग्वेद - अथर्ववेद - यजुर्वेद - सामवेद) तथा पवित्र चारों कतेब (कुरान शरीफ - जबूर - तौरात - इंजिल) गलत नहीं हैं। परन्तु जो इनको नहीं समझ पाए वे नादान हैं।

”पूज्य कबीर परमेश्वर (कविर् देव) जी की अमतवाणी में सष्टि रचना“

विशेष :- निम्न अमतवाणी सन् 1403 से {जब पूज्य कविर्देव (कबीर परमेश्वर) लीलामय शरीर में पाँच वर्ष के हुए} सन् 1518 {जब कविर्देव (कबीर परमेश्वर) मगहर स्थान से सशरीर सतलोक गए} के बीच में लगभग 600 वर्ष पूर्व परम पूज्य कबीर परमेश्वर (कविर्देव) जी द्वारा अपने निजी सेवक (दास भक्त) आदरणीय धर्मदास साहेब जी को सुनाई थी तथा धनी धर्मदास साहेब जी ने लिपिबद्ध की थी। परन्तु उस समय के पवित्र हिन्दुओं तथा पवित्र मुसलमानों के नादान गुरुओं (नीम-हकीमों) ने कहा कि यह धाणक (जुलाहा) कबीर झूठा है। किसी भी सद् ग्रन्थ में श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी के माता-पिता का नाम नहीं है। ये तीनों प्रभु अविनाशी हैं इनका जन्म मत्यु नहीं होता। न ही पवित्र वेदों व पवित्र

कुरान शरीफ आदि में कबीर परमेश्वर का प्रमाण है तथा परमात्मा को निराकार लिखा है। हम प्रतिदिन पढ़ते हैं। भोली आत्माओं ने उन विचक्षणों (चतुर गुरुओं) पर विश्वास कर लिया कि सचमुच यह कबीर धाणक तो अशिक्षित है तथा गुरु जी शिक्षित हैं, सत्य कह रहे होंगे। आज वही सच्चाई प्रकाश में आ रही है तथा अपने सर्व पवित्र धर्मों के पवित्र सद्ग्रन्थ साक्षी हैं। इससे सिद्ध है कि पूर्ण परमेश्वर, सर्व सृष्टि रचनहार, कुल करतार तथा सर्वज्ञ कविर्देव (कबीर परमेश्वर) ही है जो काशी (बनारस) में कमल के फूल पर प्रकट हुए तथा 120 वर्ष तक वास्तविक तेजोमय शरीर के ऊपर मानव सदृश शरीर हल्के तेज का बना कर रहे तथा अपने द्वारा रची सृष्टि का ठीक-ठीक (वास्तविक तत्व) ज्ञान देकर सशरीर सतलोक चले गए।

कृपा प्रेमी पाठक पढ़ें निम्न अमृतवाणी परमेश्वर कबीर साहेब जी द्वारा उच्चारित :-

धर्मदास यह जग बौराना। कोइ न जाने पद निरवाना।।
यहि कारन मैं कथा पसारा। जगसे कहियो राम नियारा।।
यही ज्ञान जग जीव सुनाओ। सब जीवोंका भरम नशाओ।।
अब मैं तुमसे कहों चिताई। त्रयदेवनकी उत्पति भाई।।
कुछ संक्षेप कहों गुहराई। सब संशय तुम्हरे मिट जाई।।
भरम गये जग वेद पुराना। आदि रामका का भेद न जाना।।
राम राम सब जगत बखाने। आदि राम कोइ बिरला जाने।।
ज्ञानी सुने सो हिरदै लगाई। मूर्ख सुने सो गम्य ना पाई।।
माँ अष्टंगी पिता निरंजन। वे जम दारुण वंशन अंजन।।
पहिले कीन्ह निरंजन राई। पीछेसे माया उपजाई।।
माया रूप देख अति शोभा। देव निरंजन तन मन लोभा।।
कामदेव धर्मराय सत्ताये। देवी को तुरतही धर खाये।।
पेट से देवी करी पुकारा। साहब मेरा करो उबारा।।
टेर सुनी तब हम तहाँ आये। अष्टंगी को बंद छुड़ाये।।
सतलोक में कीन्हा दुराचारि, काल निरंजन दिन्हा निकारि।।
माया समेत दिया भगाई, सोलह संख कोस दूरी पर आई।।
अष्टंगी और काल अब दोई, मंद कर्म से गए बिगोई।।
धर्मराय को हिकमत कीन्हा। नख रेखा से भगकर लीन्हा।।
धर्मराय किन्हाँ भोग विलासा। मायाको रही तब आसा।।
तीन पुत्र अष्टंगी जाये। ब्रह्मा विष्णु शिव नाम धराये।।
तीन देव विस्तार चलाये। इनमें यह जग धोखा खाये।।
पुरुष गम्य कैसे को पावै। काल निरंजन जग भरमावै।।
तीन लोक अपने सुत दीन्हा। सुन्न निरंजन बासा लीन्हा।।
अलख निरंजन सुन्न ठिकाना। ब्रह्मा विष्णु शिव भेद न जाना।।
तीन देव सो उनको धावें। निरंजन का वे पार ना पावें।।
अलख निरंजन बड़ा बटपारा। तीन लोक जिव कीन्ह अहारा।।

ब्रह्मा विष्णु शिव नहीं बचाये। सकल खाय पुन धूर उड़ाये।।
तिनके सुत हैं तीनों देवा। आंधर जीव करत हैं सेवा।।
अकाल पुरुष काहू नहिं चीन्हां। काल पाय सबही गह लीन्हां।।
ब्रह्म काल सकल जग जाने। आदि ब्रह्मको ना पहिचाने।।
तीनों देव और औतारा। ताको भजे सकल संसारा।।
तीनों गुणका यह विस्तारा। धर्मदास मैं कहों पुकारा।।
गुण तीनों की भक्ति में, भूल परो संसार।
कहै कबीर निज नाम बिन, कैसे उतरैं पार।।

उपरोक्त अमृतवाणी में परमेश्वर कबीर साहेब जी अपने निजी सेवक श्री धर्मदास साहेब जी को कह रहे हैं कि धर्मदास यह सर्व संसार तत्वज्ञान के अभाव से विचलित है। किसी को पूर्ण मोक्ष मार्ग तथा पूर्ण सृष्टि रचना का ज्ञान नहीं है। इसलिए मैं आपको मेरे द्वारा रची सृष्टि की कथा सुनाता हूँ। बुद्धिमान व्यक्ति तो तुरंत समझ जायेंगे। परन्तु जो सर्व प्रमाणों को देखकर भी नहीं मानेंगे तो वे नादान प्राणी काल प्रभाव से प्रभावित हैं, वे भक्ति योग्य नहीं। अब मैं बताता हूँ तीनों भगवानों (ब्रह्मा जी, विष्णु जी तथा शिव जी) की उत्पत्ति कैसे हुई? इनकी माता जी तो अष्टंगी (दुर्गा) है तथा पिता ज्योति निरंजन (ब्रह्म, काल) है। पहले ब्रह्म की उत्पत्ति अण्डे से हुई। फिर दुर्गा की उत्पत्ति हुई। दुर्गा के रूप पर आसक्त होकर काल (ब्रह्म) ने गलती (छेड़-छाड़) की, तब दुर्गा (प्रकृति) ने इसके पेट में शरण ली। मैं वहाँ गया जहाँ ज्योति निरंजन काल था। तब भवानी को ब्रह्म के उदर से निकाल कर इक्कीस ब्रह्माण्ड समेत 16 संख कोस की दूरी पर भेज दिया। ज्योति निरंजन (धर्मराय) ने प्रकृति देवी (दुर्गा) के साथ भोग-विलास किया। इन दोनों के संयोग से तीनों गुणों (श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी) की उत्पत्ति हुई। इन्हीं तीनों गुणों (रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु जी, तमगुण शिव जी) की ही साधना करके सर्व प्राणी काल जाल में फंसे हैं। जब तक वास्तविक मंत्र नहीं मिलेगा, पूर्ण मोक्ष कैसे होगा?

विशेषः- प्रिय पाठक विचार करें कि श्री ब्रह्मा जी श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी की स्थिति अविनाशी बताई गई थी। सर्व हिन्दु समाज अभी तक तीनों परमात्माओं को अजर, अमर व जन्म-मृत्यु रहित मानते रहे जबकि ये तीनों नाश्वान हैं। इन के पिता काल रूपी ब्रह्म तथा माता दुर्गा (प्रकृति/अष्टांगी) हैं जैसा आप ने पूर्व प्रमाणों में पढ़ा यह ज्ञान अपने शास्त्रों में भी विद्यमान है परन्तु हिन्दु समाज के कलयुगी गुरूओं, ऋषियों, सन्तों को ज्ञान नहीं। जो अध्यापक पाठ्यक्रम (सलेबस) से ही अपरिचित है, वह अध्यापक ठीक नहीं (विद्वान नहीं) है, विद्यार्थियों के भविष्य का शत्रु है। इसी प्रकार जिन गुरूओं को अभी तक यह नहीं पता कि श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु तथा श्री शिव जी के माता-पिता कौन हैं? तो वे गुरू, ऋषि,सन्त ज्ञान हीन हैं। जिस कारण से सर्व भक्त समाज को शास्त्र विरूद्ध ज्ञान (लोक वेद अर्थात् दन्त कथा) सुना कर अज्ञान से परिपूर्ण कर दिया। शास्त्रविधि विरूद्ध भक्तिसाधना करा के परमात्मा के वास्तविक लाभ (पूर्ण मोक्ष) से वंचित रखा

सबका मानव जन्म नष्ट करा दिया क्योंकि श्री मद्भगवत गीता अध्याय 16 श्लोक 23-24 में यही प्रमाण है कि जो शास्त्रविधि त्यागकर मनमाना आचरण पूजा करता है। उसे कोई लाभ नहीं होता पूर्ण परमात्मा कबीर जी ने सन् 1403 से ही सर्व शास्त्रों युक्त ज्ञान अपनी अमतवाणी (कविरवाणी) में बताना प्रारम्भ किया था। परन्तु उन अज्ञानी गुरूओं ने यह ज्ञान भक्त समाज तक नहीं जाने दिया। जो वर्तमान में स्पष्ट हो रहा है इससे सिद्ध है कि कविर्देव (कबीर प्रभु) तत्वदर्शी सन्त रूप में स्वयं पूर्ण परमात्मा ही आए थे।

"आदरणीय गरीबदास साहेब जी की अमतवाणी में संष्टि रचना का प्रमाण"

आदि रमैणी (सद् ग्रन्थ पष्ठ नं. 690 से 692 तक)

आदि रमैंणी अदली सारा। जा दिन होते धुंधुंकारा।।1।।
सतपुरुष कीन्हा प्रकाशा। हम होते तखत कबीर खवासा ।।2।।
मन मोहिनी सिरजी माया। सतपुरुष एक ख्याल बनाया।।3।।
धर्मराय सिरजे दरबानी। चौसठ जुगतप सेवा ठांनी।।4।।
पुरुष पथिवी जाकूं दीन्ही। राज करो देवा आधीनी।।5।।
ब्रह्माण्ड इकीस राज तुम्ह दीन्हा। मन की इच्छा सब जुग लीन्हा।।6।।
माया मूल रूप एक छाजा। मोहि लिये जिनहूँ धर्मराजा।।7।।
धर्म का मन चंचल चित धार्या। मन माया का रूप बिचारा।।8।।
चंचल चेरी चपल चिरागा। या के परसे सरबस जागा।।9।।
धर्मराय कीया मन का भागी। विषय वासना संग से जागी।।10।।
आदि पुरुष अदली अनरागी। धर्मराय दिया दिल सें त्यागी।।11।।
पुरुष लोक सें दीया ढहाही। अगम दीप चलि आये भाई।।12।।
सहज दास जिस दीप रहंता। कारण कौंन कौंन कुल पंथा।।13।।
धर्मराय बोले दरबानी। सुनो सहज दास ब्रह्मज्ञानी।।14।।
चौसठ जुग हम सेवा कीन्ही। पुरुष पथिवी हम कूं दीन्ही।।15।।
चंचल रूप भया मन बौरा। मनमोहिनी ठगिया भौंरा।।16।।
सतपुरुष के ना मन भाये। पुरुष लोक से हम चलि आये।।17।।
अगर दीप सुनत बड़भागी। सहज दास मेटो मन पागी।।18।।
बोले सहजदास दिल दानी। हम तो चाकर सत सहदानी।।19।।
सतपुरुष सें अरज गुजारूं। जब तुम्हारा बिवाण उतारूं।।20।।
सहज दास को कीया पीयाना। सत्यलोक लीया प्रवाना।।21।।
सतपुरुष साहिब सरबंगी। अविगत अदली अचल अभंगी।।22।।
धर्मराय तुम्हरा दरबानी। अगर दीप चलि गये प्रानी।।23।।
कौंन हुकम करी अरज अवाजा। कहां पठावौ उस धर्मराजा।।24।।
भई अवाज अदली एक साचा। विषय लोक जा तीन्यूं बाचा।।25।।

सहज विमाँन चले अधिकाई। छिन में अगर दीप चलि आई।।26।।
हमतो अरज करी अनरागी। तुम्ह विषय लोक जावो बड़भागी।।27।।
धर्मराय के चले विमाना। मानसरोवर आये प्राना।।28।
मानसरोवर रहन न पाये। दरै कबीरा थांना लाये।।29।।
बंकनाल की विषमी बाटी। तहां कबीरा रोकी घाटी।।30।।
इन पाँचों मिलि जगत बंधाना। लख चौरासी जीव संताना।।31।।
ब्रह्मा विष्णु महेश्वर माया। धर्मराय का राज पठाया।।32।।
यौह खोखा पुर झूठी बाजी। भिसति बैकुण्ठ दगासी साजी।।33।।
कतिम जीव भुलांनें भाई। निज घर की तो खबरि न पाई।।34।।
सवा लाख उपजें नित हंसा। एक लाख विनशें नित अंसा।।35।।
उपति खपति प्रलय फेरी। हर्ष शोक जौंरा जम जेरी।।36।।
पाँचों तत्त्व हैं प्रलय माँही। सत्त्वगुण रजगुण तमगुण झांई।।37।।
आठों अंग मिली है माया। पिण्ड ब्रह्माण्ड सकल भरमाया।।38।।
या में सुरति शब्द की डोरी। पिण्ड ब्रह्माण्ड लगी है खोरी।।39।।
श्वासा पारस मन गह राखो। खोल्हि कपाट अमीरस चाखो।।40।।
सुनाऊं हंस शब्द सुन दासा। अगम दीप है अग है बासा।।41।।
भवसागर जम दण्ड जमाना। धर्मराय का है तलबांना।।42।।
पाँचों ऊपर पद की नगरी। बाट बिहंगम बंकी डगरी।।43।।
हमरा धर्मराय सों दावा। भवसागर में जीव भरमावा।।44।।
हम तो कहैं अगम की बानी। जहाँ अविगत अदली आप बिनानी।।45।।
बंदी छोड़ हमारा नामं। अजर अमर है अस्थीर ठामं।।46।।
जुगन जुगन हम कहते आये। जम जौंरा सें हंस छुटाये।।47।।
जो कोई मानें शब्द हमारा। भवसागर नहीं भरमें धारा।।48।।
या में सुरति शब्द का लेखा। तन अंदर मन कहो कीन्ही देखा।।49।।
दास गरीब अगम की बानी। खोजा हंसा शब्द सहदानी।।50।।

उपरोक्त अमतवाणी का भावार्थ है कि आदरणीय गरीबदास साहेब जी कह रहे हैं कि यहाँ पहले केवल अंधकार था तथा पूर्ण परमात्मा कबीर साहेब जी सत्यलोक में तख्त (सिंहासन) पर विराजमान थे। हम वहाँ चाकर थे। परमात्मा ने ज्योति निरंजन को उत्पन्न किया। फिर उसके तप के प्रतिफल में इक्कीस ब्रह्माण्ड प्रदान किए। फिर माया (प्रकति) की उत्पत्ति की। युवा दुर्गा के रूप पर मोहित होकर ज्योति निरंजन (ब्रह्म) ने दुर्गा (प्रकति) से बलात्कार करने की चेष्टा की। ब्रह्म को उसकी सजा मिली। उसे सत्यलोक से निकाल दिया तथा शाप लगा कि एक लाख मानव शरीर धारी प्राणियों का प्रतिदिन आहार करेगा, सवा लाख उत्पन्न करेगा। यहाँ सर्व प्राणी जन्म-मत्यु का कष्ट उठा रहे हैं। यदि कोई पूर्ण परमात्मा का वास्तविक शब्द (सच्चानाम जाप मंत्र) हमारे से प्राप्त करेगा, उसको काल की बंद से छुड़वा देंगे। हमारा बन्दी छोड़ नाम है। आदरणीय गरीबदास जी अपने गुरु व प्रभु कबीर परमात्मा के आधार पर कह रहे हैं कि सच्चे मंत्र अर्थात् सत्यनाम व

सारशब्द की प्राप्ति कर लो, पूर्ण मोक्ष हो जायेगा। नहीं तो नकली नाम दाता संतों व महन्तों की मीठी-मीठी बातों में फंस कर शास्त्र विधि रहित साधना करके काल जाल में रह जाओगे। फिर कष्ट पर कष्ट उठाओगे।

।।गरीबदास जी महाराज की वाणी।।

(सत ग्रन्थ साहिब पृष्ठ नं. 690 से सहाभार)

माया आदि निरंजन भाई, अपने जाऐ आपै खाई।
ब्रह्मा विष्णु महेश्वर चेला, ऊँ सोहं का है खेला।।
सिखर सुन्न में धर्म अन्यायी, जिन शक्ति डायन महल पठाई।।
लाख ग्रासै नित उठ दूती, माया आदि तख्त की कुती।।
सवा लाख घड़िये नित भांडे, हंसा उतपति परलय डांडे।
ये तीनों चेला बटपारी, सिरजे पुरुषा सिरजी नारी।।
खोखापुर में जीव भुलाये, स्वपना बहिस्त वैकुंठ बनाये।
यो हरहट का कुआ लोई, या गल बंध्या है सब कोई।।
कीड़ी कुजंर और अवतारा, हरहट डोरी बंधे कई बारा।
अरब अलील इन्द्र हैं भाई, हरहट डोरी बंधे सब आई।।
शेष महेश गणेश्वर ताहिं, हरहट डोरी बंधे सब आहिं।
शुक्रादिक ब्रह्मादिक देवा, हरहट डोरी बंधे सब खेवा।।
कोटिक कर्ता फिरता देख्या, हरहट डोरी कहूँ सुन लेखा।
चतुर्भुजी भगवान कहावैं, हरहट डोरी बंधे सब आवैं।।
यो है खोखापुर का कुआ, या में पड़ा सो निश्चय मुवा।

ज्योति निरंजन (कालबली) के वश होकर के ये तीनों देवता (रजगुण-ब्रह्मा, सतगुण-विष्णु, तमगुण-शिव) अपनी महिमा दिखाकर जीवों को स्वर्ग नरक तथा भवसागर में (लख चौरासी योनियों में) भटकाते रहते हैं। ज्योति निरंजन अपनी माया से नागिनी की तरह जीवों को पैदा करते हैं और फिर मार देते हैं। जिस प्रकार उसको नागिनी खा जाती है। फन मारते समय कई अण्डे फूट जाते हैं क्योंकि नागिनी के काफी अण्डे होते हैं। जो अण्डे फूटते हैं उनमें से बच्चे निकलते हैं यदि कोई बच्चा नागिनी अपनी दुम से अण्डों के चारों ओर कुण्डली बनाती है फिर उन अण्डों पर अपना फन मारती है। जिससे अण्डा फूट जाता है। उसमें से बच्चा निकल जाता है। कुण्डली (सर्पनी की दुम का घेरा) से बाहर निकल जाता है तो वह बच्चा बच जाता है नहीं तो कुण्डली में वह (नागिनी) छोड़ती नहीं। जितने बच्चे उस कुण्डली के अन्दर होते हैं उन सबको खा जाती है।

माया काली नागिनी, अपने जाये खात। कुण्डली में छोड़ै नहीं, सौ बातों की बात।।

इसी प्रकार यह कालबली का जाल है। निरंजन तक की भक्ति पूरे संत से नाम लेकर करेगें तो भी इस निरंजन की कुण्डली (इक्कीस ब्रह्माण्डों) से बाहर नहीं निकल सकते। स्वयं ब्रह्मा, विष्णु, महेश, आदि माया शेराँवाली भी निरंजन की कुण्डली में है। ये बेचारे अवतार धार कर आते हैं और जन्म-मृत्यु का चक्कर काटते रहते हैं। इसलिए विचार करें सोहं जाप जो कि ध्रुव व प्रहलाद व शुकदेव ऋषि ने जपा, वह भी पार नहीं

हुए। क्योंकि श्री विष्णु पुराण के प्रथम अंश के अध्याय 12 के श्लोक 93 में पष्ठ 51 पर लिखा है कि ध्रुव केवल एक कल्प अर्थात् एक हजार चतुर्युग तक ही मुक्त है। इसलिए काल लोक में ही रहे तथा 'ऊँ नमः भगवते वासुदेवाय' मन्त्र जाप करने वाले भक्त भी कष्ण तक की भक्ति कर रहे हैं, वे भी चौरासी लाख योनियों के चक्कर काटने से नहीं बच सकते। यह परम पूज्य कबीर साहिब जी व आदरणीय गरीबदास साहेब जी महाराज की वाणी प्रत्यक्ष प्रमाण देती हैं।

अनन्त कोटि अवतार हैं, माया के गोविन्द। कर्ता हो हो अवतरे, बहुर पड़े जग फंध।।

सतपुरुष कबीर साहिब जी की भक्ति से ही जीव मुक्त हो सकता है। जब तक जीव सतलोक में वापिस नहीं चला जाएगा तब तक काल लोक में इसी तरह कर्म करेगा और की हुई नाम व दान धर्म की कमाई स्वर्ग रूपी होटलों में समाप्त करके वापिस कर्म आधार से चौरासी लाख प्रकार के प्राणियों के शरीर में कष्ट उठाने वाले काल लोक में चक्कर काटता रहेगा। माया (दुर्गा) से उत्पन्न हो कर करोड़ों गोबिन्द(ब्रह्मा-विष्णु-शिव) मर चुके हैं। भगवान का अवतार बन कर आये थे। फिर कर्म बन्धन में बन्ध कर कर्मों को भोग कर चौरासी लाख योनियों में चले गए। जैसे भगवान विष्णु जी को देवर्षि नारद का शाप लगा। वे श्री रामचन्द्र रूप में अयोध्या में आए। फिर श्री राम जी रूप में बाली का वध किया था। उस कर्म का दण्ड भोगने के लिए श्री कष्ण जी का जन्म हुआ। फिर बाली वाली आत्मा शिकारी बना तथा अपना प्रतिशोध लिया। श्री कष्ण जी के पैर में विषाक्त तीर मार कर वध किया। महाराज गरीबदास जी अपनी वाणी में कहते हैं :

ब्रह्मा विष्णु महेश्वर माया, और धर्मराय कहिये।
इन पाँचों मिल परपंच बनाया, वाणी हमरी लहिये।।
इन पाँचों मिल जीव अटकाये, जुगन–जुगन हम आन छुटाये।
बन्दी छोड़ हमारा नामं, अजर अमर है अस्थिर ठामं।।
पीर पैगम्बर कुतुब औलिया, सुर नर मुनिजन ज्ञानी।
येता को तो राह न पाया, जम के बंधे प्राणी।।
धर्मराय की धूमा–धामी, जम पर जंग चलाऊँ।
जोरा को तो जान न दूगां, बांध अदल घर ल्याऊँ।।
काल अकाल दोहूँ को मोसूं, महाकाल सिर मूंडू।
मैं तो तख्त हजूरी हुकमी, चोर खोज कूं ढूंढू।।
मूला माया मग में बैठी, हंसा चुन–चुन खाई।
ज्योति स्वरूपी भया निरंजन, मैं ही कर्ता भाई।।
संहस अठासी दीप मुनीश्वर, बंधे मुला डोरी।
ऐत्यां में जम का तलबाना, चलिए पुरुष कीशोरी।।
मूला का तो माथा दागूं, सतकी मोहर करूंगा।
पुरुष दीप कूं हंस चलाऊँ, दरा न रोकन दूंगा।।
हम तो बन्दी छोड़ कहावां, धर्मराय है चकवै।
सतलोक की सकल सुनावां, वाणी हमरी अखवै।।

नौ लख पटट्न ऊपर खेलूं, साहदरे कूं रोकूं।
द्वादस कोटि कटक सब काटूं, हंस पठाऊँ मोखूं।।
चौदह भुवन गमन है मेरा, जल थल में सरबंगी।
खालिक खलक खलक में खालिक, अविगत अचल अभंगी।।
अगर अलील चक्र है मेरा, जित से हम चल आए।
पाँचों पर प्रवाना मेरा, बंधि छुटावन धाये।।
जहाँ ओंकार निरंजन नाहीं, ब्रह्मा विष्णु वेद नहीं जाहीं।
जहाँ करता नहीं जान भगवाना, काया माया पिण्ड न प्राणा।।
पाँच तत्व तीनों गुण नाहीं, जोरा काल दीप नहीं जाहीं।
अमर करूं सतलोक पठाँऊ, तातैं बन्दी छोड़ कहाऊँ।।

कबीर परमेश्वर (कविर्देव) की महिमा बताते हुए आदरणीय गरीबदास साहेब जी कह रहे हैं कि हमारे प्रभु कविर् (कविर्देव) बन्दी छोड़ हैं। बन्दी छोड़ का भावार्थ है काल की कारागार से छुटवाने वाला, काल ब्रह्म के इक्कीस ब्रह्माण्डों में सर्व प्राणी पापों के कारण काल के बंदी हैं। पूर्ण परमात्मा (कविर्देव) कबीर साहेब पाप का विनाश कर देते हैं। पापों का विनाश न ब्रह्म, न परब्रह्म, न ही ब्रह्मा, विष्णु, शिव जी कर सकते हैं। केवल जैसा कर्म है, उसका वैसा ही फल दे देते हैं। इसीलिए यजुर्वेद अध्याय 5 के मन्त्र 32 में लिखा है 'कविरंघारिरसि' कविर्देव (कबीर परमेश्वर) पापों का शत्रु है, 'बम्भारिरसि' बन्धनों का शत्रु अर्थात् बन्दी छोड़ है।

इन पाँचों (ब्रह्मा-विष्णु-शिव-माया और धर्मराय) से ऊपर सतपुरुष परमात्मा (कविर्देव) है। जो सतलोक का मालिक है। शेष सर्व परब्रह्म-ब्रह्म तथा ब्रह्मा-विष्णु-शिव जी व आदि माया नाशवान परमात्मा हैं। महाप्रलय में ये सब तथा इनके लोक समाप्त हो जाएंगे। आम जीव से कई हजार गुणा ज्यादा लम्बी इनकी उम्र है। परन्तु जो समय निर्धारित है वह एक दिन पूरा अवश्य होगा। आदरणीय गरीबदास जी महाराज कहते हैं :-

शिव ब्रह्मा का राज, इन्द्र गिनती कहां। चार मुक्ति वैकुंण्ठ समझ, येता लह्या।।
संख जुगन की जुनी, उम्र बड़ धाारिया। जा जननी कुर्बान, सु कागज पारिया।।
येती उम्र बुलंद मरैगा अंत रे। सतगुरु लगे न कान, न भैंटे संत रे।।

चाहे संख युग की लम्बी उम्र भी क्यों न हो वह एक दिन समाप्त जरूर होगी। यदि सतपुरुष परमात्मा (कविर्देव) कबीर साहेब के नुमाँयदे पूर्ण संत(गुरु) जो तीन नाम का मंत्र (जिसमें एक ओ3म + तत् + सत् सांकेतिक हैं) देता है तथा उसे पूर्ण संत द्वारा नाम दान करने का आदेश है, उससे उपदेश लेकर नाम की कमाई करेंगे तो हम सतलोक के अधिकारी हंस हो सकते हैं। सत्य साधना बिना बहुत लम्बी उम्र कोई काम नहीं आएगी क्योंकि निरंजन लोक में दुःख ही दुःख है।

कबीर, जीवना तो थोड़ा ही भला, जै सत सुमरन होय।
लाख वर्ष का जीवना, लेखै धरै ना कोय।।

कबीर साहिब अपनी (पूर्णब्रह्म की) जानकारी स्वयं बताते हैं कि इन परमात्माओं से ऊपर असंख्य भुजा का परमात्मा सतपुरुष है जो सत्यलोक (सच्च खण्ड, सतधाम)

में रहता है तथा उसके अन्तर्गत सर्वलोक [ब्रह्म (काल) के 21 ब्रह्माण्ड व ब्रह्मा, विष्णु, शिव शक्ति के लोक तथा परब्रह्म के सात संख ब्रह्माण्ड व अन्य सर्व ब्रह्माण्ड] आते हैं और वहाँ पर सत्यनाम-सारनाम के जाप द्वारा जाया जाएगा जो पूरे गुरु से प्राप्त होता है। सच्चखण्ड (सतलोक) में जो आत्मा चली जाती है उसका पुनर्जन्म नहीं होता। सतपुरुष (पूर्णब्रह्म) कबीर साहेब (कविर्देव) ही अन्य लोकों में स्वयं ही भिन्न-भिन्न नामों से विराजमान हैं। जैसे अलख लोक में अलख पुरुष, अगम लोक में अगम पुरुष तथा अकह लोक में अनामी पुरुष रूप में विराजमान हैं। ये तो उपमात्मक नाम हैं, परन्तु वास्तविक नाम उस पूर्ण पुरुष का कविर्देव (भाषा भिन्न होकर कबीर साहेब) है।

"आदरणीय नानक साहेब जी की वाणी में सृष्टि रचना का संकेत"

श्री नानक साहेब जी की अमृतवाणी, महला 1, राग बिलावलु, अंश 1 (गु.ग्र. पृ. 839)

आपे सचु कीआ कर जोड़ि। अंडज फोड़ि जोडि विछोड़।।
धरती आकाश कीए बैसण कउ थाउ। राति दिनंतु कीए भउ–भाउ।।
जिन कीए करि वेखणहारा।(3)
त्रितीआ ब्रह्मा–बिसनु–महेसा। देवी देव उपाए वेसा।।(4)
पउण पाणी अगनी बिसराउ। ताही निरंजन साचो नाउ।।
तिसु महि मनुआ रहिआ लिव लाई। प्रणवति नानकु कालु न खाई।।(10)

उपरोक्त अमृतवाणी का भावार्थ है कि सच्चे परमात्मा (सतपुरुष) ने स्वयं ही अपने हाथों से सर्व सृष्टि की रचना की है। उसी ने अण्डा बनाया फिर फोड़ा तथा उसमें से ज्योति निरंजन निकला। उसी पूर्ण परमात्मा ने सर्व प्राणियों के रहने के लिए धरती, आकाश, पवन, पानी आदि पाँच तत्व रचे। अपने द्वारा रची सृष्टि का स्वयं ही साक्षी है। दूसरा कोई सही जानकारी नहीं दे सकता। फिर अण्डे के फूटने से निकले निरंजन के बाद तीनों श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी की उत्पत्ति हुई तथा अन्य देवी-देवता उत्पन्न हुए तथा अनगिनत जीवों की उत्पत्ति हुई। उसके बाद अन्य देवों के जीवन चरित्र तथा अन्य ऋषियों के अनुभव के छः शास्त्र तथा अठारह पुराण बन गए। पूर्ण परमात्मा के सच्चे नाम (सत्यनाम) की साधना अनन्य मन से करने से तथा गुरु मर्यादा में रहने वाले (प्रणवति) को श्री नानक जी कह रहे हैं कि काल नहीं खाता।

राग मारु(अंश) अमृतवाणी महला 1(गु.ग्र.पृ. 1037)

सुनहु ब्रह्मा, बिसनु, महेसु उपाए। सुने वरते जुग सबाए।।
इसु पद बिचारे सो जनु पुरा। तिस मिलिए भरमु चुकाइदा।।(3)
साम वेदु, रुगु जुजरु अथरबणु। ब्रहमें मुख माइआ है त्रैगुण।।
ता की कीमत कहि न सकै। को तिउ बोले जिउ बुलाईदा।।(9)

उपरोक्त अमृतवाणी का सारांश है कि जो संत पूर्ण सृष्टि रचना सुना देगा तथा बताएगा कि अण्डे के दो भाग होकर कौन निकला, जिसने फिर ब्रह्मलोक की सुन्न

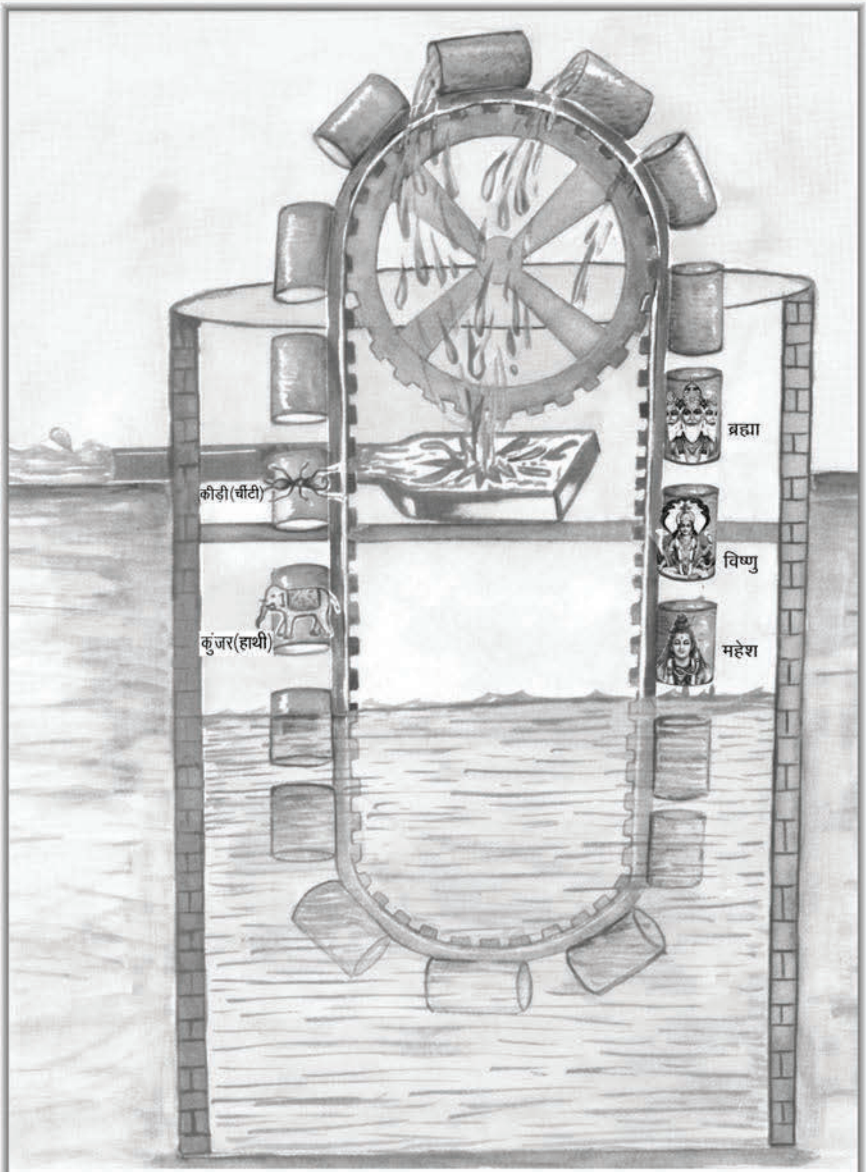

योह हरहट का कुआँ लोई, या गल बंध्या है सब कोई।
कीड़ी कुंजर और अवतारा, हरहट डोरी बंधे कई बारा।।

काल लोक में जन्म-मरण रूपी हरहट (चक्र)

में अर्थात् गुप्त स्थान पर ब्रह्मा-विष्णु-शिव जी की उत्पत्ति की तथा वह परमात्मा कौन है जिसने ब्रह्म (काल) के मुख से चारों वेदों (पवित्र ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद) को उच्चारण करवाया, वह पूर्ण परमात्मा जैसा चाहे वैसे ही प्रत्येक प्राणी को बुलवाता है। इस सर्व ज्ञान को पूर्ण बताने वाला सन्त मिल जाए तो उसके पास जाइए तथा जो सभी शंकाओं का पूर्ण निवारण करता है, वही पूर्ण सन्त अर्थात् तत्वदर्शी है।

श्री गुरु ग्रन्थ साहेब पृष्ठ 929 अमृत वाणी श्री नानक साहेब जी की राग रामकली महला 1 दखणी ओअंकार

ओअंकारि ब्रह्मा उतपति। ओअंकारू कीआ जिनि चित। ओअंकारि सैल जुग भए। ओअंकारि बेद निरमए। ओअंकारि सबदि उधरे। ओअंकारि गुरुमुखि तरे। ओनम अखर सुणहू बीचारु। ओनम अखरु त्रिभवण सारु।

उपरोक्त अमृतवाणी में श्री नानक साहेब जी कह रहे हैं कि ओंकार अर्थात् ज्योति निरंजन (काल) से ब्रह्मा जी की उत्पत्ति हुई। कई युगों मस्ती मार कर ओंकार (ब्रह्म) ने वेदों की उत्पत्ति की जो ब्रह्मा जी को प्राप्त हुए। तीन लोक की भक्ति का केवल एक ओउम् मंत्र ही वास्तव में जाप करने का है। इस ओउम् शब्द को पूरे संत से उपदेश लेकर अर्थात् गुरू धारण करके जाप करने से उद्धार होता है।

विशेष :– श्री नानक साहेब जी ने तीनों मंत्रों (ओउम् + तत् + सत्) का स्थान-स्थान पर रहस्यात्मक विवरण दिया है। उसको केवल पूर्ण संत (तत्वदर्शी संत) ही समझ सकता है तथा तीनों मंत्रों के जाप को उपदेशी को समझाया जाता है।

(पृ. 1038) उत्तम सतिगुरु पुरुष निराले, सबदि रते हरि रस मतवाले।
रिधि, बुधि, सिधि, गिआन गुरु ते पाइए, पूरे भाग मिलाईदा।।(15)
सतिगुरु ते पाए बीचारा, सुन समाधि सचे घरबारा।
नानक निरमल नादु सबद धुनि, सचु रामैं नामि समाइदा (17)

उपरोक्त अमृतवाणी का भावार्थ है कि वास्तविक ज्ञान देने वाले सतगुरु तो निराले ही हैं, वे केवल नाम जाप को जपते हैं, अन्य हठयोग साधना नहीं बताते। यदि आप को धन दौलत, पद, बुद्धि या भक्ति शक्ति भी चाहिए तो वह भक्ति मार्ग का ज्ञान पूर्ण संत ही पूरा प्रदान करेगा, ऐसा पूर्ण संत बड़े भाग्य से ही मिलता है। वही पूर्ण संत विवरण बताएगा कि ऊपर सुन्न (आकाश) में अपना वास्तविक घर (सत्यलोक) परमेश्वर ने रच रखा है।

उसमें एक वास्तविक सार नाम की धुन (आवाज) हो रही है। उस आनन्द में अविनाशी परमेश्वर के सार शब्द से समाया जाता है अर्थात् उस वास्तविक सुखदाई स्थान में वास हो सकता है, अन्य नामों तथा अधूरे गुरुओं से नहीं हो सकता।

आंशिक अमृतवाणी महला पहला (श्री गु. ग्र. पृ. 359-360)

सिव नगरी महि आसणि बैसउ कलप त्यागी वादं।(1)
सिंडी सबद सदा धुनि सोहै अहिनिसि पूरै नादं।(2)
हरि कीरति रह रासि हमारी गुरु मुख पंथ अतीतं (3)

सगली जोति हमारी संमिआ नाना वरण अनेकं।
कह नानक सुणि भरथरी जोगी पारब्रह्म लिव एकं।(4)

उपरोक्त अमतवाणी का भावार्थ है कि श्री नानक साहेब जी कह रहे हैं कि हे भरथरी योगी जी आप की साधना भगवान शिव तक है, उससे आप को शिव नगरी (लोक) में स्थान मिला है और शरीर में जो सिंगी शब्द आदि हो रहा है वह इन्हीं कमलों का है तथा टेलीविजन की तरह प्रत्येक देव के लोक से शरीर में सुनाई दे रहा है।

हम तो एक परमात्मा पारब्रह्म अर्थात् सर्व से पार जो पूर्ण परमात्मा है अन्य किसी और एक परमात्मा में लौ (अनन्य मन से लग्न) लगाते हैं।

हम ऊपरी दिखावा (भस्म लगाना, हाथ में दंडा रखना) नहीं करते। मैं तो सर्व प्राणियों को एक पूर्ण परमात्मा (सतपुरुष) की सन्तान समझता हूँ। सर्व उसी शक्ति से चलायमान हैं। हमारी मुद्रा तो सच्चा नाम जाप गुरु से प्राप्त करके करना है तथा क्षमा करना हमारा बाणा (वेशभूषा) है। मैं तो पूर्ण परमात्मा का उपासक हूँ तथा पूर्ण सतगुरु का भक्ति मार्ग इससे भिन्न है।

अमतवाणी राग आसा महला 1 (श्री गु. ग्र. प. 420)

।।आसा महला 1।। जिनी नामु विसारिआ दूजै भरमि भुलाई। मूलु छोड़ि डाली लगे किआ पावहि छाई।।1।। साहिबु मेरा एकु है अवरु नहीं भाई। किरपा ते सुखु पाइआ साचे परथाई।।3।। गुर की सेवा सो करे जिसु आपि कराए। नानक सिरु दे छूटीऐ दरगह पति पाए।।8।।18।।

उपरोक्त वाणी का भावार्थ है कि श्री नानक साहेब जी कह रहे हैं कि जो पूर्ण परमात्मा का वास्तविक नाम भूल कर अन्य भगवानों के नामों के जाप में भ्रम रहे हैं वे तो ऐसा कर रहे हैं कि मूल (पूर्ण परमात्मा) को छोड़ कर डालियों (तीनों गुण रूप रजगुण-ब्रह्मा, सतगुण-विष्णु, तमगुण-शिवजी) की सिंचाई (पूजा) कर रहे हैं। उस साधना से कोई सुख नहीं हो सकता अर्थात् पौधा सूख जाएगा तो छाया में नहीं बैठ पाओगे। भावार्थ है कि शास्त्र विधि रहित साधना करने से व्यर्थ प्रयत्न है। कोई लाभ नहीं। इसी का प्रमाण पवित्र गीता अध्याय 16 श्लोक 23-24 में भी है। उस पूर्ण परमात्मा को प्राप्त करने के लिए मनमुखी (मनमानी) साधना त्याग कर पूर्ण गुरुदेव को समर्पण करने से तथा सच्चे नाम के जाप से ही मोक्ष संभव है, नहीं तो मत्यु के उपरांत नरक जाएगा।

(श्री गुरु ग्रन्थ साहेब पष्ठ नं. 843-844)

।।बिलावलु महला 1।। मैं मन चाहु घणा साचि विगासी राम। मोही प्रेम पिरे प्रभु अबिनासी राम।। अविगतो हरि नाथु नाथह तिसै भावै सो थीऐ। किरपालु सदा दइआलु दाता जीआ अंदरि तूं जीऐ। मैं आधारु तेरा तू खसमु मेरा मै ताणु तकीआ तेरओ। साचि सूचा सदा नानक गुरसबदि झगरु निबेरओ।।4।।2।।

उपरोक्त अमतवाणी में श्री नानक साहेब जी कह रहे हैं कि अविनाशी पूर्ण परमात्मा नाथों का भी नाथ है अर्थात् देवों का भी देव है (सर्व प्रभुओं श्री ब्रह्मा जी,

श्री विष्णु जी, श्री शिव जी तथा ब्रह्म व परब्रह्म पर भी नाथ है अर्थात् स्वामी है) मैं तो सच्चे नाम को हृदय में समा चुका हूँ। हे परमात्मा ! सर्व प्राणी का जीवन आधार भी आप ही हो। मैं आपके आश्रित हूँ आप मेरे मालिक हो। आपने ही गुरु रूप में आकर सत्यभक्ति का निर्णायक ज्ञान देकर सर्व झगड़ा निपटा दिया अर्थात् सर्व शंका का समाधान कर दिया।

(श्री गुरु ग्रन्थ साहेब पष्ठ नं. 721, राग तिलंग महला 1)

यक अर्ज गुफतम् पेश तो दर कून करतार।
हक्का कबीर करीम तू बेअब परवरदिगार।
नानक बुगोयद जन तुरा तेरे चाकरां पाखाक।

उपरोक्त अमतवाणी में स्पष्ट कर दिया कि हे (हक्का कबीर) आप सत्कबीर (कून करतार) शब्द शक्ति से रचना करने वाले शब्द स्वरूपी प्रभु अर्थात् सर्व सष्टि के रचन हार हो, आप ही बेएब निर्विकार (परवरदिगार) सर्व के पालन कर्ता दयालु प्रभु हो, मैं आपके दासों का भी दास हूँ।

(श्री गुरु ग्रन्थ साहेब पष्ठ नं. 24, राग सीरी महला 1)

तेरा एक नाम तारे संसार, मैं ऐहा आस ऐहो आधार।
नानक नीच कहै बिचार, धाणक रूप रहा करतार।।

उपरोक्त अमतवाणी में प्रमाण किया है कि जो काशी में धाणक (जुलाहा) है यही (करतार) कुल का सजनहार है। अति आधीन होकर श्री नानक साहेब जी कह रहे हैं कि मैं सत कह रहा हूँ कि यह धाणक अर्थात् कबीर जुलाहा ही पूर्ण ब्रह्म (सतपुरुष) है।

विशेष :- उपरोक्त प्रमाणों के सांकेतिक ज्ञान से प्रमाणित हुआ सष्टि रचना कैसे हुई? पूर्ण परमात्मा की प्राप्ति करनी चाहिए जो पूर्ण संत से नाम लेकर ही संभव है।

''अन्य संतों द्वारा सष्टि रचना की दन्त कथा''

अन्य संतों द्वारा जो सष्टि रचना का ज्ञान बताया है वह कैसा है? कप्या निम्न पढ़ें सष्टि रचना के विषय में राधास्वामी पंथ के सन्तों के व धन-धन सतगुरू पंथ के सन्त के विचार :-

पवित्र पुस्तक जीवन चरित्र परम संत बाबा जयमल सिंह जी महाराज'' पष्ठ नं. 102-103 से ''सष्टि की रचना'' (सावन कपाल पब्लिकेशन, दिल्ली)

''पहले सतपुरुष निराकार था, फिर इजहार (आकार) में आया तो ऊपर के तीन निर्मल मण्डल (सतलोक, अलखलोक, अगमलोक) बन गया तथा प्रकाश तथा मण्डलों का नाद (धुनि) बन गया।''

पवित्र पुस्तक सारवचन (नसर) प्रकाशक :- राधास्वामी सत्संग सभा, दयालबाग आगरा, ''सष्टि की रचना'' पष्ठ 8 :-

''प्रथम धूंधूकार था। उसमें पुरुष सुन्न समाध में थे। जब कुछ रचना नहीं हुई थी। फिर जब मौज हुई तब शब्द प्रकट हुआ और उससे सब रचना हुई, पहले सतलोक और फिर

सतपुरुष की कला से तीन लोक और सब विस्तार हुआ।''

यह ज्ञान तो ऐसा है जैसे एक समय कोई बच्चा नौकरी लगने के लिए साक्षात्कार (इन्टरव्यू) के लिए गया। अधिकारी ने पूछा कि आप ने महाभारत पढ़ा है। लड़के ने उत्तर दिया कि उंगलियों पर रट रखा है। अधिकारी ने प्रश्न किया कि पाँचों पाण्डवों के नाम बताओ। लड़के ने उत्तर दिया कि एक भीम था, एक उसका बड़ा भाई था, एक उससे छोटा था, एक और था तथा एक का नाम मैं भूल गया। उपरोक्त संष्टि रचना का ज्ञान तो ऐसा है।

सतपुरुष व सतलोक की महिमा बताने वाले व पाँच नाम (औंकार - ज्योति निरंजन - ररंकार - सोहं - सत्यनाम) देने वाले व तीन नाम (अकाल मूर्ति - सतपुरुष - शब्द स्वरूपी राम) देने वाले संतों द्वारा रची पुस्तकों से कुछ निष्कर्ष :-

संतमत प्रकाश भाग 3 पंष्ठ 76 पर लिखा है कि ''सच्चखण्ड या सतनाम चौथा लोक है'', यहाँ पर 'सतनाम' को स्थान कहा है। फिर इस पवित्र पुस्तक के पंष्ठ नं. 79 पर लिखा है कि ''एक राम दशरथ का बेटा, दूसरा राम 'मन', तीसरा राम 'ब्रह्म', चौथा राम 'सतनाम', यह असली राम है।'' फिर पवित्र पुस्तक संतमत प्रकाश पहला भाग पंष्ठ नं. 17 पर लिखा है कि ''वह सतलोक है, उसी को सतनाम कहा जाता है।'' पवित्र पुस्तक 'सार वचन नसर यानि वार्तिक' पंष्ठ नं. 3 पर लिखा है कि ''अब समझना चाहिए कि राधा स्वामी पद सबसे उच्चा मुकाम है कि जिसको संतों ने सतलोक और सच्चखण्ड और सार शब्द और सत शब्द और सतनाम और सतपुरुष करके ब्यान किया है।'' पवित्र पुस्तक सार वचन (नसर) आगरा से प्रकाशित पंष्ठ नं. 4 पर भी उपरोक्त ज्यों का त्यों वर्णन है। पवित्र पुस्तक 'सच्चखण्ड की सड़क' पंष्ठ नं. 226 ''संतों का देश सच्चखण्ड या सतलोक है, उसी को सतनाम- सतशब्द-सारशब्द कहा जाता है।''

विशेष :- उपरोक्त व्याख्या ऐसी लगी जैसे किसी ने जीवन में न तो शहर देखा, न कार देखी और न पैट्रोल देखा है, न ड्राईवर का ज्ञान हो कि ड्राईवर किसे कहते हैं और वह व्यक्ति अन्य साथियों से कहे कि मैं शहर में जाता हूँ, कार में बैठ कर आनंद मनाता हूँ। फिर साथियों ने पूछा कि कार कैसी है, पैट्रोल कैसा है और ड्राईवर कैसा है, शहर कैसा है? उस गुरु जी ने उत्तर दिया कि शहर कहो चाहे कार एक ही बात है, शहर भी कार ही है, पैट्रोल भी कार को ही कहते हैं, ड्राईवर भी कार को ही कहते हैं, सड़क भी कार को ही कहते हैं।

आओ विचार करें - सतपुरुष तो पूर्ण परमात्मा है, सतनाम वह दो मंत्र का नाम है जिसमें एक ओ३म् + तत् सांकेतिक है तथा इसके बाद सारनाम साधक को पूर्ण गुरु द्वारा दिया जाता है। यह सतनाम तथा सारनाम दोनों स्मरण करने के नाम हैं। सतलोक वह स्थान है जहाँ सतपुरुष रहता है। पुण्यात्माएं स्वयं निर्णय करें सत्य तथा असत्य का।

''भक्ति मर्यादा''

नाम (दीक्षा) लेने वाले व्यक्तियों के लिए आवश्यक जानकारी

1. पूर्ण गुरु से दीक्षा लेनी चाहिए :-

पूर्ण गुरु की पहचान : - आज कलियुग में भक्त समाज के सामने पूर्ण गुरु की पहचान करना सबसे जटिल प्रश्न बना हुआ है। लेकिन इसका बहुत ही लघु और साधारण-सा उत्तर है कि जो गुरु शास्त्रों के अनुसार भक्ति करता है और अपने अनुयाइयों अर्थात् शिष्यों द्वारा करवाता है वही पूर्ण संत है। चूंकि भक्ति मार्ग का संविधान धार्मिक शास्त्र जैसे - कबीर साहेब की वाणी, नानक साहेब की वाणी, संत गरीबदास जी महाराज की वाणी, संत धर्मदास जी साहेब की वाणी, वेद, गीता, पुराण, कुरआन, पवित्र बाईबल आदि हैं। जो भी संत शास्त्रों के अनुसार भक्ति साधना बताता है और भक्त समाज को मार्ग दर्शन करता है तो वह पूर्ण संत है अन्यथा वह भक्त समाज का घोर दुश्मन है जो शास्त्रों के विरूद्ध साधना करवा रहा है। इस अनमोल मानव जन्म के साथ खिलवाड़ कर रहा है। ऐसे गुरु या संत को भगवान के दरबार में घोर नरक में उल्टा लटकाया जाएगा।

उदाहरण के तौर पर जैसे कोई अध्यापक सलेबस (पाठयक्रम) से बाहर की शिक्षा देता है तो वह उन विद्यार्थियों का दुश्मन है।

गीता अध्याय नं. 7 का श्लोक नं. 15

न, माम्, दुष्कृतिनः, मूढाः, प्रपद्यन्ते, नराधमाः,
मायया, अपहृतज्ञानाः, आसुरम्, भावम्, आश्रिताः ।।

अनुवाद : माया के द्वारा जिनका ज्ञान हरा जा चुका है ऐसे आसुर स्वभावको धारण किये हुए मनुष्यों में नीच दूषित कर्म करनेवाले मूर्ख मुझको नहीं भजते अर्थात् वे तीनों गुणों (रजगुण-ब्रह्मा, सतगुण-विष्णु, तमगुण-शिव) की साधना ही करते रहते हैं।

यजुर्वेद अध्याय न. 40 श्लोक न. 10 (संत रामपाल दास जी द्वारा भाषा-भाष्य)

अन्यदेवाहुःसम्भवादन्यदाहुरसम्भवात्, इति शुश्रुम धीराणां ये नस्तद्विचचक्षिरे।।10।।

हिन्दी अनुवाद :- परमात्मा के बारे में सामान्यत निराकार अर्थात् कभी न जन्मने वाला कहते हैं। दूसरे आकार में अर्थात् जन्म लेकर अवतार रूप में आने वाला कहते हैं। जो टिकाऊ अर्थात् पूर्णज्ञानी अच्छी प्रकार सुनाते हैं उसको इस प्रकार सही तौर पर वही समरूप अर्थात् यथार्थ रूप में भिन्न-भिन्न रूप से प्रत्यक्ष ज्ञान कराते हैं।

गीता अध्याय नं. 4 का श्लोक नं. 34

तत्, विद्धि, प्रणिपातेन, परिप्रश्नेन, सेवया,
उपदेक्ष्यन्ति, ते, ज्ञानम्, ज्ञानिनः, तत्वदर्शिनः ।।

अनुवाद : उसको समझ उन पूर्ण परमात्मा के ज्ञान व समाधान को जानने वाले संतोंको भलीभाँति दण्डवत् प्रणाम करनेसे उनकी सेवा करनेसे और कपट छोड़कर सरलतापूर्वक प्रश्न करनेसे वे परमात्म तत्व को भली भाँति जाननेवाले ज्ञानी

महात्मा तुझे उस तत्वज्ञानका उपदेश करेंगे।

2. नशीली वस्तुओं का सेवन निषेध :-- हुक्का, शराब, बीयर, तम्बाखु, बीड़ी, सिगरेट, हुलास सूँघना, गुटखा, मांस, अण्डा, सुल्फा, अफीम, गांजा और अन्य नशीली चीजों का सेवन तो दूर रहा किसी को नशीली वस्तु लाकर भी नहीं देनी है। बन्दी छोड़ गरीबदास जी महाराज इन सभी नशीली वस्तुओं को बहुत बुरा बताते हुए अपनी वाणी में कहते हैं कि -

सुरापान मद्य मांसाहारी, गमन करै भोगैं पर नारी। सतर जन्म कटत हैं शीशं, साक्षी साहिब है जगदीशं।।
पर द्वारा स्त्री का खोलै, सतर जन्म अंधा होवै डोलै। मदिरा पीवै कड़वा पानी, सत्तर जन्म श्वान के जानी।।
गरीब, हुक्का हरदम पिवते, लाल मिलावैं धूर। इसमें संशय है नहीं, जन्म पिछले सूर।।1।।
गरीब, सो नारी जारी करै, सुरा पान सौ बार। एक चिलम हुक्का भरै, डुबै काली धार।।2।।
गरीब, सूर गऊ कुं खात है, भक्ति बिहुनें राड। भांग तम्बाखू खा गए, सो चाबत हैं हाड।।3।।
गरीब, भांग तम्बाखू पीव हीं, सुरा पान सैं हेत। गौस्त मट्टी खाय कर, जंगली बनें प्रेत।।4।।
गरीब, पान तम्बाखू चाब हीं, नास नाक में देत। सो तो इरानै गए, ज्यूं भड़भूजे का रेत।।5।।
गरीब, भांग तम्बाखू पीवहीं, गोस्त गला कबाब। मोर मंग कूं भखत हैं, देगें कहां जवाब।।6।।

3. तीर्थ स्थानों पर जाना निषेध :-- किसी प्रकार का कोई व्रत नहीं रखना है। कोई तीर्थ यात्रा नहीं करनी, न कोई गंगा स्नान आदि करना, न किसी अन्य धार्मिक स्थल पर स्नानार्थ व दर्शनार्थ जाना है। किसी मन्दिर व ईष्ट धाम में पूजा व भक्ति के भाव से नहीं जाना कि इस मन्दिर में भगवान है। भगवान कोई पशु तो है नहीं कि उसको पुजारी जी ने मन्दिर में बांध रखा है। भगवान तो कण-कण में व्यापक है। ये सभी साधनाएँ शास्त्रों के विरुद्ध हैं।

जरा विचार करके देखो कि ये सभी तीर्थ स्थल (जैसे जगन्नाथ का मन्दिर, बदरीनाथ, हरिद्वार,मक्का-मदीना, अमर नाथ, वैष्णो देवी, वन्दावन, मथुरा, बरसाना, अयोध्या राम मन्दिर, काशी धाम, छुड़ानी धाम आदि), मन्दिर, मस्जिद, गुरु द्वारा, चर्च व ईष्ट धाम आदि ऐसे स्थल हैं जहाँ पर कोई संत रहते थे। वे वहाँ पर अपनी भक्ति साधना करके अपना भक्ति रूपी धन जोड़ करके शरीर छोड़ कर अपने ईष्ट देव के लोक में चले गए। तत्पश्चात् उनकी यादगार को प्रमाणित रखने के लिए वहाँ पर किसी ने मन्दिर, किसी ने मस्जिद, किसी ने गुरु द्वारा, किसी ने चर्च या किसी ने धर्मशाला आदि बनवा दी। ताकि उनकी याद बनी रहे और हमारे जैसे तुच्छ प्राणियों को प्रमाण मिलता रहे कि हमें ऐसे ही कर्म करने चाहिए जैसे कि इन महान आत्माओं ने किये हैं। ये सभी धार्मिक स्थल हम सभी को यही संदेश देते हैं कि जैसे भक्ति साधना इन नामी संतों ने की है ऐसी ही आप करो। इसके लिए आप इसी तरीके से साधना करने वाले व बताने वाले संतों को तलाश करो और फिर जैसा वे कहें वैसा ही करो। लेकिन बाद में इन स्थानों की ही पूजा प्रारम्भ हो गई जो कि बिल्कुल व्यर्थ है और शास्त्रों के विरुद्ध है।

ये सभी स्थान तो एक ऐसे स्थान की भांति हैं जहाँ पर किसी हलवाई ने भट्ठी बना कर जलेबी, लड्डू आदि बनाकर स्वयं खा कर और अपने सगे-साथियों को खिला

कर चले गए। उसके बाद में उस स्थान पर न तो वह हलवाई है और न ही मिठाई। फिर तो वहाँ केवल भट्ठी ही है। वह न तो हमारे को मिठाई बनाना सिखला सकती है और न ही हमारा पेट (उदर) भर सकती है। अब कोई कहे कि आओ भईया! आपको वह भट्ठी दिखा कर लाऊँगा जहाँ पर एक हलवाई ने मिठाई बनाई थी। चलो चलते हैं। वहाँ जा कर उस भट्ठी को देख लिया और सात चक्कर भी काट आए। क्या आपको मिठाई मिली? क्या आपको मिठाई बनाने की विधि बताने वाला हलवाई मिला? इसके लिए आपने वैसा ही हलवाई खोजना होगा जो सबसे पहले आपको मिठाई खिलाए और बनाने की विधि भी बताए। फिर जैसे वे कहे केवल वही करना, अन्य नहीं।

ठीक इसी प्रकार तीर्थ स्थानों की पूजा न करके वैसे ही संतों की तलाश करो जो शास्त्रों के अनुसार पूर्ण परमात्मा कबीर साहेब की भक्ति करते व बताते हों। फिर जैसे वे कहे केवल वही करना, अपनी मन मानी नहीं करना।

सामवेद संख्या नं. 1400 उतार्चिक अध्याय नं. 12 खण्ड नं. 3 श्लोक नं. 5(संत रामपाल दास द्वारा भाषा-भाष्य):-

भद्रा वस्त्रा समन्याउवसानो महान् कविर्निवचनानि शंसन्।
आ वच्यस्व चम्वोः पूयमानो विचक्षणो जागविर्देववीतौ।।5।।

हिन्दी :- चतुर व्यक्तियों ने अपने वचनों द्वारा पूर्ण परमात्मा (पूर्ण ब्रह्म) की पूजा का सत्यमार्ग दर्शन न करके अमत के स्थान पर आन उपासना (जैसे भूत पूजा, पितर पूजा, श्राद्ध निकालना, तीनों गुणों की पूजा (रजगुण-ब्रह्मा, सतगुण-विष्णु, तमगुण-शंकर) तथा ब्रह्म-काल की पूजा मन्दिर-मसजिद-गुरूद्वारों-चर्चो व तीर्थ-उपवास तक की उपासना) रूपी फोड़े व घाव से निकले मवाद को आदर के साथ आचमन करा रहे होते हैं। उसको परमसुखदायक पूर्ण ब्रह्म कबीर सहशरीर साधारण वेशभूषा में (''वस्त्र का अर्थ है वेशभूषा-संत भाषा में इसे चोला भी कहते हैं। जैसे कोई संत शरीर त्याग जाता है तो कहते हैं कि महात्मा तो चोला छोड़ गए।'') सत्यलोक वाले शरीर के समान दूसरा तेजपुंज का शरीर धारण करके आम व्यक्ति की तरह जीवन जी कर कुछ दिन संसार में रह कर अपनी शब्द-साखियों के माध्यम से सत्यज्ञान को वर्णन करके पूर्ण परमात्मा के छुपे हुए वास्तविक सत्यज्ञान तथा भक्ति को जाग्रत करते हैं।

गीता अध्याय नं. 16 का श्लोक नं. 23

यः, शास्त्रविधिम्, उत्सज्य, वर्तते, कामकारतः, न, सः,
सिद्धिम्, अवाप्नोति, न, सुखम्, न, पराम्, गतिम्।।

अनुवाद : जो पुरुष शास्त्र विधि को त्यागकर अपनी इच्छा से मनमाना आचरण करता है वह न सिद्धि को प्राप्त होता है न परम गति को और न सुख को ही।

गीता अध्याय नं. 6 का श्लोक नं. 16

न, अति, अश्र्नतः, तु, योगः, अस्ति, न, च, एकान्तम्,
अनश्र्नतः, न, च, अति, स्वप्नशीलस्य, जाग्रतः, न, एव, च, अर्जुन।।

अनुवाद : हे अर्जुन! यह योग अर्थात् भक्ति न तो बहुत खाने वाले का और न बिल्कुल न खाने वाले का न एकान्त स्थान पर आसन लगाकर साधना करने वाले का तथा न बहुत शयन करने के स्वभाव वाले का और न सदा जागने वाले का ही सिद्ध होता है।

पूजैं देई धाम को, शीश हलावै जो। गरीबदास साची कहै, हद काफिर है सो।।
कबीर, गंगा काठै घर करै, पीवै निर्मल नीर। मुक्ति नहीं हरि नाम बिन, सतगुरु कहैं कबीर।।
कबीर, तीर्थ कर–कर जग मूवा, उडै पानी न्हाय। राम ही नाम ना जपा, काल घसीटे जाय।।
गरीब, पीतल ही का थाल है, पीतल का लोटा। जड़ मूरत को पूजतें, आवैगा टोटा।।
गरीब, पीतल चमच्चा पूजिये, जो थाल परोसै। जड़ मूरत किस काम की, मति रहो भरोसै।।
कबीर, पर्वत पर्वत मैं फिर्‌या, कारण अपने राम। राम सरीखे जन मिले, जिन सारे सब काम।।

4. पितर पूजा निषेध :-- किसी प्रकार की पितर पूजा, श्राद्ध निकालना आदि कुछ नहीं करना है। भगवान श्री कृष्ण जी ने भी इन पितरों की व भूतों की पूजा करने से साफ मना किया है। गीता जी के अध्याय नं. 9 के श्लोक नं. 25 में कहा है कि -

यान्ति, देवव्रताः, देवान्, पितृन्, यान्ति, पितृव्रताः।
भूतानि, यान्ति, भूतेज्याः, मद्याजिनः, अपि, माम्।

अनुवाद : देवताओं को पूजने वाले देवताओं को प्राप्त होते हैं पितरों को पूजने वाले पितरों को प्राप्त होते हैं भूतों को पूजने वाले भूतों को प्राप्त होते हैं और मतानुसार पूजन करने वाले भक्त मुझसे ही लाभान्वित होते हैं।

बन्दी छोड़ गरीबदास जी महाराज और कबीर साहिब जी महाराज भी कहते हैं :-

''गरीब, भूत रमै सो भूत है, देव रमै सो देव। राम रमै सो राम है, सुनो सकल सुर भेव।।''

इसलिए उस (पूर्ण परमात्मा) परमेश्वर की भक्ति करो जिससे पूर्ण मुक्ति होवे। वह परमात्मा पूर्ण ब्रह्म सतपुरुष (सत कबीर) है। इसी का प्रमाण गीता जी के अध्याय नं. 18 के श्लोक नं. 46 में है।

यतः प्रवृत्तिर्भूतानां येन सर्वमिदं ततम्।
स्वकर्मणा तमभ्यर्च्य सिद्धिं विन्दति मानवः।।46।।

अनुवाद : जिस परमेश्वरसे सम्पूर्ण प्राणियोंकी उत्पत्ति हुई है और जिससे यह समस्त जगत् व्याप्त है, उस परमेश्वरकी अपने स्वाभाविक कर्मोंद्वारा पूजा करके मनुष्य परमसिद्धिको प्राप्त हो जाता है।।63।।

गीता अध्याय नं. 18 का श्लोक नं. 62 :--

तमेव शरणं गच्छ सर्वभावेन भारत।
तत्प्रसादात्परां शान्तिं स्थानं प्राप्स्यसि शाश्वतम्।।62।।

अनुवाद : हे भरतवंशोभ्द्रव अर्जुन! तू सर्वभावसे उस ईश्वरकी ही शरणमें चला जा। उसकी कृपासे तू परम शान्ति (संसारसे सर्वथा उपरति) को और अविनाशी परमपदको प्राप्त हो जायगा।

सर्वभाव का तात्पर्य है कि कोई अन्य पूजा न करके मन-कर्म-वचन से एक परमेश्वर में आस्था रखना।

गीता अध्याय नं. 8 का श्लोक नं. 22 :--

पुरुषः स परः पार्थ भक्त्या लभ्यस्त्वनन्यया।
यस्यान्तः स्थानि भूतानि येन सर्वमिदं ततम्।।22।।

अनुवाद : हे पृथानन्दन अर्जुन! सम्पूर्ण प्राणी जिसके अन्तर्गत हैं और जिससे यह सम्पूर्ण संसार व्याप्त है, वह परम पुरुष परमात्मा तो अनन्यभक्तिसे प्राप्त होनेयोग्य है।

अनन्य भक्ति का तात्पर्य है एक परमेश्वर (पूर्ण ब्रह्म) की भक्ति करना, दूसरे देवी-देवताओं अर्थात् तीनों गुणों (रजगुण-ब्रह्मा, सतगुण-विष्णु, तमगुण-शिव) की नहीं। गीता जी के अध्याय नं. 15 का श्लोक नं. 1 से 4 :--

गीता अध्याय नं. 15 का श्लोक नं. 1

ऊर्ध्वमूलम्, अधःशाखम्, अश्वत्थम्, प्राहुः, अव्ययम्,
छन्दांसि, यस्य, पर्णानि, यः, तम्, वेद, सः, वेदवित्।।1।।

अनुवाद : ऊपर को जड़ वाला नीचे को शाखा वाला अविनाशी विस्तृत संसार रूपी पीपल का वृक्ष है, जिसके छोटे-छोटे हिस्से या टहनियाँ, पत्ते कहे हैं, उस संसार रूप वृक्ष को जो इस प्रकार जानता है। वह पूर्ण ज्ञानी अर्थात् तत्वदर्शी है।

गीता अध्याय नं. 15 का श्लोक नं. 2

अधः, च, ऊर्ध्वम्, प्रसृताः, तस्य, शाखाः, गुणप्रवृद्धाः, विषयप्रवालाः,
अधः, च, मूलानि, अनुसन्ततानि, कर्मानुबन्धीनि, मनुष्यलोके।।2।।

अनुवाद : उस वृक्षकी नीचे और ऊपर तीनों गुणों ब्रह्मा-रजगुण, विष्णु-सतगुण, शिव-तमगुण रूपी फैली हुई विकार काम क्रोध, मोह, लोभ, अहंकार रूपी कोपल डाली ब्रह्मा, विष्णु, शिव ही जीवको कर्मोंमें बाँधने की भी जड़ें अर्थात् मूल कारण हैं तथा मनुष्यलोक, स्वर्ग, नरक लोक पृथ्वी लोक में नीचे (चौरासी लाख जूनियों में) ऊपर व्यस्थित किए हुए हैं।

गीता अध्याय नं. 15 का श्लोक नं. 3

न, रूपम्, अस्य, इह, तथा, उपलभ्यते, न, अन्तः, न, च, आदिः, न, च,
सम्प्रतिष्ठा, अश्वत्थम्, एनम्, सुविरूढमूलम्, असङ्गशस्त्रेण, दृढेन, छित्वा।।3।।

अनुवाद : इस रचना का न शुरूवात तथा न अन्त है न वैसा स्वरूप पाया जाता है तथा यहाँ विचार काल में अर्थात् मेरे द्वारा दिया जा रहा गीता ज्ञान में पूर्ण जानकारी मुझे भी नहीं है क्योंकि सर्वब्रह्मण्डों की रचना की अच्छी तरह स्थिति का मुझे भी ज्ञान नहीं है इस अच्छी तरह स्थाई स्थिति वाला मजबूत स्वरूपवाले निर्लेप तत्वज्ञान रूपी दृढ़ शस्त्र से अर्थात् निर्मल तत्वज्ञान के द्वारा काटकर अर्थात् निरंजन की भक्ति को क्षणिक जानकर। (3)

गीता अध्याय नं. 15 का श्लोक नं. 4

ततः पदं तत्परिमार्गितव्यं यस्मिन्गता न निवर्तन्ति भूयः।
तमेव चाद्यं पुरुषं प्रपद्ये यतः प्रवृत्ति प्रसृता पुराणी।।4।।

अनुवाद : उसके बाद उस परमपद परमात्मा की खोज करनी चाहिये।

जिसको प्राप्त हुए मनुष्य फिर लौटकर संसार में नहीं आते और जिससे अनादिकालसे चली आनेवाली यह सष्टि विस्तारको प्राप्त हुई है, उस आदि पुरुष परमात्माके ही मैं शरण हूँ।

इस प्रकार स्वयं भगवान श्री कष्ण ने इन्द्र जो देवी-देवताओं का राजा है कि पूजा भी छुड़वा कर उस परमात्मा की भक्ति करने के लिए ही प्रेरणा दी थी। जिस कारण उन्होंने गोवर्धन पर्वत को उठाकर इन्द्र के कोप से ब्रजवासियों की रक्षा की।

गरीब, इन्द्र चढ़ा ब्रिज डुबोवन, भीगा भीत न लेव।
इन्द्र कढाई होत जगत में, पूजा खा गए देव।।
कबीर, इस संसार को, समझाऊँ कै बार।
पूँछ जो पकड़े भेढ की, उतरा चाहै पार।।

5. गुरु आज्ञा का पालन :-- गुरुदेव जी की आज्ञा के बिना घर में किसी भी प्रकार का धार्मिक अनुष्ठान नहीं करवाना है।

जैसे बन्दी छोड़ अपनी वाणी में कहते हैं कि :-

"गुरु बिन यज्ञ हवन जो करहीं, मिथ्या जावे कबहु नहीं फलहीं।"
कबीर, गुरु बिन माला फेरते, गुरु बिन देते दान।
गुरु बिन दोनों निष्फल हैं, पूछो वेद पुराण।।

6. माता मसानी पूजना निषेध :-- आपने खेत में बनी मंढी या किसी खेड़े आदि की या किसी अन्य देवता की समाध नहीं पूजनी है। समाध चाहे किसी की भी हो बिल्कुल नहीं पूजनी है। अन्य कोई उपासना नहीं करनी है। यहाँ तक कि तीनों गुणों (ब्रह्मा, विष्णु, शिव) की पूजा भी नहीं करनी है। केवल गुरु जी के बताए अनुसार ही करना है।

गीता अध्याय नं. 7 का श्लोक नं. 15

न, माम्, दुष्कतिनः, मूढाः, प्रपद्यन्ते, नराधमाः,
मायया, अपहृतज्ञानाः, आसुरम्, भावम्, आश्रिताः।।

अनुवाद : मायाके द्वारा जिनका ज्ञान हरा जा चुका है ऐसे आसुर स्वभावको धारण किये हुए मनुष्य नीच दुषित कर्म करनेवाले मूर्ख मुझको नहीं भजते अर्थात् वे तीनों गुणों (रजगुण-ब्रह्मा, सतगुण-विष्णु, तमगुण-शिव) की साधना ही करते रहते हैं।

कबीर, माई मसानी शेढ शीतला, भैरव भूत हनुमंत। परमात्मा उनसे दूर है, जो इनको पूजंत।।
कबीर, सौ वर्ष तो गुरु की सेवा, एक दिन आन उपासी। वो अपराधी आत्मा, परै काल की फांसी।।
गुरु को तजै भजै जो आना। ता पसुवा को फोकट ज्ञाना।।

7. संकट मोचन कबीर साहेब हैं :-- कर्म कष्ट (संकट) होने पर कोई अन्य ईष्ट देवता की या माता मसानी आदि की पूजा कभी नहीं करनी है। न किसी प्रकार की बुझा पड़वानी है। केवल बन्दी छोड़ कबीर साहिब को पूजना है जो सभी दुःखों को हरने वाले संकट मोचन हैं।

सामवेद संख्या न. 822 उतार्चिक अध्याय 3 खण्ड न. 5 श्लोक न. 8 (संत रामपाल दास द्वारा भाषा-भाष्य):-

मनीषिभिः पवते पूर्व्यः कविर्नभिर्यतः परि कोशां असिष्यदत्।
त्रितस्य नाम जनयन्मधु क्षरन्निन्द्रस्य वायुं सख्याय वर्धयन्।।8।।

हिन्दी :-सनातन अर्थात् अविनाशी कबीर परमेश्वर हृदय से चाहने वाले श्रद्धा से भक्ति करने वाले भक्तात्मा को तीन मन्त्र उपेदश देकर पवित्र करके जन्म व म्त्यु से रहित करता है तथा उसके प्राण अर्थात् जीवन-स्वांसों को जो संस्कारवश अपने मित्र अर्थात् भक्त के गिनती के डाले हुए होते हैं को अपने भण्डार से पूर्ण रूप से बढ़ाता है। जिस कारण से परमेश्वर के वास्तविक आनन्द को अपने आशीर्वाद प्रसाद से प्राप्त करवाता है।

कबीर, देवी देव ठाढे भये, हमको ठौर बताओ।
जो मुझ(कबीर) को पूजैं नहीं, उनको लूटो खाओ।।
कबीर, काल जो पीसै पीसना, जोरा है पनिहार।
ये दो असल मजूर हैं, सतगुरु के दरबार।।

8. अनावश्यक दान निषेध :- कहीं पर और किसी को दान रूप में कुछ नहीं देना है। न पैसे, न बिना सिला हुआ कपड़ा आदि कुछ नहीं देना है। यदि कोई दान रूप में कुछ मांगने आए तो उसे खाना खिला दो, चाय, दूध, लस्सी, पानी आदि पिला दो परंतु देना कुछ भी नहीं है। न जाने वह भिक्षुक उस पैसे का क्या दुरूपयोग करे। जैसे एक व्यक्ति ने किसी भिखारी को उसकी झूठी कहानी जिसमें वह बता रहा था कि मेरे बच्चे ईलाज बिना तड़फ रहे हैं। कुछ पैसे देने की क्पा करें को सुनकर भावनावस होकर 100 रु दे दिए। वह भिखारी पहले पाव शराब पीता था उस दिन उसने आधा बोतल शराब पीया और अपनी पत्नी को पीट डाला। उसकी पत्नी ने बच्चों सहित आत्म हत्या कर ली। आप द्वारा किया हुआ वह दान उस परिवार के नाश का कारण बना। यदि आप चाहते हो कि ऐसे दुःखी व्यक्ति की मदद करें तो उसके बच्चों को डॉक्टर से दवाई दिलवा दें, पैसा न दें।

कबीर, गुरु बिन माला फेरते, गुरु बिन देते दान। गुरु बिन दोनों निष्फल हैं, पूछो वेद पुरान।।

9. झूठा खाना निषेध :-- ऐसे व्यक्ति का झूठा नहीं खाना है जो शराब, मांस, तम्बाखु, अण्डा, बीयर, अफीम, गांजा आदि का सेवन करता हो।

10. सत्यलोक गमन (देहान्त) के बाद क्रिया-कर्म निषेध :- यदि परिवार में किसी की मौत हो जाती है, चिता में अग्नि कोई भी दे सकता है, घर का या अन्य तथा अग्नि प्रज्वलित करते समय मंगलाचरण बोल दें। तो उसके फूल आदि कुछ नहीं उठाने हैं, यदि उस स्थान को साफ करना अनिवार्य है तो उन अस्थियों को उठाकर स्वयं ही किसी स्थान पर चलते पानी में बहा दें। उस समय मंगलाचरण उच्चारण कर दें। न पिंड आदि भरवाने हैं, न तेराहमी, छः माही, बरसोधी, पिंड भी नहीं भरवाने हैं तथा श्राद्ध आदि कुछ नहीं करना है। किसी भी अन्य व्यक्ति से हवन आदि नहीं करवाना है। सम्बन्धी तथा रिश्तेदारों आदि जो शोक व्यक्त करने आए उनके लिए कोई भी एक दिन नियुक्त करें। उस दिन प्रतिदिन करने वाला नित्य नियम करें, ज्योति जाग्त करें, फिर सर्व को खाना खिलाऐं। यदि आपने उसके (मरने वाले के)

नाम पर कुछ धर्म करना है तो अपने गुरुदेव जी की आज्ञा ले कर बन्दी छोड़ गरीबदास जी महाराज की अमृतमयी वाणी का अखण्ड पाठ करवाना चाहिए। यदि पाठ करने की आज्ञा न मिले तो परिवार के उपदेशी भक्त चार दिन या सात दिन घर में एक अखण्ड जोत देशी घी की जलाऐ तथा ब्रह्म गायत्री मन्त्र प्रतिदिन चार बार करें तथा तीन या एक बार के मन्त्र का दान संकल्प सतलोक वासी को करें। जैसा उचित समझे एक, दो, तीन तक मन्त्र के जाप का फल उसे दान करें। प्रतिदिन की तरह ज्योति व आरती, नाम स्मरण करते रहना है, यह याद रखते हुए किः-

कबीर, साथी हमारे चले गए, हम भी चालन हार। कोए कागज में बाकी रह रही, ताते लगी है वार।।
कबीर, देह पड़ी तो क्या हुआ, झूठा सभी पटीट। पक्षी उड़या आकाश कूं, चलता कर गया बीट।।

''कर्म काण्ड के विषय में सत्य कथा''

मेरे (संत रामपाल दास के) पूज्य गुरूदेव स्वामी राम देवानन्द जी महाराज को सोलह वर्ष की आयु में किसी महात्मा के सत्संग सुनने से वैराग हो गया था। एक दिन वे खेतों में गये हुए थे। पास में ही वन था। वे वन में जाकर किसी मृत जानवर की हड्डियों के पास अपने कपड़े फाड़कर फैंक जाते हैं और स्वयं महात्मा जी के साथ चले जाते हैं।

जब उनकी खोज हुई तो उनके घर वालों ने देखा कि वन में हड्डियों के पास फटे हुए कपड़े पड़े हैं तो उन्होंने सोचा कि किसी जंगली जानवर ने उन्हें खा लिया है। उन कपड़ों तथा हड्डियों को उठा कर घर पर ले आते हैं और अंतिम संस्कार कर देते हैं। उसके बाद तेरहवीं तथा छःमाही करते हैं और फिर श्राद्ध शुरू हो जाते हैं।

जब मेरे पूज्य गुरूदेव बहुत वृद्ध हो चुके थे तो वे एक बार घर पर गये। तब उन घर वालों को यह पता चला कि ये जीवित हैं और घर छोड़कर चले गये थे। उन्होंने बताया कि जब ये घर छोड़कर चले गये थे तो इनकी खोज हुई। वन में इनके कपड़े मिले। उनके पास कुछ हड्डियाँ पड़ी थी। तो हमने सोचा कि किसी जंगली जानवर ने इनको खा लिया है और उन कपड़ों तथा हड्डियों को घर पर लाकर अंतिम संस्कार कर दिया।

फिर मैंने (संत रामपाल दास ने) मेरे पूज्य गुरूदेव के छोटे भाई की पत्नी से पूछा कि जब हमारे पूज्य गुरूदेव घर छोड़कर चले गये थे तो तुमने पीछे से क्या किया? उसने बताया कि जब मैं ब्याही आई थी तो उस समय मुझे इनके श्राद्ध निकलते मिले थे। मैं अपने हाथों से इनके लगभग 70 श्राद्ध निकाल चुकी हूँ। उसने बताया कि जब घर में कोई नुकसान हो जाता था जैसे कि भैंस का दूध न देना, थन में खराबी आ जाना, कोई और नुकसान हो जाना आदि तो हम स्यानों के पास बूझा पड़वाने के लिए जाते थे तो वे कहते थे कि तुम्हारें घर में कोई निःसन्तान (अनमैरिड) मरा हुआ है। तुम्हारे को वह दुःखी कर रहा है। फिर हम उसके कपड़े आदि देते हैं।

तब मैंने कहा कि ये तो दुनिया का उद्धार कर रहे हैं। ये किसको दुःख दे रहे थे। ये तो अब सुख दाता हैं। फिर मैंने (सन्त रामपाल जी महाराज ने) उस वृद्धा से

कहा कि अब तो ये आपके सामने हैं, अब तो ये व्यर्थ की साधना जैसे श्राद्ध निकालने बंद कर दो। तब उसने कहा कि यह तो पुरानी रिवाज है, यह कैसे छोड़ दूं? अर्थात् हम अपनी पुरानी रिवाजों में इतने लीन हो चुके हैं कि प्रत्यक्ष प्रमाण होने पर कि वह गलत कर रहे हैं छोड़ नहीं सकते। इससे प्रमाणित होता है कि श्राद्ध निकालना, पितर पूजा करना आदि सब व्यर्थ हैं।

11. बच्चे के जन्म पर शास्त्र विरूद्ध पूजा निषेध :- बच्चे के जन्म पर कोई छटी आदि नहीं मनानी है। सुतक के कारण प्रतिदिन की तरह करने वाली पूजा, भक्ति, आरती, ज्योति जगाना आदि बंद नहीं करनी है।

इसी संदर्भ में एक संक्षिप्त कथा बताता हूँ कि एक व्यक्ति की शादी के दस वर्ष पश्चात् पुत्र हुआ था। पुत्र की खुशी में उसने बहुत ही खुशी मनाई। बीस-पच्चीस गाँवों को भोजन के लिए आमन्त्रित किया और बहुत ही गाना-बजाना हुआ अर्थात् काफी पैसा खर्च किया। फिर एक वर्ष के बाद उस पुत्र का देहान्त हो जाता है। फिर वही परिवार टक्कर मार कर रोता है और अपने दुर्भाग्य को कोसता है। इसलिए कबीर साहेब हमें बताते हैं कि :-

कबीर, बेटा जाया खुशी हुई, बहुत बजाये थाल। आना जाना लग रहा, ज्यों कीड़ी का नाल।।
कबीर, पतझड़ आवत देख कर, बन रोवै मन माहिं। ऊंची डाली पात थे, अब पीले हो हो जाहिं।।
कबीर, पात झडंता यूं कहै, सुन भई तरूवर राय। अब के बिछुड़े नहीं मिला, न जाने कहां गिरेंगे जाय।
कबीर, तरूवर कहता पात से, सुनों पात एक बात। यहाँ की याहे रीति है, एक आवत एक जात।।

12. देई धाम पर बाल उतरवाने जाना निषेध :-- बच्चे के किसी देई धाम पर बाल उतरवाने नहीं जाना है। जब देखो बाल बड़े हो गए, कटवा कर फैंक दो। एक मन्दिर में देखा कि श्रद्धालु भक्त अपने लड़के या लड़कियों के बाल उतरवाने आए। वहाँ पर उपस्थित नाई ने बाहर के रेट से तीन गुना पैसे लीये और एक कैंची भर बाल काट कर मात-पिता को दे दिए। उन्होंने श्रद्धा से मन्दिर में चढ़ाए। पुजारी ने एक थैले में डाल लिए। रात्री को उठा कर दूर एकांत स्थान पर फैंक दिए। यह केवल नाटक बाजी है। क्यों न पहले की तरह स्वाभाविक तरीके से बाल उतरवाते रहें तथा बाहर डाल दें। परमात्मा नाम से प्रसन्न होता है पाखण्ड से नहीं।

13. नाम जाप से सुख :-- नाम (उपदेश) को केवल दुःख निवारण की दृष्टि कोण से नहीं लेना चाहिए बल्कि आत्म कल्याण के लिए लेना चाहिए। फिर सुमिरण से सर्व सुख अपने आप आ जाते हैं।

कबीर, सुमिरण से सुख होत है, सुमिरण से दुःख जाए। कहैं कबीर सुमिरण किए, सांई माहिं समाय।।

14. व्याभीचार निषेध :-- पराई स्त्री को माँ-बेटी-बहन की दृष्टि से देखना चाहिए। व्याभीचार महापाप है। जैसे :--

गरीब, पर द्वारा स्त्री का खोलै। सत्तर जन्म अन्धा हो डोलै।।
सुरापान मद्य मांसाहारी। गवन करें भोगैं पर नारी।।
सत्तर जन्म कटत हैं शीशं। साक्षी साहिब है जगदीशं।।
पर नारी ना परसियों, मानो वचन हमार। भवन चर्तुदश तास सिर, त्रिलोकी का भार।।

पर नारी ना परसियो, सुनो शब्द सलतंत। धर्मराय के खंभ से, अर्धमुखी लटकंत।।

15. निन्दा सुनना व करना निषेध :-- अपने गुरु की निंदा भूल कर भी न करें और न ही सुनें। सुनने से अभिप्राय है यदि कोई आपके गुरु जी के बारे में मिथ्या बातें करें तो आपने लड़ना नहीं है बल्कि यह समझना चाहिए कि यह बिना विचारे बोल रहा है अर्थात् झूठ कह रहा है।

गुरु की निंदा सुनै जो काना। ताको निश्चय नरक निदाना।।
अपने मुख निंदा जो करहीं। शुकर श्वान गर्भ में परहीं।।

निन्दा तो किसी की भी नहीं करनी है और न ही सुननी है। चाहे वह आम व्यक्ति ही क्यों न हो। कबीर साहेब कहते हैं कि -

"तिनका कबहू न निन्दीये, जो पांव तले हो। कबहु उठ आखिन पड़े, पीर घनेरी हो।।"

16. गुरु दर्श की महिमा :-- सतसंग में समय मिलते ही आने की कोशिश करे तथा सतसंग में नखरे (मान-बड़ाई) करने नहीं आवे। अपितु अपने आपको एक बीमार समझ कर आवे। जैसे बीमार व्यक्ति चाहे कितने ही पैसे वाला हो, चाहे उच्च पदवी वाला हो जब हस्पताल में जाता है तो उस समय उसका उद्देश्य केवल रोग मुक्त होना होता है। जहाँ डॉक्टर लेटने को कहे लेट जाता है, बैठने को कहे बैठ जाता है, बाहर जाने का निर्देश मिले बाहर चला जाता है। फिर अन्दर आने के लिए आवाज आए चुपके से अन्दर आ जाता है। ठीक इसी प्रकार यदि आप सतसंग में आते हो तो आपको सतसंग में आने का लाभ मिलेगा अन्यथा आपका आना निष्फल है। सतसंग में जहाँ बैठने को मिल जाए वहीं बैठ जाए, जो खाने को मिल जाए उसे परमात्मा कबीर साहिब की रजा से प्रसाद समझ कर खा कर प्रसन्न चित्त रहे।

कबीर, संत मिलन कूं चालिए, तज माया अभिमान। जो–जो कदम आगे रखे, वो ही यज्ञ समान।।
कबीर, संत मिलन कूं जाईए, दिन में कई–कई बार। आसोज के मेह ज्यों, घना करे उपकार।।
कबीर, दर्शन साधु का, परमात्मा आवै याद। लेखे में वोहे घड़ी, बाकी के दिन बाद।।
कबीर, दर्शन साधु का, मुख पर बसै सुहाग। दर्श उन्हीं को होत हैं, जिनके पूर्ण भाग।।

17. गुरु महिमा :-- यदि कहीं पर पाठ या सतसंग चल रहा हो या वैसे गुरु जी के दर्शनार्थ जाते हों तो सर्व प्रथम गुरु जी को दण्डवत्(लम्बा लेट कर) प्रणाम करना चाहिए बाद में सत ग्रन्थ साहिब व तसवीरें जैसे साहिब कबीर की मूर्ति - गरीबदास जी की व स्वामी राम देवानन्द जी व गुरु जी की मूर्ति को प्रणाम करें जिससे सिर्फ भावना बनी रहेगी। मूर्ति पूजा नहीं करनी है। केवल प्रणाम करना पूजा में नहीं आता यह तो भक्त की श्रद्धा को बनाए रखने में सहयोग देता है। पूजा तो वक्त गुरु व नाम मन्त्र की करनी है जो पार लगाएगा।

कबीर, गुरु गोविन्द दोऊ खड़े, काके लागुं पाय। बलिहारी गुरु आपने, जिन गोविन्द दियो मिलाय।।
कबीर, गुरु बड़े हैं गोविन्द से, मन में देख विचार। हरि सुमरे सो रह गए, गुरु भजे होय पार।।
कबीर, हरि के रूठतां, गुरु की शरण में जाय। कबीर गुरु जै रूठजां, हरि नहीं होत सहाय।।

कबीर, सात समुन्द्र की मसि करूं, लेखनि करूं बनिराय।
धरती का कागज करूं, तो गुरु गुन लिखा न जाय।।

18. मॉंस भक्षण निषेध :--अण्डा व मांस भक्षण व जीव हिंसा नहीं करनी है। यह महापाप होता है। जैसे साहेब कबीर जी महाराज व गरीबदास जी महाराज ने बताया है:-

कबीर, जीव हने हिंसा करे, प्रकट पाप सिर होय। निगम पुनि ऐसे पाप तें, भिस्त गया नहिं कोय।।1।।
कबीर, तिलभर मछली खायके, कोटि गऊ दे दान। काशी करौंत ले मरे, तो भी नरक निदान।।2।।
कबीर, बकरी पाती खात है, ताकी काढी खाल। जो बकरीको खात है, तिनका कौन हवाल।।3।।
कबीर, गला काटि कलमा भरे, कीया कहै हलाल। साहब लेखा मांगसी, तब होसी कौन हवाल।।4।।
कबीर, दिनको रोजा रहत हैं, रात हनत हैं गाय। यह खून वह वंदगी, कहुं क्यों खुशी खुदाय।।5।।
कबीर, कबिरा तेई पीर हैं, जो जानै पर पीर। जो पर पीर न जानि है, सो काफिर बेपीर।।6।।
कबीर, खूब खाना है खीचडी, मांहीं परी टुक लौन। मांस पराया खायकै, गला कटावै कौन।।7।।
कबीर, मुसलमान मारैं करदसो, हिंदू मारैं तरवार। कहै कबीर दोनूं मिलि, जैहैं यमके द्वार।।8।।
कबीर, मांस अहारी मानव, प्रत्यक्ष राक्षस जानि। ताकी संगति मति करै, होइ भक्ति में हानि।।9।।
कबीर, मांस खांय ते ढेड़ सब, मद पीवैं सो नीच। कुलकी दुरमति पर हरै, राम कहै सो ऊंच।।10।।
कबीर, मांस मछलिया खात हैं, सुरापान से हेत। ते नर नरकै जाहिंगे, माता पिता समेत।।11।।

गरीब, जीव हिंसा जो करते हैं, या आगे क्या पाप।
कंटक जुनी जिहान में, सिंह भेड़िया और सांप।।
झोटे बकरे मुरगे ताई। लेखा सब ही लेत गुसाईं।
मंग मोर मारे महमंता। अचरा चर हैं जीव अनंता।।
जिह्वा स्वाद हिते प्राना। नीमा नाश गया हम जाना।
तीतर लवा बुटेरी चिड़िया। खूनी मारे बड़े अगड़िया।।
अदले बदले लेखे लेखा। समझ देख सुन ज्ञान विवेका।।
गरीब, शब्द हमारा मानियो, और सुनते हो नर नारि।
जीव दया बिन कुफर है, चले जमाना हारि।।

अनजाने में हुई हिंसा का पाप नहीं लगता। परमात्मा कबीर साहिब कहते हैं :-

इच्छा कर मारै नहीं, बिन इच्छा मर जाए। कहैं कबीर तास का, पाप नहीं लगाए।।

19. गुरु द्रोही का सम्पर्क निषेध :-- यदि कोई भक्त गुरु जी से द्रोह (गुरु जी से विमुख हो जाता है) करता है वह महापाप का भागी हो जाता है। यदि किसी को मार्ग अच्छा न लगे तो अपना गुरु बदल सकता है। यदि वह पूर्व गुरु के साथ बैर व निन्दा करता है तो वह गुरु द्रोही कहलाता है। ऐसे व्यक्ति से भक्ति चर्चा करने में उपदेशी को दोष लगता है। उसकी भक्ति समाप्त हो जाती है।

गरीब, गुरु द्रोही की पैड़ पर, जे पग आवै बीर। चौरासी निश्चय पड़ै, सतगुरु कहैं कबीर।।
कबीर, जान बुझ साची तजै, करै झूठे से नेह। जाकी संगत हे प्रभु, स्वपन में भी ना देह।।

अर्थात् गुरु द्रोही के पास जाने वाला भक्ति रहित होकर नरक व लख चौरासी जूनियों में चला जाएगा।

20. जुआ निषेध :-- जुआ-ताश कभी नहीं खेलना चाहिए।

कबीर, मांस भखै और मद पिये, धन वेश्या सों खाय। जूआ खेलि चोरी करै, अंत समूला जाय।।

21. नाच-गान निषेध :-- किसी भी प्रकार के खुशी के अवसर पर नाचना व

अश्लील गाने गाना भक्ति भाव के विरूद्ध है। जैसे एक समय एक विधवा बहन किसी खुशी के अवसर पर अपने रिश्तेदार के घर पर गई हुई थी। सभी खुशी के साथ नाच-गा रहे थे परंतु वह बहन एक तरफ बैठ कर प्रभु चिंतन में लगी हुई थी। फिर उनके रिश्तेदारों ने उससे पूछा कि आप ऐसे क्यों निराश बैठे हो? आप भी हमारे की तरह नाचों, गाओ और खुशी मनाओ। इस पर वह बहन कहती है कि किस की खुशी मनाऊँ? मुझ विधवा का एक ही पुत्र था वह भी भगवान को प्यारा हो चुका है। अब क्या खुशी है मेरे लिए? ठीक इसी प्रकार इस काल के लोक में प्रत्येक व्यक्ति की स्थिति है। यहाँ पर गुरु नानक देव जी की वाणी है कि :-

ना जाने काल की कर डारै, किस विधि ढल पासा वे।
जिन्हादे सिर ते मौत खुड़गदी, उन्हानूं केड़ा हांसा वे।।
साध मिलें साडी शादी (खुशी) होंदी, बिछड़ दां दिल गिरि (दुःख) वे।
अखदे नानक सुनो जिहाना, मुश्किल हाल फकीरी वे।।

कबीर साहेब जी महाराज भी कहते हैं कि :-

कबीर, झूठे सुख को सुख कहै, मान रहा मन मोद। सकल चबीना काल का, कुछ मुख में कुछ गोद।।
कबीर, बेटा जाया खुशी हई, बहुत बजाये थाल। आवण जाणा लग रहा, ज्यों कीड़ी का नाल।।

विशेष :- स्त्री तथा पुरूष दोनों ही परमात्मा प्राप्ति के अधिकारी हैं। स्त्रियों को मासिक धर्म (Mainces) के दिनों में भी अपनी दैनिक पूजा, ज्योति लगाना आदि बन्द नहीं करना चाहिए, न ही किसी के देहान्त या जन्म पर भी दैनिक पूजा कर्म बन्द नहीं करना है।

नोट :- जो भक्तजन इन इक्कीस सुत्रीय आदेशों का पालन नहीं करेगा उसका नाम समाप्त हो जाएगा। यदि अनजाने में कोई गलती हो भी जाती है तो वह माफ हो जाती है और यदि जान बुझकर कोई गलती की है तो वह भक्त नाम रहित हो जाता है। इसका समाधान यही है कि गुरुदेव जी से क्षमा याचना करके दोबारा नाम उपदेश लेना होगा। कंपा आगे पढ़ें उन भक्तों की आप बीती जो शास्त्रविरूद्ध साधना त्यागकर उपरोक्त नियमों का पालन करके कितने सुखी हुए हैं और पहले सब लोकवेद वाली पूजाएें करके भी महादुःखी थे।

लेखक

संत रामपाल दास महाराज
सतलोक आश्रम, बरवाला
जिला-हिसार, हरियाणा (भारत)

❑❑❑

''जान बची लाखों पाए''

''शादी के चौदह वर्ष बाद परमात्मा ने दी संतान''

मैं सुखबीर दास पुत्र श्री जगमाल सिंह गाँव-भूरावास (जिला झज्जर) का स्थाई निवासी हूँ। अब मैं गाँव-मौजूखेड़ा (तहसील-ऐलनाबाद जिला-सिरसा) में रह रहा हूँ। मेरी शादी सन् 1993 में हुई थी। शादी के बाद मैंने झज्जर चुंगी, रोहतक में क्लीनिक किया। उसके बाद भक्तमति को अनुबंध के आधार पर सन् 1999 में A.N.M. के पद पर नौकरी मिली। फिर हम ऐलनाबाद में रहने लगे। हमारी कोई संतान नही थी। फिर कुछ दिन बाद हम संतान के लिए इधर-उधर चक्कर काटने लगे। महाज्योति कार्यालय D.L.F. कॉलोनी रोहतक में दिखाया और रोहतक में कई झाड़-फूंक वालों को भी दिखाया। डॉक्टरों को भी दिखाया, परंतु कोई फायदा नहीं हुआ। बाद में किसी ने रामतीर्थ सीता कुण्ड में स्नान के लिए भेजा। वहाँ पर अमृतसर गुरूद्वारा और दुर्गा मंदिर में भी गए। हरिद्वार, अग्रोहा धाम पर, शीतला माता मन्दिर, गुड़गाँव भी गए। हर पूर्णमासी को सालासर व दो जाटी धाम भी जाते थे। मैं हनुमान जी की पूजा व बाबा हरिदास की पूजा भी करता था तथा आजीवन मंगलवार का व्रत करने का भी प्रण ले रखा था। इनसे भी जब कोई लाभ नहीं हुआ तो हमने सिरसा के तलवाड़ नर्सिंग होम में ट्यूब जाँच कराई जिसमें पता चला कि अंडा नहीं बनता, फिर एपेक्स हस्पताल में दिखाया। उन्होंने टेस्ट ट्यूब बेबी के लिए भेजा। उन्होंने बताया एक बार में एक-डेढ़ लाख का खर्चा आएगा, एक बार में भी कामयाब हो सकता है तथा दो बार भी करना पड़ सकता है। हमारे पास इतने पैसे नहीं थे।

फिर हमने संतों की शरण लेने की सोची। वहीं मौजूखेड़ा में एक बिट्टू सेठ की दुकान थी। वो 8 साल से राधास्वामी ब्यास का सेवक था। उससे बात की और वहाँ से नामदान लेने के लिए तैयार हो गये। लेकिन पत्नी ने वहाँ के लिए मना कर दिया। वह बोली कि सच्चा सौदा सिरसा से नाम ले लो, बार-बार आते-जाते रहेंगे। राधास्वामी का डेरा तो बहुत दूर है। लेकिन सच्चा सौदा से नाम लेने की मेरी इच्छा नहीं थी। हम आपस में 3-4 दिन से बात कर ही रहे थे कि चार दिन बाद संत रामपाल जी महाराज ने दैनिक भास्कर अखबार में सच्चा सौदा के बारे में लिखा कि ये शास्त्रविरूद्ध ज्ञान देकर भक्तों के अनमोल मानव जीवन को व्यर्थ कर रहे हैं। मैंने भक्तमति से कहा कि शास्त्रानुसार साधना न करना मनमाना आचरण है, ठीक ही तो लिखा है। फिर मैंने सतलोक आश्रम में संपर्क किया तथा पुस्तक मंगवाई। पुस्तक को ध्यान से पढ़ा और सोचा कि हम इतनी जगहों पर भटक लिए, कोई फायदा नहीं हुआ। अगर हमें यहाँ से लाभ हुआ तो हम सभी देवी-देवताओं को छोड़ देगें, हमारे लिए तो वही भगवान है जो हमें लाभ दे। फिर मैंने 25-7-2005 को करौंथा आश्रम में जाकर नाम उपदेश लिया। नाम लेने से पहले

मैं पायरिया रोग से ग्रस्त था। सारे जाड़-दाँत हिलने लगे थे। दर्द रहता था। मैं जब नाम लेने गया तो मैं दर्द की गोली खाना भूल गया। जब नाम लिया तो पता नहीं चला कि जाड़-दाँत का दर्द कहाँ गया, ऐसा हो गया कि दर्द कभी था ही नहीं। फिर नाम लेने के बाद आश्रम में खाना खाया तो भी दर्द नहीं हुआ। दाँतों को हाथ लगाकर देखा तो हिल तो रहे थे लेकिन कम हिल रहे थे। अब भी हिलते हैं, लेकिन तकलीफ नहीं है। उसके बाद दर्शनों के लिए गया तो सतगुरुदेव के चरण ऐसे लगे जैसे फोम की रूई से भी नरम हों। मैं तो ऐसा हो गया कि न कोई चिंता है और न कोई तकलीफ। मैं बहुत खुश हो गया। अपने आप ही मन में आता रहा कि इनसे ऊपर कोई और शक्ति नहीं है। नाम लेने के बाद मैं घर जाकर सभी देवी-देवताओं के फोटो जल प्रवाह करने लगा। तब पत्नी नाराज हो गई और कहने लगी कि मैं मंगलवार की हनुमान जी की ज्योत कहाँ लगाऊँगी। फिर बहुत समझाने पर पत्नी ने मन में संकल्प किया कि मैंने दो काम सोचे हैं, उन दोनों काम में से एक काम भी हो गया तो मैं आपके गुरूजी को मान जाऊँगी, नहीं तो नहीं मानूंगी। फिर पाँचवें दिन उनमें से एक काम पूर्ण हो गया। फिर नाम लेते-लेते दो महीने लग गए। फिर 11 वें महिने में हमारी पड़ोस की आंटी आई। उनके सामने हमारे कूलर में आग लग गई। हमने सोचा कि अब तो सर्दी आ गई। गर्मी में ठीक करवा लेंगे। फिर मार्च महीने में दुकान पर गया और कहा कि भाई मुझे कूलर की मोटर ला देना। दुकानदार ने कहा कि सातवें दिन ले जाना। उसके बाद चौथे दिन रात में सोया तो गुरू जी आए और प्लास-चाबी और पेचकस हाथ में लेकर कुलर की मोटर लगाने लगे। मैं उठा और देखा तो गुरू जी कूलर की मोटर लगाकर एकदम अंतर्ध्यान हो गए। फिर मैंने फोटो के आगे दण्डवत् प्रणाम किया ओर रोने लग गया कि गुरू जी ऐसे-ऐसे काम भी करते हैं। हे परमात्मा! हम अब तक कहाँ सो रहे थे। सुबह अपनी पत्नी को बताने लगा तो इतने में वही आंटी भी दवाई लेने घर आ गई। कहने लगी भाई क्या बात है? मैंने कहा आंटी आपके सामने हमारे कूलर में आग लगी थी। अब हमारे कूलर को हमारे गुरूजी ठीक करके गए हैं। आंटी ने कहा कि भाई कूलर चलाकर दिखा। फिर मैंने कूलर की खिड़की खोली तो सारा कूलर धूल-मिट्टी से भरा हुआ था। जब साफ करके चलाया तो नए से भी तेज और ठंड़ी हवा के साथ चला और अब भी चलता है। फिर परमात्मा ने **TATA AIG Insurance** की किस्त में छूट की। तीन-चार बार हमारे घर में रूपये अपने आप बढ़ गये।

पहले हमारे चौदह साल तक कोई संतान नहीं थी और अब बन्दी छोड़ सतगुरु रामपाल जी महाराज से उपदेश लेने के बाद साढ़े तीन साल में ही परमात्मा ने तीन संतान दे दी। पूर्ण परमात्मा जो चाहे सो कर सकता है। अब हमें ये ज्ञान हो चुका है कि बन्दी छोड़ सतगुरु रामपाल जी महाराज के रूप में पूर्ण परमात्मा कबीर साहेब आये हुऐ हैं।

भक्त सुखबीर दास
मोबाईल :- **9466590044**

''परमात्मा ने दिया जीवन दान''

मैं भक्त विशम्भर दास गाँव गितौर, जिला भिण्ड, मध्य प्रदेश का निवासी हूँ। मैंने सतगुरु रामपाल जी महाराज से दो साल से नाम उपदेश ले रखा है। मेरी लड़की साधना एक महीने से बहुत ही गम्भीर स्थिति में बीमार चल रही थी। उसके पेट में गैस बनती थी। जिसके कारण से पेट बार-बार फूलता था तथा पैरों में और सिर में लगातार दर्द रहता था। कई बार तो गला भी बंद हो जाता था। एक बार लड़की का गला इतना बंद हो गया कि लगभग आठ दिन तक पानी भी नहीं पीया गया। मैंने अपनी लड़की का ईलाज डॉक्टर महेश्वर से करवाया जो कि ग्वालियर में सबसे बड़े डॉक्टर हैं। पाँच दिन तक मेरी लड़की हॉस्पिटल में दाखिल रही, परंतु उसे एक प्रतिशत भी आराम नहीं हुआ। फिर मैंने अपनी लड़की को ग्वालियर में ही दूसरे डाक्टर P.C. Jain के पास दाखिल करवाया। तीन दिन तक मेरी बेटी वहाँ दाखिल रही। उसे उल्टी-दस्त, पेट दर्द, सिर दर्द बहुत ही तेज गति से होने लगा। उसने तीन दिन तक कुछ नहीं खाया-पीया। हमारा सारा परिवार लड़की की इस गंभीर स्थिति को देखकर रोने लगा। हमने रोते-रोते अपने परमेश्वर सतगुरु रामपाल जी महाराज को याद किया। फिर रात को लगभग बारह बजे सतगुरु रामपाल जी महाराज ने मेरी लड़की को दर्शन दिये और कहा कि बेटी आज के बाद तेरे शरीर में कोई रोग नहीं रहेगा। इतना कहते ही लड़की ने गुरुदेव के सामने दण्डवत् प्रणाम किया और उसी समय मेरी लड़की ने संध्या आरती बोलनी शुरू कर दी और लगातार पूरी आरती की। इस लीला को देखकर हॉस्पिटल का पूरा स्टॉफ इकट्ठा हो गया और परमेश्वर की इस लीला को देखने लगा कि इतनी असीम कंपा की आपके गुरुदेव ने। अगले दिन सुबह 9:30 बजे डॉक्टर ने आकर लड़की का चैकअप किया और चैकअप के बाद डाक्टर हैरान हो गया कि इस लड़की को तो रात को ही मर जाना था। परन्तु अब इसके शरीर में नाम मात्र भी बीमारी नहीं है। ये सब देखकर पूरे हस्पताल में यह एक चर्चा का विषय बन गया। आज मेरी लड़की सौ प्रतिशत ठीक है। अच्छी तरह खाना पीना खा रही है और उसके शरीर में कोई रोग नहीं है।

ये सब सतगुरु रामपाल जी महाराज की कंपा से हुआ जो परमेश्वर कबीर साहेब का ही स्वरूप हैं। इस पंथ्वी पर जब तक हमारी सांसे चलती रहेगीं, हम अपने सतगुरु रामपाल जी महाराज की लीला का ऐसे ही गुणगान करते रहेंगे।

।। सत साहेब ।।

भक्त विशम्भर दास
गाँव-गितौर तहसील-मेहगाँव
जिला-भिण्ड (M.P.)

''उजड़ा परिवार बसा''

मैं भक्त रमेश पुत्र श्री उमेद सिंह, गाँव-पेटवाड़, तहसील-हाँसी, जिला-हिसार का रहने वाला हूँ। अब एम्पलाईज कॉलोनी, जींद में सपरिवार रहता हूँ।

नाम लेने से पहले हम भूतों की पूजा करते थे। हमारे गाँव में बाबा सरिया की मान्यता थी जिस पर हम प्रत्येक महीने की पूर्णिमा को ज्योति लगाने जाते थे। हम शुक्रवार, जन्माष्टमी, शिवरात्रि का व्रत भी करते थे। पित्तरों का पिण्डदान और श्राद्ध भी निकालते थे। फिर भी हमारा घर बिल्कुल उजड़ चुका था। जब मैं बारह वर्ष का था, तब मेरे पिता जी की मत्यु हो गई थी। घर में तीन सदस्य थे। तीनों की आपस में लड़ाई रहती थी। तीनों को भूत-प्रेत बहुत दुःखी किया करते थे और तीनों बहुत ज्यादा बीमार रहते थे। पहले डॉक्टरों को दिखाया लेकिन कोई आराम नहीं हुआ। फिर सेवड़ों के पास गए। कोई कहता तुम 5000 रूपये दे दो, मैं तुम्हें बिल्कुल ठीक कर दूँगा। कोई कहता तुम 10000 रूपये दे दो।

हम बिल्कुल उजड़ चुके थे, परंतु कोई आराम नहीं हुआ। मेरे रिश्तेदार भक्त रघुबीर सिंह गाँव कौंथ कलां, वाले के बार-बार कहने से मेरी माता जी ने सन् 1996 में संत रामपाल जी महाराज से नाम ले लिया। मेरी पत्नी को पाँच वर्ष उपरांत भी कोई संतान उत्पन्न नहीं हुई थी। मेरी माता जी के कहने से मेरी पत्नी ने भी संत रामपाल जी महाराज से नाम ले लिया। नाम दान लेते ही वर्ष के अन्दर मेरी पत्नी ने एक लड़के को जन्म दिया। मेरा भगवान से विश्वास उठ चुका था। इस कारण मैंने नाम नहीं लिया तथा अपनी माता व पत्नी को भी संत जी के पास जाने से मना करता था। मेरा लड़का जो पंद्रह दिन का था, बहुत ज्यादा बीमार हो गया। डॉक्टरों ने कह दिया कि यह लड़का सुबह तक मर जायेगा, इसे ले जाओ। शाम को एक भक्त ने सतगुरु रामपाल जी महाराज के बारे में बताया कि आश्रम जीन्द में आए हैं। वे पूर्ण संत हैं और वे ही इस बच्चे को ठीक कर सकते हैं। हम डॉक्टरों और सेवड़ों के पास जा-जाकर थक चुके थे। मेरा भगवान से विश्वास उठ गया था। मैंने उस भक्त को मना कर दिया। किंतु उसने दोबारा फिर प्रार्थना की कि वे स्वयं बन्दी छोड़ भगवान ही धरती पर आए हुए हैं। यदि वे दया कर दें तो यह लड़का ठीक हो सकता है। उस भक्त के इतने विश्वास के साथ कहने पर मैंने अपनी माता जी को अनुमति दे दी। मेरी माँ ने लड़के को ले जाकर सतगुरु रामपाल जी महाराज के चरणों में रख दिया और रोते हुए प्रार्थना की कि महाराज जी! यह बच्चा मर चुका है। अब आप ही इसे ठीक कर सकते हैं। तब बन्दी छोड़ सतगुरु रामपाल जी महाराज ने कहा कि कबीर परमेश्वर की रजा से यह ठीक हो जाएगा। अगले दिन जब बच्चे को मरना था, वह ठीक हो गया।

हमारा उजड़ा हुआ घर बन्दी छोड़ सतगुरु रामपाल जी महाराज की कपा से दोबारा बस गया। इतना चमत्कार देखकर भी पाप कर्मों की वजह से मैंने नाम नहीं लिया और पूर्व वाली पूजा तथा भूतों की पूजा ही करता रहा। हमारे घर पर बन्दी

छोड़ गरीबदास जी महाराज की वाणी का पाठ संत रामपाल जी महाराज करते थे और मैं बाहर जाकर शराब पीता था। फिर एक वर्ष बाद एक दिन हमारे घर पाठ हो रहा था। तब शाम को बन्दी छोड़ सतगुरु रामपाल जी महाराज ने सत्संग किया। तब मैंने सत्संग सुना और नाम भी ले लिया। फिर हमारे घर में दुःख नाम की चीज नहीं रही। मेरी माता जी ने किसी के बहकावे में आकर नाम खण्डित कर दिया। कुछ समय पश्चात सन् 2000 में मेरी माँ को अचानक पैर में जलन होने लगी। डॉक्टरों को दिखाया। उन्होंने बताया कि इसे ब्लड कैंसर है। यह दस-पंद्रह दिन में मर जायेगी। अगर पी.जी.आई. चण्डीगढ़ में ले जाओ तो वहाँ डेढ़ लाख रूपये लग कर यह ज्यादा से ज्यादा एक साल तक जीवित रह सकती है। परन्तु दर्द कम नहीं होगा। बन्दी छोड़ सतगुरु रामपाल जी महाराज ने बताया कि आपकी माता जी ने नाम खंडित कर दिया है। जैसे बिजली का बिल न भरने से कनेक्शन कट जाने से विद्युत से मिलने वाला लाभ बंद हो जाता है। उसे फिर सुचारु करवाना पड़ता है। मेरी माता जी ने अपनी गलती की क्षमा याचना की। महाराज जी ने दोबारा नाम दिया तथा सिर पर हाथ रखा। सिर पर हाथ रखते ही पैर की जलन व दर्द बंद हो गया। फिर लगभग दो वर्ष के बाद जाड़ निकलवाने की वजह से जाड़ में से खून निकलने लगा। डॉक्टर ने दवाई दी और टाँके भी लगाए, परंतु खून निकलना बंद नहीं हुआ। फिर डॉक्टर ने इसकी बीमारी चैक की और बताया कि इसे ब्लड कैंसर है और अब वह फूट चुका है। अब यह ठीक नहीं हो सकती। इसे घर ले जाओ। यह खून निकलने से दो दिन में मर जायेगी। फिर अगले दिन इसके पेशाब और लैटरिंग में से भी खून आना शुरु हो गया। तब मैंने सतगुरु रामपाल जी महाराज को फोन से बताया कि डॉक्टर ने कहा है कि ये दो दिन में मर जायेगी। तब सतगुरु रामपाल जी महाराज ने कहा कि बन्दी छोड़ जो करेंगे, ठीक करेंगे। फिर अगली रात को दो बजे यमदूत उसे लेने के लिए आए। मेरी माँ ने कहा कि तेरे पिता जी (वे दस वर्ष पहले गुजर चुके थे) मुझे लेने के लिए आये हुए हैं। इतना कहते-कहते वह यमदूत मेरी माँ के अन्दर प्रवेश कर गया और कहने लगा कि मैं इसे लेकर जाऊँगा, इसका समय पूरा हो चुका है। मेरे को चाय पिलाओ। तब हमने उसके लिए चाय बनाने के लिए रखी ही थी। इतने में वह यमदूत कहने लगा कि पता नहीं तुम्हारे घर में कितनी बड़ी शक्ति है, वह मुझे मार रही है, मैं यहाँ और नहीं रूक सकता, मुझे जल्दी से चाय पिलाओ। मैं जा रहा हूँ और गर्म चाय ही पी गया। जाते हुए कहने लगा कि तुम्हारे घर में पूर्ण परमात्मा खड़े हैं। मैं इसे नहीं ले जा सकता, यह कहते हुए वह चला गया। एक मिनट के बाद ही खून बिल्कुल बंद हो गया, जीभ और दाँत जो काले हो चुके थे, बिल्कुल साफ हो गए और बन्दी छोड़ सतगुरु रामपाल जी महाराज की कृपा से वह पूरी तरह से पहले से भी स्वस्थ हो गई। परमात्मा कबीर साहेब जी ने मेरी माता जी की पाँच वर्ष आयु बढ़ा दी। सत्य भक्ति करके सतलोक प्रस्थान किया।

- भक्त रमेश दास

''परमात्मा ने यमदूतों से बचाया''

मेरा नाम भक्तमति पालो देवी है। मैंने डेरा सच्चा सौदा सिरसा वाले महाराज जी से नाम लिया हुआ था तथा मेरा पुत्र संजू शिव जी का उपासक था व कावड़ लाया करता था। लेकिन इन उपासनाओं के करने के बाद भी मैं बीमार रहती थी तथा मेरे फेफड़ों में दर्द रहता था। मैंने अस्पतालों से भी दवाई लेकर खाई। लेकिन आराम नहीं हुआ। मुझ पर कर्मों के ऐसे संकट आये कि मेरे पुत्र बिन्दर की मत्यु हो गई तथा उसके दो महीने बाद मेरे पति की मत्यु हो गई। अब मैं तथा मेरा दूसरा पुत्र संजू ही घर में रह गये थे।

मेरे पुत्र संजू ने भक्त कुक्कू के समझाने पर संत रामपाल जी महाराज से नाम उपदेश लिया। मुझे भी समझाने लगा कि माँ! आप भी संत रामपाल जी महाराज से नाम उपदेश ले लो। वे पूर्ण परमात्मा का अवतार आए हुए हैं। लेकिन मैं बार-बार मना करती रही।

एक दिन मेरे पुत्र ने मुझे बहुत समझाया लेकिन मैंने कहा कि सभी संत एक जैसे होते हैं। मेरा पुत्र मेरे से नाराज हो गया कि मैं अब आपको कभी नाम उपदेश लेने के लिए नहीं कहूँगा। उसके बाद मैंने अपनी बिमारी की दवाई ली तथा सो गई। सोते समय मेरी तरफ चार राक्षस आए जिनकी शक्ल बहुत भयानक थी। उनके बहुत बड़े-बड़े दाँत और नाखून थे। वे मेरे हाथों व पैरों को पकड़कर दोनों तरफ से खींचने लगे। मैं चिल्लाने लगी जबकि मेरा बेटा व बहू छत पर ही सोए हुए थे। मेरे बहुत चिल्लाने के बाद भी वे मेरी आवाज को नहीं सुन पाए।

उसके बाद सतगुरु रामपाल जी महाराज के रूप में परमात्मा आए तथा कहने लगे कि तुम इसे क्यों परेशान कर रहे हो? उन राक्षसों ने कहा कि हम इसे लेने आए हैं। हमें यमराज ने भेजा है। गुरु जी ने कहा कि तुम इसे नहीं ले जा सकते। यह तो पुण्यात्मा है, इसे तो भक्ति करनी है। जब उन्होंने मुझे नहीं छोड़ा तो गुरु जी मेरे सिर की तरफ आए और मेरे सिर पर हाथ रखा तथा कहा कि बेटी ''सत साहेब'' बोलो। फिर मेरे ''सत साहेब'' बालने के बाद वे चारों राक्षस मुझे छोड़कर चले गये। मुझे होश आया तो गुरु जी भी अन्तर्ध्यान हो गये।

मैंने अपने बेटे संजू को बताया कि तुमने तो उठकर मुझे देखा नहीं, आज में नरक में पड़ी होती। उस दिन मेरा बेटा बोला कि माँ मुझे सत्संग में जाना है। आप भी साथ चलो व नाम उपदेश ले लो। उसके बाद मैंने सतगुरु रामपाल जी महाराज से नाम उपदेश लिया व सत्संग सुना। उसमें गुरु जी ने विधवा माँ व उसके चोर बेटे की कहानी सुनाई जिसने महल में चोरी करने के लिए जाना था। मैंने मन लगाकर सत्संग सुना। मेरे आंसू बहने लगे। उसके बाद से मुझे कोई बीमारी परमात्मा की दया से नहीं रही। फेफड़ों का दर्द भी खत्म हो गया।

अब सतगुरु की कपा से मेरा परिवार पूर्ण रूप से ठीक है तथा पुत्र, पुत्रवधु व पोती के साथ सतगुरु जी महाराज की दया से पूर्ण सुखी हूँ। एक बार

गलती से मेरा नाम खण्डित हो गया। उसके बाद ही मुझ पर संकट आने शुरू हो गये। मुझे बीस-पच्चीस दिन से लगातार बुखार आ रहा था। डॉक्टरों ने टाइफाइड बताया। मेरे बच्चों को सत्संग में जाना था। लेकिन मुझे डॉक्टर ने अस्पताल में दाखिल होने के लिए बोल दिया। मैंने कहा कि आप तीन दिन की दवाई दे दो। मेरे बच्चे सत्संग में जाने वाले हैं। मैंने आश्रम में फोन किया। उस समय मुझे बहुत तेज बुखार था। आश्रम में भक्तों ने गुरु जी से विनती की कि महाराज जी! पालो भक्तमति का बुखार नहीं उतर रहा। गुरु जी ने कहा कि सवा किलो घी की ज्योति बोल दो, ठीक हो जायेगी।

अपने घर पर मैं उस समय रजाई में बैठी हुई थी। मैंने उसी समय गुरु जी के आगे प्रणाम किया तथा पाँच मिनट के अंदर ही मेरा बुखार ठीक हो गया। उस दिन के बाद मुझे आज तक बुखार नहीं आया।

।। बोलो सतगुरु देव की जय।।

- भक्तमति पालो देवी

"भूतों व रोगों के सताए परिवार को आबाद करना"

मैं भक्तमति अपलेश देवी पत्नी श्री रामेहर पुत्र श्री माँगेराम, गाँव-मिरच, तहसील चरखी दादरी, जिला भिवानी (हरियाणा) की रहने वाली हूँ। मैं अपने दुःखी जीवन की एक झलक आपको बता रही हूँ।

6 दिसम्बर 1995 की रात्रि में बदमाशों ने मेरे पति को ड्यूटी के दौरान जान से मार दिया था। लेकिन इस पूर्ण परमात्मा (कबीर साहिब) ने हमारा ध्यान रखा और मेरे पति को जीवन दान दिया जो आज हमें परिवार सहित सतगुरु रामपाल जी महाराज की दया से पूर्ण परमात्मा के चरणों में स्थान मिला है। मेरे पति को साफ कपड़े पहनाते जो कुछ देर बाद अंडरवियर के ऊपर के हिस्से पर जहाँ पर रबड़ या नाड़ा होता है, वहाँ चारों ओर खून से कपड़े रंगीन हो जाते थे तथा बच्चों को भी बलगम के साथ खून आता था और मैं भी एक वर्ष से हॉर्ट (दिल) की बीमारी से बहुत परेशान हो चुकी थी। जिसके लिए वर्षों से दवाईयाँ खा रही थी। मेरे पतिदेव दिल्ली पुलिस में हैं। मेरे सारे शरीर पर फोड़े-फुंसी हो जाती थी। घर में परेशानियों के कारण मेरे पति रामेहर का दिमागी संतुलन भी बिगड़ गया था।

हमने इन परेशानियों के कारण सन् 1995 से जुलाई 2000 तक एक दर्जन से भी ज्यादा लंगड़े-लोभी व लालची गुरुओं के दरवाजे खटखटाए तथा भारत वर्ष में तीर्थ स्थानों जैसे जमुना, गंगा, हरिद्वार, ज्वाला जी, चामुन्डा, चिन्तपूरनी, नगर कोट, बाला जी, मेहन्दीपुर व गुड़गाँवा वाली माई तथा गौरखटीला (राजस्थान) वाले आदि-आदि प्रत्येक स्थानों पर बच्चों सहित काफी बार चक्कर लगाते रहे। लेकिन हमें कोई राहत नहीं मिली। हमारे परिवार की हालत यहाँ तक आ चुकी थी कि हम होली व दिवाली भी किसी मस्जिद में बैठकर बिताने लग गये थे।

हम बड़े खुशनसीब हैं जो हमें संत रामपाल जी महाराज के द्वारा परम पूज्य

कबीर परमेश्वर की शरण मिल गई। अब कहाँ गये वे काल के दूत तथा वे हमारी बीमारियाँ जिनका ईलाज ऑल इण्डिया हॉस्पीटल में चल रहा था जो सतगुरुदेव के चरणों की धूल के आगे टिक नहीं पाई।

25 फरवरी 2001 को एक काल की पूजा करने वाले स्याने ने फोन करके पूछा कि अपलेश तुम्हारा नाम है। मैंने कहा कि हाँ, आप अपना नाम बताओ। तब वह स्याना कहता है कि यह बलवान कौन है और आपका क्या लगता है? मैंने कहा कि तुम कौन हो तथा यह सब क्यों पूछना चाहते हो? तब वह स्याना कहता है कि बेटी! तुम मेरा नाम मत पूछो। मैं बताना नहीं चाहता तथा मैं हांसी से बोल रहा हूँ। बलवान तथा उसके साथ एक आदमी आया और दोनों ने मुझे 3700 रूपए तुम पर घाल घलवाने के लिए दिए। मैंने तुम्हारा फोन नं. भी बलवान से लिया था कि मैं पूछूँगा कि उनकी दुर्गति हुई या नहीं? जो मैंने यह बुरा कार्य रात्रि में किया। लेकिन जैसे ही मैं सोने लगा तो मुझे सफेद कपड़ों में जिस गुरु की तुम पूजा करते हो, वे दिखाई दिये जिन्होंने मुझे बतला दिया कि इसका परिणाम तुम खुद भोगोगे। यह परिवार सर्व शक्तिमान सर्व कष्ट हरण परम पूज्य कबीर परमेश्वर की शरण में है। आपकी तो औकात ही क्या है ? यहाँ का धर्मराज भी अब इस परिवार का कुछ नहीं बिगाड़ सकता।

गरीब, जम जौरा जासै डरै, मिटें कर्म के लेख।
अदली अदल कबीर हैं, कुल के सद्गुरु एक।।

परम पूज्य कबीर परमेश्वर जी से जम (काल तथा काल के दूत) तथा मौत भी डरती है। वे पूर्ण प्रभु पाप कर्म के दण्ड के लेख को भी समाप्त कर देते हैं। इसके बाद उस स्याने ने कहा कि बेटी तुम्हें यह बतला दूँ कि तुम जिस देव पुरुषोत्तम की पूजा करते हो, वे बहुत प्रबल शक्ति हैं। मैं 25 वर्ष से यह घाल घालने का कार्य कर रहा हूँ। न जाने कितने परिवार उजाड़ चुका हूँ। परन्तु आज पहली बार हार हुई है। बेटी इस शक्ति को मत छोड़ देना, नहीं तो मार खा जाओगे। आपके विनाश के लिए बलवान आदि घूम रहे हैं। मैंने कहा कि हम पूर्ण परमात्मा की पूजा करते हैं। बलवान मेरे पति का बड़ा भाई है। हमारा जॉनी दुश्मन बना है।

हम आज इतने खुशनसीब हैं कि हमारे दिल में किसी वस्तु या कार्य की आवश्यकता होती है तो उसको सतगुरुदेव सत कबीर साहिब पूर्ण कर देते हैं।

गुरु गोविन्द दोनों खड़े, हम किसके लागे पाय।
हम बलिहारी सतगुरुदेव रामपाल जी के चरणों में, जिन्होंने परमेश्वर दिया मिलाय।

हे भाईयों और बहनों! हम सारा परिवार मिलकर आपको यह सन्देश देते हैं कि अगर आपको सतलोक का मार्ग, पूर्ण मोक्ष व सर्व सुख प्राप्त करना हो और सांसारिक दुःखों से छुटकारा पाना हो तो बन्दी छोड़ संत रामपाल जी महाराज से सतनाम प्राप्त कर लेना और अपना अनमोल मनुष्य जन्म सफल कर लेना।

।। सत साहिब।।

भक्तमति अपलेश देवी

''लुटे-पिटों को सहारा''

मैं भक्त बलवान सैनी पुत्र श्री क ष्ण सैनी न्यू माडल टॉउन, हिसार का रहने वाला हूँ। हम पाँच भाई-बहन हैं। हमारे पूरे परिवार ने 18 वर्ष से सिरसा डेरे से उपदेश ले रखा था। हमारे घर में भूत-प्रेत की बहुत ज्यादा समस्या थी। मेरी बहन को हमें रस्सी से बाँधकर रखना पड़ता था। प्रेत बाधा के कारण वह छत से भी कूद जाती थी। मेरे पिता जी के फेफड़े भी खराब हो चुके थे। जिससे वो बिस्तर पर ही रहने लगे। मेरी माता के घुटनों में बहुत दर्द रहता था।

मेरे पिता जी हलवाई का काम करते थे। भूत-प्रेत और पिता जी की बीमारी के कारण हमारा काम बिल्कुल ठप्प हो चुका था। पहले हमारे हाँसी में तीन मकान व एक दुकान थी। घर में नौकर काम करते थे। लेकिन कर्मों की मार से हमें सब बेचना पड़ा। घर में खाने के लाले पड़ गए थे।

हम देवी-देवताओं को भी मानते थे। हम 2003 से हर महीने मेंदहीपुर जाते थे। हमारा पूरा परिवार होली-दिवाली भी मेंहदीपुर में ही मनाता था। हम डॉक्टरों के पास जाकर भी थक चुके थे। हम माता चौकी, सेवड़ों आदि जंत्र-मंत्र करने वालों के पास भी जाते थे। हम नरड़ पीर (राजस्थान) की मंढ़ी पर एक साल रहकर आए थे। हम पाँच साल तक हर महीने सजाड़ा धाम, जोधपुर जहाँ शंकर भगवान की पूजा होती थी, वहाँ पर फेरी लगाने जाते रहे, परंतु कोई लाभ हमें नहीं मिला। मेरी माँ और मैं व्रत भी रखते थे। मैं बाला जी धाम, सालासर नंगे पाँव भी दो-तीन बार गया। माता गुड़गावां वाली हमारी कुल की देवी थी। मैंने वहाँ पर हाथ पर ज्योति रखकर पंद्रह मिनट आरती भी की थी। हाथ बिल्कुल गल चुका था। परंतु हमें कोई राहत किसी भी साधना से नहीं मिली। अंत में हम हार मान चुके थे। हम दुःखी होकर घर पर ही रहने लगे। हमने सभी पूजाऐं त्याग दी।

फिर मुझे 24 फरवरी 2012 को सतगुरू रामपाल जी महाराज की पुस्तक ''ज्ञान गंगा'' मिली। मैंने उस पुस्तक को पढ़ा और सपरिवार नाम ले लिया। मुझे नियम बताए गए कि आपको किसी देवी-देवता के धामों पर पूजा के लिए नहीं जाना है। मैं घर पर आ गया। मुझे रात को नींद नहीं आई, मैं बेचैन हो गया क्योंकि मैं खाटू श्याम, राधे क ष्ण को बहुत अधिक मानता था। मैं उनको छोड़ नहीं सकता था। अगले दिन ही मैं खाटू श्याम चला गया। वहाँ पर मैं 5-6 दिन रहा। वहाँ पर मैं पैसे देकर VIP लाईन में लगकर दर्शन करने गया। जब मैं दर्शन करने लगा तो आवाज आई कि बलवान! तू अपना भगवान तो बरवाला में छोड़ आया है, यहाँ पर कुछ नहीं है। फिर मैं रोते हुए घर आ गया। फिर मैंने दोबारा संत रामपाल जी महाराज के आश्रम में जाकर नाम शुद्ध करवाया।

मेरे पिता जी के फेफड़े खराब हो चुके थे। उनको होली हस्पताल, हिसार में दाखिल करवाया। उनकी स्थिति ज्याड़ा बिगड़ गई और डॉक्टरों ने जवाब दे दिया। कहा कि इसको घर ले जाओ। ये कुछ घण्टे का मेहमान है। फिर मैंने आश्रम में

फोन किया। गुरू जी से प्रार्थना करवाई। गुरू जी ने कहा कि हम पूर्ण परमात्मा की भक्ति करते हैं। इस बच्चे का बाल भी बांका नहीं होगा। आप भगवान पर विश्वास रखो। मैंने दोबारा डॉक्टर से प्रार्थना की कि आप इसे दो-तीन दिन के लिए आई. सी. यू. में दाखिल कर लो। डॉक्टर ने कहा कि इससे कोई फायदा नहीं होगा। लेकिन मेरे ज्यादा कहने पर डॉक्टर ने मेरे साईन करवा लिए और फीस लेकर दाखिल आई.सी.यू. में कर लिया। मेरी बहन घर पर थी। उसको सपना आया कि सतगुरू रामपाल जी मेरे पिता जी के बैड के पास खड़े हैं। अगले दिन मेरे पिताजी को होश आ गया और हालत सुधरने लगी। डॉक्टर भी हैरान रह गए कि ये तो भगवान ने ही किया है, हमें ऐसी कोई उम्मीद नहीं थी।

उस दिन के बाद से हम सारा परिवार सुख से रह रहे हैं। मेरे बहन की बीमारी बिल्कुल ठीक हो गई और उसकी शादी कर दी। मेरी माँ के घुटनों का दर्द भी बिल्कुल ठीक हो गया। फिर हम हिसार रहने लगे और कुल्फी की रेहड़ी लगाने लगे। परमात्मा की दया से हमारा अच्छा काम चल पड़ा। हमने हिसार में दोबारा अपना मकान बना लिया।

शादी के दो वर्ष बाद मेरी बहन पूजा को ऑपरेशन से बच्चा होना था। उसको हमने अग्रोहा मैडिकल में भर्ती करवाया। बच्चे की डिलिवरी के समय डॉक्टरों से गलती से बच्चेदानी की कोई नस कट गई। मेरी बहन की ब्लीडिंग बंद नहीं हो रही थी। मेरी बहन को मंगलम लैब से लेकर 45 बोतलें खून की चढ़ी। लेकिन वहाँ पर कोई आराम नहीं मिला। फिर हम अपनी बहन को जिंदल हस्पताल में लेकर आए। वहाँ भी बारह दिन तक कोई आराम नहीं हुआ और डॉक्टरों ने कहा कि हम कुछ नहीं कह सकते कि यह बचेगी या नहीं। फिर मैंने गुरू जी से प्रार्थना लगवाई। गुरू जी बोले कि बेटा! मैंने बेटी को जीवनदान दे दिया है। वह ठीक हो जाएगी। फिर तीसरे दिन मेरी बहन को होश आ गया और उसकी हालत सुधरने लगी। पूरे हस्पताल में चर्चा हुई कि ये काम तो भगवान ही कर सकता है। मेरी बहन आज बिल्कुल स्वस्थ है। उसको परमात्मा ने एक पुत्री दी है जो बिल्कुल ठीक है। परमात्मा की दया से आज हमारे घर में किसी वस्तु का अभाव नहीं है।

कबीर, पीछे लाग्या जाऊं था, मैं लोक वेद के साथ।
रास्ते में सतगुरू मिले, दीपक दीन्हा हाथ।।

।। सत साहेब ।।

भक्त बलवान दास
मोबाईल नं. - 9996593021

''शास्त्रविरूद्ध साधना से छुटकारा''

मैं भक्त हेमचंद दास सोलन (हिमाचल प्रदेश) का रहने वाला हूँ। पहले मैं अपने गाँव में महाकाली मंदिर में पुजारी रहा। 25 वर्ष से वहाँ पुजारी का काम करता था। भजन-कीर्तन और जो भी पूजाऐं मंदिर में होती, सभी किया करता था। पितर

पूजा, श्राद्ध निकालना, शिव जी को जल चढ़ाना आदि क्रियाऐं करता था। लेकिन फिर भी हम दुःखी रहते थे। मेरी पत्नी को पैरालाईसिस थी। घर की आर्थिक स्थिति भी ठीक नहीं थी।

सन् 2005-2006 में संत रामपाल जी महाराज के कुछ लेख अखबारों में आते थे। मैं उन्हें समझ नहीं पाया, परंतु मैं इस तरह के धार्मिक कागजों को संभालकर रख लेता था। कुछ समय पश्चात् जैसे ही रद्दी से वो कागज मिले, मैं उसे पढ़ने बैठ गया और पढ़ते-पढ़ते मेरे दिल में ठेस-सी लगी कि ये ज्ञान कहाँ छिपा हुआ था? फिर मैंने उसमें आश्रम के फोन नं. देखे और पुस्तक मंगवाई। उसमें जब मैंने ज्ञान पढ़ा तो मैं हैरान रह गया, पैरों तले की जमीन खिसक गई क्योंकि मंदिर में पुजारी होने के बावजूद मैंने ऐसा नया ज्ञान कभी भी नहीं सुना था।

मैं पहले मानता रहा कि ब्रह्मा, विष्णु और शिव जी से ऊपर कोई है ही नहीं। परमात्मा निराकार है। संत रामपाल जी महाराज की पुस्तकों से ज्ञान हुआ कि परमात्मा साकार है, कबीर जी पूर्ण परमात्मा हैं। परमात्मा ने अंदर एक ऐसी प्रेरणा जगाई कि संत रामपाल जी के पास ही वह अमर मंत्र है जिससे हमारा कल्याण होना है। इसी से हमारा जन्म-मरण का भयंकर रोग कटेगा। उनके ज्ञान से प्रभावित होकर मैंने संत रामपाल जी महाराज से दीक्षा ली। मैंने सभी तरह की शास्त्रविरूद्ध पूजाऐं बंद कर दी। पितर पूजा, श्राद्ध निकालना आदि सब त्याग दिया।

गुरू जी का उपदेश लेने के बाद मुझे सबसे बड़ा तो आध्यात्मिक लाभ हुआ। जन्म-मरण से मुक्ति की सच्ची राह मिली। मेरी भक्तमति को पैरालाइसिस की परेशानी थी। हर जगह बड़े-बड़े डॉक्टरों व नीम-हकीमों के चक्कर लगा चुके थे, परंतु परमात्मा के आशीर्वाद मात्र से मेरी भक्तमति ठीक हो गई। परमात्मा की दया से हमारी आर्थिक स्थिति भी ठीक हो गई।

फिर मैंने ये ज्ञान प्रचार करना शुरू कर दिया। मुझे लगा कि ये ज्ञान तो जन-जन तक पहुँचना चाहिए। लेकिन मेरी बातों पर किसी ने गौर नहीं किया। लोगों ने विरोध किया, कहा कि तुम ये कौन-सा अलग ज्ञान ले आए। ऐसी बातें ना किया करो। परंतु मुझे इस ज्ञान से परमात्मा की दया से कोई डगमग नहीं कर पाया। ऐसा सत्यज्ञान व सत्य भक्ति मार्ग पथ्वी पर और कहीं नहीं है।

मेरी सर्व से प्रार्थना है कि आप भी प्रभु के चरणों में आओ। संत रूप में आए परमेश्वर के संदेश वाहक संत रामपाल को पहचानों। मुफ्त नाम उपदेश प्राप्त करके कप्या अपना कल्याण करवाऐं।

- भक्त हेमचंद दास

''भगवान हो तो ऐसा''

मैं भक्त नील कमल दास गाँव-पेहवा, जिला-कुरूक्षेत्र (हरियाणा) का रहने वाला हूँ। मेरे घर की आर्थिक स्थिति बहुत कमजोर थी। मुझे नौकरी नहीं मिल रही थी। पंडितों ने हाथ देखकर बताया था कि नौकरी मेरे भाग्य में नहीं है। मैं हिन्दू धर्म

के सभी देवी-देवताओं की पूजा करता था। श्री विष्णु जी का व्रत रखता था। पितरों की पूजा करता था। शिव जी के मंदिर में जाकर जल चढ़ाता था। कावड़ लाने की भी इच्छा थी। सभी मंदिरों में मैं जाता था। जो भी साधनाऐं समाज में प्रचलित थी, मैं सभी करता था। लेकिन सब व्यर्थ, हम ऐसे ही गरीबी से जूझते रहे।

फिर मेरे मन में गीता पढ़ने की प्रेरणा हुई। मैंने राधा स्वामी का सत्संग सुना, परंतु मेरे समझ में कुछ नहीं आया और संतुष्टि नहीं हुई। फिर मुझे परमात्मा की दया से संत रामपाल जी महाराज द्वारा लिखी ''गहरी नजर गीता में'' पुस्तक मिली। मैंने वह पुस्तक पढ़ी तो मैं दंग रह गया। मुझे एकदम बड़ा अलग ही ज्ञान लगा। उसमें लिखा था कि पितर पूजा, शिवलिंग पूजा, व्रत करना आदि सभी साधनाऐं शास्त्रविरूद्ध हैं। इनसे कोई लाभ साधक को नहीं मिलता। मैंने पूरी रात पुस्तक पढ़ी। मेरे तो सारे फ्यूज ही उड़ गए कि भाई, ऐसा कैसे हो सकता है। फिर मैंने अगली तीन रात पुस्तक पढ़ी और सारे प्रमाण मिलाए। सारे प्रमाण सत्य मिले। मैंने महसूस किया कि जो पूजाऐं मैं करता था, उससे मुझे कोई लाभ होने वाला नहीं है। ये बात सन् 2004 की है। फिर मैं नाम-दीक्षा लेने गया, उस समय संत रामपाल जी महाराज का सत्संग नरवाना में चल रहा था। वहाँ जाकर मैंने दीक्षा ली और सत्संग का आनंद लिया। उसी दिन से परमात्मा ने सुख देने में कोई कसर नहीं छोड़ी।

मैंने सतगुरू देव से प्रार्थना की कि मुझे नौकरी नहीं मिल रही। परमात्मा की दया से मुझे बिजली बोर्ड में नौकरी मिली। वहाँ तनख्वाह कम थी। फिर परमात्मा ने मुझे हरियाणा शिक्षा विभाग में नौकरी दिलवाई। वहाँ मुझे अच्छी तनख्वाह मिल रही है। परमात्मा की दया से हमारी आर्थिक स्थिति सुधर गई। एक बार मैं बाईक पर जा रहा था। मेरी टाटा सुमो के साथ सीधी टक्कर हुई। मैं पंद्रह फुट ऊपर उछला, जब मैं नीचे गिरा तो ऐसा लगा कि मुझे किसी ने हाथों में उठा रखा था। मेरे मोटरसाईकिल के दो टुकड़े हो गए। मुझे बस होठ पर थोड़ी चोट लगी थी। ऐसे मेरी जीवन रक्षा हुई।

एक दिन मैं और मेरी भक्तमति मोटरसाईकिल पर जा रहे थे और मैंने ब्रेक लगा दी। पीछ से ट्रक वाले ने सीधी टक्कर मारी और तेज आवाज भी आई। मैंने भी सोचा कि ये आवाज कहाँ से आई और लोग भी इकट्ठे हो गए। मुझे पूछने लगे कि तू ठीक है। मेरी भक्तमति उतरकर पूछने लगी कि किसकी टक्कर हुई? लोगों ने बताया कि आपको ट्रक ने टक्कर मारी है, उसके ड्राइवर को पीटेंगे। जब उन्होंने देखा कि हमें चोट नहीं लगी तो ड्राइवर को जाने दिया। हमने देखा कि बाईक बिल्कुल ठीक है, बस उसकी नम्बर प्लेट मुड़ी हुई थी। यह भी परमात्मा ने हमें विश्वास दिलाने के लिए किया कि वास्तव में हमारी टक्कर हुई थी, ऐसा हमें एहसास हो।

एक बार एक बाईक वाला जा रहा था। हम भी साथ-साथ चल रहे थे। उसने एकदम से मेरे आगे से बाईक मोड़ दी। मेरी डर से आँखें बंद हो गई। मेरी

मोटरसाईकिल उसकी मोटरसाईकिल के बीच से निकल गई, कोई एक्सीडेंट नहीं हुआ। मैं हैरान रह गया। मैं सोचता रहा कि ये कैसे हो गया? परमात्मा जो चाहे सो कर सकता है। ये उन्हीं का किया चमत्कार है।

एक बार मेरा लड़का 15-16 सीढ़ियों से तेजी से नीचे गिर गया। हम डर गए कि बच्चा तो मर ही जाएगा। जाकर देखा तो वह अपने आप उठकर चलने लगा। उसे कुछ नहीं हुआ था। ऐसे-ऐसे परमात्मा ने हमें अनगिनत लाभ दिए हैं।

एक बार हमारे साथी भगत जी का पोता बीमार हो गया। कुरूक्षेत्र में डॉक्टरों ने जवाब दे दिया तो हम उसे पी.जी.आई. चले गए। फिर मन में विचार आया कि परमात्मा से प्रार्थना की जाए। हमने गुरू जी से प्रार्थना करवाई। फिर अगले ही दिन गुरू जी वहाँ पहुँच गए। माई ने भी गुरू जी को देखा। दस-पंद्रह मिनट के लिए गुरूजी वहाँ रहे और अपने बच्चों को आशीर्वाद दिया और कहा कि तुम्हें छुट्टी मिल जाएगी। डॉक्टरों ने दोबारा चैकअप किया तो रिपोर्ट नॉर्मल आई, उन्हें लगा कि शायद हमारी मशीनों में खराबी हो, इसलिए शाम तक रखकर छुट्टी दे दी।

हमारे गाँव में किसी पीर की मंढ़ी बनी थी। पहले उसको जो नुक्सान करता था, वो पीर उन्हें उठाकर फैंक देता था, मार भी देता था। गुरू जी आदेश से मैंने और कुछ भक्तों ने उसको तोड़कर उन ईटों को फैंक दिया। सारे गाँव में चर्चा हो गई कि अब तो ये सारे मरेंगे। लेकिन कुछ दिन तक हमें कुछ नहीं हुआ तो वे हैरान रह गए कि इन्हें तो कोई नुक्सान नहीं हुआ और परमात्मा ने हमारे ठाठ कर रखे हैं। ये परम शक्ति युक्त संत हैं, ऐसे कोई अपनी तरफ से बने संत नहीं हैं। हमारे गुरू जी गुरू प्रणाली से संत बने हैं। परमात्मा कबीर जी से यह प्रणाली चली है।

मैं भक्त समाज से हाथ जोड़कर प्रार्थना करता हूँ कि यह मनुष्य जन्म बार-बार नहीं मिलेगा। इंसान मर जाता है, धर्मराय के पास जाता है। फिर वहाँ कोई जवाब नहीं आएगा। पूरे विश्व को संत रामपाल जी महाराज की लिखी किताबें पढ़नी चाहिए और जितनी जल्दी हो सके, ज्ञान समझकर नाम-उपदेश लेकर अपना कल्याण करवाना चाहिए।

।। सत साहेब ।।

भक्त नील कमल दास
गाँव - पेहवा (कुरूक्षेत्र)

''भक्तमति सविता की आत्मकथा''

।। बन्दी छोड़ सतगुरू रामपाल जी महाराज जी की जय ।।

मेरा नाम भक्तमति सविता है। मेरा जन्म पटियाला (पंजाब) के एक धार्मिक परिवार में हुआ। सतगुरु रामपाल जी महाराज जी से नाम उपदेश लेने से पहले मैं अनेक धार्मिक पूजाऐं करती थी। मैं समाज में चल रही सभी पूजाओं को करती थी जैसे कि सोमवार के व्रत करना, सत्य नारायण के व्रत करना, नवरात्रों के व्रत करना, कंजक पूजा आदि। मैंने संतोषी माता के 45 व्रत भी किए जबकि

संतोषी माता के 16 व्रत होते हैं। व्रत करने के कारण मैं इतनी कमजोर हो गई थी कि स्कूल में ही बेहोश हो जाती थी। हमारी टीचर हरलीन मैडम मुझे घर छोड़ने के लिए आती थी और कहती थी कि इस लड़की को खाना खिलाकर ही स्कूल आने दिया करो। रोज-रोज के व्रत करने से ये एक दिन मर जाएगी। लेकिन शेरांवाली माता में मेरी विशेष श्रद्धा थी। मैंने व्रत करने नहीं छोड़े। परंतु इन साधनाओं से मुझे कभी कोई फायदा भी नहीं हुआ। मेरी माता जी भी बहुत ही धार्मिक विचारों की महिला थी। वे ब्रह्मा-विष्णु-शिव जी सहित सभी देवी-देवताओं की पूजा किया करती थी। पटियाला (पंजाब) में हमारी कुल देवी काली माता का बहुत प्राचीन व प्रसिद्ध मन्दिर है।

मेरे माता-पिता को संतान रूप में मेरे बड़े भाई के बाद हम दो जुड़वां बहनें प्राप्त हुई। मेरी माता जी अक्सर कहा करती थी कि काली माता जी अपने बच्चों की हर विपदाओं से जीवन रक्षा करती है तथा शेरांवाली माता की भक्ति करने से जान का कोई खतरा नहीं रहता। लेकिन हुआ उसके बिल्कुल विपरीत, छः साल की उम्र में ही मेरी जुड़वां बहन की बीमारी के कारण अकाल मत्यु हो गई।

मेरी माता जी ने शेरांवाली माता की भक्ति करते हुए अपनी पुत्री की अकाल मत्यु के लिए माता को प्रश्नवाचक नजरों से देखा तो लेकिन वे असहाय थी कि जवाब किससे माँगे? पुजारी से या पत्थर की मूर्ति से? अतः असहाय होकर कुछ समय बाद सब्र कर लिया कि माता के दिए हुए एक बेटा और एक बेटी तो हैं। लेकिन होनी को कुछ और ही मंजूर था। मेरी माता जी घर की छत पर कोई घरेलू कार्य कर रही थी। जब वे सीढ़ियों से नीचे आने लगी तो उनका पैर फिसल गया और गिर जाने से उनका सिर फट गया। वे पाँच दिन तक हस्पताल में जिंदगी और मौत से जूझती रही और हम देवी माता के मन्दिर में पल-पल देवी माता से और सारे देवताओं से उनके जीवन की भीख माँगते रहे। लेकिन जो हुआ, वह हमारी अंध आस्था व आशा के बिल्कुल विपरीत हुआ। पाँच दिन के बाद मेरी माता का पार्थिव शरीर ही हस्पताल से वापिस आया। सारे घर में हाहाकार मच गया। एक बार तो मैंने माता जी को बहुत उलाहने दिये कि मेरी मम्मी आपकी इतनी साधना करती थी। उनकी भक्ति में ऐसी क्या कमी रह गयी थी कि आपने इनको इतनी दर्दनाक मौत देकर हमसे छीन लिया।

एक बेटी के लिए माता का निधन वज्रपात से कम नहीं था। लेकिन मेरी अंधश्रद्धा उसके बाद भी देवी-देवताओं में ही लगी रही, बल्कि अधिक भक्ति करनी शुरू कर दी क्योंकि मेरे पास दूसरा कोई रास्ता नहीं था।

कुछ समय पश्चात् मेरा बड़ा भाई बहुत बीमार हो गया। मैंने उनके लिए भी व्रत किये। जब वे ठीक नहीं हुए तो मैंने एक बहुत ही कठोर व्रत (प्रण) निश्चय किया कि मैं अपने घर से काली देवी माता के मन्दिर तक दण्डवत् प्रणाम करते हुए जाऊँगी जोकि चार किलोमीटर था। मैंने सुबह चार बजे ही घर से दण्डवत् करते हुए जाना शुरू किया। लेकिन कुछ दूर जाते ही मेरा सारा शरीर छिल गया

और खून आने लगा। लेकिन अपने व्रत और प्रण की पक्की होने के कारण मैंने भी अपनी जान की परवाह न करते हुए अपना प्रण पूरा करने में ही माता की प्रसन्नता मानी क्योंकि मेरे सिर पर तो शास्त्रविरूद्ध भक्ति का भूत चढ़ा हुआ था। मेरा सारा शरीर छिल गया और घावों से खून आने लगा। कोहनियों और घुटनों ने तो लगभग काम करना ही छोड़ ही दिया था। मैंने मर-मरकर अपना प्रण पूरा किया। उसके बाद मैं कई दिन हॉस्पिटल में रही। चिकित्सा करने वाले डाक्टरों ने मुझे बहुत डाँटा। लेकिन इतनी कठिन तपस्या के फलस्वरूप माता ने मेरे भाई को ठीक नहीं किया। उसका कई महीनों हस्पताल में इलाज चला।

लेकिन पूर्ण रूप से सतगुरु रामपाल जी महाराज जी की शरण में आकर नाम उपदेश लेने से ही ठीक हुआ। मेरे पिता जी ने साधना टी.वी. पर सतगुरु देव जी का कार्यक्रम देखा तथा सतलोक आश्रम बरवाला में जाकर नाम लिया। उसके बाद कई महीनों तक बार-बार मुझे समझाया। उन्होंने ''ज्ञान गंगा'' पुस्तक मुझे लाकर दी और तब मैंने ज्ञान को समझा तथा पूर्ण संत सतगुरु रामपाल जी महाराज की शरण में आकर नाम लिया और इस कठिन और दुःखदायी साधना से अपना पीछा छुड़वाया जो कि शास्त्रों में मना की हुई है। अब हमारा पूरा परिवार सतगुरू रामपाल जी महाराज की दया से सुखी है। किसी को कोई कष्ट नहीं है।

अब मुझे पूर्ण परमात्मा की शास्त्रानुकूल सत्यभक्ति प्राप्त हो गई है। अतः मैं सर्व भक्त समाज से यही प्रार्थना करूंगी कि सतगुरु रामपाल जी महाराज जी की शरण में आकर सत्यभक्ति प्राप्त करके अपना कल्याण करवाऐं।

यह संसार समझदा नाहीं, कहंदा शाम दोपहरे नूं।
गरीबदास यह वक्त जात है, रोवोगे इस पहरे (समय) नूं।।

।। सत साहेब ।।

सतगुरु चरणों की दासी
भक्तमति सविता

☞ आपने उपरोक्त कुछ भक्तात्माओं की आत्म कथाएं आपने पढी। ऐसे-ऐसे भक्त हजारों-लाखों हैं जो अपनी आत्म कथा पुस्तकों में लिखवाना चाहते हैं। लेकिन यहाँ पर स्थान के अभाव के कारण हम कुछेक भक्तों की आत्म कथा लिख पाए। यदि सभी भक्तों की आत्मकथा हम लिखने बैठ जाऐं तो शायद सैकड़ों पुस्तकें छप जाऐंगी। इसलिए समझदार व्यक्ति को संकेत ही पर्याप्त होता है।

❑❑❑